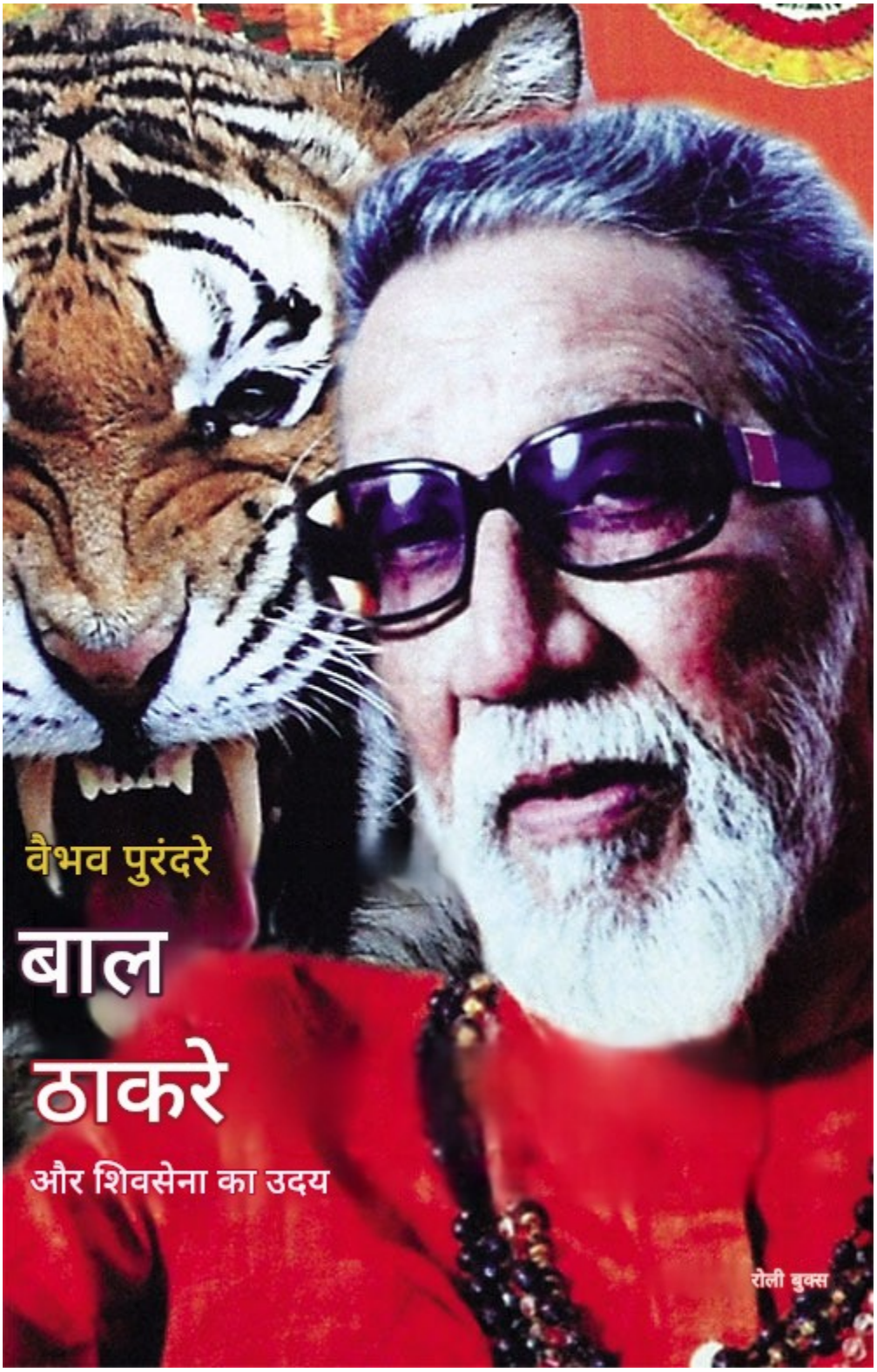
वैभव पुरंदरे
बाल ठाकरे
और शिवसेना का उदय
रोली बुक्स

Table of Contents कवर पृष्ठ
ढकना
शीर्षक पेज
पुस्तक जानकारी
कॉपीराइट
समर्पण
अंतर्वस्तु
स्वीकृतियाँ
प्रस्तावना
1. प्रारंभिक वर्ष
2. राजनीतिक कार्टूनिस्ट
3. महाराष्ट्रीयन और प्रवासी
4. सेना कोर को संगठित करना
5. बाल ठाकरे : व्यक्तित्व और उनका व्यक्तित्व
6. राजनीति , वादे और हिंसा
7. कम्युनिस्टों के साथ लड़ाई
8. बृहत्तर महाराष्ट्र और पहली गिरफ्तारी
9. Bhiwandi burns
10. हत्या और जनादेश
11. थोकशाही के सिद्धांत और परेल में उसकी सफलता
12. चुनावी सभा में अपमानित होना
13. बाघ का सफेद कॉलर
14. शिवसेना ने कांग्रेस के रोजगार निर्देशों पर मुहर लगाई : स्थानीय लोगों को प्राथमिकता
15. कांग्रेस , आपातकाल और कलात्मक असहमति के प्रति शून्य सहिष्णुता का समर्थन।
16. आश्चर्यजनक घोषणा
17. कपड़ा उद्योग की त्रासदी तलाक का कारण बनी
18. समाजवादी गीत पर झूमते हुए
19. हिंदुत्व की ओर और फिर भिवंडी की ओर वापसी
20. भाजपा के साथ हाथ मिलाना
21. मुंबई चुनाव 1985: एक नई जिंदगी
22. ग्रामीण क्षेत्रों में घुसपैठ
23. केसरिया कालीन बिछाना
24. केंद्र मंच पर
25. क्रॉस - वोटिंग और मतदान पर प्रतिबंध
26. भाजपा के साथ फिर से गठबंधन
27. भुजबल सुलक ने शिवसेना छोड़ी
28. 1992-93 के दंगे
29. सत्ता का मार्ग

30. □□□□□□□ □□□□□
31. Raj versus Uddhav
32. □□□ □□□□□ = □□□□□□□
□□□□□
□□□□□□□□□□
□□□□□□□□□□□
□□□□□ □□□□□□□
□□□□ □□ □□□

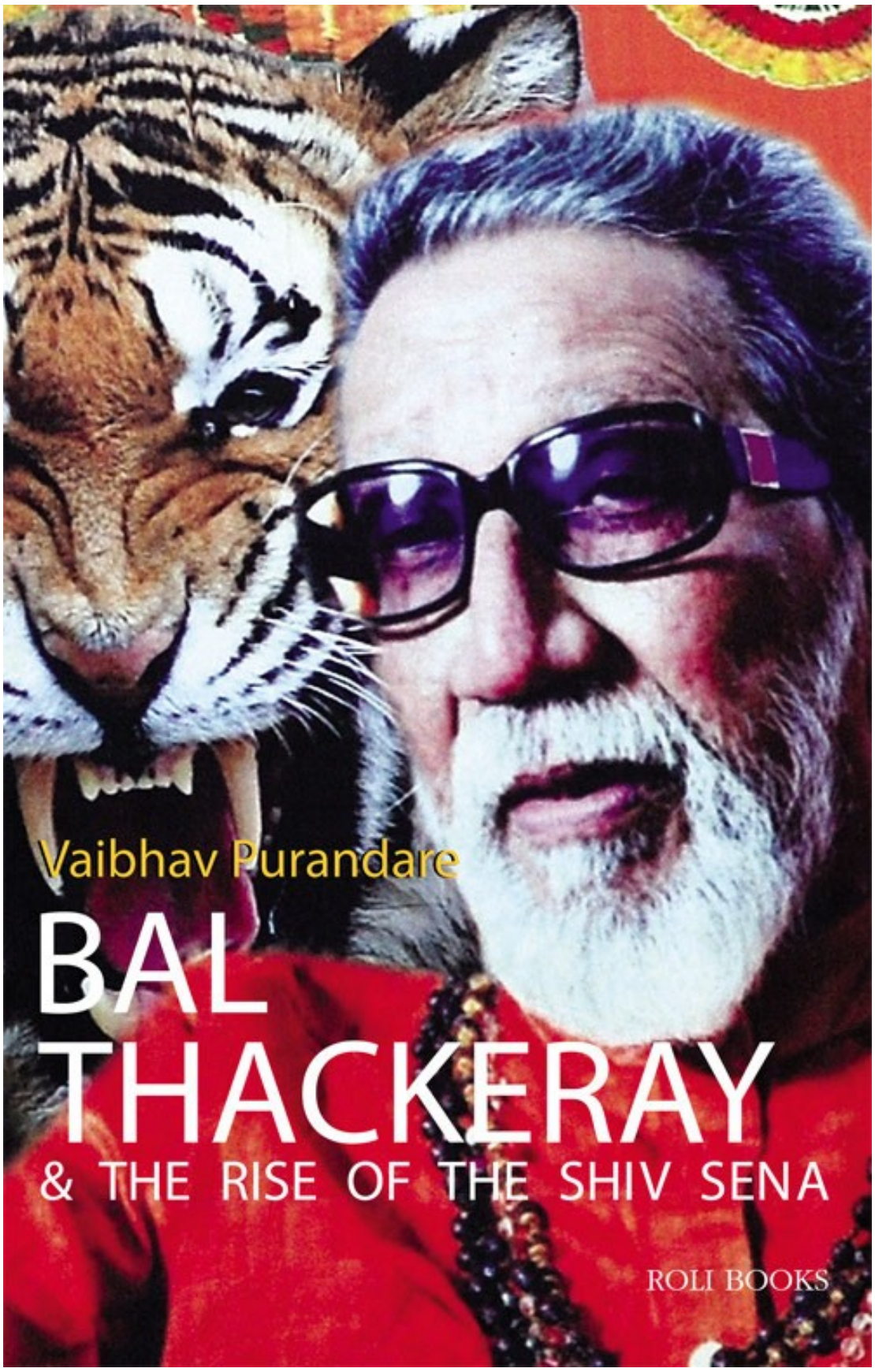
Vaibhav Purandare
BAL THACKERAY
& THE RISE OF THE SHIV SENA
ROLI BOOKS

My congratulations to
cartoonist.

Jawaharlal Nehru
29.7.1960

अक्टूबर 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या के बाद बाल ठाकरे द्वारा उन्हें दी गई श्रद्धांजलि (मार्मिक में प्रकाशित)।

BAL THACKERAY

& THE RISE OF THE SHIV SENA

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]: [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

Rustom B.Bhumgara

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

Kiran Maitra

Kuldip Nayar

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

Madhu Trehan

[illegible] [illegible]

Monisha Rajesh

Nayantara Sahgal (ed.)

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

Rajika Bhandari

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

Vir Sanghvi

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]: [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: 1971 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?

Tehelka as Metaphor

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] 80 [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]: [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]
Abhay Mansingh

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible]: [illegible]

BAL THACKERAY
& THE RISE OF THE SHIV SENA

VAIBHAV PURANDARE

LOTUS COLLECTION
ROLI BOOKS

© Vaibhav Purandare, 2012

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means without permission in writing from the publisher.

First published 2012
Rupa Publications
Rupa
7/16, Ansari Road, Daryaganj
New Delhi 110 002
Phone: ++91 (011) 4068 2000
Fax: ++91 (011) 2921 7185
Email: info@rolibooks.com; Website: www.rolibooks.com

Rupa Publications
Bangalore, Chennai and Kolkata

Editor: Padma Rao Sundarji
Text © Vaibhav Purandare
Cover Design: Kapish Mehra
Cover: Rupa Publications
Typesetter: Rupa Publications

Bangalore, i: Rupa Publications India Pvt. Ltd. 2012 Rupa Publications
Rupa and the Rupa logo are trademarks of Rupa Publications, 1960.

Rupa Publications Bangalore Chennai Kolkata Mumbai Pune New Delhi Hyderabad Rupa and the Rupa logo are trademarks of Rupa Publications, Rupa and the Rupa logo

मेरे दादा।की स्मृति में
Suryakant Chemburkar,

शिवसेना की स्थापना से पहले काम करते हुए युवा बाल ठाकरे। ठाकरे ने कहा था कि एक अच्छे कार्टूनिस्ट को मानव शरीर रचना का गहन ज्ञान होना आवश्यक है।

ठाकरे 1960 के दशक में एक शिवसेना रैली को संबोधित कर रहे हैं, जिसके पृष्ठभूमि में शिवसेना का चिन्ह, एक दहाड़ता हुआ बाघ, दिखाई दे रहा है।

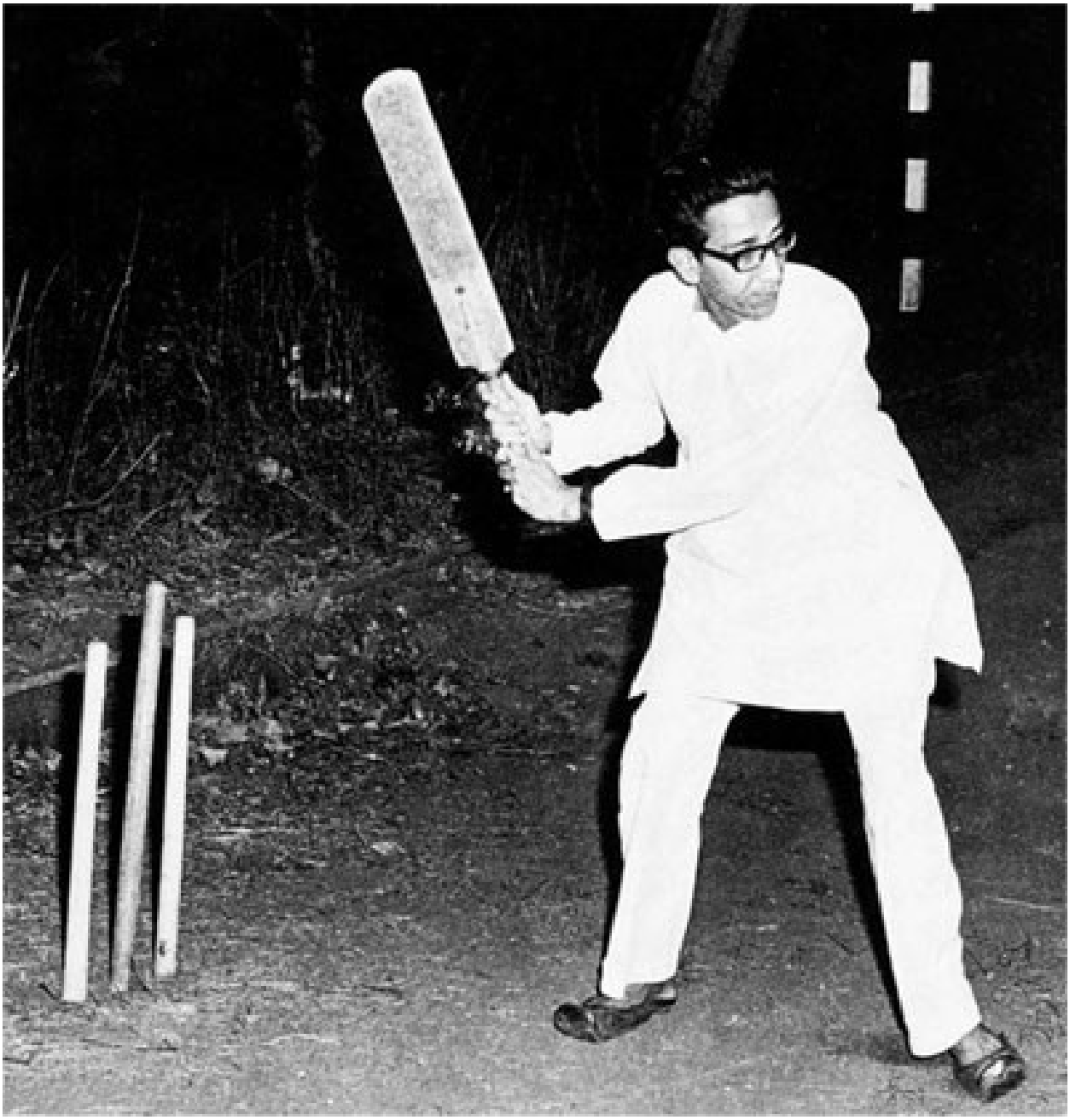

□□□□□□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□

□□□ □□□□□, □□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□

[illegible]

REMEMBER YOU'RE OFF TO GUIANA TO FIGHT THE "REDS"
-----I'LL GO TO MOSCOW TO TALK PEACE WITH "REDS"—
WINNIE THE STATESMAN
Colonialism

[illegible]

The Thackeray family: (Standing from L to R) Jaidev (Thackeray’s estranged son), his wife Smita (since separated), Madhavi (wife of Thackeray’s eldest son Bindumadhav), Bindumadhav, Uddhav and Rashmi (Uddhav’s wife). (□□□□) □□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□, □□□ □□□□□, □□□□□ □□ son Aditya, Jaidev’s son Rahul and Meenatai Thackeray.

1996 □□□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□-□□□□□□□ □□□□□ □□□□□□ □□ □□□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□□□□□ □□□□

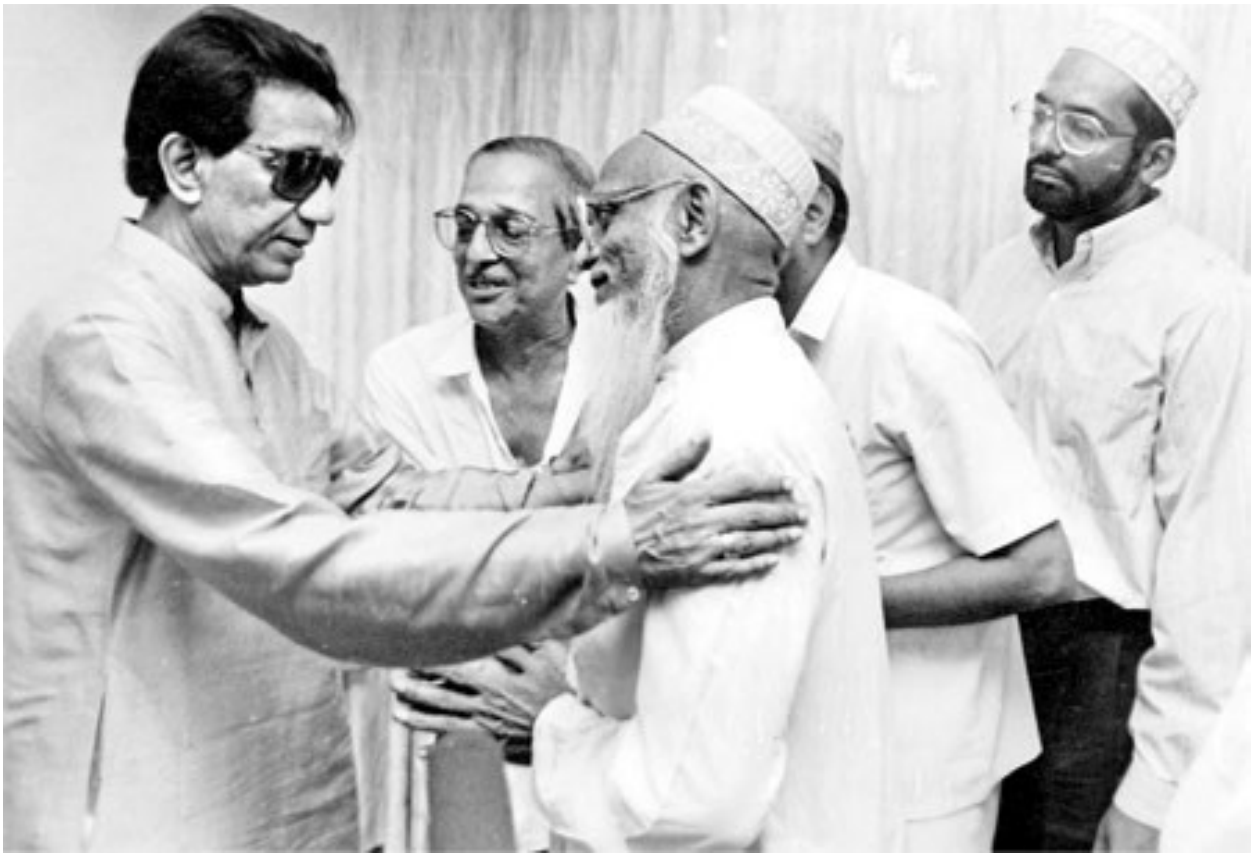

भिंडी बाजार के मुस्लिम समुदाय के लोग बाल ठाकरे की पत्नी मीनाताई ठाकरे के निधन के बाद मातोश्री में उनसे मिलने पहुंचे।

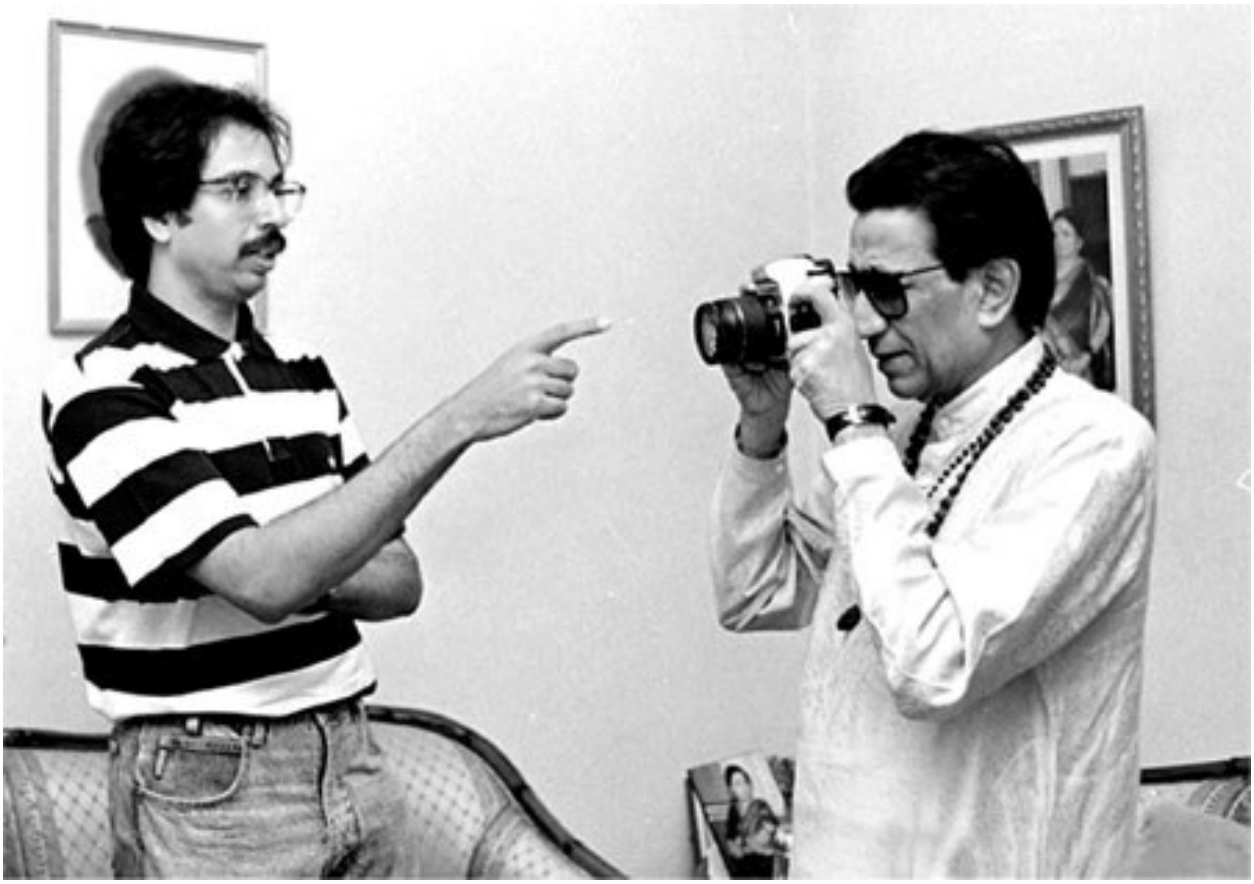

□□□□□ □□ □□□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□□□□□□ □□ □□□ □□□□□ □□ □□□ □□□, □□ □□ □□□□□ □□□□□□□□□□ □□□□

ठाकरे और अमिताभ बच्चन घनिष्ठ मित्र रहे हैं। 1982 में बेंगलुरु में 'कुली' की शूटिंग के दौरान अमिताभ के घायल होने के बाद, उन्हें मुंबई हवाई अड्डे से ब्रीच कैंडी अस्पताल तक शिवसेना की एम्बुलेंस ने पहुंचाया था।

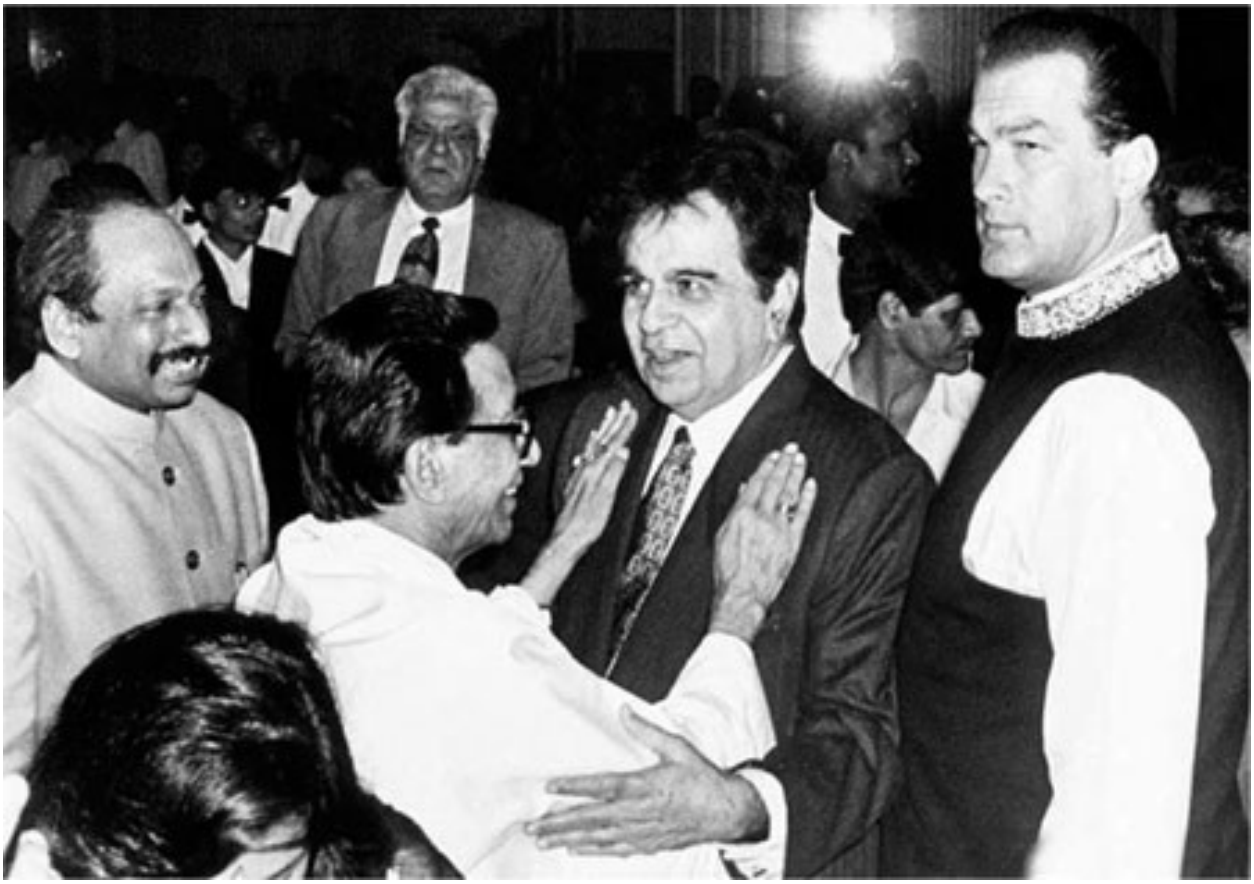

□□ □□ □□□□□ □□□□□, □□□□□ □□□□□ (□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□)□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□□ □□ □□ □□ '□□□ □□ □□□□' □□ □□□□ □□□□ □□□

□□□□□ □□□□□ □□ □□□, □□□□□□□□□□ □□□□□□□□□□□ □□□ □□□□□□□□-□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□ □□□□ □□□

प्रणब मुखर्जी, जिन्हें उन्होंने 2012 के राष्ट्रपति चुनावों में समर्थन दिया था, एनडीए के उम्मीदवार पी.ए. संगमा के खिलाफ चुनाव लड़ रहे हैं।

□□□□ □□□□□ □□□ □□ □□□, □□□□□□□□□□ 2005 □□□ □□□□□□□□ □□□□ □□ □□ □□□□ □□□ □□ □□□□□□□, □□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□□ □□□□□ □□□ □□ □□ □□ □□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□ □□□□ □□□ □□□□

अप्रैल 2012 में लता मंगेशकर के पिता दीनानाथ मंगेशकर की 70 वीं पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित एक समारोह में लता मंगेशकर और माधुरी दीक्षित के साथ। बाल ठाकरे के निधन के बाद, लता ने कहा था कि महाराष्ट्र ने एक पिता तुल्य व्यक्ति को खो दिया है।

अंतर्वस्तु

स्वीकृतियाँ
प्रस्तावना

1. प्रारंभिक वर्ष

2. राजनीतिक कार्टूनिस्ट

3. महाराष्ट्रीयन और प्रवासी

4. सेना कोर को संगठित करना

5. बाल ठाकरे: व्यक्तित्व और उनका व्यक्तित्व

6. राजनीति, वादे और हिंसा

7. कम्युनिस्टों के साथ लड़ाई

8. बृहत्तर महाराष्ट्र और पहली गिरफ्तारी

9. Bhiwandi burns

10. हत्या और जनादेश

11. थोकशाही के सिद्धांत और परेल में उसकी सफलता

12. चुनावी सभा में अपमानित होना

13. बाघ का सफेद कॉलर

14. शिवसेना ने कांग्रेस के रोजगार निर्देशों पर मुहर लगाई: स्थानीय लोगों को प्राथमिकता

15. कांग्रेस, आपातकाल और कलात्मक असहमति के प्रति शून्य सहिष्णुता का समर्थन।

16. आश्चर्यजनक घोषणा

17. कपड़ा उद्योग की त्रासदी तलाक का कारण बनी

18. समाजवादी गीत पर झूमते हुए

19. हिंदुत्व की ओर और फिर भिवंडी की ओर वापसी

20. भाजपा के साथ हाथ मिलाना

21. मुंबई चुनाव 1985: एक नई जिंदगी

22. ग्रामीण क्षेत्रों में घुसपैठ

23. केसरिया कालीन बिछाना

24. केंद्र मंच पर

25. क्रॉस-वोटिंग और मतदान पर प्रतिबंध

26. भाजपा के साथ फिर से गठबंधन

27. भुजबल सुलक ने शिवसेना छोड़ी

28. 1992-93 □□ □□□□

29. □□□□□ □□ □□□□□

30. □□□□□□□ □□□□□

31. Raj versus Uddhav

32. □□□ □□□□□ = □□□□□□□

□□□□□
□□□□□□□□□□
□□□□□□□□□□□
□□□□□ □□□□□□□

आभार

बाल ठाकरे और आधुनिक भारत के सबसे विवादास्पद राजनीतिक संगठनों में से एक पर उनकी पुस्तक कई लोगों की मदद और प्रोत्साहन के बिना संभव नहीं होती। सबसे पहले मैं अपनी प्रकाशक प्रिया कपूर को इस परियोजना के प्रति उनके उत्साह और इस पुस्तक को पाठकों तक इतनी जल्दी पहुँचाने के उनके प्रयासों के लिए धन्यवाद देना चाहता हूँ। प्रिया ने मुझे बाल ठाकरे के बारे में मूल रूप से दी गई जानकारी से अधिक जीवनी संबंधी जानकारी शामिल करने के लिए भी प्रेरित किया; इससे पुस्तक और भी बेहतर हो गई है।
मैं उनके पिता प्रमोद कपूर को भी बहुत-बहुत धन्यवाद देना चाहता हूँ, जो रोली बुक्स के मार्गदर्शक हैं और जिन्होंने सचिन तेंदुलकर की मेरी जीवनी भी प्रकाशित की है। पद्मा राव सुंदरजी एक उत्कृष्ट संपादक रही हैं। उन्होंने रिकॉर्ड समय में पाठ का गहन अध्ययन किया और उनके हस्तक्षेप से पाठ अधिक स्पष्ट और पठनीय बन गया है।
शिवसेना के मुखपत्र सामना के कार्यकारी संपादक संजय राउत ने हर संभव तरीके से मेरी मदद की, और बाल ठाकरे के प्रतिनिधि के रूप में अपनी भूमिका बखूबी निभाई, जिसे वे लगभग दो दशकों से बखूबी निभाते आ रहे हैं। ठाकरे के शुरुआती सहयोगियों में से दिलीप घाटपांडे और विजय गांवकर ने अपनी यादों से मेरा साथ दिया, साथ ही शिवसेना के वकील बैरिस्टर अच्युत चाफेकर ने भी। सुरेश गोथंकर ने वर्षों से बड़ी मेहनत से एकत्रित की गई अभिलेखीय सामग्री से मेरी सहायता की; और के. बाला, किशोर धारगलकर, वसंत खेर और डॉ. सतीश नाइक ने निरंतर मेरा हौसला बढ़ाया।
शिवसेना के कुछ सबसे मजबूत विरोधियों, मृणाल गोरे, अहिल्या रंगनेकर (जो दुर्भाग्य से अब हमारे बीच नहीं हैं), रोजा देशपांडे और बी.एस. धूमे ने मुझसे खुलकर अपनी राय रखी।
मेरे माता-पिता, ज्योत्सना और जगदीश पुरंदारे के प्रति मेरी कृतज्ञता अतुलनीय है। मैं इसे चुकाना नहीं चाहता, क्योंकि पैसा तो चुकाकर भूल जाने वाली चीज नहीं है। और हमेशा की तरह, मेरे भाई कुणाल को उनके शांत और निरंतर समर्थन के लिए धन्यवाद। अंत में, मैं सबसे पहले बाल ठाकरे को धन्यवाद देना चाहता हूँ, क्योंकि वे इतने रोचक विषय रहे और उन्होंने 1999 में इस पुस्तक का पहला संस्करण प्रकाशित करने के लिए तुरंत सहमति दी। जो संस्करण आपके हाथों में है, वह संशोधित और पूरी तरह से अद्यतन संस्करण है। इस पुस्तक में जो भी अच्छी बातें हैं, उनके लिए ये सभी लोग जिम्मेदार हैं। किसी भी त्रुटि के लिए मैं स्वयं जिम्मेदार हूँ।

Vaibhav Purandare
Mumbai
नवंबर 2012

[redacted]

*‘[redacted] 86 [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]... [redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]

अब उन्हें इतना दुर्बल और असहाय देखकर उनमें से कई लोगों की आँखों में आंसू आ गए। शिवसेना बाल ठाकरे के व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द ही बनी थी। उनके बिना शिवसेना कैसी होगी, वे सोचने लगे, भले ही उस शाम उन्हें यह एहसास हो गया था कि वे राजनीति से संन्यास लेने के लिए तैयार हैं। उनके मन में शिवसेना की वह कहानी उभर आई जो दशकों से इतने नाटकीय ढंग से आगे बढ़ी थी, एक ऐसी कहानी जो बाल ठाकरे के प्रति उनके अटूट लगाव के कारण ही संभव हो पाई थी…

एक युग का अंत
17 नवंबर 2012 को दोपहर 3:30 बजे, जब यह पुस्तक छपने जा रही थी, तभी यह खबर आई कि शिवसेना के संस्थापक और भारतीय राजनीति के सबसे विवादास्पद और करिश्माई व्यक्तित्वों में से एक बाल केशव ठाकरे का हृदय-श्वसन संबंधी विकार से निधन हो गया है। वे कई महीनों से फेफड़ों और अग्नाशय संबंधी बीमारियों से पीड़ित थे।
महाराष्ट्र की राजनीति में एक युग का अंत हो गया। उनके अंतिम संस्कार में उमड़ी भीड़ स्वतंत्रताोत्तर भारत में देखी गई सबसे विशाल भीड़ में से एक थी। वास्तव में, यह महात्मा गांधी, बाबासाहेब अंबेडकर, जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और सी.एन. अन्नादुरई के अंतिम संस्कारों में उमड़ी भीड़ के बराबर थी। भीड़ का आकार इस बात का प्रमाण था कि ठाकरे ने राज्य और देश पर कितनी गहरी छाप छोड़ी थी।
चार दशकों से भी अधिक समय तक, लाखों लोग मध्य मुंबई के ऐतिहासिक मैदान शिवाजी पार्क में शिवसेना नेता के भाषण सुनने के लिए एकत्रित होते रहे। मृत्यु के बाद, वे और भी अधिक जन-आकर्षण का केंद्र बन गए।
मातोश्री, जो बांद्रा पूर्व में ठाकरे का आवास है, से शिवाजी पार्क तक की 6 किलोमीटर की दूरी तय करने में आमतौर पर 20 मिनट से अधिक समय नहीं लगता है, जिसे उनके अंतिम संस्कार के स्थान के रूप में चुना गया था।
लेकिन शिवसेना नेता के शवयात्रा में सात घंटे लगे।
ठाकरे के पार्थिव शरीर को भारतीय तिरंगे में लपेटकर ले जा रही मालाओं से सजी गाड़ी, जो सुबह 9 बजे के तुरंत बाद उनके घर से निकली, अविश्वसनीय रूप से धीमी गति से आगे बढ़ रही थी। जुलूस 2 किलोमीटर से अधिक लंबा था और रास्ते भर सड़कों और बालकनियों पर कई लोग कतार में खड़े थे।
बाल ठाकरे की मृत्यु की घोषणा होने के बाद से अधिकांश भारतीय टेलीविजन चैनलों ने लगभग पूरी तरह से उन्हीं पर ध्यान केंद्रित किया, और कई एंकरों ने उनके साथ अपने पुराने साक्षात्कार प्रसारित किए, भले ही वे उनके सबसे बड़े आलोचकों में से थे।
भीड़ का अनुमान पाँच लाख से लेकर दस लाख तक लगाया गया था, और ठाकरे ने अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप पूरे मुंबई को ठप्प कर दिया। सिनेमाघरों ने फिल्म प्रदर्शन रद्द कर दिए, मुंबई के पुलिस आयुक्त ने अपनी बेटी की शादी का रिसेप्शन स्थगित कर दिया, और फिल्म स्टार दिलीप कुमार, जो ठाकरे के सबसे पुराने दोस्तों में से एक हैं, ने अपना 90 वां जन्मदिन समारोह रद्द कर दिया।
लेकिन: शिवसेना से जुड़े हिंसा और व्यवधान का कोई भी दृश्य वहां नहीं था। शिवसेना समर्थकों के अलावा, शोक व्यक्त करने वालों में मुंबई के हजारों आम नागरिक भी शामिल थे। पूरे महानगर में एक शांत और संयमित शोक का माहौल छाया

हुआ था। जब जुलूस मातोश्री से 2 किलोमीटर दूर माहिम दरगाह पहुंचा, तो मुस्लिम धर्मगुरुओं ने सम्मान के प्रतीक के रूप में ताबूत पर फूलों की माला डाली; और रास्ते में चार स्थानों पर फूलों की वर्षा की गई। ठाकरे के पार्थिव शरीर को पहले दादर स्थित शिवसेना मुख्यालय, शिवसेना भवन ले जाया गया और मैदान ले जाने से पहले आधे घंटे तक वहां रखा गया।
खचाखच भरे शिवाजी पार्क में, जब पुलिस बैंड ने श्रद्धांजलि बजाई और 21 तोपों की सलामी दी गई, तो वहां पूर्ण सन्नाटा छा गया।
भारतीय राजनीति की कई जानी-मानी हस्तियां अंतिम संस्कार में मौजूद थीं। एल.के. आडवाणी, सुषमा स्वराज, अरुण जेटली, शरद पवार, पवार की बेटी सुप्रिया सुले, नितिन गडकरी, प्रफुल्ल पटेल, मेनका गांधी, राम जेठमलानी, शाहनवाज हुसैन और राजीव शुक्ला नई दिल्ली से आए थे; महाराष्ट्र के कांग्रेस मुख्यमंत्री पृथ्वीराज चव्हाण पुष्पमाला लेकर आए; मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, महाराष्ट्र के राज्यपाल के. शंकरनारायणन, गृह मंत्री आर.आर. पाटिल, महाराष्ट्र विधानसभा अध्यक्ष दिलीप वलसे-पाटिल, गोपीनाथ मुंडे और ठाकरे के कभी शिष्य रहे छगन भुजबल भी वहां उपस्थित थे। उद्योगपति अनिल अंबानी भी अंतिम संस्कार में शामिल हुए।

उद्धव ठाकरे ने अपने चचेरे भाई राज, बड़े भाई जयदेव और बेटे आदित्य के साथ 18 नवंबर 2012 को मुंबई में अपने पिता बाल ठाकरे का अंतिम संस्कार किया।
ठाकरे के निवास स्थान बांद्रा स्थित मातोश्री से शिवाजी पार्क तक और फिर ऐतिहासिक मैदान में अंतिम संस्कार के लिए मुंबई में लाखों लोग एकत्रित हुए।

बॉलीवुड ने भी अपना योगदान दिया। अभिनेता संजय दत्त और उनकी बहन, लोकसभा सदस्य प्रिया, अमिताभ बच्चन, नाना पाटेकर, श्रेयस तलपदे और रितेश देशमुख उपस्थित थे। पिछली शाम, बच्चन ने भावुक होकर ट्वीट किया था कि बालासाहेब उनके घनिष्ठ मित्र थे और उन्होंने उनके पूरे करियर में उनका साथ दिया, न केवल 1982 में 'कुली' के सेट पर घायल होने के बाद मुंबई हवाई अड्डे पर सेना की एम्बुलेंस भेजकर उनकी मदद की, बल्कि बोफोर्स विवाद के दौरान भी उनका समर्थन किया।
बच्चन, जो 14 नवंबर को ठाकरे की हालत गंभीर होने पर उनसे मिलने उनके मातोश्री स्थित आवास पर पहुंची थीं, ने यह भी लिखा कि कैसे जया बच्चन से शादी के बाद जब वह ठाकरे के घर गई थीं, तो शिवसेना नेता और उनकी पत्नी मीना- ताई ने उनका ठीक उसी तरह स्वागत किया था जैसे किसी बहू का एक पारंपरिक महाराष्ट्रीयन घर में स्वागत किया जाता है।
ठाकरे की करीबी रहीं संगीत की दिग्गज गायिका लता मंगेशकर ने याद करते हुए कहा, 'जब बालासाहेब थे, तब महाराष्ट्र था, उनके बिना कुछ नहीं है। महाराष्ट्र के लिए उन्होंने जो किया है, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। हमें कई और वर्षों तक उनके साथ रहने की जरूरत थी।'
मैंने अंतिम संस्कार में शामिल कुछ महिलाओं से बात की, जो सुबह 4 बजे से बालासाहेब के दर्शन के लिए कतार में खड़ी थीं। उन्हें पता चला था कि मैदान में दिवंगत नेता को अंतिम श्रद्धांजलि देने की अनुमति दी जाएगी, इसलिए वे बहुत जल्दी आ गई थीं। उन्होंने कहा कि उन्हें गहरा दुख है, क्योंकि बालासाहेब उनके 'मित्र, दार्शनिक, मार्गदर्शक और रक्षक' थे।
मैदान में यही चर्चा थी कि मुंबई में इससे पहले ऐसा कुछ शायद ही कभी देखा गया हो। लोकमान्य तिलक का अंतिम संस्कार शहर में एकमात्र ऐसा अंतिम संस्कार था जो श्मशान घाट में नहीं, बल्कि सार्वजनिक स्थान (गिरगाँव चौपाटी) पर आयोजित किया गया था, क्योंकि उनके अनुयायी बहुत अधिक थे। शिवसेना प्रमुख के अलग रह रहे बेटे जयदेव भी परिवार के बाकी सदस्यों के साथ आए थे: उद्धव और उनकी पत्नी रश्मी, उनके बेटे आदित्य और तेजस; बहू स्मिता, जयदेव की अलग रह रही पत्नी, और उनके दो बेटे राहुल और ऐश्वर्या; राज ठाकरे, उनकी पत्नी शर्मिला और उनके बेटे अमित; ठाकरे के सबसे बड़े बेटे बिंदूमाधव के दो बच्चे निहार और नेहा; और बाल ठाकरे की बहन संजीवनी करंदीकर।
परिवार के सदस्यों के साथ-साथ ठाकरे के डॉक्टर, पल्मोनोलॉजिस्ट जलील पारकर (एक मुस्लिम, जिन पर बाल के कट्टर हिंदुत्व के सिद्धांत का वर्षों से पूर्ण विश्वास था) को भी अंतिम संस्कार में प्रमुख स्थान दिया गया। ठाकरे के दो दशकों से अधिक समय से खास सहयोगी रहे युवा नेपाली थापा को भी विशेष स्थान दिया गया। चिता को शिवाजी की प्रतिमा के ठीक नीचे, उसी स्थान पर रखा गया जहाँ से ठाकरे अपनी रैलियों को संबोधित करते थे।
जब उद्धव ने प्रज्वलित किया, तो 'बालासाहेब अमर रहे' के नारे हवा में गूंज उठे और उद्धव और राज दोनों अपने आंसू नहीं रोक पाए।
राजनीति ने उन्हें अलग कर दिया था, लेकिन दुख ने उन्हें फिर से मिला दिया। खबरों के मुताबिक, यह मिलन अस्थायी ही रहा: इस बात पर अटकलें लगाई जा रही थीं कि राज अपने चाचा के पार्थिव शरीर को ले जा रही मालाओं से सजी गाड़ी में क्यों नहीं थे, और उन्होंने घर जाने से पहले शवयात्रा के आगे चलने का

फैसला क्यों किया। बताया जाता है कि उन्होंने शिवाजी पार्क के पास स्थित अपने घर पर टेलीविजन पर अंतिम संस्कार का शेष भाग देखा, और फिर शाम को दाह संस्कार में शामिल होने पहुंचे।
बाल ठाकरे ने कभी कोई आधिकारिक पद नहीं संभाला था। फिर भी, उन्हें राजकीय सम्मान के साथ अंतिम विदाई दी गई। यह इस बात का प्रमाण था कि यद्यपि 1966 में शिवसेना की स्थापना के बाद से ही उनकी राजनीति को विभाजनकारी बताकर आलोचना की जाती रही थी, फिर भी राज्य सरकार ने उन्हें जन नेता के रूप में स्वीकार किया।
लेकिन बाल ठाकरे के निधन के बाद भी विवाद उनका पीछा नहीं छोड़ रहे थे। उनकी मृत्यु से दो दिन पहले, उनकी बिगड़ती हालत की अफवाहें जंगल की आग की तरह फैल गई थीं। मुंबई में दहशत का माहौल था और लगभग सब कुछ ठप्प हो गया था। हजारों शिवसैनिक उनकी हालत जानने के लिए मातोश्री पहुंचे, जिसके चलते सरकार को सुरक्षा बढ़ानी पड़ी और यहां तक कि दंगा नियंत्रण पुलिस को भी बुलाना पड़ा। फिर भी, कोई मेडिकल बुलेटिन जारी नहीं किया गया। इसके बजाय, शिवसेना के नेता लगातार मातोश्री आते-जाते रहे और बाहर मौजूद भीड़ को आश्वस्त करते रहे कि उनकी हालत 'स्थिर' है और वे ठीक हो रहे हैं। ऐसा लग रहा था मानो राज्य सरकार को भी इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी।
अंत्येष्टि समारोह में, सैनिकों ने उस सप्ताह की पीड़ा को याद किया जब उनके पास कोई विश्वसनीय जानकारी नहीं थी, और आश्चर्य व्यक्त किया कि क्या किसी ने इस बात पर विचार किया था कि अनिश्चितता से वे कितने व्याकुल थे। अंतिम संस्कार के ठीक एक दिन बाद और उनके द्वारा प्रदर्शित उल्लेखनीय संयम के बाद, कुछ सैनिक मानो अपने पुराने स्वरूप में लौट आए।
मुंबई से 87 किलोमीटर दूर पालघर में दो लड़कियों को गिरफ्तार किया गया। उनका जुर्म क्या था? ठाकरे की मृत्यु के बाद मुंबई में हुए बंद की आलोचना करते हुए एक सोशल नेटवर्किंग साइट पर टिप्पणी पोस्ट करना। शिवसेना के एक पदाधिकारी ने शिकायत दर्ज कराई और कॉलेज से अभी-अभी निकली इन लड़कियों को 'धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने' के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया। उनकी गिरफ्तारी के तुरंत बाद सैनिकों ने एक लड़की के चाचा के क्लिनिक में तोड़फोड़ की।
सोशल मीडिया पर आक्रोश फूट पड़ा। प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया के प्रमुख न्यायमूर्ति मार्कंडेय काटजू जैसे कुछ प्रमुख कानूनी विशेषज्ञों ने 'धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने' के आरोप में पुलिस द्वारा कानून का दुरुपयोग करने की कड़ी आलोचना की, जबकि अन्य ने मांग की कि आईटी अधिनियम की उस धारा को संशोधित किया जाए जिसके तहत गिरफ्तारियां की गईं।
इस विवाद के बीच ही, एक और विवाद तब खड़ा हो गया जब शिवसेना ने श्मशान स्थल पर बाल ठाकरे के लिए एक स्मारक बनाने की मांग की।
महाराष्ट्र सरकार ने सकारात्मक रुख अपनाते हुए कहा कि अभूतपूर्व भावनात्मक प्रतिक्रिया को देखते हुए इस मांग को नजरअंदाज करना मुश्किल होगा, लेकिन इसमें कानूनी अड़चनें थीं। (बॉम्बे उच्च न्यायालय को यह तय करना था कि पार्क मनोरंजन स्थल है या सार्वजनिक खेल का मैदान, क्योंकि निर्माण कार्य केवल सार्वजनिक खेल के मैदान में ही अनुमत है।) इस बीच, स्थानीय निवासी संघों ने इस विचार का कड़ा विरोध किया।
बाल ठाकरे की मृत्यु ने इस बात को लेकर भी अटकलें तेज कर दीं कि उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व के बिना शिवसेना का क्या होगा, उसका स्वरूप कैसा

होगा और क्या आपस में लड़ रहे चचेरे भाई एक साथ आएंगे या वे और भी दूर हो जाएंगे।
लाखों शिवसैनिकों के लिए, इन सब घटनाओं ने दिवंगत नेता की छवि को और भी मजबूत कर दिया। जीवन में वे उनके नायक थे। शोकग्रस्त आँखों में, मृत्यु ने ठाकरे को लगभग एक पौराणिक व्यक्तित्व प्रदान कर दिया।

1

[illegible]

[illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] 'Ramayana' [illegible]. [illegible] [illegible] [illegible]

का एक स्तंभ था। इस प्रकार अखबार में मेरा दूसरा कार्यकाल 1952 में शुरू हुआ, पहले कार्यकाल के समाप्त होने के दो साल बाद।

एक दिन, श्री आर. मसानी पर बनाया गया मेरा एक पेंसिल स्केच अनुमोदन के लिए ए.बी. नायर के पास गया। उन्होंने उसे देखा और मुझे अपने केबिन में बुलाया। उन्होंने मुझसे पूछा, “क्या आप श्री आर. मसानी को जानते हैं?” जब मैंने कहा कि मैं नहीं जानता, तो उन्होंने कहा, “वह एक अच्छे आदमी हैं।” मैंने कहा, शायद। फिर उन्होंने सलाह दी, “मसानी पर कार्टून बनाने से बचना।” मैं गुस्से में केबिन से बाहर आ गया।

कुछ समय बाद, जब मैंने (उस समय के कांग्रेस के दिग्गज नेता) एस.के. पाटिल का व्यंग्यचित्र बनाया, तो मुझे फिर बुलाया गया। और मुझसे वही सवाल पूछा गया: “क्या आप श्री एस.के. पाटिल को जानते हैं?” मैंने जवाब दिया: “मैं इन लोगों को नहीं जानता। ये मेरे आदर्श हैं, और मैं इनका उपयोग तब करता हूँ जब मुझे उचित लगता है।” मुझे वही सुझाव मिला – कि मुझे जहाँ तक संभव हो, श्री एस.के. पाटिल से बचना चाहिए।²

ठाकरे ने कहा कि नायर के पास कुछ ऐसे आदर्श थे जिन्हें वह पवित्र मानते थे, और वह उन्हें महाराष्ट्र के कुछ प्रभावशाली राजनीतिक हस्तियों का मज़ाक उड़ाने की अनुमति नहीं देते थे। 'यदि आप इस तरह की पाबंदियाँ लगाकर मेरे आदर्शों को छीन लेते हैं, तो मैं कैसे जारी रख सकता हूँ?' क्रोधित ठाकरे ने प्रबंध संपादक से पूछा और अपना इस्तीफा सौंप दिया।
‘तब मेरे संपादक हरिहरन ने मुझे फोन किया और पूछा कि क्या मैं पागल हो गया हूँ। मैंने उनसे कहा कि मेरे लिए ऐसे व्यक्ति के साथ काम करना असंभव है जिसके नाम के पहले अक्षर 'ए.बी.' हों लेकिन उसे पत्रकारिता का ए-बी भी न पता हो, कार्टून बनाना तो दूर की बात है।’³
ठाकरे ने चर्चिल कार्टून प्रकरण में हरिहरन की भूमिका की ओर भी इशारा किया। ‘जब मुझे कैसल एंड कंपनी से पत्र मिला, जो चर्चिल की आत्मकथा को चित्रों के साथ प्रकाशित करने वाली थी, तो मैंने उसे हरिहरन को दिखाया और अपने कार्टून भेजने की अनुमति मांगी। लेकिन उन्होंने बेरुखी से मेरा अनुरोध ठुकरा दिया। इससे मेरे मन में बहुत गुस्सा आया। बाद में, मेरे एक मित्र नाडकर्णी ने मेरे कार्टून भेजने में मेरी मदद की।’⁴
फ्री प्रेस जर्नल से अलग होने के बाद युवा ठाकरे ने नायर और हरिहरन के रवैये से नाराज होकर जिस यात्रा पर निकले थे, उसने मार्मिक के रूप में एक विचित्र मोड़ ले लिया।
लेकिन मार्मिक को लॉन्च ही क्यों किया गया था?
ठाकरे ने कहा: ‘उन दिनों, अखबारों के रविवार के परिशिष्टों में “पोलियो के कारण” और “मधुमेह के दुष्प्रभाव” जैसी खबरें छपती थीं। जो लोग पहले से ही मधुमेह से पीड़ित हैं, उन्हें इसके दुष्प्रभावों के बारे में क्यों बताया जाए? वह भी रविवार जैसे दिन, जब लोग सामान्य, पारंपरिक पठन सामग्री से हटकर कुछ और पढ़ना चाहते हैं? मुझे लगा कि पाठकों को सप्ताहांत में कुछ नया, दिल

को छूने वाला और ताजगी भरा पढ़ने की जरूरत है। इसी जरूरत को पूरा करने के लिए मार्मिक की शुरुआत की गई।’⁵
जब ठाकरे फ्री प्रेस जर्नल के साथ जुड़े थे, तब तक वे भारत के सबसे प्रतिभाशाली कार्टूनिस्टों में से एक के रूप में पहचाने जाने लगे थे। एक तीखे व्यंग्य वाले कार्टूनिस्ट के रूप में उनकी यह प्रतिष्ठा उनकी नवोदित पत्रिका के लिए फायदेमंद साबित होनी ही थी। उनके पिता, 'प्रबोधनकर' की एक मुखर और दृढ़ सामाजिक सुधारक के रूप में प्रतिष्ठा भी उनके लिए एक अतिरिक्त लाभ थी; और साथ ही यह तथ्य भी था कि मराठी में कार्टून साप्ताहिक पत्रिका उस समय एक नई बात थी।
पत्रिका का शुरुआती तीन वर्षों का सफर ठाकरे के मनचाहे अंदाज़ में बीता: हल्का-फुल्का, मनोरंजक, हास्यपूर्ण व्यंग्य और कटाक्ष। पाठकों के बीच यह पत्रिका खूब सफल रही, जिन्होंने युवा कार्टूनिस्ट के गुदगुदाने वाले हास्य और तीखे व्यंग्य को दिल से पसंद किया, जो देश के ताकतवर और कमज़ोर लोगों की खामियों और कमियों को उजागर करता था। इसने एक अलग भाषाई राज्य के गठन के तुरंत बाद पनपे नीरस और घुटन भरे माहौल के विपरीत रंग और एक खास तरह का मनोरंजन प्रस्तुत किया। यह माहौल मुंबई के मराठी भाषी लोगों के कड़वे और धीमी गति से चलने वाले जीवन की एक काली पृष्ठभूमि बन गया था। जैसे-जैसे परिदृश्य अंधकारमय होता गया, ठाकरे ने मराठी लोगों की आत्मा में झाँका और उस निराशा से भरी हास्य-शैली का सृजन किया जो अब स्थानीय लोगों के जीवन में एक प्रमुख स्थान रखती थी। महाराष्ट्र के जीवन की विभिन्न बारीकियों को समझने वाले एक संवेदनशील पर्यवेक्षक के रूप में, उन्होंने अपनी कला के माध्यम से मराठी जनता के दैनिक अभावों को प्रतिबिंबित किया। 1963 में, कुछ मराठी लोगों ने ठाकरे से अपनी शिकायतें साझा कीं और कहा कि वे जहाँ भी जाते हैं, उनके साथ भेदभाव किया जाता है और उन्हें नौकरी के अवसर नहीं दिए जाते। इसके तुरंत बाद, ठाकरे के मित्र श्रीकांत गडकरी उनसे मिले और उन्हें टेलीफोन निर्देशिका दिखाते हुए विभिन्न कंपनियों में शीर्ष पदों पर आसीन गैर-महाराष्ट्रियों की संख्या बताई। ठाकरे ने याद करते हुए कहा, ‘यहीं से पहली चिंगारी भड़की। मुंबई महाराष्ट्र में शामिल था, लेकिन मराठी मानुष का कोई महत्व नहीं था। चूंकि सभी शीर्ष पद बाहरी लोगों के पास थे, इसलिए केवल उन्हीं के लोगों को मौका मिलता था। मैंने मार्मिक में “वाचा अनी ठंडा बसा” (पढ़ो और चुपचाप बैठो) शीर्षक के तहत इन सभी नामों की पूरी सूचियाँ प्रकाशित करना शुरू कर दिया। एक महीने बाद, लोग और सूचियाँ भेजने लगे। लेकिन मराठी मानुष तब तक जागृत नहीं होता जब तक उसे चोट न लगे। इसलिए मैंने कॉलम का नाम बदलकर “वाचा अनी उठा” (पढ़ो और उठो) कर दिया।’
इसका असर तुरंत देखने को मिला: बड़ी संख्या में युवा प्रबोधनकर ठाकरे के 77-ए, रानाडे रोड, दादर स्थित आवास पर उमड़ पड़े, जो उस समय मार्मिक पत्रिका का कार्यालय भी था। बाल द्वारा 'भूमिपुत्र' के मुद्दे को उठाने से मुंबई के मध्यम और श्रमिक वर्ग के महाराष्ट्रियों के दिलों में गहरा असर हुआ और युवाओं के एक अनसुने वर्ग को अपनी आवाज़ उठाने का मौका मिल गया। असंतोष काफी समय से पनप रहा था; आखिरकार उसे अभिव्यक्ति का अवसर मिल गया। 1963 से, मार्मिक मुंबई की टेलीफोन डायरेक्टरी से नायर, मेनन, शाह और पटेल परिवारों के नियमित प्रकाशनों के साथ-साथ अपने व्यंग्य लेखन के लिए भी प्रसिद्ध होने लगा। साथ ही, संपादकीय और तीखे व्यंग्यों के लिए भी। बेशक, संपादकीय और तीखे व्यंग्यों में बौद्धिक विश्लेषण को ज्यादा महत्व नहीं

दिया जाता था, क्योंकि ठाकरे को उच्च स्तरीय शब्दावली से हमेशा ही चिढ़ रही है (वे कहते हैं, 'मेरे पिता ने मुझे ऐसी भाषा में बोलना और लिखना सिखाया जो आम आदमी समझ सके'), लेकिन मार्मिक कथित भेदभाव को उजागर करने में इतना कारगर साबित हुआ कि 1966 में इसकी प्रतियाँ लगभग दोगुनी हो गईं: पिछले वर्ष के 20,000 से बढ़कर 40,000 हो गईं।
मैरी फेन्सॉड कैटजेनस्टीन ने अपनी पुस्तक 'एथनिकिटी एंड इक्वालिटी: द शिव सेना पार्टी एंड प्रेफरेंशियल पॉलिसीज इन बॉम्बे' में 1960 के दशक में मुंबई में व्यापक साक्षरता और शिवसेना की सफलता के बीच समानता बताई है। शिवसेना की लोकप्रियता बढ़ाने में साक्षरता की भूमिका को 'स्पष्ट' बताते हुए वह लिखती हैं: 'बंबई में, कई अन्य ग्रामीण या शहरी इलाकों के विपरीत, व्यापक साक्षरता ने जनता की रुचि और समर्थन प्राप्त करने के लिए मीडिया का उपयोग करने की संभावनाएं खोल दीं।'
1960 के दशक की शुरुआत तक मुंबई में साक्षरता का स्तर निस्संदेह काफी ऊंचा हो चुका था। जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, 1921 से मुंबई में साक्षरता की दशकवार वृद्धि इस प्रकार रही: उस वर्ष मुंबई की जनसंख्या में साक्षर लोगों का प्रतिशत 23.3 था; 1931 में यह बढ़कर 23.8 हो गया, 1941 में 40.8, 1951 में 49.3 और 1961 में 58.6 हो गया। कैटजेनस्टीन लिखते हैं: '1961 तक, बॉम्बे में साक्षरता का स्तर महाराष्ट्र राज्य के औसत से दोगुना था।'
विशेष रूप से, शिवसेना की उत्पत्ति का मूल आधार मुद्रित शब्द था, जिसे पार्टी ने अपने चार दशकों से अधिक के अस्तित्व में अक्सर तिरस्कार और घृणा की दृष्टि से देखा है। मार्मिक ने मुंबई की मराठी भाषी आबादी का ध्यान स्थानीय लोगों पर हो रहे घोषित अन्याय की ओर केंद्रित करने और शिवसेना संगठन की नींव रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
बेहतरीन ढंग से संकलित सूचियों, कार्टूनों, तीखे संपादकीयों और लेखों के प्रकाशन के साथ, पत्रिका महाराष्ट्र के एक बड़े वर्ग तक पहुँच गई, और मराठी भाषा में होने के कारण ठाकरे को अपने विचारों को समुदाय के कहीं अधिक व्यापक पाठक वर्ग तक पहुँचाने में मदद मिली। यदि यह अंग्रेजी में होती, तो यह अपने लक्षित दर्शकों तक नहीं पहुँच पाती।
मार्मिक के लेखों की सरल, परिष्कृत, लेकिन कभी भी बोझिल न होने वाली भाषा पाठकों को खूब भाती थी। अधिकतर लेखों में समसामयिक सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं पर हास्यपूर्ण व्यंग्य और कटाक्ष होते थे, और बीच-बीच में ऐतिहासिक लेख भी शामिल होते थे।
नीचे मार्मिक पत्रिका के 15 अगस्त 1965 के अंक में प्रकाशित एक लेख का अंश दिया गया है। यह पत्रिका में प्रकाशित होने वाले व्यंग्यात्मक लेखों का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें मुंबई का उस समय का व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है जब दक्षिण के लोग राज्य पर कब्ज़ा कर लेंगे। 2065 ईस्वी में मद्रा माटुंगम में एक विशेष दिवस मनाया जाता है, और लेखक को मुख्य अतिथि का साक्षात्कार लेने का कार्य सौंपा गया है।

रात के शांत सन्नाटे में, मैं गणपति मराठम के घर गया और उन्हें नमस्कार करके बताया कि मैं उनका साक्षात्कार लेने आया हूँ। गणपति ने आश्चर्य से मेरी ओर देखा और कहा, “अरे, इतने वर्षों बाद आज फिर से पुरानी मराठी भाषा बोली जा रही है। आपको यह भाषा कैसे आती है?” मैंने उत्तर दिया, “मैंने अपने

पीएचडी के लिए ‘पुरानी मराठी भाषा’ विषय चुना था।” वे मुस्कुराते हुए बोले, “आजकल यह भाषा कहीं सुनाई नहीं देती। मेरे बचपन में मराठी शुद्ध रूप में बोली जाती थी; अब वह शुद्ध भाषा केवल चंबल घाटी की एक छोटी सी बस्ती में ही सुनाई देती है। सौ साल पहले मुंबई में मद्रासी राज्यपाल, महापौर और शेरिफ नियुक्त किए गए थे। उस समय के मराठी लोग इन लोगों को परदेसी कहते थे। तब मद्रासी लुंगी मज़ाक का विषय हुआ करती थी। आज तो हर कोई लुंगी पहनता है।” मैंने कहा, “जी हाँ, हाल ही में एक फैंसी ड्रेस प्रतियोगिता में, धोती पहने एक व्यक्ति को राज्यपाल से पुरस्कार मिला... कितना अजीब वस्त्र है।”⁷

इस तरह के तीखे गद्य की बदौलत, महाराष्ट्रियों का आक्रोश और असंतोष मार्मिक को भेजे गए पत्रों और ठाकरे के साथ वास्तविक संवाद की मांग के रूप में तेजी से प्रदर्शनकारी होता चला गया।
प्रमोद नवलकर, जो उन दिनों ठाकरे परिवार के घर नियमित रूप से आते-जाते थे, ने मार्च 1966 में घटी एक घटना का जिक्र किया है। ‘लालबाग (मध्य मुंबई) से कुछ कार्यकर्ता बालासाहेब से मिलने आए थे। उनमें से एक किसी विषय पर बहुत जोश से बात कर रहा था, तभी मैं घर में दाखिल हुआ। मुझे देखकर बालासाहेब ने उसे थोड़ी देर रुकने को कहा और मुझे चर्चा के विषय के बारे में बताया। कार्यकर्ता उनसे यह कहने आए थे कि महाराष्ट्रियों के एक ऐसे संगठन की आवश्यकता है जो बड़े पैमाने पर पलायन के खिलाफ रक्षा पंक्ति के रूप में काम करे और धरती के बेटों के साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ लड़ाई लड़े। उस समय ऐसे कई समूह उनसे मिलने आते थे और उनसे एक संगठन बनाने का अनुरोध करते थे।’⁸

2

राजनीतिक कार्टूनिस्ट

एक राजनेता और एक कार्टूनिस्ट के उद्देश्य बिल्कुल विपरीत होते हैं। राजनेता का लक्ष्य चीजों को छिपाना, अस्पष्ट करना और उलझाना होता है। कम से कम समकालीन भारत और दुनिया के कई अन्य हिस्सों में तो यही सच है, हालांकि यह राजनेता की उस पारंपरिक परिभाषा से मेल नहीं खाता जिसमें राजनेता को सार्वजनिक मामलों में शामिल व्यक्ति माना जाता है; जो जनता और राज्य के बीच हुए समझौते के अनुसार मुद्दों से जुड़ता है और इसके माध्यम से मुद्दों का समाधान, बेहतर शासन के साधन, संघर्षों के हल और सुलह के तरीके खोजता है। कार्टूनिस्ट का लक्ष्य इसके विपरीत होता है। वह राजनेता द्वारा सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत छवि में दरारें दिखाने की कोशिश करता है, उन छोटी-छोटी खामियों को उजागर करता है जिन्हें सतह पर नहीं देखा जा सकता और व्यंग्यपूर्ण अभिव्यक्ति की अपनी कला का उपयोग करके दिखावे और कपट को बेनकाब करता है। बाल ठाकरे कार्टूनिस्ट और राजनेता दोनों रहे हैं। लेकिन उन्हें राजनेता कहलाना पसंद नहीं है। वे खुद को राजनीतिक कार्टूनिस्ट कहलाना पसंद करते हैं – ताकि वे इस बात पर ज़ोर दे सकें कि उनमें एक ऐसी स्पष्टवादिता है जो एक पारंपरिक राजनेता में स्वीकार्य नहीं है, ताकि वे यह समझा सकें कि वे आक्रमण करने में कितने मुखर हैं और ताकि वे यह उजागर कर सकें कि वे अपने हास्यबोध और दृष्टिकोण को किसी पाखंडी राजनीतिक प्रवृत्ति से प्रभावित नहीं होने देना चाहते। यह भी सच है कि जब उन्होंने कार्टूनिस्ट के रूप में अपना करियर शुरू किया था, तब ठाकरे ने शायद ही कभी खुद को एक राजनीतिक नेता के रूप में देखा होगा। बाल केशव ठाकरे का जन्म 23 जनवरी 1927 को हुआ था। हालांकि उनका जन्मस्थान पुणे था, लेकिन उनके माता-पिता, केशव सीताराम ठाकरे, जिन्हें लोकप्रिय रूप से प्रबोधनकर के नाम से जाना जाता था, और रमाबाई, जल्द ही मुंबई के पड़ोसी ठाणे जिले के एक हथकरघा शहर भिवंडी में बस गए। ठाकरे परिवार का ठाणे से गहरा पारिवारिक संबंध है। यहीं पर बाल ठाकरे के परदादा, कृष्णजी माधव, जिन्हें अप्पासाहेब के नाम से जाना जाता था, वकालत करते थे और उन्हें जिला मजिस्ट्रेट की कुर्सी के बगल में एक सीट दी गई थी। कृष्णजी एक विद्रोही थे। उन्होंने पुणे जिले की पूर्व भोर रियासत में अपनी पैतृक संपत्ति पर दावा छोड़ दिया था, जहाँ से ठाकरे परिवार की जड़ें जुड़ी हैं (हालाँकि उनके सबसे पुराने ज्ञात पूर्वज, जैसा कि वे कहते हैं, एक सैनिक थे जिन्होंने मुंबई से 180 किमी दूर नासिक के पास धोडपे किले की रक्षा की थी), और ठाणे में वकालत करने का फैसला किया था। ठाकरे की परदादी, रमाबाई भी विद्रोही थीं। शिवसेना प्रमुख के अनुसार, वह एक दाई थीं जो अपनी सेवाओं के लिए कोई शुल्क नहीं लेती थीं, और जाति और वर्ग भेद से घृणा करती थीं। ठाकरे के दादा, सीताराम, कम उम्र में ही चल बसे, लेकिन सीताराम के पुत्र और बाल के पिता, केशव को विद्रोही स्वभाव विरासत में मिला। वे समाज सुधारक महात्मा फुले द्वारा जातिगत भेदभाव को समाप्त करने के लिए स्थापित सत्य शोधक आंदोलन से जुड़े, रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों का विरोध किया, और पर्चे, नाटक, ग्रंथ और

फिल्म पटकथाएँ लिखकर ब्राह्मणवादी वर्चस्व के खिलाफ लड़ाई लड़ी। ठाकरे परिवार स्वयं चंद्रसेनिया कायस्थ प्रभु (सीकेपी) जाति से संबंध रखता है, जो ब्राह्मणों के बाद जाति व्यवस्था में प्रमुख स्थान रखती है, लेकिन केशव पुरानी सामाजिक व्यवस्था को मानने को तैयार नहीं थे। उन्होंने प्रबोधन नामक एक पत्रिका का संपादन और प्रकाशन किया, जिसका अर्थ पुनर्जागरण है, और जल्द ही वे प्रबोधनकर के नाम से प्रसिद्ध हो गए। प्रबोधनकर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे: वे संपादक, रंगमंच कलाकार, पटकथा-संवाद लेखक, इतिहासकार और समाज सुधारक थे। लेकिन परिवार का कहना है कि उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, क्योंकि सिद्धांतों से विमुख न होने के कारण उन्हें अक्सर नौकरी बदलनी पड़ती थी और नए सिरे से अपने उद्यम शुरू करने पड़ते थे।⁹ ठाकरे अपने पिता को दादा कहकर पुकारते हैं, और शिवसेना प्रमुख के जीवन में उनका सबसे बड़ा प्रभाव रहा है। भिवंडी से ठाकरे परिवार कुछ समय के लिए ठाणे चला गया, जहाँ प्रबोधनकर द्वारा स्थापित एक थिएटर कंपनी - डेक्कन स्पार्क - स्थित थी, और वहाँ से वे दादर के रानाडे रोड स्थित 77-ए में रहने लगे, जो ऐतिहासिक शिवाजी पार्क मैदान के बहुत करीब था (बाल ठाकरे 1960 के दशक के उत्तरार्ध में, यानी शिवसेना के गठन के तुरंत बाद, मुंबई के बांद्रा पूर्व स्थित मातोश्री बंगले में रहने चले गए थे)। दादर के इस घर में केवल तीन कमरे थे: ड्राइंग रूम, जहाँ प्रबोधनकर बैठते थे, एक बेडरूम और एक रसोईघर। पिछवाड़े में थोड़ी जगह थी जहाँ ठाकरे बाद में कार्टून बनाने के लिए बैठते थे, लेकिन कुछ समय बाद उन्होंने वहाँ बैठना छोड़ दिया और ड्राइंग रूम में फर्श पर बैठकर काम करने लगे। घर में प्रबोधनकर की उपस्थिति प्रभावशाली थी, भले ही वे अधिकांश समय काम के सिलसिले में बाहर रहते थे। बाल के बचपन में ही प्रबोधनकर उन्हें संगीतकार बनाना चाहते थे। लेकिन बाल ने ब्रश उठा लिया। ठाकरे कार्टूनिस्ट के रूप में अपने शुरुआती दिनों का वर्णन इस प्रकार करते हैं:

जब हम भिवंडी में थे, दादाजी मेरे लिए एक बुलबुल लाए। लेकिन मुझे अपने हाथों की हरकतों को तालमेल बिठाना मुश्किल लगता था; अगर एक हाथ से बुलबुल बजती, तो दूसरा नहीं बजती। एक बार दादाजी ने मेरे हाथों पर हाथ रखकर मुझे सिखाने की कोशिश की, और मेरी उंगली कट गई और मैं रोने लगी। फिर एक दिन जब वे घर लौटे, तो उन्होंने बुलबुल बजने की आवाज़ सुनी। उन्होंने माँ से पूछा कि कौन बजा रहा है। माँ ने कहा, श्री, यानी मेरा भाई श्रीकांत। श्री को बुलाया गया और वह धीरे-धीरे, डरते हुए दादाजी के पास गया। उसे लगा कि बुलबुल बजाने के लिए उसे डांट पड़ेगी, जो मेरे लिए ही लाई गई थी। दादाजी ने उससे पूछा, "क्या तुम बुलबुल बजा रहे थे?" हाँ, उसने दोषी महसूस करते हुए कहा। "यहाँ लाओ," पिताजी ने कहा। फिर वे बैठ गए और उसे बुलबुल बजाने का तरीका दिखाने के लिए कुछ सुर बजाए। इससे श्रीकांत की बात तो सुलझ गई, लेकिन तब तक मुझे घर की दीवारों पर कुछ भी लिखने और चित्र बनाने की आदत पड़ चुकी थी। हम जिस दादर के घर में रहने गए थे, उसकी दीवारें बहुत साफ थीं, इसलिए मुझे उन पर चित्र बनाना बहुत अच्छा लगता था। दादाजी ने यह देखा और समझ गए कि श्रीकांत परिवार में संगीतकार बनेगा, जबकि मैं कलाकार बनूंगा।¹⁰

ठाकरे कहते हैं कि कला उनके खून में थी क्योंकि प्रबोधनकर स्वयं अच्छी चित्रकारी करते थे। ‘वे क्या नहीं कर सकते थे? वे हारमोनियम, सितार और दिलरुबा बजाते थे; वे चित्रकारी करते थे, चित्र बनाते थे और पुराने मुंबई में तांगों (घोड़ागाड़ियों) के लिए नंबर प्लेट भी बनाते थे। मैं तो बस उन्हीं की तरह हूँ।’¹¹ ठाकरे ने उत्तर-मध्य मुंबई के ओरिएंटल हाई स्कूल में कक्षा 6 तक पढ़ाई की, लेकिन परिवार के पास फीस देने के पैसे न होने के कारण उन्हें उसी वर्ष पढ़ाई छोड़नी पड़ी। वे कहते हैं, ‘बकाया राशि 60 हो गई थी और हम उसे चुका नहीं सकते थे।’¹² इसी बीच, बाल की कला में रुचि बढ़ती जा रही थी। उन्हें दीनानाथ दलाल और एस.एम. पंडित जैसे समकालीन कलाकारों की कृतियाँ देखना बहुत पसंद था और उन्हें कार्टून विशेष रूप से अच्छे लगते थे। वे दीवारों पर चित्र बनाते रहते थे और टाइम्स ऑफ इंडिया में छपने वाली कार्टून स्ट्रिप्स को ध्यान से देखते थे, और उन्होंने दक्षिण-मध्य मुंबई के एक सिनेमा हॉल में वॉल्ट डिज्नी की फिल्म बांबी छह बार देखी, मंत्रमुग्ध होकर। उन्होंने जल्द ही 60 पाउंड में रंग और कैनवास खरीदे और अभ्यास शुरू कर दिया। प्रबोधनकर चाहते थे कि उनका बेटा इस रुचि को और आगे बढ़ाए। क्योंकि वे बाल को कभी भी सरकारी कर्मचारी नहीं बनने देना चाहते थे। मध्यवर्गीय या निम्न-मध्यवर्गीय पृष्ठभूमि वाले अधिकांश महाराष्ट्रियन अंततः सरकारी सेवा में ही चले जाते थे, और प्रबोधनकर ने अपने बेटे को स्पष्ट कर दिया था कि वे नहीं चाहते कि वह उस रास्ते पर चले। इसलिए उन्होंने बाल के प्रशिक्षण में मदद करना शुरू कर दिया।

चूंकि दादा स्वयं एक कलाकार थे, इसलिए जब मैं बहुत छोटा था, तो वे मेरा हाथ पकड़कर मुझे चित्र बनाने में मदद करते थे। वे मुझसे टाइम्स ऑफ इंडिया में छपने वाली मेरी पसंदीदा कार्टून स्ट्रिप बनाने और उसमें रंग भरने को कहते थे। काम से लौटने पर वे उसे देखते और मुझे बताते कि मैंने कहाँ गलती की है। वे रेखाओं की तुलना करते, मुझे मेरे द्वारा बनाए गए चित्र और मूल चित्र में अंतर दिखाते और सुझाव देते। उदाहरण के लिए, वे मुझे मेरे द्वारा बनाए गए चित्र और मूल चित्र में दिखाई गई आँखों में अंतर दिखाते थे। जब मैं इतना बड़ा हो गया कि मैं खुद चित्र बना सकता था, तो पिताजी ने मुझे एक स्याही की बोतल और एक ब्रश दिलाया। इस तरह मैंने स्याही से चित्र बनाना शुरू किया और एक कार्टूनिस्ट के रूप में उभरा।¹³

ठाकरे भाई-बहनों की बचपन की प्रतिभा का स्वतंत्र प्रमाण हमारे पास है। प्रसिद्ध मराठी लेखक पु ला देशपांडे ने 1964 में मार्मिक पत्रिका की चौथी वर्षगांठ के अवसर पर बाल और श्रीकांत को भेजे गए एक पत्र में लिखा था कि उन्हें याद है कि दोनों कितने प्रतिभाशाली थे: ‘बाल के रेखाचित्र स्कूल पत्रिका की शोभा बढ़ाते थे और उसे और भी आकर्षक बनाते थे, और श्रीकांत समारोहों में वायलिन बजाकर वाहवाही बटोरते थे।’¹⁴ हम स्वर्गीय पु ला के शब्दों पर भरोसा कर सकते हैं क्योंकि वे दबाव में ठाकरे परिवार की प्रशंसा करने के आदी नहीं थे। जब उन्हें 1996 में शिवसेना सरकार द्वारा महाराष्ट्र भूषण (महाराष्ट्र का गौरव) पुरस्कार से सम्मानित किया गया, तो पु ला ने पुरस्कार समारोह में शिवसेना की रणनीति पर हमला करते हुए कहा कि वे उसकी बलपूर्वक शासन की अवधारणा को नहीं, बल्कि लोकशाही (लोकतंत्र) को

मानते हैं। तब ठाकरे ने साहित्यिक दिग्गज पर हमला करते हुए कहा कि यदि वे शिवसेना को इतना नापसंद करते हैं, तो उन्हें शिवसेना सरकार द्वारा दिया गया पुरस्कार स्वीकार नहीं करना चाहिए था। जब बाल उस उम्र में पहुंचे जिस उम्र में एक छात्र आमतौर पर कॉलेज जाता है, तो उन्होंने दक्षिण मुंबई के एक प्रमुख संस्थान सर जेजे स्कूल ऑफ आर्ट में दाखिला लेने का फैसला किया। लेकिन वह भी नहीं हो सका:

एक बार, प्रसिद्ध कलाकार बाबूराव पेंटर हमारे घर आए थे। उन्होंने दीवार पर मेरा बनाया हुआ एक चित्र देखा। उन्होंने पूछा, “यह किसने बनाया है?” जब मेरे पिता ने कहा कि मैंने बनाया है, तो मुझे बुलाया गया। मेरे पिता ने मुझसे कहा, “क्या तुम उन्हें जानते हो? वे बाबूराव पेंटर हैं।” मैंने कहा, “हाँ, मैंने उनकी रचनाएँ देखी हैं।” बाबूराव ने मेरे पिता से कहा, “लड़के का हाथ अच्छा है,” और मुझसे पूछा कि मैं क्या कर रहा हूँ। जब मैंने उन्हें बताया कि मैं जेजे स्कूल ऑफ आर्ट में दाखिला लेने जा रहा हूँ, तो उन्होंने मेरे पिता से कहा कि मुझे वहाँ न भेजें। उन्होंने कहा, “वह अपनी प्रतिभा खो देगा। उसे कोल्हापुर (जहाँ पेंटर रहते थे) भेज दो, मैं उसे प्रशिक्षित करूँगा।” हालाँकि मैं कभी कोल्हापुर नहीं गया, न ही मैं कभी जेजे स्कूल गया, और घर पर ही अभ्यास करता रहा। उन दिनों, मेरे मन में जो भी आता, मैं उसे बना देता था। लेकिन मैं जो करता था वह ललित कला थी, न कि अनुप्रयुक्त कला।¹⁵

1947 में, महज 20 वर्षीय बाल ठाकरे ने फ्री प्रेस जर्नल (एफपीजे) में कार्टूनिस्ट के रूप में 75 पाउंड के मासिक वेतन पर काम शुरू किया। पिछले अध्याय में हमने देखा कि ठाकरे ने दूसरी बार नौकरी क्यों छोड़ी क्योंकि उन्हें कुछ 'पवित्र गायों' को न छूने की चेतावनी दी गई थी, लेकिन उन्होंने एफपीजे को दो बार नहीं बल्कि तीन बार छोड़ा। वे कहते हैं कि जब उन्होंने 1952 में पहली बार नौकरी छोड़ी, तो अखबार के संपादक और भारतीय पत्रकारिता जगत के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति एस. सदानंद उनके घर आए और उन्हें वापस आने के लिए राजी किया। ठाकरे बताते हैं कि उन्होंने नौकरी क्यों छोड़ी थी और सदानंद ने उन्हें दोबारा नौकरी पर कैसे राजी किया।

अखबार में मित्रा नाम का एक झगड़ालू आदमी था। उसने मुझे टेलीफोन ऑपरेटर के बगल में कुर्सी दे दी। फोन लगातार बजते रहते थे और लगातार बातचीत होती रहती थी। ऑपरेटर हमेशा "थोड़ा रुकिए" कहता रहता था, लेकिन शोर के कारण मुझे मजबूरन अपना ब्रश पकड़े रहना पड़ता था। मुझे गुस्सा आया और मैंने इस्तीफा देकर नौकरी छोड़ दी। कुछ समय बाद, सदानंद ने हमारे दादर स्थित घर का दरवाजा खटखटाया और मेरे पिताजी से पूछा कि क्या मैं उनसे मिलने बाहर आ सकता हूँ (वे अपनी बीमारी के कारण अंदर नहीं आ सकते थे)। उन्होंने मुझे अपनी कार में बिठाया और कहा, "क्या बात है? मैं बूढ़ा हो गया हूँ, मेरी सेहत ठीक नहीं है, तुम मेरे साथ फिर से काम क्यों नहीं करते?" मैंने कहा कि मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन कुछ बातें हैं... "उन बातों की चिंता मत करो, उन्हें मुझ पर छोड़ दो। मैं सब संभाल लूँगा," उन्होंने कहा और पूछा कि मुझे कितने पैसे चाहिए। मैंने कहा, “महोदय, यह कोई सौदा नहीं है, और न ही मैं आपसे पैसों के

बारे में बात करने जा रहा हूँ। मैं आपका आदर करता हूँ, और चूंकि आप मुझसे अनुरोध करने मेरे घर आए हैं, इसलिए मैं फिर से आपके साथ जुड़ जाऊँगा।”¹⁶

1950 के दशक के आरंभ में, महाराष्ट्रियों के लिए भाषाई राज्य की मांग को लेकर आंदोलन ने जोर पकड़ना शुरू कर दिया। ठाकरे, अपने पारिवारिक पृष्ठभूमि और उन पर पड़े प्रभावों के कारण, इससे अछूते नहीं रह सके। उनका घर संयुक्त महाराष्ट्र के प्रमुख समूह की बैठकों का केंद्र था, और उनके पिता मुंबई को राजधानी बनाकर महाराष्ट्र राज्य के प्रमुख समर्थकों में से एक थे। अन्य समर्थकों में लेखक-पत्रकार-कार्यकर्ता आचार्य अत्रे, प्रभात पत्रिका के संपादक, बी.आर. कोठारी, माधवराव बागल और अप्पा पेंडसे शामिल थे। अत्रे आगे चलकर समाजवादी नेता एस.एम. जोशी, कम्युनिस्ट नेता एस.ए. डांगे, सामाजिक कार्यकर्ता सेनापति बापट और स्वयं प्रबोधनकर के साथ आंदोलन के प्रमुख चेहरों में से एक बन गए। चूंकि ठाकरे उस समय एफपीजे के साथ काम कर रहे थे, इसलिए वे अन्य प्रकाशनों के लिए कार्टून नहीं बना सकते थे। लेकिन जैसे-जैसे संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन तेज हुआ, उन्होंने मावला (महाराष्ट्र के मावल क्षेत्र का निवासी, जहां शिवाजी के प्रमुख समर्थक रहते थे) उपनाम से आठ पत्रिकाओं में कार्टून बनाना शुरू कर दिया। सन् 1954 में बॉम्बे नामक पत्रिका में उनके द्वारा बनाए गए एक कार्टून ने उन्हें मुसीबत में डाल दिया। उन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र के गठन का कड़ा विरोध करने वाले कांग्रेस नेता मोरारजी देसाई को मानव खोपड़ियों के ढेर पर बैठे हुए दिखाया था और उन्हें नर-राक्षस, यानी मानव-राक्षस के रूप में वर्णित किया था। मामला दर्ज किया गया और ठाकरे को कुछ समय के लिए 'भूमिगत' होना पड़ा - यानी, वे दोपहर और रात के खाने के लिए घर आते थे, लेकिन अपनी बहन के घर पर रहते थे। अंततः, उनकी गिरफ्तारी कभी नहीं हुई। ठाकरे बताते हैं कि एक दिन, जब उनके घर पर आंदोलनकारियों की बैठक चल रही थी, उनके पिता ने उन्हें दरवाजे पर बुलाया और वहां रखे जूतों की ओर इशारा किया। उन्होंने बाल से पूछा, 'यह क्या है?' बाल ने अचंभित होकर उत्तर दिया, 'चप्पलें।' उन्हें कहा गया, 'नहीं, यह हमारी शान है, यही हमारे पास सब कुछ है। इसे संभाल कर रखना। हमेशा के लिए।'
हालांकि, इस दौरान ठाकरे का कार्टून बनाने में पूरा सहयोग रहा। वरिष्ठ पत्रकार एम.वी. कामथ, जो ठाकरे के साथ एफपीजे में काम करते थे, कहते हैं कि बाल इतने शांत स्वभाव के थे कि यह सोचना भी असंभव था कि वे भविष्य में किसी उग्रवादी संगठन का नेतृत्व करेंगे। ठाकरे द्वारा बनाया गया एक कार्टून, 'चाचाजी' - एक गंजे व्यक्ति जिसकी मूंछें वालरस जैसी थीं - उन दिनों एफपीजे के पहले पन्ने पर प्रतिदिन छपता था और काफी लोकप्रिय हो गया था। यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि हालांकि ठाकरे मुंबई, महाराष्ट्र और शेष भारत की राजनीतिक स्थिति पर अपने कार्टूनों के लिए सबसे अधिक जाने जाते हैं, लेकिन एफपीजे में प्रकाशित उनके कुछ शुरुआती कार्टून अंतरराष्ट्रीय मामलों पर आधारित हैं: उन्होंने स्टालिन, युगोस्लाविया के मार्शल टीटो, मिस्र के नासिर और ब्रिटेन और अमेरिका के तत्कालीन शीर्ष राजनीतिक नेताओं जैसे लोगों के कार्टून बनाए। हालांकि, इन कार्टूनों में भी, भारतीय राजनीति पर बने कार्टूनों की तरह, पंडित नेहरू उनके पसंदीदा पात्रों में से एक प्रतीत होते हैं, जिन्हें गांधी टोपी के बिना, सिर पर एक अकेली लट के साथ, लेकिन एक करिश्माई चेहरे और व्यक्तित्व के साथ चित्रित किया गया है। बाद में,

इंदिरा गांधी उनके पसंदीदा पात्रों में से एक के रूप में उभरीं, और कार्टून के लिए उन्हें जो आखिरी दिलचस्प चरित्र मिला, वे कहते हैं, पी.वी. नरसिम्हा राव थे। जबकि एफपीजे से उनका दूसरा निष्कासन 'पवित्र गायों' कांड के कारण हुआ था, ठाकरे ने पत्रकारों के एक पूरे समूह के साथ तीसरी बार अखबार छोड़ा, जिन्होंने एक साथ मिलकर 'न्यूज़ डे' नामक एक अखबार शुरू करने का फैसला किया था। ठाकरे ने वह जगह केवल कुछ महीनों में छोड़ दी। वे इसका कारण बताते हैं:

वह जगह दक्षिण भारतीयों से भरी हुई थी, और मैं उस माहौल से तंग आ गया था। शुरुआत में न्यूज़ डे अच्छा चला, लेकिन जल्द ही उसकी हालत खराब हो गई क्योंकि उससे जुड़े लोग अखबार का दुरुपयोग हवाई यात्रा, मौज-मस्ती और यहां तक कि अखबार के नाम पर खाना मंगवाने के लिए करने लगे। संक्षेप में कहें तो, वित्तीय अनुशासनहीनता। फिर हमें पता चला कि कोई शाह अखबार खरीदने वाला है। मैंने कहा, अगर हमें स्वतंत्र नहीं होना था तो हमने सदानंद क्यों छोड़ा? और मैंने इस्तीफा दे दिया।¹⁷

इसके बाद ठाकरे ने मराठा, केसरी और धनुर्धारी जैसी मराठी पत्रिकाओं और अखबारों के लिए कार्टून बनाना शुरू किया और फेमस पिक्चर्स नामक एक फिल्म कंपनी के लिए शो-कार्ड भी बनाए। इसके अलावा, उन्होंने संत गाडगे बाबा की जीवनी के कवर के लिए उनका चित्र बनाया, जिसे प्रबोधनकर ने लिखा था। 1960 में एक हल्के कार्टून साप्ताहिक को शुरू करने का निर्णय लिया गया, लेकिन ठाकरे को इसके लिए धन की आवश्यकता थी।

सबसे बड़ी चिंता अखबार की छपाई की लागत थी, जो प्रकाशन में कुल लागत का एक बड़ा हिस्सा होती है। मुझे 5,000 की ज़रूरत थी। एक अखबार एजेंट जिसके पास मैं गया, उसने मुझे पैसे देने का वादा तो किया, लेकिन कभी दिए नहीं। फिर मैं बैंक ऑफ महाराष्ट्र गया, जहाँ मेरी मुलाकात श्री वर्दे से हुई, जिन्हें तब बैंक महर्षि कहा जाता था। उन्होंने मुझे और मेरे भाई को समझाया कि हमें इस धंधे में क्यों नहीं पड़ना चाहिए। हम वहाँ से चले गए। तभी एक सच्चे सज्जन ने हमारा साथ दिया – बुआ दंगत, जो अखबार एजेंट थीं। उन्होंने हमें 5,000 दिए, और हमने मार्मिक की शुरुआत की।¹⁸

खास बात यह है कि यह वह दौर था जब मराठी पत्रिकाएँ और आवधिक प्रकाशन एक के बाद एक बंद हो रहे थे। विविध वृत्त और नवयुग जैसी पत्रिकाएँ भी बंद हो चुकी थीं, और आचार्य अत्रे की एक पत्रिका भी बंद हो गई थी। मार्मिक की शुरुआती कीमत 1 रुपया थी; बाद में इसे घटाकर 50 पैसे कर दिया गया। शुरुआत में प्रबोधनकर इसके संपादकीय लिखते थे, लेकिन जल्द ही डी.पी. खंबेते कार्यकारी संपादक के रूप में शामिल हुए और जिम्मेदारी संभाली (बाद में बाल ठाकरे ने संपादकीय लिखना शुरू किया)। यहाँ ठाकरे परिवार और अत्रे के बीच उस समय के प्रसिद्ध झगड़े का उल्लेख करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि दोनों संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के प्रमुख समर्थकों में से थे और आंदोलन समाप्त होने

के बाद भी उनके अच्छे संबंध थे। अत्रे वास्तव में पूरे महाराष्ट्र के नायक थे, इसलिए ठाकरे परिवार, जो खुद को राज्य और धरती के पुत्रों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं, उनके साथ किस तरह का झगड़ा करते थे, यह हमारे लिए जानना जरूरी है। ठाकरे कहते हैं कि उनके संबंध इतने मजबूत थे कि अत्रे हर साल दिवाली पर हू के साथ उनके घर आते थे। जर्मन भाषा की शिक्षिका कृपा कुलकर्णी और लेखक अनंत कानेकर के साथ-साथ बीए. हरलिकर भी उनके प्रिय थे। उन्हें ठाकरे की पत्नी मीनाताई द्वारा बनाया गया अनारसे विशेष रूप से पसंद था। इतना ही नहीं, प्रबोधनकर हर रात देर तक घर के चक्कर लगाते रहते थे, यानी अत्रे का फोन आने तक, और उनसे बात करने के बाद ही सोते थे। तो आखिर गड़बड़ क्या हुई? ठाकरे के अनुसार:

एक बार मार्मिक के कार्यकारी संपादक डी.पी. खंबेते भोले नाथ बाबा को अपने घर लाए थे। खंबेते बाबा को अपना गुरु मानते थे। उसी समय अत्रे भी हमारे घर आए थे और खंबेते ने अत्रे का परिचय बाबा से कराया। अत्रे ने बाबा से सरसरी तौर पर ही बात की और लगभग उन्हें नज़रअंदाज़ कर दिया, जो खंबेते को पसंद नहीं आया। वैसे भी बाबा धोखेबाज़ थे – एक बार जब मेरी बहन बीमार थी, तो वह उनसे मिलने गई और उसे बताया गया कि बाबा व्यस्त हैं; जब उसने उनके कमरे में झाँका, तो उसने उन्हें ताश खेलते और सिगरेट पीते देखा। अत्रे और कवि वसंत बापट दोस्त थे और उन्होंने पुरस्कार विजेता फिल्म श्याम ची आई में साथ काम किया था। किसी तरह उनके रिश्ते खराब हो गए और अत्रे ने उनके बारे में एक घटिया लेख लिखा, जिसमें उन्हें बिन बापाचा बापट कहा। ज़ाहिर है, हमें अत्रे को जवाब देने की कोई ज़रूरत नहीं लगी क्योंकि यह मौखिक हमला बापट पर था, हम पर नहीं। लेकिन खंबेते इसका जवाब देना चाहते थे और बापट पर हमला करने के लिए अत्रे की आलोचना करना चाहते थे। तो हमने कहा, ठीक है, आप कार्यकारी संपादक हैं, जो चाहें लिखें। अत्रे को लिखा हुआ पसंद नहीं आया और उन्होंने अपने अखबार मराठा के पहले पन्ने पर एक बॉक्स छापकर मेरे पिता के चरित्र पर लांछन लगा दिया। इससे हमें गुस्सा आया और फिर प्रबोधनकर ने अत्रे के खिलाफ लेखों की एक श्रृंखला लिखी, और मैंने उनके व्यंग्यात्मक कार्टून बनाए। कई बार कहा-सुनी के बाद, अत्रे ने खुद ही विवाद को समाप्त करते हुए कहा कि वह इस झगड़े पर पर्दा डाल रहे हैं।¹⁹

अत्रे ने बाद में शिवसेना को 'वसंत सेना' नाम दिया, ताकि ठाकरे की तत्कालीन कांग्रेस मुख्यमंत्री वसंतराव नाइक से कथित निकटता को उजागर किया जा सके, और 'सदाशिव सेना' नाम से यह संकेत दिया कि शिवसेना के संबंध कांग्रेस के एक अन्य दिग्गज नेता एस.के. पाटिल से थे। ठाकरे कहते हैं कि वसंतराव नाइक उनके मित्र तो थे, लेकिन उन्होंने कभी भी वसंतराव की इच्छा के अनुसार कार्य नहीं किया और वे एस.के. पाटिल को नापसंद करते थे। हालांकि राज्य के पहले मुख्यमंत्री वाई.बी. चव्हाण, जिन्होंने मार्मिक पत्रिका का उद्घाटन किया था, के साथ उनके अच्छे संबंध थे, लेकिन संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के दौरान चव्हाण के रुख से वे सहमत नहीं थे (चव्हाण ने कहा था कि नेहरू महाराष्ट्र से महान हैं और भाषाई राज्य की मांग को क्षेत्रीय साम्राज्यवाद करार दिया था)। ठाकरे ने हमेशा इस आरोप का खंडन किया है कि शिवसेना कांग्रेस की उपज थी, जिसका उद्देश्य कम्युनिस्टों से लड़ना और

मुंबई में उनके प्रभाव को कम करना था। अत्रे के साथ तमाम मतभेदों के बावजूद, ठाकरे कहते हैं कि अत्रे उनके लिए आज भी नायक हैं। वे उन तीन वक्ताओं में से एक हैं – अन्य दो प्रबोधनकर और डांगे हैं – जिनकी वे प्रशंसा करते हैं। ‘डांगे की वाक्पटुता ऐसी थी कि उन्हें सुनना मन को भा जाता था। वे सरल शब्दों में बोलते थे, लेकिन उनमें हास्य का भी अच्छा पुट होता था। अत्रे बहुत प्रभावशाली थे। लेकिन यहाँ भी, मैंने अपने पिता का ही मार्ग अपनाया है। उन्होंने मुझसे कहा था, भाषण मत दो, बस लोगों से बात करो। उनसे सीधा संवाद करो। यही मेरी बोलने की शैली को स्पष्ट करता है। मैंने कभी कुछ रटा नहीं और न ही कभी ऐसे नोट्स बनाए जिनका मैं संदर्भ ले सकूँ।’ एक कुशल वक्ता बनने से पहले ही, यह बात स्पष्ट हो गई थी कि ठाकरे एक प्रभावी संचारक थे, जब उन्होंने मार्मिक में प्रकाशित फोन डायरेक्टरी से लिए गए गैर-महाराष्ट्रीयन नामों की सूचियों पर लोगों से प्रतिक्रिया प्राप्त की।

3

महाराष्ट्रियन और प्रवासी

यह स्पष्ट है कि ठाकरे ने 'मार्मिक' के माध्यम से मराठी लोगों के मन की गहरी चिंताओं को व्यक्त करने में सफलता प्राप्त की। लेकिन क्या ये चिंताएँ 1950 और 1960 के दशक में मुंबई में हुए भारी प्रवासन के कारण उत्पन्न हुईं? क्या उस दशक में शहर की जनसांख्यिकीय संरचना में अचानक कोई बदलाव आया जिसने मराठी भाषी लोगों को परेशान किया? या फिर अंतर-जातीय संबंधों और आर्थिक असमानता जैसे अन्य कारक शिवसेना के उदय के लिए जिम्मेदार थे? शिवसेना किसी भी राजनीतिक दल की शाखा या उससे अलग हुआ गुट नहीं थी। तो फिर वे कौन से हालात थे जिन्होंने मार्मिक की लोकप्रियता और शिवसेना के जन्म में योगदान दिया? यह संगठन यूं ही अस्तित्व में नहीं आ सकता था। लेकिन क्या शिवसेना की स्थापना का आधार सिर्फ भावनात्मकता थी, या ठाकरे द्वारा अन्याय और असमानता की घोषणा वास्तविकता पर आधारित थी? या फिर एक प्रकार के सशक्तिकरण ने दूसरे प्रकार की निर्भरता पर सवाल उठाने को प्रेरित किया? क्या शिवसेना का उदय रातोंरात हुआ, या यह एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम था? हमें इसका पता चलेगा।
1941 और 1951 के बीच, मुंबई में प्रवासियों की कुल संख्या में 950,000 की वृद्धि देखी गई, लेकिन अगले दशक में यह आंकड़ा घटकर 600,000 रह गया।²⁰ इस प्रकार, शिवसेना की स्थापना से पहले की अवधि, 1951-61 के बीच प्रवासियों का आगमन पिछले दशक की तुलना में कम तीव्र था। 1951 में, मुंबई की जनसंख्या में प्रवासियों की संख्या 72.1 प्रतिशत थी,²¹ और 1961 में यह 64.5 प्रतिशत हो गई।²² इसलिए, यद्यपि मुंबई में प्रवासियों का प्रतिशत उच्च बना रहा, और भारत के अन्य शहरों की तुलना में प्रवास की दर अधिक रही, फिर भी शहर की ओर प्रवासियों का कोई अचानक प्रवाह नहीं देखा गया।
शहर की जनसंख्या की भाषाई संरचना की भी जांच करना आवश्यक है, क्योंकि मुंबई के बाहर जन्मे लोगों की संख्या ही एकमात्र उपयुक्त आँकड़ा नहीं हो सकती। क्या शिवसेना की स्थापना से पहले की अवधि में मराठी भाषी लोगों का प्रतिशत अचानक कम हो गया या 'बाहरी लोगों' का प्रतिशत तेजी से बढ़ गया? 1951 में मुंबई की जनसंख्या में मराठी भाषी लोगों की संख्या 43.6 प्रतिशत थी। 1961 में, महाराष्ट्र के बाहर जन्मे लेकिन मुंबई में रहने वाले लोगों का प्रतिशत 33.8 प्रतिशत था और मराठी भाषी लोगों का प्रतिशत घटकर 42.8 प्रतिशत हो गया, लेकिन यह गिरावट बहुत अधिक नहीं थी। 1951-61 के दशक के दौरान दक्षिण भारतीयों का प्रतिशत, जो शिवसेना के गुस्से का पहला निशाना थे, में भी कोई उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज नहीं की गई: 1951 में, वे शहर की जनसंख्या का 7.8 प्रतिशत थे; 1961 में, वे 8.4 प्रतिशत थे।²³
महत्वपूर्ण बदलावों की अनुपस्थिति के बावजूद, जन्मस्थान और मातृभाषा दोनों के आंकड़ों को ध्यान में रखते हुए, मुंबई की गैर-स्थानीय आबादी काफी बड़ी बनी रही।

महाराष्ट्र के अन्य क्षेत्रों में रहने वाले मराठी भाषी लोगों के लिए भी मुंबई पसंदीदा गंतव्य था। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि भारत के अन्य स्थानों पर महाराष्ट्रियों के पलायन की दर भी कम थी: 2.3 प्रतिशत।²⁴ लेकिन मुंबई में मराठी भाषी आबादी, 1881 में भी, केवल मामूली बहुमत में थी
– 50.2 प्रतिशत। 1961 तक, यह घटकर 42.8 प्रतिशत रह गई थी।
1965-66 के सूखे ने कृषि और औद्योगिक उत्पादन को पूरी तरह ठप कर दिया था, जिससे मराठी श्रमिक वर्ग को भारी नुकसान हुआ और विद्रोह का माहौल बन गया। महाराष्ट्र में उस वर्ष खाद्यान्न उत्पादन 67.5 करोड़ टन से घटकर 47 करोड़ टन रह गया था। इसके परिणामस्वरूप, मुंबई के श्रम-प्रधान उद्योगों में रोजगार में गिरावट आई और कारखाने के श्रमिकों की मांग में भारी कमी आई। पहले से ही संकटग्रस्त कपड़ा उद्योगों में यह मंदी विशेष रूप से गंभीर थी, जहां महाराष्ट्र के श्रमिक बहुसंख्यक थे।
आर्थिक गिरावट ने कई मराठी मजदूरों को शिवसेना की ओर आकर्षित किया था, साथ ही ठाकरे के साम्यवाद विरोधी रुख ने भी इसमें अहम भूमिका निभाई थी।
इन आंकड़ों को ध्यान में रखते हुए, शिवसेना की तरह 'भूमिपुत्रों' का आंदोलन पहले क्यों नहीं उभरा?
बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्धों में महाराष्ट्रियों द्वारा खर्च की गई राजनीतिक ऊर्जा को देखते हुए, संगठन की कमी इस प्रश्न का पर्याप्त तर्कसंगत उत्तर नहीं है। इसलिए, शिवसेना आंदोलन के समय को जनसांख्यिकीय कारकों की उपस्थिति से स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। हमें अन्य परिस्थितियों पर भी विचार करना होगा।
हो सकता है कि 'बाहरी लोगों' की संख्या ने स्थानीय लोगों को भड़का दिया हो। शायद उन्हें यह लगता हो कि वे सामाजिक खतरा हैं, या वे स्थानीय आबादी की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।
दोनों ही स्थिति में, ठाकरे द्वारा मार्मिक के माध्यम से उठाया गया देशी- प्रवासी मुद्दा प्रवासी विरोधी लामबंदी और संगठित विरोध में किस प्रकार योगदान दे पाया?
1950 के दशक के आरंभ में डी.के. लकड़ावाला और अन्य द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के निष्कर्ष, जो 'वर्क, वेजेस एंड वेल-बीइंग इन एन इंडियन मेट्रोपोलिस' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुए थे, से पता चला कि व्यावसायिक स्थिति और शिक्षा के मामले में मुंबई में रहने वाले अन्य समुदायों की तुलना में महाराष्ट्रियन लोग पिछड़े हुए थे। उनके अध्ययन के अनुसार, मध्यम से उच्च-मध्यम वर्ग का वेतन (500-1000 रुपये प्रति माह) कमाने वाले महाराष्ट्रियन लोगों का प्रतिशत दक्षिण भारतीय (7.9 प्रतिशत) और गुजराती (10.2 प्रतिशत) समुदायों के लोगों की तुलना में काफी कम (4.0 प्रतिशत) था। मैरी एफ. कैटजेनस्टीन ²⁵ द्वारा किए गए एक अध्ययन में भी यह निष्कर्ष निकाला गया कि उच्च पदस्थ नौकरियों (प्रशासनिक, पेशेवर और लिपिकीय) में महाराष्ट्रियों का प्रतिनिधित्व अपर्याप्त था।
कैटजेनस्टीन अपनी पुस्तक 'जातीयता और समानता' में लिखती हैं:

मुंबई के रोज़गार संबंधी आँकड़ों से महाराष्ट्रियों के अल्प प्रतिनिधित्व का स्पष्ट पता चलता है; लेकिन शहर के नए और पुराने उद्योगों के बीच अंतर करने पर मध्यम वर्ग के महाराष्ट्रियों के सामने मौजूद आर्थिक प्रतिस्पर्धा की तस्वीर और भी स्पष्ट हो जाती है। लेखक द्वारा 1970 में

किए गए एक सर्वेक्षण में चुनिंदा उद्योगों पर ध्यान केंद्रित किया गया था, जिनमें अपेक्षाकृत पुराने उद्योग जैसे कपड़ा, तंबाकू और छपाई, और अपेक्षाकृत नए उद्योग जैसे रसायन, फार्मास्यूटिकल्स, बीमा और अन्य सेवा उद्योग शामिल थे। नए उद्योगों में ही महाराष्ट्रियों का प्रतिनिधित्व सबसे कम है। जिन पुरानी कंपनियों के रिकॉर्ड की जाँच की गई, उनमें से कई में सभी वेतन स्तरों पर महाराष्ट्रियों की संख्या अधिक थी – जो जनसंख्या में महाराष्ट्रियों के प्रतिशत से कहीं अधिक थी (हालाँकि, दिलचस्प बात यह है कि बड़ी कपड़ा कंपनियों में भी वेतन स्तर बढ़ने के साथ महाराष्ट्रियों का प्रतिशत घटता गया)।

नई कंपनियों में, कुछ अपवादों को छोड़कर, महाराष्ट्रियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में केवल 43 प्रतिशत ही कम आय वर्ग के शारीरिक श्रम वाले पदों पर ही रोजगार मिलता है। पुरानी कंपनियों में बेहतर वेतन वाली नौकरियों में महाराष्ट्रियों की हिस्सेदारी तो है, लेकिन नई कंपनियों में उन्हें इन नौकरियों से वंचित रखा गया है।

मुंबई में महाराष्ट्रियों और "बाहरी लोगों" के बीच आर्थिक प्रतिस्पर्धा शिवसेना के दुष्प्रचार द्वारा महाराष्ट्री मतदाताओं को गुमराह करने के लिए फैलाया गया झूठ नहीं है। मुंबई में महाराष्ट्री आर्थिक रूप से कई अन्य समुदायों से पीछे हैं। शहर में नए उद्योगों की भर्ती प्रक्रिया से स्पष्ट है कि शिवसेना के उदय से पहले यह स्थिति काफी गंभीर हो गई थी।²⁶

मुंबई में गैर-महाराष्ट्रियों के आर्थिक प्रभुत्व का पता उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से लगाया जा सकता है, जब पथारे प्रभु जैसे मराठी भाषी अभिजात वर्ग को 'अधिक उद्यमी भाटिया और बनिया' द्वारा विस्थापित कर दिया गया था।²⁷ कुल मिलाकर, महानगर में महाराष्ट्री औद्योगिक और वाणिज्यिक क्षेत्र से बाहर के व्यवसायों में लगे हुए थे।
इसी कारण उन्नीसवीं शताब्दी में मुंबई की राजनीति में महाराष्ट्रियों की कोई प्रमुख भूमिका नहीं रही। ब्रिटिश राज के दौरान मताधिकार केवल करदाताओं तक ही सीमित था, और राजनीतिक सत्ता संख्या के बजाय धन पर निर्भर थी। संख्या के लिहाज से मुंबई में महाराष्ट्रियों ने अन्य समुदायों को पीछे छोड़ दिया था, लेकिन नगरपालिका राजनीति में उनकी भूमिका नगण्य थी। 1875 की नगर परिषद में महाराष्ट्रियों का प्रतिनिधित्व मात्र 12 प्रतिशत था, जबकि वे शहर की कुल जनसंख्या का 50 प्रतिशत थे।
1948 में सार्वभौमिक मताधिकार लागू होने के बाद, और विशेष रूप से 1960 में महाराष्ट्र के गठन के बाद, मराठी भाषी लोगों की राजनीतिक स्थिति में एक बड़ा बदलाव आया। राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने से समुदाय के भीतर उनकी निरंतर आर्थिक पिछड़ेपन पर व्यापक रूप से सवाल उठने लगे और आर्थिक संभावनाओं में सुधार की इच्छा जागृत हुई।
लेकिन मुंबई की अर्थव्यवस्था में तेजी और नए उद्योगों के विकास के बावजूद, आर्थिक सुधार की उनकी उम्मीदें पूरी नहीं हुईं।

प्रारंभिक जड़ों को उजागर करना
रोचक बात यह है कि शिवसेना के गठन से पहले आर्थिक विकास के कई चरण आए थे। एक अनुमान के अनुसार, 1962 और 1967 के बीच कार्यालयी नौकरियों की संख्या में 28 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि नीले-कॉलर रोजगार में केवल 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई।²⁸ संगठित क्षेत्र में, जहाँ अधिकांश मध्यम-वर्गीय नौकरियाँ हैं, 1960 के दशक के पूर्वार्ध में रोजगार में लगातार वृद्धि हुई।²⁹ लेकिन रोजगार का यह उज्ज्वल परिदृश्य महाराष्ट्रियों की रोजगार के अवसरों के बारे में धारणाओं से मेल नहीं खाता था।
उस समय, महानगर और राज्य के अन्य हिस्सों में शिक्षित/योग्य नौकरी चाहने वालों की संख्या में भी भारी वृद्धि हुई थी। बॉम्बे विश्वविद्यालय में दाखिले 1950 के दशक की शुरुआत में 24,000 से बढ़कर 1970 के दशक की शुरुआत में लगभग 90,000 हो गए, जो लगभग 300 प्रतिशत की वृद्धि थी।³⁰ पश्चिमी महाराष्ट्र में प्राथमिक शिक्षा में दाखिले 1960 में 20 लाख थे; 1966 में यह संख्या दोगुनी होकर 40 लाख हो गई। माध्यमिक शिक्षा में दाखिले 20 लाख से कुछ कम से बढ़कर 65 लाख हो गए।³¹ इस प्रकार, प्रतिस्पर्धा तीव्र हो गई। और जनसंख्या में अपने प्रतिशत की तुलना में, मुंबई में उच्च पदों और उच्च श्रेणी की नौकरियों में महाराष्ट्रियों की हिस्सेदारी बहुत कम थी। शिवसेना की जड़ें महाराष्ट्रियों और गैर-महाराष्ट्रियों के बीच मौजूद इस आर्थिक असमानता में निहित थीं। ठाकरे द्वारा महाराष्ट्रियों की चिंताओं, भय और आशंकाओं का चित्रण और मार्मिक के स्तंभों और कार्टूनों के माध्यम से उनका विरोध काल्पनिक रचनाएँ या राजनीतिक झूठ नहीं थे। वे आर्थिक सत्य थे। चिंताओं को और भी बल देने वाला एक भावनात्मक पहलू था, एक ऐसी भावना कि रोजगार प्रदान करने के साथ-साथ सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में भी, प्रभावशाली गैर-महाराष्ट्रियों की 'रवैयागत आदतों' के कारण आर्थिक स्थिति अधिक अन्यायपूर्ण और एकतरफा हो गई थी। और ठाकरे ने इसी भावना को भुनाया और खतरे की घंटी बजा दी।
ठाकरे और शिवसेना के समर्थक न होने के बावजूद, पत्रकार कुमार केतकर ने उस दौर की मराठी भावना के बारे में यह कहा है:

1960 में महाराष्ट्र राज्य का गठन मराठी लोगों के लिए एक भावनात्मक क्षण था। क्या यह संकीर्ण राष्ट्रवाद था? बंगाली, पंजाबी, तमिल या तेलुगु राष्ट्रवाद से ज़्यादा नहीं। उदार, विश्ववादी और आधुनिक नेताओं या साहित्यकारों ने भले ही मराठी लोगों को व्यापक भारतीय दृष्टिकोण पर उपदेश दिए हों, लेकिन उन्होंने अपने-अपने राज्यों में भाषाई-सांस्कृतिक उप-राष्ट्रवाद का बचाव किया। इस पाखंड ने मुंबई के मराठी लोगों को नाराज़ कर दिया, जो अब बालासाहेब ठाकरे के व्यावहारिक दृष्टिकोण की ओर आकर्षित हो चुके थे। इस प्रकार, विडंबना यह है कि ठाकरे ने अपने आलोचकों से ही शक्ति प्राप्त की।³²

1991 में कांग्रेस में शामिल हुए शिवसेना के शीर्ष नेताओं में से एक, छगन भुजबल, ठाकरे की उस समय की असाधारण कुशलता का श्रेय संयुक्त महाराष्ट्र

आंदोलन द्वारा निर्मित माहौल और मुंबई में रहने वाले महाराष्ट्रियों के बीच व्याप्त अभाव की भावना को देते हैं, जो तेजी से विकसित हो रहे शहर में बढ़ते अवसरों से खुद को वंचित महसूस कर रहे थे।³³
पूर्व आयकर आयुक्त और अब स्तंभकार एवं टिप्पणीकार इकबाल मसूद इस बात की पुष्टि करते हैं। ‘शिव सेना जमीनी स्तर पर व्याप्त भावना की अभिव्यक्ति है, विशेष रूप से महाराष्ट्र के निम्न-मध्यम वर्ग के लोगों की, जो शहर में लंबे समय से मौजूद है। ठाकरे ने स्थानीय और क्षेत्रीय आकांक्षाओं की प्रबलता को पहचाना और उसका भरपूर लाभ उठाया।’³⁴
वी.एस. नायपॉल भी अपनी पुस्तक 'इंडिया: ए मिलियन म्यूटिनीज़ नाउ' में यही बात कहते हैं। शिवसेना नेता दिवाकर रावते का हवाला देते हुए, जो कहते हैं कि मार्मिक पत्रिका ने उस दौर में उनके युवा मन पर प्रभाव डालना शुरू कर दिया था, नायपॉल लिखते हैं: 'हर हफ्ते पत्रिका मुंबई और महाराष्ट्र में धरती के सपूतों के साथ हुए अन्याय के बारे में बात करती थी। और मैंने पाया कि मैं बाल ठाकरे और उनके पिता के भावनात्मक व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित था, जैसा कि पत्रिका में व्यक्त किया गया था। मैंने बाल ठाकरे से मिलने की कोशिश भी की।'³⁵
तब तक ठाकरे ने महाराष्ट्रियों के लिए रोजगार हेतु एक व्यापक अभियान शुरू कर दिया था, और मार्मिक में एक घोषणा के जवाब में, सैकड़ों युवा ठाकरे के आवास के बाहर नौकरी के आवेदन जमा करने के लिए कतारों में खड़े थे।
इसके बाद प्रबोधनकर ने जन मांग को निर्णायक रूप से आगे बढ़ाया। उन्होंने अपने बेटे से पूछा, ‘तुम कब तक ऐसे ही चलते रहोगे? लोग आते हैं, जाते हैं और फिर लौट आते हैं। क्यों न इस सामूहिक आवाज को एक संगठित रूप दिया जाए?’³⁶ इससे मामला सुलझ गया।
बाल, जो एक पोशाक को हवा में तैरने देने के विचार पर गंभीरता से विचार कर रही थी, ने आखिरकार यह कदम उठाने का फैसला किया।
ठाकरे याद करते हुए बताते हैं, ‘एक दिन जब दादा (प्रबोधनकर) आराम कर रहे थे, तो उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैंने संगठन के लिए कोई नाम सोचा है।’ ‘जब मैंने कहा कि नहीं, तो उन्होंने खुद ही नाम सुझाया: शिव सेना। शिवाजी की सेना।’³⁷
मई 1966 में, मार्मिक में एक युवा संगठन की स्थापना के बारे में एक घोषणा प्रकाशित हुई। इसका नाम शिवसेना रखा जाना था।
नारियल फोड़ने का शुभ और उद्घाटन समारोह 19 जून 1966 को हुआ था।
ठाकरे बताते हैं, ‘वहाँ बहुत कम लोग मौजूद थे। हमने किसी पंडित से सलाह नहीं ली, न ही हमने यह देखने की जहमत उठाई कि सितारे हमारे अनुकूल हैं या नहीं। सुबह करीब 9:30 बजे, हमारे एक पारिवारिक मित्र, नाइक, किराने की दुकान से एक नारियल लाए और उसे तोड़ा। और छत्रपति शिवाजी महाराज की जय का जाप करते हुए, हमने शिवसेना की शुरुआत की।’³⁸
शिवसेना नेता दिवाकर रावते ने समारोह को याद किया।
‘मैं वहां मौजूद 18 लोगों में से एक था। उन 18 में से चार लोग बाल ठाकरे के अपने घर से थे: स्वयं बालासाहेब, उनके पिता और उनके दो भाई। पहली बैठक लगभग आधे घंटे तक चली। यह उनके छोटे से घर के मुख्य कमरे में हुई थी। उनके पिता उस कमरे में रहते थे।’³⁹ और रावटे के अनुसार, प्रबोधनकर द्वारा दिया गया शिवसेना नाम ‘स्वाभाविक और सही लगा। और हमने उस बैठक में धरती के पुत्रों के साथ हुए अन्याय के खिलाफ लड़ने का संकल्प लिया।’

शिवसेना का सदस्य कौन बन सकता है?
सेना की स्थापना के ठीक एक महीने बाद, इसमें शामिल होने के इच्छुक लोगों के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत निर्धारित किए गए। सैनिक बनने की इच्छा रखने वाले किसी भी व्यक्ति को शपथ लेनी होती थी जिसमें निम्नलिखित सिद्धांत शामिल थे:⁴⁰

1) मराठी लोगों को एक दूसरे की मदद करनी चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मराठी मानुष समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर हो।
2) महाराष्ट्रियों को अपनी संपत्ति बाहरी लोगों को नहीं बेचनी चाहिए, और यदि कोई स्थानीय व्यक्ति ऐसा करते हुए पाया जाता है, तो निकटतम शाखा को तुरंत सूचित किया जाना चाहिए।
3) जहां तक संभव हो, मराठी दुकानदारों को अपना सामान केवल मराठी थोक व्यापारियों से ही खरीदना चाहिए और ग्राहकों के साथ शालीनता से पेश आना चाहिए।
4) महाराष्ट्र के जिन लोगों के अपने प्रतिष्ठान हैं, उन्हें केवल यहीं के निवासियों को ही नियुक्त करना चाहिए।
5) मराठी भाषी युवा लड़कों को अंग्रेजी भाषा में उत्कृष्ट संचार कौशल विकसित करना चाहिए और अंग्रेजी टाइपिंग भी सीखनी चाहिए।
6) आलस्य को त्यागकर, मराठा लोगों को अपनी सहकारी आवास समितियाँ बनानी चाहिए और उन्हें नौकरी के लिए किसी भी स्थान पर जाने की तत्परता दिखानी चाहिए।
7) मराठी भाई-बहनों के साथ बड़ी संख्या में उत्साहपूर्वक भाग लेकर मराठी त्योहारों और समारोहों को मनाएं।
8) स्थानीय लोगों को महाराष्ट्रियों से संबंधित संस्थानों, स्कूलों, आश्रमों आदि की गतिविधियों में भाग लेना चाहिए और उनके उद्देश्य के लिए उदारतापूर्वक दान देना चाहिए।
9) उडुपी के सभी होटलों का बहिष्कार करें और गैर-महाराष्ट्रियों की दुकानों से कुछ भी न खरीदें।
10) व्यापार और अन्य पेशों में लगे मराठी भाषी लोगों को हतोत्साहित न करें और उन्हें निराश न होने दें; इसके बजाय, जितना हो सके उतनी मदद करें।
11) अपने मराठी भाइयों के साथ अहंकारी और असभ्य व्यवहार न करें, और यदि उनमें से किसी को कोई कठिनाई हो, तो दूसरों को सामूहिक रूप से उसका समर्थन करना चाहिए।

सैकड़ों युवाओं ने शपथ पत्र पर हस्ताक्षर किए और स्वयं को शिवसैनिक के रूप में पंजीकृत कराया।
इसके तुरंत बाद उत्तर-मध्य मुंबई के प्रभादेवी स्थित रवींद्र नाट्यमंदिर सभागार में शिवसेना की स्थापना की औपचारिक घोषणा के लिए एक समारोह आयोजित किया गया। ठाकरे के मित्र मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक मुख्य अतिथि थे।

बैरिस्टर अच्युत चाफेकर, जो बाद में 1971 के भिवंडी दंगों की मैडन जांच आयोग के दौरान शिवसेना के वकील बने, समारोह में उपस्थित थे। उन्होंने मुझे बताया:

कार्यक्रम के लिए टिकट उपलब्ध होने के बावजूद हॉल खचाखच भरा हुआ था। कार्यक्रम में 'अंधा डाल्टाय' नाटक का मंचन भी शामिल था। नाटक में मराठी मानुष के रवैये को दर्शाने के लिए केकड़े के रूपक का प्रयोग किया गया था। केकड़ों से भरी मछुआरे की टोकरी का कोई ढक्कन नहीं होता, क्योंकि जब भी कोई केकड़ा ऊपर चढ़कर बाहर निकलने की कोशिश करता है, तो दूसरे उसे अंदर खींच लेते हैं। नाटक में इसी को महाराष्ट्रियों के रवैये के प्रतिबिंब के रूप में दर्शाया गया था।⁴ ¹

उस समय मार्मिक के पाठकों के बीच ठाकरे द्वारा 'रविवारची जात्रा' (रविवार मेला) शीर्षक के अंतर्गत बनाए गए कार्टून बेहद लोकप्रिय थे। दो पृष्ठों में फैले इन कार्टूनों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को एक राजनीतिक कार्टूनिस्ट के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जाता था। शिवसेना के गठन के बाद यह जात्रा और भी खास हो गई: एक पृष्ठ के निचले भाग में बने एक बॉक्स में शिवसेना की जनसभाओं की घोषणाएँ की जाने लगीं।
संगठन की स्थापना के चार महीने बाद, मार्मिक के पाठकों को दशहरा के दिन 30 अक्टूबर 1966 को शिवाजी पार्क में 'अन्याय' के मुद्दे पर आयोजित होने वाली एक सार्वजनिक बैठक के बारे में सूचित किया गया।
पाठकों को भेजे गए निमंत्रण में लिखा था: ‘महाराष्ट्र के देवता, छत्रपति शिवाजी महाराज को नमन करते हुए, महाराष्ट्र में पुनरुत्थान लाने के लिए तत्पर शिवसेना के सैनिकों की एक बैठक रविवार, 30 अक्टूबर 1966 को शाम 5:30 बजे शिवाजी पार्क, दादर में आयोजित की जाएगी। आप महाराष्ट्र के गौरवशाली पुत्र हैं। मैं आप सभी से, शिवसैनिकों की ओर से, बैठक में उपस्थित रहने का अनुरोध करता हूँ।’ मार्मिक के संपादक ने पत्र के अंत में स्वयं को ‘आपका विनम्र महाराष्ट्र सेवक, बाल ठाकरे’ के रूप में संबोधित किया।
अपनी पहली रैली के लिए लोगों को लामबंद करने के लिए, शिवसेना ने मुंबई-महाराष्ट्र की लोकप्रिय मित्र मंडल (पड़ोस के क्लब) और व्यायामशाला (जिमशाला) संस्कृति का प्रभावी ढंग से उपयोग किया।
विजय गांवकर, जो 1968 से 1978 तक शिवसेना के पार्षद रहे और शिवसेना के गठन के तुरंत बाद ही उसमें शामिल हो गए थे, बताते हैं कि कैसे मंडलों और व्यायामशालाओं के नेटवर्क तक संगठन ने संपर्क किया और उन्हें अपने प्रभाव के अधीन किया।

पद्माकर अधिकारी, श्याम देशमुख, पुजारी मास्टर, भाई भोंसले, मैं और कुछ अन्य लोगों ने सभा के लिए लोगों को संगठित करने का बीड़ा उठाया। हम मध्य मुंबई के सभी जिमों में गए और उन्हें सेना का महत्व समझाया, तथा उनसे दशहरा रैली में भाग लेने का आग्रह किया। उसी समय, हमने उस वर्ष गोविंदा उत्सव के लिए एक संयुक्त मंडल का गठन किया, जिसने विभिन्न मंडलों को एक साथ लाया। इस प्रकार, सेना ने मुंबई के इन सांस्कृतिक संगठनों के साथ जल्दी ही एक मजबूत

संबंध स्थापित कर लिया, जो जन लामबंदी की लंबी परंपराओं के साथ सामाजिक मेलजोल के महत्वपूर्ण केंद्र हैं। मुंबई के अधिकांश जिमों और मंडलों ने रैली में भाग लिया।⁴ ²

ठाकरे ने स्वयं साझा किया:

रैली से कुछ दिन पहले, मैं घर पर कार्टून बनाने में व्यस्त था, तभी हमारे एक शुभचिंतक, प्रोफेसर डी.वी. देशपांडे आए। उन्होंने पूछा, “बाल, मैंने आज का मार्मिक पढ़ा। आपकी सारी घोषणाएँ यहीं छपती हैं, है ना?” मैंने बताया कि मेरे पास इन्हें छापने के लिए कोई और जगह नहीं थी। उन्होंने आगे पूछा, “लेकिन आपने सभा के लिए शिवाजी पार्क ही क्यों चुना? यह इतना बड़ा मैदान है (लगभग 2 लाख लोगों की क्षमता वाला)। अगर लोग उत्साह से न आएं तो क्या होगा?” मैंने बताया कि मैंने घोषणा पहले ही कर दी है। उन्होंने एक सुझाव दिया: “किंग जॉर्ज हाई स्कूल का मैदान ले लीजिए (शिवाजी पार्क के आकार का लगभग दसवां हिस्सा)। अगर भीड़ बढ़ जाए, तो आप बाहर लाउडस्पीकर लगा सकते हैं।” मैंने मना कर दिया: “जो होना था वो हो गया। अब पीछे नहीं हट सकता। देखते हैं मैं मूर्ख साबित होता हूँ या लोग।” लेकिन हम दोनों में से कोई भी मूर्ख नहीं निकला। इतनी भारी भीड़ थी कि शिवाजी पार्क खचाखच भर गया। अत्यधिक उत्साह और उमंग थी।⁴ ³

31 अक्टूबर 1966 के नवकाल में इस रैली को 'विशाल' बताया गया था और कहा गया था कि दशहरा के दिन शाम 4 बजे से ही शहर के विभिन्न हिस्सों से सैनिकों के जुलूस शिवाजी पार्क की ओर बढ़ रहे थे। कुल मिलाकर, लगभग 4 लाख लोग मैदान में उमड़ पड़े, जो आयोजकों की उम्मीदों से कहीं अधिक था।
इस अवसर पर प्रबोधनकर उपस्थित थे और उन्होंने भाषण दिया।

आज मराठी भाई नए आयाम स्थापित करते हुए सच्चे अर्थों में दशहरा मना रहे हैं। आइए, हम शिवसेना के माध्यम से अपनी समस्याओं से लड़ें, उन पर विजय प्राप्त करें और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करें। यही हमारी ओर से सीमाओं का वास्तविक पारगमन होगा (दशहरा सीमाओं के प्रतीकात्मक पारगमन का त्योहार है)। आपने आज यह सिद्ध कर दिया है कि मराठा रक्त अभी तक अशुद्ध नहीं हुआ है और महाराष्ट्रवासी अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार हैं। अब मराठी लोगों को आपस में लड़ने के बजाय अपने भाइयों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध स्थापित करने का संकल्प लेना चाहिए।

उन्होंने जोर देकर कहा:

महाराष्ट्र कमजोरों और डरपोकों की भूमि नहीं है। यह शेरों की भूमि है। इतिहास ने बार-बार दिखाया है कि इस शेर को डंक मारने का प्रयास करने पर

क्या होता है। यदि भविष्य में भी कोई इस तथ्य को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करना चाहे, तो उसकी इच्छा पूरी होगी।⁴⁴

बैरिस्टर रामराव आदिक, प्रोफेसर एस.ए. रानाडे और बलवंत मंत्री ने भी रैली में भाषण दिया। अंतिम वक्ता बाल ठाकरे थे।
उन्होंने श्रोताओं को संबोधित करते हुए कहा, ‘महाराष्ट्र ने अथक प्रयासों, संघर्ष और बलिदान के बिना कभी कुछ हासिल नहीं किया है।’⁴⁵ ‘एस.एम. जोशी ने राष्ट्रवाद की आड़ में शिवसेना को सांप्रदायिक करार दिया है। मैं उन्हें खुली चुनौती देता हूं – उन्हें इस मुद्दे पर चुनाव लड़ना चाहिए कि आज महाराष्ट्र को महाराष्ट्रवाद की सख्त जरूरत है या राष्ट्रवाद की।’ शिवसेना प्रमुख ने कहा, ‘शिवसेना सांप्रदायिक नहीं है। जो भी व्यक्ति मुश्किल समय में किसी के साथ सच्ची दोस्ती कायम करता है, वह सच्चा मराठी मानुष है। आज समाज को राजनीति से ज्यादा सामाजिक कार्यों की जरूरत है। शिवसेना को राजनीति से दूर रखने का फैसला किया गया है। क्योंकि राजनीति गजकरण (दाद, एक जानलेवा त्वचा रोग) के समान है।’
कार्टूनिस्ट को राजनीति से घृणा थी और वे किसी भी दल से जुड़े राजनेताओं से नफरत करते थे, और उन्होंने इसे स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया। ज़ाहिर है, क्योंकि राजकरण शब्द की ध्वनि गजकरण से मिलती-जुलती थी, इसलिए यह स्पष्ट है कि शब्दों के साथ खेलने की लालसा – जो आज भी ठाकरे की पसंदीदा आदतों में से एक है – ने इस शब्द के प्रयोग को प्रेरित किया होगा।
ठाकरे ने यह भी मांग की कि महाराष्ट्र आवास विकास निगम में 80 प्रतिशत सीटें महाराष्ट्रियों के लिए आरक्षित की जाएं और सरकारी नौकरियां केवल उन्हीं को दी जाएं जो मराठी पढ़-लिख सकते हों या अच्छी मराठी बोल सकते हों। उन्होंने कहा, ‘मराठी मानुष जाग उठा है। वह भविष्य में कभी अन्याय बर्दाश्त नहीं करेगा। महाराष्ट्र सरकार को इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, इस पर ध्यान देना चाहिए।’
पत्रकार कुमार केतकर, जो सैकड़ों-हजारों अन्य युवा लड़कों के साथ शिवसेना की पहली बैठक में शामिल हुए थे, ने बाद में लिखा: 'उनके (बाल ठाकरे) लिए सभी दक्षिणी लोग मद्रासी थे और सभी उत्तरी लोग भैया... उन्होंने मद्रासियों पर उन नौकरियों को छीनने का आरोप लगाया जो उनके अनुसार मराठी लोगों की थीं। उनकी संकीर्ण सोच और राजनीतिक अज्ञानता दोनों ही स्पष्ट थीं।'⁴⁶
यह आश्चर्यजनक है क्योंकि उस समय मुंबई एक अत्यधिक राजनीतिक शहर था जहाँ मजबूत ट्रेड यूनियनें थीं। कॉमरेड एस.ए. डांगे कपड़ा श्रमिकों के निर्विवाद नेता थे। एस.एम. जोशी राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त समाजवादी नेता थे जो संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के अग्रदूत थे। डांगे, जोशी और दैनिक मराठा के जुझारू संपादक आचार्य अत्रे ने मिलकर संयुक्त महाराष्ट्र समिति के नाम से जाने जाने वाले पुराने वाम मोर्चे का नेतृत्व किया था। मुंबई उस आंदोलन का केंद्र था और मराठी भाषी लोगों ने महाराष्ट्र राज्य की स्थापना में सफलता प्राप्त करके एक शानदार विजय अर्जित की।
फिर भी, यहाँ एक ऐसा व्यक्ति था जो सभी दलों और राजनेताओं की निंदा कर रहा था, और उसका आत्मविश्वास देखकर ठाकरे के शुरुआती दौर के अनुयायी और निश्चित रूप से वे वामपंथी भी हैरान रह गए थे जिन्होंने यह मान लिया था कि मुंबई लेनिनवादी चेतना वाले श्रमिक वर्ग का आदर्श शहर है। उन्होंने 1940 के दशक के मध्य में जन्मी पीढ़ी के उदय को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया

था। यह पीढ़ी, जो उस समय किशोरावस्था या 20 वर्ष की आयु के आसपास थी, न तो समाजवादी आंदोलन से प्रभावित थी और न ही स्वतंत्रता संग्राम से। उन्हें लगता था कि उनका भविष्य किसी ने छीन लिया है।
ठाकरे ने कहा कि वह चोर को जानता है। और उसने लुंगी पहने मद्रासी को अपशब्द कहे।
ठाकरे के पहले भाषण के बाद, रैली में शामिल हुई भीड़ ने तितर-बितर होते समय उडुपी रेस्तरां पर हमला कर दिया, जिससे तुरंत ही नए संगठन की छवि उसके शुभंकर, एक दहाड़ते हुए बाघ के साथ जुड़ गई।
ठाकरे के शुरुआती सहयोगियों में से एक दिलीप घाटपांडे कहते हैं: ‘बालासाहेब का भाषण सुनकर लड़कों का खून खौलने लगा था। दादर स्टेशन जाते समय रास्ते में दक्षिण भारतीयों का एक अड्डा था जहाँ मटका (जुआ) जैसी अवैध गतिविधियाँ होती थीं। क्रोधित युवकों ने उस जगह पर धावा बोल दिया।’⁴⁷
31 अक्टूबर 1966 के 'नवा काल' अखबार ने बताया कि शिवाजी पार्क से लौट रही भीड़ पर पत्थर फेंके गए और सोडा-पानी की बोतलें डाली गईं। आरोप है कि यह हमला रानाडे रोड स्थित एक होटल से हुआ था। अखबार ने रिपोर्ट किया, 'इसके परिणामस्वरूप माहौल तनावपूर्ण हो गया और थोड़ी-बहुत तोड़फोड़ और लूटपाट भी हुई। लेकिन पुलिस जल्द ही मौके पर पहुंची, स्थिति को शांत किया और उस होटल के मालिक को गिरफ्तार कर लिया जहां से पत्थर फेंके गए थे।'
ठाकरे शिवसेना की रैली की सफलता से प्रसन्न थे। वे याद करते हैं: ‘रात लगभग 10:30 बजे, देशपांडे, जिन्होंने मुझसे पूछा था कि मैंने शिवाजी पार्क को आयोजन स्थल के रूप में क्यों चुना, घर वापस आए। उन्होंने कहा, “बाल, तुम जीत गए हो।” मैंने उनसे कहा, “है ना? हम ठाकरे हैं। हम कभी हार की बात नहीं करते, केवल जीत की बात करते हैं।”’⁴⁸
शिवसेना की उद्घाटन रैली में चार लाख लोग जमा हुए थे, और ठाकरे की अपील पर मिली प्रतिक्रिया ऐसी थी कि मार्मिक के संपादक खुद थोड़े हैरान रह गए थे। इस रैली ने रातोंरात मुंबई में शिवसेना को एक सशक्त शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। शहर को एक शेर मिल गया और राज्य को एक नया नारा: जय महाराष्ट्र।
महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक रैली के बाद सैनिकों द्वारा की गई हिंसा की खबरों से बेहद नाराज थे। उन्होंने इसकी निंदा करते हुए कहा, 'महाराष्ट्रियों के अधिकारों के लिए लड़ने का यह तरीका नहीं है।' वामपंथी दलों ने न केवल शिवसेना का विरोध करने की बात कही, बल्कि उन्होंने 2 नवंबर को यह भी घोषणा की कि शिवसेना को 'पछाड़ने' के लिए उठाए जाने वाले कदमों पर निर्णय लेने के लिए सभी वामपंथी दलों की एक बैठक बुलाई जाएगी।

4

सेना कोर को संगठित करना

‘टाइगरडम’ की सनसनीखेज छवि से उत्साहित होकर ठाकरे ने मुंबई की संकरी गलियों, घुमावदार रास्तों और विशाल मैदानों में सभाएं आयोजित करना शुरू कर दिया। जहां भी वे अपने जोशीले भाषणों के साथ जाते, भीड़ उमड़ पड़ती और वे विवादों को गले लगा लेते।
उसी समय शिवसेना कार्यकर्ताओं के एक दल को संगठित करने का काम शुरू हुआ। उस समय शिवसेना प्रमुख के आसपास वामनराव महादिक, दत्ताजी साल्वी, विजय पर्वतकर, शामराव देशमुख और माधव देशपांडे जैसे कुछ ही लोग थे, जो संगठनात्मक तंत्र का प्रबंधन करते थे।
ठाकरे के अनुसार, साल्वी उन पहले लोगों में से एक थे, जिन्हें बाद में उनके करीबी लोगों के समूह के रूप में जाना गया, जिन्होंने उनसे मुलाकात की थी।

अमर हिंद मंडल में एक नकली अदालती कार्यवाही के दौरान मैं एक बॉक्स में बैठा था। जॉर्ज फर्नांडीस (समाजवादी नेता, बाद में भारत के रक्षा मंत्री और ठाकरे के अच्छे मित्र) अभियोक्ता थे और मुझसे सवाल पूछ रहे थे, और दत्ताजी साल्वी न्यायाधीश की कुर्सी पर बैठे थे। अगले दिन, दत्ताजी मेरे घर आए और बोले, “मैंने कल आपकी बात सुनी। मैं आपके साथ काम करना चाहता हूँ।” उन्होंने बताया कि उन्होंने मिल में अपनी नौकरी छोड़ दी है। मैंने उनसे कहा कि वे अभी नौकरी न छोड़ें, क्योंकि संगठन को अभी आकार लेना बाकी है। उन्होंने कहा, “मैंने तो पहले ही छोड़ दी है।” साल्वी के बाद वामनराव महादिक आए। वे बीएमसी में क्लर्क थे। और उसके बाद, मैं मनोहर जोशी (जो शिवसेना के शासनकाल में मुख्यमंत्री बने) से मिला। मैंने पुणे के शनिवारवाड़ा में एक रैली की और वहाँ से मैं अपनी बहन के घर गया। मेरे भाई श्रीकांत और जोशी वहाँ पहुँचे। मैं जोशी को नहीं जानता था; श्रीकांत ने उनका परिचय कोहिनूर तकनीकी संस्थान चलाने वाले व्यक्ति के रूप में कराया। जोशी ने मुझे बताया कि वह मेरी रैली में आए थे, और श्रीकांत ने कहा कि वे सभी जोशी की कार में मुंबई से आए थे। फिर हम जोशी की कार में मुंबई लौट गए। मनोहर जोशी के बाद उनके भतीजे सुधीर जोशी आए [जो बाद में शिवसेना के शासनकाल में मुंबई के महापौर और राजस्व एवं शिक्षा मंत्री बने]।⁴⁹

इन सहयोगियों के साथ, ठाकरे ने पार्टी की संरचना बनाने और मुंबई भर में शिवसेना की शाखाएं स्थापित करने का कार्य शुरू किया, जिन्हें शाखाएं कहा जाता है।
यह सारा काम इन कुछ लोगों को ही नहीं करना था, क्योंकि कई युवा आगे आए और अपने-अपने क्षेत्रों में सेना की शाखाएँ स्थापित करने की इच्छा जताई। इनमें से अधिकांश ने इसके लिए धन नहीं माँगा; उन्होंने अपने पैसों से शाखाएँ स्थापित कीं और अपने कपड़ों को सेना के झंडों में बदल दिया।

उन दिनों सेना शाखाएँ आज की तरह भव्य और किलेनुमा संरचनाएँ नहीं हुआ करती थीं। कुछ जगहों पर तो किसी के घर का बरामदा, चॉल की सीढ़ियों के बगल में खाली पड़ी कोई छोटी सी जगह, कोई दुकान, कोई स्टॉल या कुछ कक्षाओं की बेंचें भी सेना शाखा के रूप में काम करती थीं।
परेल शाखा का निर्माण पूरा होने तक, वामनराव महादिक अपने घर के ठीक सामने वाली गली में बैठकें करते थे, जहाँ एक कुर्सी और मेज ही उनकी 'शाखा का सामान' होती थी। सुधीर जोशी ने कुछ समय तक दादर स्थित अपने भवन की छत पर अपनी शाखा चलाई।
शिवसेना की ओर आकर्षित हुए युवाओं ने भरपूर जोश दिखाते हुए शहर की दीवारों पर ठाकरे के नारे और कार्टून चिपका दिए और जनसमर्थन जुटाने का काम किया। अपने सामुदायिक स्वयं सहायता परियोजनाओं के माध्यम से भी, सैनिकों ने शिवसेना को आम लोगों तक पहुंचाया।
ऐसे कदम उठाने वाले शिवसेना कार्यकर्ताओं का स्वभाव कैसा था? अन्य दलों और संगठनों के कार्यकर्ताओं से वे किस प्रकार भिन्न थे? ठाकरे के प्रवासी- विरोधी भाषणों और 'भूमिपुत्र' के नारे से आकर्षित होकर शिवसेना में शामिल होने वाले शिवसेना कार्यकर्ता में कोई विशिष्ट विशेषता थी क्या? क्या वे 'अमीर वर्ग' के थे या केवल मध्यम वर्ग के प्रतिनिधि थे?
शिवसेना कार्यकर्ता को पार्टी के अन्य संगठनों में उनके समकक्षों से सबसे स्पष्ट रूप से अलग करने वाला गुण उनकी युवावस्था थी।
ठाकरे ने जब शिवसेना की शुरुआत की तब उनकी उम्र स्वयं 40 वर्ष थी, और जो महाराष्ट्रियन उनसे शीघ्र ही प्रभावित हुए वे या तो उनके समकालीन थे या उनसे कम उम्र के थे। नई शाखाओं का संचालन करने वाले अधिकांश सैनिक, और ठाकरे की शुरुआती सभाओं में भाग लेने वालों का एक बड़ा प्रतिशत छात्र या विद्यार्थी आयु वर्ग के थे। यहां तक कि उन दिनों ठाकरे के साथ रहने वाले 'वरिष्ठ' आयोजक भी या तो उनके समकालीन थे या उनसे कम उम्र के थे। 1968 में शिवसेना पर अपने शोध के दौरान कैटजेनस्टीन ने जिन 37 शाखा प्रमुखों (शाखा प्रमुखों), उपशाखा प्रमुखों (उप शाखा प्रमुखों) और सक्रिय सैनिकों का साक्षात्कार लिया, उनकी औसत आयु छब्बीस वर्ष थी।⁵⁰
और इनमें से अधिकांश युवाओं के पास शिक्षा थी। जिन सैनिकों का उन्होंने साक्षात्कार लिया, उनमें से केवल 22 प्रतिशत ने मैट्रिक पास नहीं किया था, हालांकि वे
इनमें से 35 प्रतिशत ने स्कूल में पढ़ाई की थी; 35 प्रतिशत ने मैट्रिकुलेशन पूरा किया था; 16 प्रतिशत ने मैट्रिकुलेशन के साथ-साथ अतिरिक्त डिप्लोमा भी प्राप्त किया था; और 27 प्रतिशत ने कॉलेज की पढ़ाई पूरी करके उच्च डिग्री प्राप्त की थी।
कम्युनिस्ट नेता रोजा देशपांडे, जो एस.ए. डांगे की बेटी हैं, ने मुझे बताया कि शिवसैनिक की छवि एक निम्नवर्गीय सर्वहारा वर्ग के रूप में गलत थी और इसे 'छोटे पूंजीपति बुद्धिजीवियों' ने बढ़ावा दिया था।

शिवसेना का समर्थन आधार असामाजिक नहीं था। यहां तक कि कम्युनिस्ट नेताओं के बच्चे भी शिवसेना में शामिल हुए। वे बेशक श्रमिक वर्ग के सदस्य थे, वे मजदूर और गरीब क्षेत्रों से आते थे। क्या कम्युनिस्ट अपने ही बच्चों को असामाजिक कहेंगे? शिवसेना एक जन आंदोलन था, और हो सकता है कि असामाजिक लोग शिवसेना के समर्थन आधार का एक हिस्सा रहे हों, क्योंकि जन आंदोलन में समाज

का हर वर्ग शामिल होता है। लेकिन जैसा कि बताया जाता है, शिवसेना पर असामाजिक लोगों का वर्चस्व नहीं था। शिक्षित वर्ग ने शिवसेना का समर्थन किया, कई प्रोफेसरों और बुद्धिजीवियों ने इसके उदय के समय ही इसके प्रति निष्ठा की शपथ ली। इसके अलावा, पार्टी ने वर्षों में कई चुनाव जीते हैं। क्या असामाजिक लोग पूरे मतदाता वर्ग पर हावी हैं? असामाजिक लोग समय के साथ खत्म हो जाएंगे, वे हाजी मस्तान, यूसुफ पटेल और अरुण गावली जैसे तत्वों से जुड़ जाएंगे। लेकिन शिवसेना एक वास्तविक आंदोलन था, सत्ता के खिलाफ जनता का आंदोलन। वकील, डॉक्टर, अभिनेता और अभिनेत्रियां सभी शिवसेना में शामिल हुए और इसका समर्थन किया। उनकी पृष्ठभूमि बौद्धिक थी। भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक दिग्गज परिवार माने जाने वाले कपूर परिवार का पूरा परिवार शिवसेना से जुड़ा हुआ था। वे सिर्फ बाहरी समर्थक या हमदर्द नहीं थे, बल्कि सच्चे शिवसेनाभक्त थे। दुर्भाग्य से, कम्युनिस्टों ने शिवसेना के विकास का निष्पक्ष विश्लेषण नहीं किया है।⁵ ¹

युवाओं को सेना की ओर आकर्षित करने वाले कारक अनेक थे। वे कारक क्या थे? और उनका यह विचित्र संयोजन कैसे हुआ?
1960 के दशक के मध्य में युवाओं को सेना जैसे विरोध आंदोलन की ओर आकर्षित करने वाले विविध पहलुओं में से पहला - जिसके बारे में हमने पहले विस्तार से चर्चा की है - आर्थिक था।
ऐसा नहीं था कि मुंबई में अचानक कोई आर्थिक संकट आ गया हो, जिसने मराठी भाषी आबादी को तबाह कर दिया हो और आर्थिक उन्नति के सभी अवसरों को छीन लिया हो। यह प्रक्रिया क्रमिक थी: धीरे-धीरे लेकिन लगातार ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती गईं जिनके कारण आर्थिक गतिरोध चिंताजनक स्तर तक पहुँच गया। उस समय की राजनीति और अर्थव्यवस्था आपस में गुंथी हुई थीं। संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन ने मराठी लोगों को एकजुट किया और महाराष्ट्र के युवाओं में नई जान फूंकी, लेकिन महाराष्ट्र के गठन के बाद संयुक्त महाराष्ट्र समिति में आंतरिक संघर्ष हुए और वह बुरी तरह बिखर गई।
इस प्रकार, डांगे, एस.एम. जोशी, प्रबोधनकर ठाकरे और अत्रे जैसे लोकप्रिय नेताओं की ऊर्जा उस समय बिखर गई जब उनकी सामूहिक शक्ति युवा वर्ग को संगठित कर सकती थी और उनकी शिकायतों के निवारण के लिए प्रतिष्ठान पर दबाव डाल सकती थी।
इस मोर्चे के कमजोर पड़ने से कांग्रेस को 1962 में हुए चुनावों में कुल 264 विधानसभा सीटों में से 215 सीटें जीतने का मौका मिला। राज्य पर पूर्ण प्रभुत्व स्थापित करते हुए, नई कांग्रेस सरकार ने मराठा बहुल क्षेत्र में अपने निहित स्वार्थों को मजबूत करने के लिए हर संभव प्रयास किया और मुंबई के मराठी युवाओं की स्थिति सुधारने के लिए कोई कदम नहीं उठाया, जो लगातार बेचैन होते जा रहे थे।
महाराष्ट्र और उसके साथ मुंबई को 105 लोगों के प्राणों की आहुति के बाद ही हासिल किया जा सका था।⁵ ² यह बात मराठी लोगों के मन में गहराई से बैठी हुई थी, ठीक वैसे ही जैसे कांग्रेस नेता वाई.बी. चव्हाण के संयुक्त महाराष्ट्र के विरोध में दिए गए बयान। चव्हाण ने 'नेहरू महाराष्ट्र से महान हैं' कहकर और संयुक्त महाराष्ट्र को 'स्वदेशी उपनिवेशवाद' कहकर युवा महाराष्ट्रियों में आक्रोश पैदा कर दिया था। केंद्र सरकार के रुख का समर्थन करने के बाद, महाराष्ट्र के पहले मुख्यमंत्री बनने पर 105

हुतात्माओं को श्रद्धांजलि के रूप में मंगलकलश भेंट करने का उनका कार्य जनता को रास नहीं आया। मुंबई के मराठी युवाओं की समस्याओं को सुलझाने में उनकी सरकार की अनिच्छा भी लोगों को पसंद नहीं आई।
1960 के बाद कांग्रेस के खिलाफ आक्रोश तेजी से बढ़ा, लेकिन समिति के कमजोर पड़ने के बाद एक शून्य पैदा हो गया और असंतुष्ट युवाओं के आक्रोश और चिंताओं को व्यक्त करने वाला कोई नहीं बचा।
ठाकरे ने इस कमी को पूरा किया। उन्हीं युवाओं ने उनका स्वागत किया जिन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन को गति प्रदान की थी। महाराष्ट्रवासियों को उम्मीद थी कि मुंबई के संयुक्त महाराष्ट्र का हिस्सा बनने के बाद उनकी आर्थिक निर्भरता समाप्त हो जाएगी, लेकिन हालात और भी बदतर होते चले गए। शिवसेना ने 'महाराष्ट्रवासियों के लिए' के अपने घोषित लक्ष्य और स्थानीय निवासियों के लिए तरजीही व्यवहार की मांग के साथ, लोगों के मनोबल को बढ़ाया और उनकी आकांक्षाओं को फिर से जगाया। यह संकटग्रस्त पीढ़ी के लिए आशा की किरण बनकर उभरी।
दूसरा, इस संगठन का नाम छत्रपति शिवाजी नामक एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के नाम पर रखा गया था।
‘शिवाजी का नाम सुनकर किसे गर्व का अनुभव नहीं होगा?’ कम्युनिस्ट नेता अहिल्या रंगनेकर ने मुझसे कहा। ‘आखिरकार, जो भी दिल को छूता है, वह आकर्षक होता है। अगर शिवाजी का नाम लेने वालों का व्यवहार उनकी शिक्षाओं से मेल नहीं खाता, तो क्या हुआ? शिवसेना ने शिवाजी के नाम का इस्तेमाल उससे जुड़ी भावनाओं का लाभ उठाने के लिए किया।’⁵ ³
भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेता एल.के. आडवाणी कहते हैं: ‘अन्य अनेक लोगों की तरह, मैंने भी आरएसएस शाखाओं में हिंदुत्व की शिक्षा ली है और हमारे सामने हमेशा छत्रपति शिवाजी का आदर्श रहा है। शिवाजी का आकर्षण पूरे देश में है और उन पर लिखी गई सर्वश्रेष्ठ कविताओं में से एक महान रवींद्रनाथ टैगोर ने लिखी थी। लेकिन जिस राज्य में छत्रपति शिवाजी का जन्म हुआ, वहाँ बालासाहेब ने शिवाजी को सर्वोच्च स्थान दिया, उनकी पूजा की और यहाँ तक कि अपनी पार्टी का नाम भी शिवाजी के नाम पर रखा।’⁵⁴
इस प्रकार, मराठा योद्धा परंपरा पर गर्व करने वाले और अपनी वर्तमान स्थिति से निराश लोगों के लिए शिव सेना – शिवाजी की सेना – नाम का महत्व स्पष्ट था। 1966 में, महाराष्ट्र के युवाओं ने देखा कि उनके नायक का नाम एक बार फिर आशा की किरण लेकर आया है।
इसके साथ ही बाल ठाकरे का व्यक्तित्व भी समाहित था। हालांकि हम बाद में शिवसेना = बाल ठाकरे के संबंध का विस्तार से विश्लेषण करेंगे, लेकिन इस समय यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि 1960 के दशक में उनकी आक्रामक शैली का युवा मन पर क्या प्रभाव पड़ा था।
ठाकरे ने शिवसेना के शुरुआती दिनों में युवाओं का दिल कैसे जीता? उन्होंने महाराष्ट्रियों की स्थिति पर चिंता व्यक्त की और उन 'बाहरी लोगों' की कड़ी आलोचना की जिन्होंने 'मराठी मानुषों के अधिकारों को छीन लिया' था।
उन्होंने राजनीतिक दलों के घोषणापत्रों के बारे में तिरस्कारपूर्ण लहजे में बात की।
उन्होंने उस लोकतंत्र की निंदा की जो 'प्रगति के मार्ग में बाधाएँ खड़ी करता है'।

उन्होंने उस कानून की निंदा की जो 'लोगों को न्याय नहीं दिला सकता' और कहा कि उन्हें किसी भी विचारधारा में विश्वास नहीं है।
उन्होंने कहा कि वे केवल और दृढ़ता से 'महाराष्ट्र धर्म' में विश्वास करते थे, जो महाराष्ट्रियों के टुकड़ों में विभाजन का विरोध करता था और इसके बजाय उन्हें एकजुट करता था, उनके अधिकारों को सुरक्षित करता था और एक न्यायपूर्ण राज्य की स्थापना की ओर ले जाता था।
ठाकरे ने उस समय कोई बड़े-बड़े वादे नहीं किए, न ही उन्होंने आडंबरपूर्ण सपने दिखाए। उन्होंने केवल शहरी बेरोजगार युवाओं की विशाल संख्या को व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह छेड़ने के लिए प्रेरित किया।
वह एक गुस्सैल नौजवान के रूप में सामने आया, उसने सत्ता-विरोधी रुख अपनाया और युवाओं से अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने का आग्रह किया।
आर्थिक क्रांति से अछूते रह जाने से भयभीत इस धरती के युवा पुत्र, सत्ता के विरुद्ध गर्जना करने वाले नेता की तलाश में थे। ठाकरे में उन्हें एक दहाड़ने वाला शेर मिला, और उन्होंने उसका जवाब दिया।
जल्द ही, वे दफ्तरों में घुसने लगे, शीर्ष अधिकारियों का घेराव करने लगे, उन 'लुंगीवालों' और 'भैयाओं' को शारीरिक रूप से पीटने लगे जिन्होंने उनकी नौकरियां 'छीन ली' थीं और उडुपी होटलों पर हमला करने लगे।
जनवरी 1967 तक, मुंबई और ठाणे में 60 सेना शाखाएँ गठित हो चुकी थीं। ठाकरे और उनके आसपास के प्रमुख आयोजकों ने इन कार्यालयों का गठन किया था। इसके बाद, सेनापति (सेना प्रमुख) और उनके करीबी सहयोगियों ने सावधानीपूर्वक संसदीय क्षेत्रों से सटे सात विभाग प्रमुखों (डिवीजन प्रमुखों) और नगर निगम सीटों से सटे सौ से अधिक शाखा प्रमुखों (शाखा प्रमुखों) का चयन किया। शाखा प्रमुखों के बाद उपशाखा प्रमुख (सहायक शाखा प्रमुख) नियुक्त किए गए, और उनके बाद आम कार्यकर्ता आए।
इन सभी लोगों को, नेताओं से लेकर उपशाखा प्रमुखों तक, नेता ने विशेष रूप से चुना था। इनमें से कई लोगों को राजनीतिक अनुभव बिल्कुल नहीं था, हालांकि उनका संगठनात्मक अनुभव अवश्य ही था। मंडल और शाखा प्रमुखों के चयन के दौरान, व्यक्ति की क्षमताओं, निष्ठा, संवाद कौशल, संपर्कों, युवाओं के साथ जुड़ाव की क्षमता और शारीरिक गतिविधियों में रुचि पर विशेष ध्यान दिया गया।
जब अनुभव से यह सिद्ध हुआ कि कुछ गुणों का आकलन गलत था, तो तुरंत सुधारात्मक उपाय किए गए। 1967 में एक सार्वजनिक सभा में ठाकरे ने शिवसेना कार्यकर्ताओं से कहा कि उन्होंने मलाड शाखा प्रमुख को निष्कासित कर दिया है, और संगठन में अन्य लोग जो इसके सिद्धांतों से विचलित होंगे, उन्हें भी इसी प्रकार निष्कासित कर दिया जाएगा।
उसी वर्ष, शिवसेना के अलोकतांत्रिक कामकाज की आलोचना करने वाले वरिष्ठ नेता बलवंत मंत्री को शिवसेना के सैनिकों ने ठाकरे के सामने घुटने टेकने के लिए मजबूर किया और माफी मांगने के बाद ही उन्हें रिहा किया गया। शुरुआत से ही शिवसेना में सभी को यह स्पष्ट कर दिया गया था कि 'अनुशासनहीनता' के लिए कोई जगह नहीं है।
सेना की कार्यप्रणाली में तीन बातों को सर्वोपरि महत्व दिया गया: अनुशासन, पार्टी के नियम और सत्ता का केंद्रीकरण। सेना की बैठकों के आयोजन का तरीका और संगठन के भीतर संचार का ढंग इसे स्पष्ट रूप से दर्शाता था।
शिवसेना की जनसभाएं तय समय पर आयोजित की गईं, इस बात का पूरा ध्यान रखा गया और पार्टी कार्यकर्ताओं को भीड़ के बीच में बैठाया गया ताकि लोग सभा

छोड़कर न जा सकें। सभाओं के दौरान श्रोताओं के बीच कभी भी बातचीत या शोर-शराबा नहीं हुआ और वक्ताओं को कभी भी शोरगुल से परेशान नहीं किया गया। दूसरी ओर, अन्य पार्टियों की रैलियां अक्सर अव्यवस्थित व्यवहार, लगातार बातचीत, आगे बैठे लोगों को बैठने के लिए चिल्लाने, नारेबाजी और यहां तक कि पत्थर फेंकने जैसी घटनाओं से अस्त-व्यस्त हो जाती थीं।
ठाकरे और उनके विश्वासपात्रों की विभाग प्रमुखों और शाखा प्रमुखों के साथ होने वाली बैठकें भी व्यवस्थित ढंग से होती थीं: पदाधिकारियों को एक विशेष क्रम में बैठने के लिए कहा जाता था, व्यक्तियों को अपने मंडल और शाखा की गतिविधियों की रिपोर्ट देने के लिए कहा जाता था और मतदान भी इस नियम का अपवाद नहीं था।
सेना पदानुक्रम के विभिन्न स्तरों के बीच शुरुआती दिनों में संचार के तरीके का अवलोकन करने के बाद, कैटजेनस्टीन ने अपनी पुस्तक में इसका विस्तृत वर्णन किया है:

गिरगाँव की एक बेहद सक्रिय शाखा में, मोहल्ले की हर गली या बड़ी चॉल से नेता नियुक्त किए जाते थे और उन्हें निर्देश दिया जाता था कि वे हर हफ्ते वार्ड कार्यालय में आकर बुलेटिन बोर्ड पर सूचनाएँ और घोषणाएँ देखें। शाखा की गतिविधियों और बैठकों का हिसाब रखने वाले वित्तीय खातों और बही-खातों का नियमित रूप से पार्टी के उच्च अधिकारियों द्वारा निरीक्षण किया जाता था... अलग-अलग शाखाओं से संवाद आश्चर्यजनक गति से होता था और ठाकरे और उनके साथियों के संदेश और निर्देश लगभग तुरंत वार्ड कार्यालय पहुँच जाते थे। कभी-कभी व्यंग्यपूर्वक कहा जाता है कि बॉम्बे में संचार का इससे भी अधिक कुशल नेटवर्क केवल मटका है, जो एक अवैध नंबरों का खेल है।⁵⁵

आरएसएस: एक आदर्श?
शिवसेना द्वारा कार्यकर्ताओं को एक व्यवस्थित संगठनात्मक संरचना के माध्यम से संगठित करने की तुलना अक्सर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) से की जाती है, जो एक हिंदू राष्ट्रवादी संगठन है और भाजपा का वैचारिक आधार है।
यह तुलना एक तरह से अपरिहार्य है। शिवसेना की तरह, आरएसएस का नेतृत्व भी केंद्रीय नियंत्रण में है, अंतिम निर्णय सरसंघचालक के पास होते हैं और अनुशासन का पालन सख्ती से किया जाता है। संघ भी शिवसेना की तरह ही अर्धसैनिक तैयारी और शारीरिक क्षमता पर जोर देता है। और दोनों संगठनों के कार्यकर्ताओं का एक बड़ा प्रतिशत मध्यम और निम्न-मध्यम वर्ग से आता है। दरअसल, यह भी कहा जाता है कि बाल ठाकरे, जो अपने छात्र जीवन में आरएसएस के सदस्य थे, ने अपनी शिवसेना बनाने के लिए आरएसएस की संगठनात्मक संरचना की नकल की थी।
ठाकरे स्वीकार करते हैं, ‘मैं तीन-चार साल तक आरएसएस की दादर शाखा में जाया करता था।’⁵⁶ ‘यह 1941 से 1944 के बीच की बात होगी। लेकिन संघ ने मेरे मन पर कभी कोई गहरी छाप नहीं छोड़ी। एक दिन दादा (प्रबोधनकर) ने मुझसे कहा, “घर पर यूं ही मत बैठो। वहां जाकर कुछ शारीरिक प्रशिक्षण लो।” मैं संघ शाखा को व्यायामशाला समझता था।’

युवा सेना कार्यकर्ताओं को व्यस्त रखती थीं, जिससे उनमें प्रतिबद्धता की एक ऐसी भावना विकसित होती थी जो आमतौर पर दुर्लभ होती है।
उदाहरण के लिए, कई सेना शाखाएँ थीं जो रोजगार रजिस्टर रखती थीं, जिनमें नौकरी चाहने वाले अपना नाम, योग्यता और इच्छित पद लिखते थे। जब शाखा को नौकरियों की उपलब्धता की सूचना मिलती थी, तो रजिस्टर देखकर युवाओं को अवसरों और मौजूदा रिक्तियों के बारे में जानकारी दी जाती थी। कई युवाओं को आवेदन पत्र भरने और साक्षात्कार में खुद को प्रस्तुत करने के तरीके के बारे में सुझाव भी दिए जाते थे। स्वाभाविक रूप से, नौकरी की तलाश कर रहे युवाओं को सेना शाखाएँ उनके अल्पकालिक और दीर्घकालिक हितों से जुड़ी हुई लगती थीं।
कुछ शाखाओं द्वारा टाइपिंग, स्टेनोग्राफी और अंग्रेजी की कक्षाएं भी आयोजित की जाती थीं, और मैट्रिक और उच्च स्तरीय परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त करने वाले गरीब छात्रों को सम्मानित किया जाता था और प्रोत्साहन के रूप में मुफ्त नोटबुक और अन्य स्टेशनरी दी जाती थी। छात्रों के लिए स्थानीय स्कूलों में अध्ययन कक्षों की व्यवस्था भी की जाती थी, ताकि उन्हें पर्याप्त अध्ययन स्थान मिल सके, और शाखाएं कुछ 'गरीब और योग्य' छात्रों की स्कूल फीस का भुगतान करने की जिम्मेदारी भी लेती थीं।
इसके अलावा, शिवसेना के मध्यवर्ती कार्यालय ने शाखाओं के बीच धन वितरित किया, जिन्होंने बदले में इन निधियों को उन युवा मराठी लड़कों को पूंजी के रूप में दिया जो छोटे उद्यम शुरू करने के इच्छुक थे।
बाल ठाकरे द्वारा मराठी युवाओं को अपने वड़ा पाव के स्टॉल शुरू करने के लिए दिए गए शुरुआती प्रोत्साहन की शिवसेना विरोधी विचारधारा ने कड़ी आलोचना की है। उनका मानना है कि ठाकरे ने युवा महाराष्ट्रियों की सोच को छोटे व्यवसायों तक ही सीमित रखा और उन्हें बड़े सपने देखने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया। उनका तर्क है कि ठाकरे द्वारा प्रस्तावित वड़ा पाव की अवधारणा बहुत ही संकीर्ण थी।
उन दिनों के वड़ा पाव के नारे को अक्षरशः लेना, ठाकरे की अपील की गहरी समझ को नज़रअंदाज़ करना होगा। 1960 के दशक में, वड़ा पाव का स्टॉल किसी भी अन्य चीज़ से ज़्यादा मराठी युवाओं की आत्मनिर्भरता और स्वावलंबन का प्रतीक था। उस समय महाराष्ट्र के युवाओं के पास बड़े व्यवसायों में निवेश करने और उद्यमशीलता के बड़े कदम उठाने के लिए पर्याप्त पूंजी नहीं थी; उस समय उनके पास जो पैसा था - या कहें कि पैसे की कमी थी - उससे वे केवल कुछ ऐसे नाश्ते के स्टॉल जैसा छोटा-मोटा व्यवसाय ही शुरू कर सकते थे।
अगर ठाकरे ने उस समय महाराष्ट्रवासियों को कारखाने और उद्योग खोलने और कंपनियां शुरू करने का सुझाव दिया होता, तो लोग उन्हें पागल समझकर उनका मज़ाक उड़ाते। उन्होंने देखा कि बेरोजगार युवाओं के लिए पहला कदम जो वे सुझा सकते थे, वह था वड़ा पाव का स्टॉल लगाना, और उन्होंने ऐसे स्टॉल लगाने की वकालत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी और इसके लिए पार्टी की धनराशि भी दी। सेना शाखाओं की सामाजिक गतिविधियों ने सैनिकों को संगठनात्मक कार्यों में और अधिक सक्रिय रूप से शामिल होने के लिए प्रेरित किया और पार्टी से बाहर के युवाओं को जुझारू और सुव्यवस्थित सेना में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया।
सैनिकों की कर्मठता और उत्साह ने सेना को अन्य संगठनों से अलग पहचान दिलाई है। व्यंग्यपूर्वक अक्सर कहा जाता है कि एक सैनिक अति उत्साही और अति

[illegible]
[illegible]:

[illegible] [illegible] [illegible] [

5

बाल ठाकरे:
व्यक्ति और व्यक्तित्व

बाल ठाकरे के व्यक्तित्व ने युवाओं को शिवसेना की ओर आकर्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और साथ ही मराठी भाषी लोगों द्वारा 'मराठी भाषी आबादी के अधिकारों की रक्षा' के लिए उनके द्वारा सुझाए गए तरीकों की कड़ी आलोचना को भी आमंत्रित किया। शिवसेना की स्थापना के समय से ही ठाकरे ने खुद को राजनीतिक व्यवस्था से बाहर के व्यक्ति के रूप में स्थापित किया। हमने पिछले अध्यायों में देखा है कि कैसे उन्होंने राजनीति को एक बीमारी के समान बताया और कहा कि शिवसेना '80 प्रतिशत सामाजिक कार्य और 20 प्रतिशत राजनीति' करेगी। जिस तरह से उन्होंने अपना राजनीतिक व्यक्तित्व गढ़ा, वह उनकी इन राजनीतिक प्राथमिकताओं और रणनीतियों को दर्शाता है। शुरुआत में, ठाकरे आम भारतीय राजनेता की तरह कपड़े नहीं पहनते थे। उन्होंने खादी के कपड़ों से पूरी तरह परहेज किया, जो आज तक भारतीय नेता की पहचान माने जाते हैं। शिवसेना की पहली रैली में उन्होंने एक साधारण फुल-लेंथ शर्ट और ट्राउजर पहनी थी, जिससे एक मध्यमवर्गीय महाराष्ट्रीयन की छवि उभरी। इस छवि को साकार करने के लिए वे दुबले-पतले और चुस्त-दुरुस्त थे, और उन्होंने मोटे फ्रेम का चश्मा पहना था। धीरे-धीरे उन्होंने बंद गला सफारी सूट पहनना शुरू कर दिया और 1970 के दशक में कभी कुर्ता-पायजामा पहनने लगे, जिसके साथ वे अपने गले में एक शॉल बड़े ही सलीके से ओढ़ते थे। कुर्ता-पायजामा और शॉल का रंग ऑफ-व्हाइट या केसरिया होता था। घर पर वे हमेशा केसरिया कुर्ता और उसी रंग की लुंगी पहनते थे। 1990 के दशक की शुरुआत में, उग्र हिंदुत्व के समर्थक के रूप में, ठाकरे ने अपने बाएं हाथ में रुद्राक्ष की माला पहनना शुरू कर दिया, जिसे वे अक्सर अपने जोशीले और अक्सर उत्तेजक भाषणों के दौरान भावपूर्ण ढंग से उठाते थे। आध्यात्मिक गुरु गंगागिरी महाराज द्वारा दिया गया रुद्राक्ष उन्होंने 1995 में अपनी पत्नी मीना (जिन्हें शिवसैनिक मीना-ताई या मां-साहिब कहते थे) के निधन के बाद त्याग दिया; उस समय, ठाकरे ने यह भी कहा था कि उनके पास उस ईश्वर में आस्था रखने का कोई कारण नहीं है जो लोगों को इतनी क्रूरता से छीन लेता है। अपनी पत्नी के निधन से पहले, बालासाहेब नियमित रूप से मुंबई से 100 किलोमीटर से अधिक दूर लोनावला के पास कार्ला में ठाकरे परिवार की देवी, एकवीरा के दर्शन करने जाया करते थे; उनके निधन के बाद, उनके दर्शन कम हो गए और एक समय तो पूरी तरह बंद हो गए, हालांकि उनके बेटे उद्धव और भतीजे राज अपने परिवारों के साथ कभी-कभी वहां जाते रहते हैं। शिवसेना के शुरुआती वर्षों में, ठाकरे ने अपनी राजनीतिक भूमिका के लिए खुद को अच्छी तरह से तैयार किया। उन्होंने अपनी पार्टी शुरू करने से कुछ समय पहले भारत के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास विस्तार से पढ़ा, ताकि उन्हें भारत के राजनीतिक अतीत की अच्छी समझ हो और वे घटनाओं और आधुनिक घटनाक्रमों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने में सक्षम हों। उन्हें उपन्यास तब भी बेहद नापसंद थे, जैसा कि आज भी है, और वे उन्हें पढ़ने से बचते थे। उन्होंने एक बार कहा था, 'मुझे

उपन्यासों में मौजूद बनावटी रोमांस और अन्य प्रकार की बनावटी बातें पसंद नहीं हैं।' लेकिन वे अखबारों के बहुत बड़े पाठक थे: उनके अपने ही शब्दों में, वे एक दिन में 10 से अधिक अखबार पढ़ लेते थे। बाद के वर्षों में भारतीय मीडिया के विस्तार के साथ यह संख्या बढ़कर 16 हो गई। पिछले पांच दशकों से उनकी यह आदत रही है कि वे महत्वपूर्ण समझे जाने वाले मीडिया समाचारों को चिह्नित करते हैं और आगे की कार्रवाई के लिए अखबारों की कटिंग शिवसेना नेताओं, विधायकों, पार्षदों और कार्यकर्ताओं को भेजते हैं। उदाहरण के लिए, वे कहते हैं कि यदि उन्हें किसी क्षेत्र में जमा कचरे की तस्वीर दिखती है, तो वे उसकी एक प्रति उस क्षेत्र के शिवसेना पार्षद को भेजते हैं, और यदि पार्टी का वहां कोई पार्षद नहीं है, तो विभाग प्रमुख (संबंधित विधानसभा क्षेत्र के पार्टी प्रमुख) या शाखा प्रमुख (संबंधित नगर निगम वार्ड के पार्टी प्रमुख) को भेजते हैं। यह प्रथा, जिसे उन्होंने 1960 के दशक में शुरू किया था, आज भी जारी है, हालांकि हाल के दिनों में उम्र और बीमारियों के कारण अखबार पढ़ने की उनकी आदत कम हो गई है।
युवा ठाकरे को गर्म बीयर का एक गिलास बेहद पसंद था, और साथ ही साथ उन्हें पाइप और सिगार का भी उतना ही शौक था। वे कार्टून बनाते समय या पार्टी सहयोगियों के साथ लंबी बैठकों के दौरान भी पाइप का आनंद लेते थे; जुलाई 2000 में, जब वे मुंबई दंगों के मामले में अपनी गिरफ्तारी के सिलसिले में अदालत जाने के लिए मातोश्री से निकले, तो उन्होंने अपने पसंदीदा सिगार को हाथ में लिए हुए घर से बाहर कदम रखा। मातोश्री की छत पर दिलीप कुमार जैसे फिल्म स्टार मित्रों के साथ उनकी शाम की बीयर की महफिलें (दिलीप कुमार से दोस्ती तब खत्म हो गई जब अभिनेता ने निशान-ए-पाकिस्तान पुरस्कार स्वीकार किया, तब ठाकरे ने हिंदी में कहा, 'अभी चना भी है, बीयर भी है, लेकिन दिलीप कुमार के रास्ते बदल गए'), या बापू नाडकर्णी, रमाकांत देसाई और माधव मंत्री जैसे क्रिकेटर मित्रों के साथ, जिनके साथ वे एफपीजे के दिनों में दादर से चर्चगेट तक रोजाना लोकल ट्रेन से यात्रा करते थे, जगजाहिर हैं। 1996 में बाईपास सर्जरी के बाद गर्म बीयर की जगह शराब ने ले ली, क्योंकि डॉक्टरों ने उन्हें बताया था कि शराब दिल के लिए अच्छी होती है। वे अपने डॉक्टरों को उन पर लगाए गए प्रतिबंधों और यहां तक कि उनके शरीर को 'एक मेडिकल प्रयोगशाला' में बदलने के लिए मज़ाकिया अंदाज़ में ताना मारने लगे। यह सख्त अनुशासन खान-पान की आदतों तक भी फैला हुआ था। इसका मतलब यह था कि ठाकरे अपने प्रिय वरण भात (दाल-चावल) और सब्जियां तो खा सकते थे, लेकिन चंद्रसेनिया कायस्थ प्रभु समुदाय के सदस्य होने के नाते, जिन्हें मछली और चिकन बहुत पसंद है, वे मांसाहारी भोजन उस तरह से नहीं खा सकते थे जैसा वे हमेशा से खाना पसंद करते थे, क्योंकि समुद्री भोजन और मांस खाने पर प्रतिबंध था।
क्रिकेट भी उनका एक और पसंदीदा खेल था। जवानी में वे अक्सर अपने रानाडे रोड स्थित घर से कुछ ही दूरी पर स्थित शिवाजी पार्क जाया करते थे, जहाँ वे मंत्री, नाडकर्णी, देसाई और संदीप पाटिल के पिता मधुसूदन पाटिल जैसे खिलाड़ियों को खेलते देखते थे। यह प्रेम आज भी कायम है, और पिछले दो दशकों से भारत-पाकिस्तान क्रिकेट संबंधों के अपने दृढ़ विरोध के बावजूद, 2004 में वीरेंद्र सहवाग द्वारा पाकिस्तान के खिलाफ तिहरा शतक बनाते हुए उन्होंने अपने घर पर टीवी पर खुशी से तालियाँ बजाईं। एक बार, 1970 के दशक में, उन्होंने प्रसिद्ध क्रिकेट कोच अन्ना वैद्य को चौंका दिया, जो उनसे मिलने के लिए कतार में खड़े थे। जैसे-जैसे कतार धीरे-धीरे आगे बढ़ी, कतार में खड़े लोग एक-एक करके ठाकरे के पैर छूने लगे; जैसे ही वैद्य ने झुकने की

कोशिश की, ठाकरे ने उनके हाथ पकड़ लिए और उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। उन्होंने क्रिकेट गुरु से कहा, 'आप मेरे पैर नहीं छू सकते। मैंने आपको बचपन में शिवाजी पार्क में युवाओं को कोचिंग देते देखा है।' एक तस्वीर में ठाकरे लगभग 40 वर्ष के हैं, बल्ले के साथ ड्राइव शॉट लगाते हुए। उनका बैकलिफ्ट काफी ऊंचा है, जो एक अच्छे कोच को हमेशा पसंद आएगा। ठाकरे की एक और पसंदीदा चीज बॉलीवुड रही है, जो अधिकांश भारतीयों की तरह ही है। उन्होंने न केवल हिंदी फिल्मों का आनंद लिया है, बल्कि अमिताभ बच्चन को अपने सबसे अच्छे दोस्तों में गिनते थे। 1982 में जब फिल्म 'कुली' के सेट पर अमिताभ घायल हो गए थे, तो शिवसेना की एम्बुलेंस तुरंत मौके पर पहुंची और उन्हें अस्पताल ले गई; और जब ठाकरे के पोते आदित्य द्वारा लिखित कविताओं का संग्रह विमोचन होने वाला था, तो शिवसेना प्रमुख ने अमिताभ को ही इसके लिए आमंत्रित किया था। शिवसेना के शुरुआती वर्षों में, ठाकरे ने बॉलीवुड की कई हस्तियों को शिवसेना मंच पर आमंत्रित किया और उनका सम्मान किया। 1960 और 70 के दशक में पार्टी के कार्यक्रमों में शामिल होने वालों में मोहम्मद रफी (जिन्हें ठाकरे के संगीतकार भाई श्रीकांत ने मराठी फिल्मों के लिए गाने को राजी किया था), आशा भोसले, धर्मेंद्र, राजेश खन्ना, संजीव कुमार, किशोर कुमार और आर.डी. बर्मन शामिल थे। धर्मेंद्र, आशा और राजेश खन्ना को शिवाजी की छोटी प्रतिमाएं स्मृति चिन्ह के रूप में दी गईं, जबकि आर.डी. बर्मन को ठाकरे ने एक विशाल दीपक भेंट किया। 1980 और 90 के दशक में, ठाकरे बॉलीवुड के विवादों में मध्यस्थ की भूमिका निभाने लगे और न केवल बॉलीवुड हस्तियों के पेशेवर मामलों में मध्यस्थता करते थे, बल्कि उनके व्यक्तिगत मुद्दों को सुलझाने में भी उनकी मदद करते थे। जब संजय दत्त को 1993 के मुंबई सिलसिलेवार बम धमाकों में उनकी भूमिका के लिए TADA कानून के तहत गिरफ्तार किया गया, तो बाल ठाकरे एकमात्र राजनीतिक नेता थे जिन्होंने उनका समर्थन किया और उनकी रिहाई की मांग की। ठाकरे ने अपने उन कार्यकर्ताओं को भी फटकार लगाई जिन्होंने फिल्म निर्माता सुभाष घई और अन्य लोगों द्वारा अभिनेता के समर्थन में निकाले गए एक अन्य मोर्चे के विरोध में मोर्चा निकाला था। संजय के पिता, अभिनेता और कांग्रेसी सुनील दत्त, ठाकरे के करीबी दोस्तों में से एक थे, और ठाकरे ने कहा कि दत्त सीनियर से बात करने के बाद उन्हें संजय की निर्दोषता का पूरा यकीन हो गया था। ठाकरे समय-समय पर मुंबई के फिल्म निर्माताओं को चेतावनी भेजते रहे हैं और यहां तक कि गैर-कानूनी रूप से 'क्लियर' की गई फिल्मों को भी मंजूरी देते रहे हैं। जब मणिरत्नम की फिल्म 'बॉम्बे', जो 1992-93 के मुंबई दंगों की पृष्ठभूमि पर आधारित थी, रिलीज होने वाली थी, तब यह खबर फैली कि फिल्म में दिखाए गए एक किरदार – एक हिंदू नेता – की शक्ल ठाकरे से काफी मिलती-जुलती है। शिवसेना प्रमुख ने कहा, 'अगर फिल्म निर्माता ने कुछ भी शरारतपूर्ण दिखाया, तो मेरे लड़के पर्दा फाड़ देंगे।' 2005 में, राम गोपाल वर्मा को ठाकरे के लिए 'सरकार' फिल्म की रिलीज से पहले एक विशेष स्क्रीनिंग आयोजित करनी पड़ी – यह फिल्म शिवसेना प्रमुख के जीवन और परिवार पर आधारित थी – और फिल्म तभी रिलीज हुई जब ठाकरे ने इसे 'मंजूरी' दे दी। मुद्दों पर एक सख्त, अड़ियल और यहां तक कि गैर-कानूनी न्यायाधीश की इस सार्वजनिक छवि के बावजूद, ठाकरे का एक नरम पक्ष भी था। उन्हें अपने पालतू जानवरों से बहुत प्यार था: पांपू नाम का कुत्ता उनके शुरुआती पालतू जानवरों में से एक था, फिर मेजर नाम का एक अल्सेशियन कुत्ता और मार्शल नाम का एक कुत्ता था। और उन्हें दशकों से अपने घर में रखे एक्वेरियम से भी बेहद लगाव था।

बागवानी के प्रति उनका प्रेम जगजाहिर है। महाराष्ट्र-कर्नाटक सीमा विवाद को लेकर मुंबई में हुए दंगों के बाद गिरफ्तारी के बाद, 1969 में येरवडा जेल से अपने बच्चों को लिखे एक पत्र में उन्होंने अपने तीनों बेटों से घर के बाहर के बाग की देखभाल करने और उनके द्वारा भेजे गए सूरजमुखी के बीज को मिट्टी के गमले में लगाने का आग्रह किया था ताकि वे उग सकें। जेल से लिखे पत्र में उन्होंने आगे लिखा, 'यहाँ सुंदर सूरजमुखी खिले हैं।' हिंसा का समर्थन करने के बावजूद, ठाकरे बचपन से ही बच्चों को पीटने के विचार से घृणा करते थे। वे एक स्नेही पिता थे और आज भी हैं। उन्होंने अपने तीनों बेटों - सबसे बड़े, बिंदूमाधव (फिल्म निर्माता, बिंदूमाधव की 1996 में एक सड़क दुर्घटना में मृत्यु हो गई), दूसरे, जयदेव, जिनसे उनके संबंध अच्छे नहीं हैं, और तीसरे, उद्धव, जो मातोश्री में उनके साथ रहते हैं - को उन्हें एक विशेष नाम देने की अनुमति भी दी: पिल्गा। आज तक कोई भी इस नाम की उत्पत्ति का पता नहीं लगा पाया है, लेकिन ठाकरे को न केवल पहले इससे कोई आपत्ति नहीं थी, बल्कि आज भी नहीं है। उन्होंने अपने बच्चों को बचपन में प्यार से बिंदा, डिंगा और टिब्बा नाम दिए थे। और उनके भतीजे राज ठाकरे को वे हमेशा 'राजा' कहकर बुलाते रहे हैं। उनके व्यक्तित्व का एक और पहलू, जो काफी हद तक अज्ञात है, वह है 13 अंक के प्रति उनका प्रेम, जिसे कई लोग अशुभ मानते हैं। ठाकरे कहते हैं कि यह उनका भाग्यशाली अंक है। उन्होंने 13 जून 1948 को सरला वैद्य से विवाह किया, जो विवाह के बाद मीना ठाकरे बन गईं, और उन्होंने 13 अगस्त 1960 को मार्मिक साप्ताहिक का शुभारंभ किया। वे 27 अंक को भी भाग्यशाली मानते हैं, क्योंकि उद्धव का जन्म 27 जुलाई 1960 को हुआ था। जब मैंने ठाकरे से जून 1999 में इस पुस्तक के पहले संस्करण के विमोचन के लिए कहा, तो उन्होंने समारोह के लिए उसी महीने की 27 तारीख को चुना, यह कहते हुए कि यह 'एक शुभ तिथि' है। ठाकरे अपने राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों के साथ उत्कृष्ट संबंधों के लिए भी जाने जाते हैं, भले ही उन्होंने अक्सर उनके लिए कठोर भाषा का प्रयोग किया हो। शरद पवार उनके घनिष्ठ मित्र हैं, और सुशीलकुमार शिंदे भी, जिनकी उन्होंने केंद्रीय गृह मंत्री रहते हुए भारत और पाकिस्तान के बीच क्रिकेट संबंधों की बहाली का समर्थन करने के लिए कड़ी आलोचना की थी।
ठाकरे ने पवार की बेटी सुप्रिया सुले की राज्यसभा उम्मीदवारी का बिना शर्त समर्थन किया क्योंकि वह उनकी 'दोस्त की बेटी' थीं। उन्होंने शिवसेना के मुखपत्र में लिखा कि कैसे उन्होंने सुप्रिया को बचपन से देखा है। उन्होंने बताया कि एक बार जब सुप्रिया छोटी बच्ची थीं, तो उनके माता-पिता उन्हें मातोश्री में भोजन के लिए लेकर आए थे। उस समय सुप्रिया को तेज बुखार था और पवार परिवार उसी रात पुणे के लिए रवाना हो गया था। ठाकरे को याद है कि अगली सुबह उन्होंने पुणे में अपने माता-पिता को फोन करके सुप्रिया का हालचाल पूछा था। इसी तरह, जॉर्ज फर्नांडीस और ठाकरे भले ही प्रसिद्ध प्रतिद्वंद्वी रहे हों, लेकिन उनके बीच अच्छे संबंध भी थे और समाजवादी नेता एस.एम. जोशी और कम्युनिस्ट नेता एस.ए. डांगे के साथ भी उनके अच्छे संबंध थे, शायद ये दोनों ही ऐसी पार्टियां हैं जिनसे ठाकरे का कभी कोई मतभेद नहीं रहा। इसके अलावा ठाकरे ने उल्लेखनीय राजनीतिक लचीलापन दिखाया है। हालांकि उन पर 1960 के दशक के उत्तरार्ध में कांग्रेस द्वारा समर्थित होने का आरोप लगाया गया था, उन्होंने 1968 में मधु दंडवते की प्रजा समाजवादी पार्टी के साथ गठबंधन किया और 1970 के दशक में महापौर चुनाव के लिए मुस्लिम लीग के साथ भी हाथ मिलाया; उन्होंने 1982 में पवार

और फर्नांडीस को शिवसेना के मंच पर लाया और उस समय पवार के मुख्यमंत्री पद के दावे का समर्थन किया; और भाजपा के साथ उनका गठबंधन निश्चित रूप से 25 वर्षों से अधिक समय तक चला है, जिससे यह एनडीए के भीतर सबसे लंबा गठबंधन बन गया है। लेकिन उन्होंने कभी भी कम्युनिस्टों और जोशी की संयुक्त समाजवादी पार्टी के साथ गठबंधन नहीं किया। व्यक्तिगत स्तर पर, ठाकरे समकालीन महाराष्ट्र के उन राजनेताओं में से एक हैं जिन्होंने शायद सबसे अधिक त्रासदियों का सामना किया है। उनके भाई रमेश के साथ उनका अलगाव - उनके दो भाई और पांच बहनें हैं⁵⁹ - 1960 के दशक में हुआ था; उनके दूसरे बेटे जयदेव से 1990 के दशक की शुरुआत में ही संबंध टूट गए थे। ठाकरे ने उनके बारे में थोड़ी उदासी भरी आवाज़ में कहा था, 'वह लड़का एक त्रासदी है।' महाराष्ट्र में सत्ता हासिल करने की अपनी सबसे बड़ी राजनीतिक जीत के कुछ ही महीनों बाद, सितंबर 1995 में दिल का दौरा पड़ने से उनकी पत्नी का निधन हो गया। सात महीने बाद, अप्रैल 1996 में, उनके सबसे बड़े बेटे बिंदा की सड़क दुर्घटना में मृत्यु हो गई। उनकी पत्नी की मृत्यु की परिस्थितियाँ दुखद थीं। ठाकरे अपनी पत्नी और कुछ सहयोगियों के साथ मुंबई से लगभग 100 किलोमीटर दूर कर्जत स्थित अपने फार्महाउस गए थे। जब उन्हें दिल का दौरा पड़ा, तो घर में बिजली नहीं थी, इसलिए डॉक्टरों को आपातकालीन कॉल नहीं की जा सकी (उस समय मोबाइल फोन नहीं थे); जब तक डॉक्टर पहुँचे, तब तक बहुत देर हो चुकी थी। ठाकरे इस घटना से पूरी तरह टूट गए थे और शायद पहली बार सार्वजनिक रूप से अपने आँसू नहीं रोक पाए। अन्य अवसरों पर, उन्होंने स्वामी विवेकानंद का हवाला देते हुए कहा है कि वे पानी में मछली की तरह हैं: उनके भी दुख और शोक के क्षण आते हैं, लेकिन उनके आँसू कोई नहीं देख सकता। अपने भतीजे से भी उनका अलगाव काफी कड़वा था, क्योंकि राज उनके सबसे करीबी लोगों में से थे। हालाँकि, उनके बीच सुलह की प्रक्रिया शुरू होने और राज के उनके हालचाल जानने के लिए अक्सर उनसे मिलने जाने से उनके रिश्ते में सुधार आया है, लेकिन उद्धव की हाल की बीमारी - ठाकरे के बेटे बाल ठाकरे की जुलाई 2012 में एंजियोप्लास्टी हुई थी और उसके बाद उनके शरीर में आठ स्टेंट डाले गए थे, और फिर नवंबर 2012 में उनकी दूसरी एंजियोप्लास्टी हुई थी - ने उन्हें बहुत चिंतित कर दिया है और उनके स्वास्थ्य पर भी इसका असर पड़ा है। जुलाई 2012 में बांद्रा के लीलावती अस्पताल से उद्धव के डिस्चार्ज होने के अगले दिन, बाल ठाकरे को फेफड़े और अग्नाशय की बीमारियों के कारण उसी अस्पताल में भर्ती कराया गया था; उनके करीबी सहयोगियों का कहना है कि उद्धव के स्वास्थ्य को लेकर उनकी चिंता का इससे गहरा संबंध था।
शिवसेना के शुरुआती दिनों में ठाकरे प्रवासियों के खिलाफ जमकर भड़कते और उग्र रूप से बोलते थे और मराठियों को अपनी प्रगति में बाधा डालने वाले किसी भी व्यक्ति को पीटने के लिए उकसाते थे, वहीं अपने सैनिकों के लिए वे मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक की भूमिका निभाते थे और उनके प्रति कोमल स्वभाव के थे। वे अपने व्यवहार से ही उनका दिल जीत लेते थे। सुरक्षा को लेकर चिंता होने से पहले, वे अपने घर आने वाले किसी भी सैनिक को बिना किसी चूक के अपने दरवाजे तक छोड़ते थे; और उनकी पत्नी उन्हें स्वादिष्ट भोजन कराती थीं और उनके परिवारों के बारे में पूछती थीं। यहां तक कि अपने कार्टून बनाते समय भी ठाकरे अक्सर अपने पार्टी सहयोगियों के साथ पात्रों या अपने 'मॉडल' (जैसा कि वे उन्हें कहते थे) पर चर्चा करते थे और उन्हें इन व्यक्तित्वों से जुड़ी कहानियां सुनाते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने वफादारों के साथ एक मजबूत रिश्ता बनाया। उनकी बुलंद आवाज युवाओं के लिए एक

बड़ा आकर्षण थी, और उनकी भाषण शैली भी उतनी ही प्रभावशाली थी। वे कभी भी अपना भाषण पढ़कर नहीं सुनाते थे और न ही कभी नोट्स का सहारा लेते थे। उनके भाषण संवादात्मक शैली के होते थे और उनकी बातचीत किसी निश्चित पैटर्न या विचार की धारा का अनुसरण नहीं करती थी। वे एक विषय से दूसरे विषय पर बड़ी आसानी से चले जाते थे, राजनीति से शुरू करके बॉलीवुड पर, फिर क्रिकेट और संस्कृति पर और फिर पूरे जोश के साथ राजनीति पर लौट आते थे। यही उनकी लोकप्रियता का एक कारण था, क्योंकि इससे श्रोताओं को ऐसा लगता था मानो वे उनसे बात कर रहे हों। उन्होंने इस बात को बखूबी आत्मसात कर लिया था, क्योंकि उनके नियमित श्रोता 1966 से ही यह मानते आए हैं कि वे मराठी भाषा को अपने इशारों पर नचा सकते थे और उन्हें शब्दों के साथ खेलने का उनका हुनर बेहद पसंद था। वे अक्सर शरद पवार को 'मैद्यचा पोटा' कहते थे, कम्युनिस्टों को 'लाल बंदर' कहते थे और 1980 के दशक में अमेरिका की यात्रा के दौरान, जब एक स्थानीय व्यक्ति ने उनसे पूछा कि वे कहाँ से आए हैं, तो उन्होंने कहा, 'मैं भारतीय हूँ, लेकिन लाल भारतीय नहीं।' उनके श्रोताओं ने इस बात की सराहना की है कि उन्होंने अपने सहयोगियों और मित्रों को भी नहीं बख्शा: जब भाजपा नेता गोपीनाथ मुंडे, जिनका बरखा नाम की लावणी नर्तकी के साथ प्रेम प्रसंग हाल ही में सार्वजनिक हुआ था, उनके साथ मंच साझा कर रहे थे, तब उन्होंने प्रसिद्ध हिंदी गीत 'ओ सजना, बरखा बहार आई' की पंक्ति हल्के- फुल्के अंदाज में दोहराई। एक बार उन्होंने अपने सहयोगी भाजपा पर मायावती और मुलायम के बीच आने का आरोप लगाया, जब वे दोनों कुछ समय के लिए एक साथ आए थे। उनके तीखे हास्य पर दो तरह की प्रतिक्रियाएं आईं: एक निंदा की, और दूसरी, दिल से स्वीकार करने की। यह तो उनके प्रति लोगों की प्रतिक्रिया का एक हिस्सा मात्र है: कोई बीच का रास्ता नहीं, लोग या तो उन्हें प्यार करते हैं या नापसंद करते हैं। तो आखिर क्यों उनके हास्य को मराठी भाषी लोगों के एक बड़े वर्ग ने स्वीकार किया? इसका एक कारण यह है कि अश्लील बातें करना महाराष्ट्र की क्लासिक व्यंग्य कला का हिस्सा रहा है, और मराठी राजनीतिक परंपरा में भी ऐसी बातों की गुंजाइश है। ठाकरे से पहले, 'आचार्य' पी.के. अत्रे अपने राजनीतिक विरोधियों का मज़ाक उड़ाने और उनका उपहास करने के लिए रंगीन भाषा और यहाँ तक कि यौन इशारों का भी इस्तेमाल करते थे। अत्रे के व्यक्तित्व ने ठाकरे को भी वैसी ही शैली अपनाने और एक ऐसे व्यक्ति की छवि बनाने में मदद की, जो कार्टूनिस्ट के रूप में अपने विरोधियों को निशाना बनाने के लिए अपनी रचनात्मक कल्पना का इस्तेमाल करने से नहीं डरता था। ठाकरे ने व्यवस्थित रूप से एक ऐसे व्यक्ति के रूप में अपनी प्रतिष्ठा बनाई, जो लोगों के मन में चल रही बातों को बोलता था, जिन्हें कहने की हिम्मत कोई नहीं करता था। इसलिए उन्होंने लोगों और जातीय समूहों पर ऐसे आरोप लगाए, जिन्हें एक आम आदमी राजनीतिक रूप से गलत लगने के डर से, चाहे उसका मन ही क्यों न हो, कहने से हिचकिचाता था। उन्होंने लोगों को ऐसे नामों से पुकारा, जिनका इस्तेमाल आम तौर पर कोई नहीं करता, और लाखों लोगों की भीड़ के सामने ऐसे चुटकुले सुनाए, जिन्हें मान-सम्मान और सार्वजनिक छवि की चिंता में शायद ही कोई अपने करीबी लोगों के अलावा किसी और के सामने सुनाए। उनकी अभिनय कला में गैर-मौखिक संचार भी शामिल था। मैं एक बार एक ऐसी घटना का गवाह था, जहाँ उन्होंने बिना एक शब्द बोले ही भीड़ को एक कड़ा संदेश दे दिया था। यह घटना 1998 के लोकसभा चुनाव प्रचार के दौरान की है। ठाकरे गिरगाँव चौपाटी में एक विशाल जनसभा को संबोधित करने के लिए खड़े ही हुए थे कि मंच के सबसे नज़दीक बैठे लोग पीछे से हो रहे हंगामे के कारण उठ खड़े

हुए। उन्होंने दो-तीन बार उनसे बैठने का आग्रह किया, लेकिन हंगामा और बढ़ गया और पीछे बैठे लोग भी उठ खड़े हुए। तब वे मंच पर ही उकड़ू बैठ गए। भीड़ के सदस्य अचंभित होकर उन्हें देखने लगे, फिर एक-दूसरे को देखकर बैठ गए। इस कार्य से उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था कि यदि भीड़ खड़ी होना चाहती है, तो वे बैठ जाएँगे, और जब वे बैठ जाएँगे तभी वे बोलने के लिए उठेंगे। लेकिन चाहे मौखिक हो या नहीं, उनका संवाद हमेशा से ही विवादों से घिरा रहा है। मुंबई के गैर-मराठी भाषी लोग – और यहाँ तक कि मराठी भाषी आबादी का एक बड़ा हिस्सा भी – उनके द्वारा दक्षिण भारतीयों के खिलाफ भेदभाव के आरोपों से बेहद नाराज़ थे। उन्होंने दक्षिण भारतीयों पर नौकरियों पर कब्ज़ा करने का आरोप लगाया, जिनके बारे में उन्होंने कहा कि ‘ये नौकरियाँ महाराष्ट्रियों को मिलनी चाहिए थीं’, और उन्होंने हिंसा की उस संस्कृति की निंदा की जिसे वे बढ़ावा देना और फैलाना चाहते थे। लेकिन ठाकरे अपने रुख पर अड़े रहे और अपनी हिंसा को ‘रचनात्मक’ बताया। ‘रचनात्मक हिंसा’ के इस सिद्धांत ने बाद में उन्हें ‘पाकिस्तान समर्थक मुसलमानों’ की निंदा और आक्रामक हिंदुत्व की वकालत करके अन्य हिंदुओं के एक वर्ग को अपने पक्ष में करने में मदद की। न तो पहले उनकी निंदा करने वाले नए अनुयायियों को और न ही उनके वफादार अनुयायियों को दक्षिण भारतीयों से मुसलमानों को निशाना बनाने में कोई आपत्ति नज़र आई। बाल ठाकरे ने अपने व्यक्तित्व, बुलंद आवाज़, भाषण कला, राजनीतिक सिद्धांतों से रहित राजनीतिक भाषण और उग्रवादी तरीकों से महाराष्ट्रियों के एक बड़े वर्ग और कुछ समय के लिए गैर-मराठी भाषी युवाओं के एक वर्ग को अपने वश में करने में सफलता प्राप्त की। इतना ही नहीं, लगातार 46 वर्षों तक, उनकी दशहरा रैली में हर साल कम से कम एक लाख लोगों की भीड़ जुटती रही है, जो एक तरह का रिकॉर्ड है। लगभग तीन पीढ़ियों को इस तरह आकर्षित करना उनकी राजनीतिक उपलब्धि रही है, और घृणा और अटूट निष्ठा की चरम प्रतिक्रियाओं को उकसाना उनके विवादास्पद व्यक्तित्व का प्रमाण है।

6

राजनीति, वादे और हिंसा

शिवसेना के गठन के एक वर्ष के भीतर ही उसमें जबरदस्त गतिविधियां हुईं, और अन्य राजनीतिक दलों ने इसके उदय और विकास पर जिस तरह से प्रतिक्रिया दी, वह दिलचस्प थी।
कांग्रेस ने अस्पष्ट रुख अपनाया। ठाकरे ने कम्युनिस्टों का डटकर मुकाबला किया था और 'लाल बंदरों' से जमकर लड़ने का वादा किया था, इसलिए कांग्रेस के पास सीधे टकराव में न जाने का कारण था। दुश्मन तो साझा था। साथ ही, सत्ताधारी पार्टी उग्रवादी समूह के साथ मेलजोल करती हुई नहीं दिखना चाहती थी।
इसलिए इसने एक नाजुक रणनीति तैयार की जिसमें थोड़ा संघर्ष और थोड़ा मौन सहयोग शामिल था।
वामपंथी ताकतों ने 'इस खतरे को जड़ से खत्म करने' का संकल्प लिया, और महाराष्ट्रियों और गैर-महाराष्ट्रियों सहित समाज के महत्वपूर्ण वर्गों ने शिवसेना को 'एक खतरनाक विकास' के रूप में देखा।
समाज के समान रूप से महत्वपूर्ण वर्गों, जिनमें मुख्य रूप से युवा महाराष्ट्रीयन शामिल थे, ने नवगठित मोर्चे का स्वागत किया और इसे समर्थन देने का वादा किया।
शिवसेना गरमागरम बहस का विषय बन गई। साथ ही, कानून के दायरे से बाहर की उसकी गतिविधियां लगातार बढ़ती रहीं।
ऐसी ही एक घटना, जिसने विवाद को जन्म दिया, फरवरी 1967 में मध्य मुंबई के कालाचौकी स्थित एक दक्षिण भारतीय होटल पर हमला था। शिवसैनिकों द्वारा पत्थरबाजी में बत्तीस लोग घायल हो गए और चार शिवसेना कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया गया। हालांकि, बाल ठाकरे ने हमले में शामिल शिवसैनिकों की जमकर प्रशंसा की।
शुरू से ही उन्होंने हिंसा की वकालत करने में कोई संकोच नहीं किया।
इन गतिविधियों के अलावा, शिवसेना - जिसके नेता ने अपने पहले भाषण में राजनीति की तुलना दाद से की थी - जल्द ही खुद को राजनीति की लहरों पर बहते हुए पाया।
जब 1967 के पहले छह महीनों में लोकसभा चुनाव होने की घोषणा हुई, तो शिवसेना ने मुख्यधारा की राजनीति में कदम रखने का फैसला किया, हालांकि उसने अपना कोई उम्मीदवार खड़ा न करने का दृढ़ निश्चय किया था। एक और बात पर भी उसका रुख उतना ही दृढ़ था: कम्युनिस्टों के प्रति उसकी शत्रुता। जाहिर तौर पर इसी शत्रुता ने उसे राजनीति में प्रवेश करने के लिए प्रेरित किया। पूर्व रक्षा मंत्री वी.के. कृष्ण मेनन, जिन्होंने 1962 में चीनी आक्रमण के बाद बदनामी हासिल की थी, ने कांग्रेस की ओर से उत्तर-पूर्वी मुंबई से लोकसभा सीट के लिए चुनाव लड़ा था। दरअसल, वे 1957 से ही इस निर्वाचन क्षेत्र से कांग्रेस के उम्मीदवार थे। लेकिन मुंबई के तत्कालीन निर्विवाद कांग्रेस नेता एस.के. पाटिल ने यह सुनिश्चित किया कि मेनन को पार्टी का टिकट न मिले। कांग्रेस के भीतर गुटबाजी की लड़ाई ने मेनन की

उम्मीदों पर पानी फेर दिया और अंततः उन्होंने उसी निर्वाचन क्षेत्र से निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ने का फैसला किया।
संयुक्त महाराष्ट्र समिति के पूरी तरह से बिखर जाने के बाद, कम्युनिस्ट और संयुक्त समाजवादी पार्टी ने मई 1966 में मिलकर संपूर्ण महाराष्ट्र समिति का गठन किया था।
एस.ए. डांगे के नेतृत्व वाली इस समिति का कथित उद्देश्य संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के अधूरे कार्य को पूरा करना था: बेलगाम-कारवार-निपानी को महाराष्ट्र में एकीकृत करना। मराठी भाषी आबादी वाले ये क्षेत्र 1960 में महाराष्ट्र के गठन के समय इसमें शामिल नहीं थे। इस मोर्चे ने मेनन का समर्थन करने का फैसला किया। मेनन के खिलाफ कांग्रेस के आधिकारिक उम्मीदवार राजस्व अधिकारी एस.जी. बर्वे थे, और एस.के. पाटिल के लिए यह सीट जीतना प्रतिष्ठा का विषय बन गया था।
इसी समय, शिवसेना ने आश्चर्यजनक रूप से घोषणा की कि वह 'गैंडे की चमड़ी वाले' कृष्णा मेनन को हराने के लिए काम करेगी क्योंकि वह कम्युनिस्ट उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ रहे थे।⁶⁰ इसका मतलब था कांग्रेस उम्मीदवार बर्वे का समर्थन करना; शिवसेना इसके लिए तैयार थी। ठाकरे ने तब इस बात पर ध्यान केंद्रित नहीं किया कि किसे चुना जाए, बल्कि इस बात पर ध्यान केंद्रित किया कि किसका विरोध किया जाए। उनका नारा था 'पांच राक्षसों का दफ़न करो'। उनकी नज़र में ये राक्षस मेनन, डांगे, आचार्य अत्रे, जॉर्ज फर्नांडीस और एच.आर. गोखले थे, जिनके मन में केवल कम्युनिस्ट विचारधारा से कहीं अधिक विचार थे। उन्होंने शहर के अन्य निर्वाचन क्षेत्रों में 'लालों' के खिलाफ जनसंघ, स्वतंत्र और समाजवादी दलों के उम्मीदवारों का भी समर्थन किया। मध्य मुंबई में, शिवसेना ने डांगे के खिलाफ महिंद्रा एंड महिंद्रा के निदेशक हरीश महिंद्रा का समर्थन किया, और उत्तर-पश्चिम मुंबई में महाराष्ट्र के गृह मंत्री और स्वतंत्र पार्टी के उम्मीदवार शांतिलाल शाह को कृष्णा मेनन के मित्र गोखले के खिलाफ खड़ा किया।
लेकिन जहां ठाकरे ने कांग्रेस के उम्मीदवार बर्वे के पक्ष में मोर्चा संभाला, वहीं महाराष्ट्र के प्रमुख लेखक आचार्य अत्रे ने कृष्णा मेनन के समर्थन में अभियान शुरू किया।
अत्रे ने उत्तर-पूर्वी मुंबई निर्वाचन क्षेत्र में कई बैठकें कीं, जो तब ठाणे-डोम्बिवली तक फैला हुआ था, और लोगों को 'राष्ट्रवादी' शिवसेना के खतरों के प्रति आगाह किया।
उन्होंने सेना को नीचा दिखाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। और सेना ने भी उनके हर वार को पत्थर मारकर खारिज नहीं किया।
जैसे-जैसे चुनाव का दिन नजदीक आता गया, दोनों पक्षों की प्रचार-प्रसार की क्षमता सामने आने लगी और उत्तर-पूर्वी मुंबई के मतदाताओं से वैचारिक मुद्दों के बजाय तीखी नोकझोंक पर जनमत संग्रह करने को कहा गया। अत्रे ने घोषणा की कि वह ठाणे के गामदेवी मैदान में एक 'रैली' आयोजित करेंगे। उन्होंने शिवसैनिकों को चुनौती देते हुए कहा, 'अगर आप कर सकते हैं तो मेरी सभा में बाधा डालें।'
गामदेवी मैदान खचाखच भरा हुआ था; कम्युनिस्ट ध्वज, लाल बावता, हर जगह दिखाई दे रहा था और अत्रे ने उत्साह के साथ अपना भाषण शुरू किया। तभी मंच पर एक चप्पल फेंकी गई। लेकिन अत्रे ने बोलना जारी रखा: 'तुम बेशर्मों, पत्थर

क्यों फेंकते हो? आखिर में तुम्हें अपनी जान बचाने के लिए भागना ही पड़ेगा!'
इस पर हंगामा मच गया। अनगिनत चप्पलें मंच पर आ गिरीं और सभी लाल बावटाओं की आहुति दे दी गई। शिवसैनिक खुद लाल झंडे लिए मैदान में जमा हो गए थे। अत्रे को मैदान के बगल में स्थित एक अस्पताल में शरण लेनी पड़ी। क्रोधित सैनिक उसका पीछा करते हुए वहां तक पहुंच गए, लेकिन अत्रे किसी तरह बच निकला।
लेकिन सैनिकों के प्रकोप का सबसे ज्यादा असर उनकी कार पर पड़ा। कार पूरी तरह चकनाचूर हो गई।
कई सैनिक अत्रे के इस अपमान को प्रतिशोध के रूप में देखते थे, क्योंकि शिवसेना के जन्म से पहले, ठाकरे के मार्मिक कार्यालय पर अत्रे, डांगे और जॉर्ज फर्नांडीस के अनुयायियों द्वारा एक कथित शरारती कार्टून के लिए हमला किया गया था।
29 अगस्त 1965 के मार्मिक अंक के मुखपृष्ठ पर एक व्यंग्यचित्र छपा था जिसमें भारतमाता को उनकी सारी चमक और महिमा से वंचित, असहाय अवस्था में दिखाया गया था, और अत्रे, डांगे और फर्नांडीस उनके सामने अपने चेहरों पर शरारती खुशी के साथ खड़े थे।
अत्रे, डांगे और फर्नांडीस ने तुरंत कार्रवाई की। तीनों ही अपने-अपने क्षेत्र में शक्तिशाली नेता थे और उनके बहुत सारे अनुयायी थे।
29 अगस्त की रात को, उनके अनुयायियों ने दादर स्थित ठाकरे के रानाडे रोड आवास तक एक मार्च निकाला, जो मार्मिक कार्यालय के रूप में भी कार्य करता था। उस समय बाल और उनके भाई श्रीकांत घर पर नहीं थे, केवल प्रबोधनकर और उनके छोटे बेटे रमेश ही मौजूद थे।
भीड़ ने नारे लगाए: 'बाल ठाकरे कांग्रेस के कठपुतली हैं!' 'बाल ठाकरे [कांग्रेस नेता] बालासाहेब देसाई के जूते पॉलिश करते हैं!'
मार्मिक अखबार का बोर्ड उखाड़कर सड़क पर फेंक दिया गया, ‘आत्रे-डांगे- फर्नांडेस जिंदाबाद’ के नारे लगाए गए, पत्थर और चप्पलें फेंकी गईं और मार्मिक की प्रतियां जला दी गईं। अत्रे के मराठा दैनिक अखबार ने विरोध प्रदर्शन पर रिपोर्ट प्रकाशित करते हुए लिखा: ‘भीड़ का गुस्सा देखकर प्रबोधनकर ठाकरे व्याकुल हो गए। वे अपने घर की गैलरी में आए और हाथ जोड़कर प्रदर्शनकारियों से कहा, “मेरे बेटे में अक्ल नहीं है। आप उसे माफ कर दीजिए। मैं यह सुनिश्चित करने का हर संभव प्रयास करूंगा कि वह दोबारा राजनीतिक नेताओं का अपमान न करे।”’
अत्रे ने ठाकरे के कार्टूनों के विरोध में शिवाजी पार्क में एक जनसभा भी आयोजित की और सभा को मार्मिक पत्रिका का अंक दिखाते हुए कहा: ‘मार्मिक के मुखपृष्ठ पर छपे इस घिनौने कार्टून को देखिए। ठाकरे को कांग्रेस ने अपने चुनाव प्रचार के लिए किराए पर लिया है। वह बालासाहेब देसाई के जूते साफ कर रहे हैं। मैं इस भद्दे कार्टून की निंदा करता हूँ।’⁶ ¹
बाल ठाकरे ने 'लालभाई अत्रे द्वारा उकसाई गई बेकाबू हिंसक भीड़ ने मार्मिक कार्यालय तक मोर्चा निकाला' शीर्षक से मार्मिक में एक लेख लिखकर अत्रे को जवाब दिया।
लोकतंत्र के गुणों की प्रशंसा करते हुए ठाकरे ने लिखा:

अत्रे, डांगे और फर्नांडीस को जनता पर ज़रा भी भरोसा नहीं है। वे सिर्फ़ धौंस जमाने, डराने-धमकाने और हिंसा में विश्वास रखते हैं। अत्रे और फर्नांडीस द्वारा भेजे गए अराजकतावादी 80 वर्षीय समाजसेवी (प्रबोधनकर) के सामने किस तरह की शक्ति प्रदर्शन करने वाले थे? क्या वे अपनी ताकत साबित करने के लिए उनके कपड़े फाड़कर उन पर शारीरिक हमला करने वाले थे? और प्रबोधनकर के साथ ऐसा क्यों किया गया? क्या इसलिए कि उनका बेटा सिर्फ़ वही लिखता है जो तर्कसंगत है और जनता के हित में है? या इसलिए कि वह निडर होकर जनता के सामने उन सच्चाइयों को रखता है जिन्हें अत्रे, डांगे और फर्नांडीस नापसंद करते हैं और पचा नहीं पाते? ... फर्नांडीस हमारे पुराने दोस्त हैं। सिर्फ़ इसलिए नहीं कि वे हमारे दोस्त हैं, बल्कि इसलिए भी कि वे हमारे देशवासी हैं, हम उन पर कभी शारीरिक हमला नहीं करेंगे। लेकिन हम उन पर वैचारिक रूप से, अपने विचारों से ज़रूर हमला करेंगे।

अब बात करते हैं 1967 के तीसरे आम चुनाव की। मेनन के मामले में अपनाए गए उसी वाम-विरोधी सिद्धांत को लागू करते हुए, शिवसेना ने कांग्रेस उम्मीदवार एस.के. पाटिल के लिए अपना समर्थन घोषित किया, जो दक्षिण मुंबई में जॉर्ज फर्नांडीस के खिलाफ चुनाव लड़ रहे थे।
ठाकरे ने अपने लेखों, कार्टूनों और भाषणों के माध्यम से लगातार पाटिल की आलोचना की थी। लोकसभा चुनाव ने समीकरण बदल दिया। कांग्रेस ने मेनन और फर्नांडीस को हराने के अपने प्रयासों में शिवसेना की मदद का स्वागत किया। इससे यह तर्क सामने आया कि शिवसेना कांग्रेस की देन थी और दोनों के बीच का 'संबंध' साझा हितों को सुरक्षित करने के बारे में था। अत्रे ने तब शिवसेना को सदाशिव (एस.के. पाटिल का पहला नाम) शिवसेना नाम दिया और यह नाम कुछ समय तक प्रचलित रहा।
हालांकि फर्नांडीस ने एस.के. पाटिल को हरा दिया, लेकिन कृष्णा मेनन के पतन में शिवसेना की अहम भूमिका रही। उन्हें 'बाहरी' बताकर उन पर हमला करते हुए, शिवसेना ने अपने कार्यकर्ताओं की पूरी ताकत कांग्रेस उम्मीदवार बर्वे के पीछे लगा दी और यह सुनिश्चित किया कि बर्वे नेहरू के भरोसेमंद सहयोगी के खिलाफ संख्या बल के मामले में आसानी से जीत हासिल करें।
यह शिवसेना के लिए एक शानदार जीत थी, और इससे उसका आत्मविश्वास बढ़ा।

क्षेत्रीय राजनीति में शिवसेना
ठाणे नगर निगम के चुनाव उसी वर्ष के अंत में होने वाले थे। लोकसभा चुनावों में अपनी पार्टी द्वारा निभाई गई भूमिका से उत्साहित ठाकरे ने फैसला किया कि शिवसेना इन चुनावों में अपने उम्मीदवार उतारकर चुनाव लड़ेगी।
एक वर्ष में संगठनात्मक शक्ति में वृद्धि हुई थी और कार्यकर्ताओं की एक टीम का गठन हुआ था जो लगातार विस्तार कर रही थी। ठाणे में ही, सेना ने 1 जनवरी 1967 को अपनी गतिविधियाँ शुरू कीं, जिसमें डॉ. धवले कस्बे की पहली शाखा के प्रमुख थे।
लेकिन ठाकरे, जिन्होंने हमेशा यह कहा था कि शिवसेना का कोई राजनीतिक इरादा नहीं है, उन्होंने राजनीति क्यों चुनी और अपने उम्मीदवारों को मैदान में क्यों उतारा?

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]:

[illegible]

शिवसेना से असहमत थे। यह महत्वपूर्ण है कि उस समय के एक प्रमुख वकील, जो स्वयं एक पारसी थे, ने शिवसेना के कुछ बिंदुओं की सराहना की।⁶ ²

सेना और ‘यांदुगुंडू’ (दक्षिण भारतीय)
ठाकरे द्वारा दक्षिण भारतीयों को यन्दुगुंडू कहे जाने वाले उनके खिलाफ चलाए गए अभियान को 1968 की शुरुआत में तब और बल मिला, जब मद्रास के सिनेमाघरों ने हिंदी फिल्मों का प्रदर्शन न करने का निर्णय लिया।
मुंबई में शिवसेना प्रमुख ने दक्षिण भारत में भड़की राष्ट्रवादी भावना को कुचलने का प्रयास किया। उन्होंने मुंबई के सिनेमाघरों के मालिकों से दक्षिण में बनी फिल्मों का प्रदर्शन बंद करने की अपील की।
जब अपील कारगर नहीं हुई, तो दंडात्मक कार्रवाई की गई। फरवरी 1968 में, शिवसेना कार्यकर्ताओं ने लालबाग स्थित गणेश टॉकीज पर हमला किया और फिल्म 'आदमी' का प्रदर्शन रोक दिया। ठाकरे का तर्क था कि दक्षिण भारतीय फिल्म निर्माता मुंबई में पैसा कमाते हैं और उसे दक्षिण में ले जाते हैं।
जब मद्रास के निर्माता ए.वी. मयप्पन ने 2 मार्च 1968 को शिवसेना प्रमुख से मुलाकात कर मुंबई में अपनी फिल्म 'दो कालिया' की रिलीज की अनुमति मांगी, तो ठाकरे ने कहा कि तीन शर्तें पूरी होने पर ही फिल्म की स्क्रीनिंग की अनुमति दी जा सकती है। शर्तें थीं: 1) मद्रास के सिनेमाघरों में हिंदी फिल्में दिखाई जानी चाहिए, और इसके लिए मयप्पन को मुख्यमंत्री से मिलना होगा; 2) यदि मुख्यमंत्री सहमत नहीं होते हैं, तो मयप्पन को अपना स्टूडियो मुंबई स्थानांतरित करना होगा; 3) जब वे यहां अपना स्टूडियो स्थापित करें, तो उन्हें मुंबई से ही तकनीशियन और कर्मचारी नियुक्त करने होंगे, न कि दक्षिण से।
मयप्पम वापस मुख्यमंत्री से मिले और ठाकरे को संदेश भेजा कि मुख्यमंत्री ने हिंदी फिल्मों पर लगे प्रतिबंध को हटाने का आश्वासन दिया है। इसके बाद, दादर के कोहिनूर सिनेमाघर में फिल्म 'आदमी' को रिलीज करने की अनुमति मिल गई और थिएटर में फिल्म के पोस्टर के नीचे एक बड़ा बैनर लगाया गया जिस पर लिखा था: 'यह फिल्म शिवसेना के आशीर्वाद से रिलीज हुई है।'
लेकिन दक्षिण से मिली कथित आश्वासन झूठी साबित हुई, और मद्रास के सिनेमाघरों ने अपने पहले के रुख से पीछे हटने से इनकार कर दिया। इसलिए शिवसेना ने 11 मार्च 1968 को मुंबई के 17 सिनेमाघरों पर एक साथ हमला किया और दक्षिण में बनी हिंदी फिल्मों का प्रदर्शन रोक दिया।
लगभग उसी समय, दक्षिण भारतीय अभिनेता शिवाजी गणेशन एक फिल्म की शूटिंग के लिए मुंबई पहुंचे। मार्मिक ने बताया, ‘शिवसैनिकों ने गोरेगांव में शूटिंग रोकने का मन बना लिया था, लेकिन शिवसेना प्रमुख के विरोध न करने के आदेश के बाद उन्होंने अपना आंदोलन रद्द कर दिया।’⁶ ³
ठाकरे द्वारा सैनिकों को शिवाजी गणेशन के संबंध में दी गई सलाह भी मार्मिक में प्रकाशित हुई थी। यह इस प्रकार थी: ‘शिवाजी गणेशन ने शिवाजी पार्क में छत्रपति शिवाजी महाराज की प्रतिमा के निर्माण के लिए कुछ धनराशि दान की थी। उसी समय, जब बाल गंधर्व (मराठी रंगमंच के प्रमुख व्यक्तित्वों में से एक) को शिवाजी पार्क में सम्मानित किया गया, तो गणेशन ने उन्हें दो बड़े चांदी के दीपक भेंट किए। उन्होंने रंगमंच के क्षेत्र में बाल गंधर्व के प्रति सार्वजनिक रूप से अपनी कृतज्ञता व्यक्त की और यह भी कहा कि वे

उन्हें अपना गुरु मानते हैं। ऐसे व्यक्ति को निराश और आहत करके आपको क्या लाभ होगा?’⁶⁴
लेकिन दक्षिण भारत में बनी फिल्मों के खिलाफ अभियान ने जोर पकड़ा और 16 मार्च को 'पूर्ण प्रतिबंध' लागू हो गया। शिवसेना के रुख का स्वागत करते हुए, मुंबई फिल्म उद्योग के एक वर्ग ने उसी महीने ठाकरे को सम्मानित किया। दादर स्थित रंजीत स्टूडियो में आयोजित समारोह में कई निर्माता, निर्देशक, अभिनेता और तकनीशियन उपस्थित थे, जिसकी अध्यक्षता निर्माता-निर्देशक आदर्श ने की। मंच पर निर्माता बख्शी जंगबहादुर, मंडलोई, गोविंद घाणेकर, गजानन जहागीरदार, अनवर हुसैन, तिवारी और पंडित एम. मौजूद थे।
मार्मिक ने रिपोर्ट किया, 'यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रतिबंध का सही ढंग से पालन किया जा रहा है, सैनिकों ने कई सिनेमाघरों का दौरा किया, लेकिन थिएटर मालिकों ने कहा कि उन्होंने खुद ही दक्षिण भारत की फिल्में दिखाना बंद कर दिया है।'
जब मद्रास के सिनेमाघरों ने अपना रुख वापस ले लिया, तो ठाकरे का अभियान समाप्त हो गया और मुंबई के सिनेमाघरों में मद्रास की फिल्मों का प्रदर्शन फिर से शुरू हो गया।
यह मुंबई फिल्म उद्योग में ठाकरे के दीर्घकालिक प्रभाव की शुरुआत थी। ईस्टर्न इकोनॉमिस्ट में प्रकाशित 'द मूविंग हैंड राइट्स' नामक लेख में यह उल्लेख किया गया था:

फिल्म जगत की अर्थव्यवस्था डीएमके की राजनीति पर हावी हो गई है। मद्रास राज्य में हिंदी फिल्मों का प्रदर्शन फिर से शुरू कर दिया गया है, क्योंकि अगर ऐसा नहीं किया गया तो शिवसेना महाराष्ट्र में मद्रास स्टूडियो में बनी हिंदी फिल्मों के प्रदर्शन की अनुमति नहीं देगी। जाहिर है, इस दुनिया के अन्नादुराई जैसे नेताओं का जवाब बाल ठाकरे ही हैं। यह हमारे मामलों को व्यवस्थित करने का सबसे अच्छा तरीका नहीं हो सकता है, लेकिन मुझे इसके अलावा और कुछ समझ नहीं आता।⁶⁵

मद्रास फिल्मों के खिलाफ यह अभियान बृहन्मुंबई नगर निगम (बीएमसी) या मुंबई नगर निगम चुनावों से ठीक पहले चलाया गया था, जो 26 मार्च 1968 को होने वाले थे। पिछले वर्ष ठाणे में मिली सफलता के बाद, शिवसेना बीएमसी पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए उत्सुक थी। मुंबई पर उसका दबदबा पहले से ही स्पष्ट था, और 1967 के लोकसभा चुनावों में उसने कृष्णा मेनन को करारा झटका देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

खेल खेलना: पहला आधिकारिक गठबंधन
अब शिवसेना के लिए मुंबई में अपने दम पर एक राजनीतिक दल के रूप में अपनी ताकत आजमाने का समय था। और साथ ही एक ऐसे दल के रूप में भी जो प्रजा सोशलिस्ट पार्टी (पीएसपी) को अपनी ताकत का कुछ हिस्सा देने को तैयार था। शिवसेना ने बीएमसी चुनावों के लिए प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के साथ गठबंधन करके सबको चौंका दिया। यह पार्टी का पहला आधिकारिक गठबंधन था। पीएसपी संपूर्ण महाराष्ट्र समिति में शामिल नहीं हुई थी और वह एक ऐसे राजनीतिक

सहयोगी की तलाश में थी जो महानगर में उसकी पकड़ मजबूत कर सके। पीएसपी के नेता मधु दंडवते ने ठाकरे से संपर्क करने की पहल की और इस तरह पीएसपी- शिवसेना गठबंधन साकार हुआ। पीएसपी ने उतनी ही सीटों पर चुनाव लड़ने पर सहमति जताई जितनी सीटें शिवसेना उसे देने को तैयार थी।
गठबंधन में शिवसेना वरिष्ठ सहयोगी पार्टी थी। हालांकि पीएसपी एक राष्ट्रीय पार्टी थी, मुंबई में उसकी उपस्थिति नगण्य थी, और ठाकरे की पार्टी के साथ गठबंधन - भले ही इसका मतलब गौण भूमिका निभाना हो - भारत की वित्तीय राजधानी में राजनीतिक स्थान हासिल करने में ही सहायक हो सकता था। दूसरी ओर, शिवसेना को पीएसपी के साथ गठबंधन करके शहर में कोई ठोस लाभ नहीं मिल सकता था। तो फिर उसने दांडवते की पार्टी के साथ हाथ क्यों मिलाया? शिवसेना के कुछ नेताओं का मानना है कि उस समय संसद में शिवसेना का अपना कोई प्रतिनिधि नहीं था, इसलिए उसे दिल्ली में अपनी ओर से पैरवी करने वाले किसी व्यक्ति की आवश्यकता थी। संसद में शिवसेना की आलोचना होने पर ठाकरे चाहते थे कि कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उनकी पार्टी के साथ खड़ा रहे और सदन में उसका बचाव करे। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने गठबंधन के लिए सहमति दी।
पीएसपी ने भी अपनी भूमिका को पहचाना और दिल्ली में इसे बखूबी निभाया। फरवरी 1968 में, ए.पी. चटर्जी, भूपेश गुप्ता और चित्त बसु जैसे कम्युनिस्ट नेताओं ने मध्य मुंबई में कम्युनिस्ट पार्टी के मुख्यालय दलवी भवन पर शिवसैनिकों द्वारा किए गए हमले का मुद्दा उठाया। उस समय, पीएसपी के बांके बिहारी दास ने सदन में शिवसेना का बचाव किया। हैरानी की बात यह है कि तत्कालीन केंद्रीय गृह मंत्री वाई.बी. चव्हाण ने बड़ी चतुराई से सांसदों से कहा कि यद्यपि किसी राजनीतिक दल के कार्यालय पर हमला होना दुर्भाग्यपूर्ण है, लेकिन यह बताना जरूरी है कि दलवी भवन की घटना से पहले एक राजनीतिक दल के सदस्यों ने शिवसैनिकों के जुलूस पर हमला किया था। जब शिवसेना के विरोधियों ने तर्क दिया कि शिवसेना को व्यापारियों और उद्योगपतियों का समर्थन प्राप्त है, तो चव्हाण ने कहा कि यह वर्ग सभी राजनीतिक दलों को अपना समर्थन देता है और ऐसा करना उनका कर्तव्य है। शिवसेना के खुले तौर पर महाराष्ट्रीयन होने के रवैये ने मुंबई की सभी पार्टियों के राजनीतिक व्यवहार में बदलाव ला दिया था, और चुनावों की तैयारी के दौरान, उनमें से अधिकांश ने महाराष्ट्रीयन भाषा को अपनाने का प्रयास शुरू कर दिया था। 1967 में मार्मिक की सातवीं वर्षगांठ के समारोह में मुख्यमंत्री वसंतराव नाइक ने कहा था: 'मराठी मानुष की यह बड़ी कमजोरी है कि वह गैर-महाराष्ट्रियों की प्रगति को तो स्वीकार करता है, लेकिन अपने ही लोगों के रास्ते में बाधा डालता है। जब तक इस स्थिति को सुधारा नहीं जाता, मराठी भाषी लोग प्रगति नहीं कर सकते।'
शिवसेना ने कांग्रेस, और विशेष रूप से एस.के. पाटिल पर, मुंबई को आम तौर पर गैर-महाराष्ट्रियों और विशेष रूप से गुजरातियों को बेचने का आरोप लगाया था, और मराठी जनता से उसे तुरंत समर्थन मिल गया था। जब कांग्रेस ने बीएमसी चुनावों के लिए उम्मीदवारों की अपनी पहली सूची सार्वजनिक की, तो उसमें अभूतपूर्व संख्या में मराठी उम्मीदवार थे - चौंतीस।
बीएमसी चुनावों की घोषणा के बाद, किसान और मजदूर पार्टी के बापूसाहेब लाड ने 'युवाओं के लिए एक कार्यक्रम' की घोषणा की, जो मुख्य रूप से महाराष्ट्रियों के लिए शिवसेना द्वारा की गई मांगों की पुनरावृत्ति थी।
हर कोई मराठी वोट हासिल करने की कोशिश कर रहा था।

शिवसेना ने अपना चुनावी अभियान पूरी गंभीरता से शुरू किया। शिवसेना- पीएसपी गठबंधन की पहली जनसभा 28 जनवरी 1968 को मध्य मुंबई के परेल स्थित कामगार मैदान में आयोजित की गई थी।
भारी भीड़ उमड़ पड़ी थी, और उस दिन दिए गए अपने जोशीले भाषण को देखते हुए, स्वयं दंडवते भी इस प्रतिक्रिया से चकित रह गए होंगे।
ठाकरे की पार्टी का बचाव करते हुए उन्होंने कहा, ‘पूरे भारत में क्षेत्रीय भावनाएं और आकांक्षाएं जागृत हुई हैं, और इन भावनाओं को समझना होगा, न कि इनकी निंदा करना।’ उन्होंने आगे कहा, ‘शिव सेना राष्ट्रवाद के प्रति पूर्णतः समर्पित पार्टी है। पीएसपी ने शिवसेना के राष्ट्रवाद में विश्वास रखने के कारण ही उसके साथ हाथ मिलाया है। संयुक्त महाराष्ट्र के गठन के बाद मराठी भाषी लोगों को विस्थापित होना पड़ा, और अयोग्य कांग्रेस के कारण उनके सपने और उम्मीदें चकनाचूर हो गईं।’
चूंकि यह बैठक कम्युनिस्टों के गढ़ परेल में आयोजित की गई थी, इसलिए शिवसेना के नेता भी आक्रामक रुख अपना रहे थे। मनोहर जोशी ने कहा, 'अब जब कम्युनिस्टों का अंतिम संस्कार कामगार मैदान में हो रहा है, तो उन्हें नारे पार्क (जो परेल में ही है) में शोक सभा आयोजित करनी चाहिए।' प्रमोद नवलकर ने टिप्पणी की, 'डांगे को अब अपनी इमारत की छत पर जाना चाहिए। उन्हें पता चल जाएगा कि कम्युनिस्ट साम्राज्य का सूरज डूब चुका है।'
शिवसेना द्वारा उठाया गया मराठी मुद्दा शहर भर में उसकी सभाओं में भारी भीड़ को आकर्षित करता था, और उसके साम्यवाद विरोधी रुख ने भी ध्यान आकर्षित किया।
चुनाव प्रचार कितना सुनियोजित था, इसका अंदाजा ठाकरे द्वारा पार्टी कार्यकर्ताओं के लिए प्रचार के दौरान निर्धारित नियमों से लगाया जा सकता है। शिवसेना प्रमुख के हस्ताक्षर वाली नियमों की सूची इस प्रकार थी:

1) विभिन्न क्षेत्रों के शाखा प्रमुखों को अपने-अपने क्षेत्रों में निर्धारित बैठकों में वक्ताओं को लाने और उनके घर लौटने की व्यवस्था करनी चाहिए।
2) एक बैठक में बहुत अधिक वक्ता नहीं होने चाहिए।
3) मुख्य वक्ता को प्रमुखता दी जानी चाहिए।
4) चूंकि वक्ताओं को एक दिन में कई रैलियों को संबोधित करना होता है, इसलिए यह सुनिश्चित करने का ध्यान रखें कि सभी बैठकें निर्धारित समय पर शुरू हों।
5) समय की कमी के कारण प्रत्येक नगर पालिका वार्ड में बैठक आयोजित करना संभव नहीं है, इसलिए कुछ वार्डों को संयुक्त रैलियों का आयोजन करना चाहिए।
6) प्रत्येक बैठक के लिए अध्यक्ष का होना आवश्यक नहीं है।
7) धन्यवाद समारोह मुख्य वक्ता के भाषण शुरू करने से पहले होना चाहिए।
8) मुख्य वक्ता के भाषण के अंत के बाद, केवल राष्ट्रगान गाया जाना चाहिए।
9) वक्ताओं के नाम उनकी पूर्व अनुमति के बिना घोषित नहीं किए जाने चाहिए।

इन नतीजों से शिवसेना-पीएसपी के सुनियोजित चुनाव प्रचार की सफलता साबित हुई। मुंबई में अपने पहले ही चुनाव में शिवसेना ने 42 सीटें जीतीं, जबकि

[illegible] от 11 [illegible] [illegible] [illegible] 65 [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible]
[illegible] [illegible] от от от 1961 от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от 59 [illegible] [illegible] [illegible], от [illegible] [illegible] от 45 [illegible] от, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от 34 [illegible] [illegible], от [illegible] от 26 [illegible] [illegible] 1968 [illegible], [illegible] от [illegible] [illegible] 65 [illegible] [illegible] от [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] 1 [illegible] от [illegible] [illegible], [illegible] 46 [illegible]; от [illegible] от 42 [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] 1961 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от 30 [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] от [illegible]
[illegible] от [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible], от [illegible] от [illegible] от от, от [illegible] от [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] 54 от 67 [illegible] от [illegible] от [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible], [illegible] от [illegible] [illegible] от [illegible] от [illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] от от [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от от, от [illegible] от [illegible] от от [illegible] от от [illegible] от [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible]
[illegible] от [illegible] от [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] от от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] от [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

बस्ती में शिवसेना संगठन के नेताओं में से एक, जो महाराष्ट्रियन नहीं बल्कि आंध्र प्रदेश के एक मुस्लिम थे, ने अपने आगंतुकों को बस्ती के एक हिस्से की शिवसेना द्वारा पक्की की गई गलियों से घुमाया – जो झुग्गी बस्ती के दूर के हिस्से के कीचड़ भरे रास्तों और कूड़े से भरी गलियों के बिल्कुल विपरीत था। शहर के अन्य हिस्सों में, शिवसेना शाखाओं या समितियों ने अन्य "नागरिक सुधार" आयोजित किए हैं: बिजली कनेक्शन, अतिरिक्त आवास बनाने की अनुमति आदि।⁷⁰

गोरेगांव की एक ईसाई महिला गोरेगांव शाखा में आई क्योंकि उसे उस कारखाने से निकाल दिया गया था जहाँ वह काम करती थी और उसका वेतन भी रुका हुआ था। यह कारखाना वर्ली में था। इसलिए गोरेगांव शाखा ने वर्ली और दादर की शाखाओं के साथ मिलकर उसके मामले पर काम किया और कारखाना प्रबंधन को उसका वेतन देने के लिए राजी कर लिया।
1968 के बीएमसी चुनावों के परिणामों से पता चला कि इस तरह की सहायता ने मुंबई के श्रमिक वर्ग के इलाकों में शिवसेना के लिए सद्भावना पैदा की थी। लेकिन जनता दल की नेता मृणाल गोरे का मानना था कि ठाकरे ने मजदूर वर्ग के युवाओं को धोखा दिया। उन्होंने मुझसे कहा:

उनकी अपील उन युवाओं से थी जिनकी तर्कशक्ति अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुई थी। उन्होंने उनसे कहा कि बाहरी लोग उनकी नौकरियां छीन रहे हैं और एक आसान उपाय सुझाया: उन्हें मारो, भगा दो और अपना हक हासिल कर लो। जो युवा अभी परिपक्व नहीं हुए थे, उन्हें उनके सिद्धांत पसंद आए क्योंकि उन्होंने सरल समाधान पेश किए थे। उन्हें जरा भी अंदाजा नहीं था कि जिन तरीकों की वे वकालत कर रहे थे, वे न केवल खतरनाक थे बल्कि घृणित भी थे।

युवाओं के बीच उनकी लोकप्रियता बढ़ने का एक और कारण यह था कि उन्होंने उन्हें पढ़ने और ज्ञान बढ़ाने से मना किया। उन्होंने सभी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सिद्धांतों को खारिज कर दिया और युवाओं से कहा कि ये बेकार हैं और अध्ययन के लायक नहीं हैं। इस तरह उन्होंने युवाओं की सोच को मराठी मुद्दे तक ही सीमित रखा। सामाजिक समस्याओं के बारे में जानने के लिए बहुत पढ़ना जरूरी है, लेकिन उन्होंने जानबूझकर युवाओं में पढ़ने की आदत को हतोत्साहित किया ताकि अपने दर्शन की खोखलेपन को छुपा सकें। उन्होंने मराठी युवाओं के बौद्धिक और सांस्कृतिक विकास को रोककर सफलता हासिल की।

हम समाजवादियों और साम्यवादियों को युवाओं की जरूरतों पर अधिक ध्यान देना चाहिए था। हमने ऐसा नहीं किया।⁷ ¹

7

कम्युनिस्टों के साथ लड़ाई

कम्युनिस्टों की घोषित भूमिका को चुनौती देने वाले के रूप में उभरने के साथ-साथ, शिवसेना के भीतर एक मजदूर मोर्चा स्थापित करने की मांग भी बढ़ रही थी।
9 अगस्त 1968 को ठाकरे ने भारतीय कामगार सेना (बीकेएस) की स्थापना की, जो पार्टी का श्रमिक संगठन था। उसी दिन मध्य मुंबई के नारे पार्क, परेल में एक रैली आयोजित की गई - जो कई कम्युनिस्ट आंदोलनों का केंद्र रहा है - इसकी स्थापना की घोषणा करने के लिए, और हजारों कारखाना श्रमिकों ने बारिश की परवाह किए बिना इसमें भाग लिया।
ठाकरे ने दत्ताजी साल्वी को बीकेएस का अध्यक्ष और अरुण मेहता को महासचिव नियुक्त किया। दोनों ही ट्रेड यूनियन गतिविधियों में सक्रिय रहे थे। स्वयं एक कारखाना मजदूर रहे साल्वी कांग्रेस से संबद्ध राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ (आरएमएमएस) के सदस्य थे, और मेहता शिवसेना में शामिल होने से पहले इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस (आईएनटीयूसी) से जुड़े थे। बीकेएस का उद्देश्य कारखानों और कारखाने के श्रमिकों के मन से साम्यवाद को जड़ से उखाड़ फेंकना था, क्योंकि हालांकि कई श्रमिक कारखानों के बाहर सैनिक की तरह काम करते थे, लेकिन वे कारखाने के अंदर लाल झंडा उठाते थे और स्थापित कम्युनिस्ट संघों के कार्यकर्ता थे। ठाकरे ने शुभारंभ के अवसर पर कहा: 'आज तक हमारे पास कोई संघ नहीं था, फिर भी हमने श्रमिकों के हितों के लिए हानिकारक सभी हड़तालों को विफल कर दिया। अब हमारे पास अपना संघ है। यदि मालिक अच्छा है, तो हम उसे सलाम करेंगे। यदि वह श्रमिकों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करता है, तो हम हाथ मिलाएंगे; अन्यथा, हम हड़ताल करेंगे!'
ट्रेड यूनियनवाद को 'हमारा धर्म' (नैतिक सिद्धांतों का समूह) बताते हुए उन्होंने अन्य यूनियनों पर हमला किया। उन्होंने कहा, 'उनके नेता गरीब मजदूरों की सदस्यता फीस से अपनी जेबें भरते हैं और मजदूरों की समस्याओं को नजरअंदाज करते हैं। हम कभी मजदूरों का शोषण नहीं करेंगे। हम इस धारणा को नहीं मानते कि मालिक दुश्मन है। उदार हृदय वाले मालिक निश्चित रूप से दुश्मन नहीं होते। हम उन कारखानों में कभी हड़ताल आयोजित नहीं करेंगे जहां मालिक खुद को मजदूरों और महाराष्ट्र के हितों से जोड़ते हैं।' बीकेएस के लिए निर्धारित दिशानिर्देश इस प्रकार थे:⁷²

1) यह श्रमिकों का उस तरह से शोषण नहीं करेगा जिस तरह से कम्युनिस्ट पार्टी ने किया है।
2) श्रमिकों को पहले अधिक उत्पादन करना सिखाया जाएगा और फिर अधिक की मांग करने के लिए कहा जाएगा। वर्ग संघर्ष के नाम पर मचाया गया शोर-शराबा श्रमिक को गुमराह कर चुका है; वह गरीबी में ही फंसा हुआ है क्योंकि उसने हड़ताल करके उत्पादन रोक दिया है।

3) बीकेएस सीपीआई और सीपीआई (एम) के गढ़ों पर लगातार हमले करेगी।
4) शिवसेना ट्रेड यूनियनों में अपनी भागीदारी का इस्तेमाल कभी भी राजनीतिक लाभ हासिल करने के लिए नहीं करेगी।
5) कम्युनिस्ट यूनियनों के विपरीत, बीकेएस दान का उपयोग कठिनाइयों का सामना कर रहे श्रमिकों की मदद के लिए करेगा।

इसके तुरंत बाद आरोप लगाए गए कि बीकेएस कांग्रेस, उसके तत्कालीन मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक और उद्योगपतियों द्वारा मुंबई के औद्योगिक क्षेत्र में कम्युनिस्ट वर्चस्व को समाप्त करने के लिए स्थापित एक मुखौटा संगठन था।
कम्युनिस्ट नेता रोजा देशपांडे कहती हैं:

कांग्रेस ने श्रम आंदोलन को नष्ट करने में शिवसेना को उपयोगी पाया। उद्योगपति भी वामपंथ को खत्म करना चाहते थे और शिवसेना ने इसमें उनकी मदद की। कांग्रेस नेताओं ने ठाकरे के प्रति सहानुभूति दिखाई और इसी वजह से वह एक विकृत मानसिकता का शिकार बन गए।
शिवसेना ने भूमिपुत्रों का मुद्दा उठाकर अपना जनाधार मजबूत किया। केरल में कम्युनिस्टों ने भी स्थानीय लोगों के लिए 80 प्रतिशत आरक्षण की बात कही, और बंगाल में ज्योति बसु ने कहा कि बंगाल में बंगालियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। ठाकरे ने मराठी भाषी लोगों की आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित किया, और कम्युनिस्ट जानते थे कि वे कई मामलों में सही थे, लेकिन उनके और शिवसेना के बीच टकराव का कारण यह था कि शिवसेना ने दक्षिण भारतीयों को निशाना बनाया। ठाकरे ने कहा कि किसी भी मद्रासी को यहां नौकरी नहीं मिलनी चाहिए। हमने कहा कि सवाल महाराष्ट्रियों को नौकरी देने का है, न कि दूसरों की नौकरियां छीनने का।
दुर्भाग्यवश, कम्युनिस्टों ने ठाकरे का फासीवादी कहकर विरोध किया, यह समझे बिना कि उनकी पार्टी की लोकप्रियता किस ओर थी, और इस तरह वे अलग-थलग पड़ गए। जनता हमारी शत्रु नहीं थी, लेकिन वे शिवसेना के साथ चले गए। अंततः सवाल यह उठता है कि परिणाम कौन देता है। शिवसेना ने ही परिणाम दिया।⁷ ³

CPI(M) leader Ahilya Rangnekar told me:

शिवसेना का नारा था, जला दो, जला दो, लाल बावता जला दो। इसका उद्देश्य वामपंथियों और प्रगतिवादियों पर हमला करना था क्योंकि यह जानती थी कि यदि ये शक्तियां मजबूत हो गईं और श्रमिकों को आवाज मिली, तो शिवसेना समाज और मिल श्रमिकों पर अपनी इच्छा थोप नहीं पाएगी। मिल मालिकों और उद्योगपतियों के साथ मिलीभगत करके, इसने प्रबंधनों के साथ सौदे किए और यूनियनों को तोड़ने का काम किया। इसने आतंक फैलाया और यूनियन गतिविधियों को कमजोर किया। इसके कार्यों से केवल उद्योगपतियों और अन्य बाजार पूंजीपतियों को ही लाभ हुआ।⁷⁴

बीकेएस में शुरू में एक अध्यक्ष, एक महासचिव, एक सचिव, आठ फील्ड वर्कर, कानूनी कर्मचारी और कार्यालय कर्मचारी थे। दादर की पुरंदारे वाडी में दो छोटे कमरे ही इसका कार्यालय थे।
जल्द ही, विभिन्न मिलों, कारखानों और उद्योगों से बीकेएस और वामपंथी संघों के बीच झड़पों की खबरें आने लगीं, जिसमें दोनों पक्ष एक-दूसरे पर धमकी देने से लेकर हत्या तक के अपराधों का आरोप लगा रहे थे।
उस समय वामपंथी अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (एआईटीयूसी) के नेता बी.एस. धूमे, जो मुंबई के कई प्रतिष्ठानों में एक शक्तिशाली यूनियन थी, ने मुझे उस समय के अपने कुछ अनुभव सुनाए जब बीकेएस अपनी पकड़ मजबूत करने की कोशिश कर रही थी:

शिवसेना ने श्रमिकों के बीच फूट डालने और हड़तालों को तोड़ने की कोशिश की, और हमारे केंद्र, कम्युनिस्ट पार्टी के अंधेरी केंद्र ने टी. मानेकलाल, लार्सन एंड टुब्रो (एल एंड टी), पार्ले बॉटलिंग कंपनी और गोल्ड स्पॉट में इसके साथ कुछ सबसे भयंकर संघर्ष किए हैं, जहां मैंने एआईटीयूसी यूनियनों का नेतृत्व किया था।

मानेकलाल मुंबई की बड़ी इंजीनियरिंग कंपनियों में से एक थी, और इसके 500 कर्मचारी – जिनमें से 60 प्रतिशत मराठी थे – कम्युनिस्ट विचारधारा के झंडे तले एकजुट थे। जब मालिक ने कर्मचारियों की जायज़ मांगों को नहीं माना, तो हमने हड़ताल का आह्वान किया, जो 90 दिनों तक चली। तब मालिक बाल ठाकरे के पास गया और उनसे मदद मांगी। कारखाने परिसर में एक पूजा का आयोजन किया गया, जिसमें शिवसेना प्रमुख भी शामिल हुए। परिसर में एक विशाल इमली का पेड़ था। इस पेड़ के नीचे ठाकरे के लिए एक कुर्सी लगाई गई, और जैसे ही मराठी मजदूर उस व्यक्ति को देखने के लिए इकट्ठा हुए, जिसने स्थानीय युवाओं में जिज्ञासा जगा दी थी, ठाकरे ने अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने श्रमिकों से कहा: “लाल झंडा लिए हुए लोग आपको गुमराह कर रहे हैं। हम सब मराठी हैं, और आपको भी मराठी की तरह व्यवहार करना चाहिए और तुरंत काम पर लौटना चाहिए।”

इससे श्रमिकों में फूट पड़ गई। आधे से अधिक श्रमिक अभी भी काम दोबारा शुरू करने को तैयार नहीं थे, जबकि कुछ पीछे हटने को तैयार थे। कुछ तुरंत काम पर लौट गए, कुछ ने कुछ समय और संघर्ष किया, लेकिन अंततः सभी ने स्थिति का अनुसरण किया। हड़ताल टूट गई।

एल एंड टी में, जहाँ हमारी यूनियन का दबदबा था, उन्होंने डराने-धमकाने की रणनीति अपनाई। उस कारखाने के पास कोई रेलवे स्टेशन नहीं है [अंधेरी और विक्रोली दोनों दूर हैं], इसलिए अगर रैली करनी हो तो कारखाने के कर्मचारियों को जुटाना तो आसान है, लेकिन बाहर से कर्मचारियों को बुलाना आसान नहीं है। हमने प्रबंधन से कुछ मांगें रखी थीं, लेकिन शिवसेना ने

मराठी बनाम गैर-मराठी का खेल खेलना शुरू कर दिया। वे शाम को कारखाने के अंदर ही कर्मचारियों की बैठकें करने लगे, वामपंथी विरोधी प्रचार करने लगे और ट्रकों में भरकर दूसरे कारखानों से भी कर्मचारियों को ले आए, ताकि भीड़ बड़ी लगे।

तब हमने तय किया कि हम भी बाहर से कार्यकर्ता लाएंगे। लेकिन जब हमने रैली करने का फैसला किया, तो पुलिस कमिश्नर ने मुझे बुलाया और पूछा कि हम लोगों को कैसे जुटाएंगे। मैंने कहा, वैसे ही जैसे बाकी लोग जुटा रहे हैं। मैंने उनसे पूछा कि क्या हमारे लिए ट्रकों में लोगों को लाना अपराध है, जबकि शिवसेना ऐसा खुलेआम करती है? हमारे लिए एक नियम और उनके लिए दूसरा क्यों? बैठक में शिवसेना समर्थक कार्यकर्ताओं और हमारी यूनियन से जुड़े कार्यकर्ताओं के बीच झड़प हो गई।

जल्द ही, कारखाने के अंदर और बाहर दोनों जगह झड़पें होने लगीं। शिवसेना ने श्रमिकों को बांटने के लिए कारखाने के विभिन्न विभागों में भी तनाव पैदा किया और एल एंड टी के महाप्रबंधक पुरोठे की कार पर शिवसेना के सदस्यों ने पत्थर फेंके। अंततः, ठाकरे के गुंडों ने हत्या का सहारा लिया। स्विच गियर विभाग में जोशी नाम का एक सुपरवाइजर, जो हमारे संघ का सदस्य भी नहीं था, बल्कि केवल हमदर्द था, जब रात में घर जा रहा था, तो कुर्ला रेलवे स्टेशन के पास शिवसेना के सदस्यों ने उसे घेर लिया और चाकू मारकर उसकी हत्या कर दी।

शिवसेना का मकसद सिर्फ आतंक फैलाना था। इन सबके बावजूद हमने डटकर मुकाबला किया, लेकिन जीत नहीं सके क्योंकि शिवसेना को कांग्रेस सरकार का समर्थन प्राप्त था।

तत्कालीन मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक मीठी-मीठी बातें करने में माहिर थे, लेकिन कठोर हृदय के थे। जोशी की हत्या के बाद जब हम उनसे मिले, तो उन्होंने हमारे प्रति सहानुभूति जताई। मैंने कहा, हमें आपकी सहानुभूति नहीं चाहिए। आप शिवसेना पर लगाम लगाने के लिए क्या कर रहे हैं? हमने उन्हें बताया कि शिवसेना की आतंक फैलाने वाली रणनीति के कारण हमारा कामकाज मुश्किल होता जा रहा है।

लेकिन हमें कोई मदद नहीं मिली। अंधेरी के गोल्ड स्पॉट में, हमारे नेतृत्व में मजदूरों ने हड़ताल कर दी, क्योंकि सर्वे नामक एक अधिकारी ने उनकी मांगें मानने से इनकार कर दिया था। आंदोलन इतना सफल रहा कि ऐसा लगा कि प्रबंधन को पीछे हटना पड़ेगा। इसलिए सर्वे ने पास के पारसीवाड़ा से शिवसेना के जवानों को इकट्ठा किया। उसने उन्हें नौकरी देने का वादा किया और कहा कि अगर सैनिक आंदोलन को कुचलने में उसकी मदद करें तो वह हड़ताली मजदूरों को भगा देगा। उस समय राजमार्ग पर काम चल रहा था और सड़क पर पत्थरों के ढेर लगे थे। हमारे मजदूर कंपनी के गेट के बाहर से पत्थर फेंकते थे और

सैनिक अंदर से उन पर बोतलें फेंकते थे। कुछ देर तक जमकर झड़पें हुईं, लेकिन भाड़े के लड़ाके जीत गए।

मुंबई के पश्चिमी उपनगरों में स्थित गोरेगांव की न्यू स्टैंडर्ड इंजीनियरिंग कंपनी में, जहाँ हमारा संघ प्रभावशाली था, शिवसेना ने गोरेगांव रेलवे स्टेशन से निकलते समय हमारे एक संघ नेता की पिटाई कर दी। वह सदमे में थे और असहाय महसूस कर रहे थे। अन्य कार्यकर्ताओं को संदेश मिल गया और वे हमारे आंदोलन से अलग हो गए।

1972 में सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल कई दिनों तक चली, इसलिए मुख्यमंत्री ने ठाकरे को मध्यस्थ बनाया क्योंकि अधिकांश कर्मचारी मराठी थे। ठाकरे ने उनसे काम पर लौटने का आग्रह करते हुए कहा, “महाराष्ट्रियों और विजेताओं के रूप में गर्व से मंत्रालय की सीढ़ियाँ चढ़ें।” उनकी इस अपील पर किसी ने ध्यान नहीं दिया, लेकिन यह इस बात का प्रमाण था कि सरकार शिवसेना का किस प्रकार इस्तेमाल करती थी और पुलिस भी किस प्रकार उसका संरक्षण करती थी।

फिर भी, जनता में भी बदलाव आया। हमारे कार्यकर्ताओं में मराठी, मलयाली, तमिल और गुजराती लोग थे। वे एकजुट होकर लड़ते थे। लेकिन शिवसेना द्वारा मराठी बनाम गैर-मराठी का नारा उठाने के बाद उनकी एकता चकनाचूर हो गई।

हमें कम से कम यह तो पता था कि हम किस दिशा में जा रहे हैं, लेकिन सेना के पास ऐसी कोई दिशा नहीं थी। इसका उदय चुनौतियों के जवाब में हुआ था, बिना किसी दूरदृष्टि के।⁷⁵

बीकेएस प्रमुख साल्वे ने न केवल श्रमिक-विरोधी गतिविधियों के आरोपों का खंडन किया, बल्कि यह भी कहा कि श्रमिक और प्रबंधन उत्पादन के दो मुख्य अंग हैं। उन्होंने कहा कि शिवसेना वर्ग संघर्ष में नहीं, बल्कि इन दोनों अंगों के बीच सहयोग में विश्वास करती है। शिवसेना के हिंसक तरीकों के बारे में वामपंथियों के आरोपों का जवाब देते हुए उन्होंने कहा: ‘कम्युनिस्टों ने कब लोकतंत्र और निष्पक्षता में विश्वास किया है? वे भारत को नुकसान पहुंचाने और रूस की मदद करने के लिए यहां आए हैं। हम देश के हित में काम कर रहे हैं।’⁷⁶
बीकेएस किसी कारखाने या कपड़ा मिल में कैसे प्रवेश करता है?
सबसे पहले, वहां कार्यरत सभी सैनिकों ने बीकेएस की एक इकाई स्थापित की और कार्यकर्ताओं को अपने पक्ष में करने के लिए अभियान चलाया। इसके बाद, सेना के एक नेता को इकाई को संबोधित करने के लिए कहा गया और आसपास की शाखाओं के सैनिकों को भी शक्ति प्रदर्शन के लिए बैठक में बुलाया गया।
दूसरा, जब भी कोई हड़ताल लंबे समय तक चलती रहती और कोई समझौता होता नहीं दिखता, तो सेना के लोग मजदूरों को यह समझाने की कोशिश करते कि लंबे समय तक

चलने वाली हड़ताल से उन्हें कुछ हासिल नहीं होगा। तब सेना का कोई नेता प्रबंधन के साथ बातचीत करता और मजदूरों और मालिकों दोनों को स्वीकार्य समझौता कर लेता।
जब प्रबंधन ने सेना की मांगों को मान लिया, तो बीकेएस को इसका श्रेय मिल जाएगा और प्रतिद्वंद्वी यूनियनें अप्रभावी दिखाई देंगी।
तीसरा, जब भी छोटे प्रतिष्ठानों के मालिक लाइसेंस, बिजली कनेक्शन आदि प्राप्त करने में सहायता के लिए सेना से संपर्क करते थे, तो सेना एक शर्त रखकर उनकी मदद करती थी: कि प्रतिष्ठान में मराठी युवाओं को नियुक्त किया जाए। मालिक द्वारा यह शर्त स्वीकार कर लेने पर, प्रतिष्ठान में सेना इकाई का गठन सुनिश्चित हो जाता था।
साल्वी के अनुसार, पहले ही वर्ष में विभिन्न प्रतिष्ठानों में 55 बीकेएस यूनियनें स्थापित की गईं और श्रमिकों ने बड़ी संख्या में उनमें शामिल हुए।
शिवसेना ने औद्योगिक हड़ताल और अशांति की निंदा की, और ऐसा प्रतीत हुआ कि मराठी मानुष ठाकरे के इस कथन से सहमत हो रहे थे: 'जो कोई भी महाराष्ट्रियों को रोटी और रोजगार देता है, वह हमारा है, चाहे वह टाटा हो, बिरला हो या कोई और।'
बीकेएस (ब्रिटिश केएस) औद्योगिक जगत में रोजगार की स्थिति और रिक्त पदों के बारे में जानकारी प्राप्त करने में भी शिवसेना के लिए सहायक साबित होने वाला था। शाखाओं में आने वाले बेरोजगार युवाओं को शिवसेना बेहतर जानकारी प्रदान कर सकेगी।
रोजगार के मुद्दे को प्रमुखता देने के लिए ठाकरे ने उसी समय एक रोजगार ब्यूरो की स्थापना की और तीन शिवसेना सदस्यों - अरुण जोशी, राम दांडेकर और एस. पालेकर - को इसका प्रभार सौंपा गया। जोशी और दांडेकर दोनों बैंक ऑफ अमेरिका में कार्यरत थे और प्रबंधन द्वारा परेशान किए जाने से तंग आ चुके थे। उन्होंने शिवसेना नेता प्रमोद नवलकर से संपर्क किया, जो उन्हें ठाकरे के पास ले गए। शिवसेना प्रमुख ने उनका समर्थन करने का आश्वासन दिया, जिसके बाद वे पार्टी में शामिल हो गए।
लेकिन ब्यूरो का अपना कोई कार्यालय नहीं था। इसका सारा काम सेना की शाखाओं के माध्यम से होता था। जोशी और दांडेकर को केवल तभी बातचीत के लिए भेजा जाता था जब प्रबंधन अनिच्छुक होता था, या जब रोजगार के सामान्य सिद्धांतों पर चर्चा आवश्यक होती थी।
रोजगार संबंधी शिवसेना की मांग और रोजगार विंग के लिए शाखाओं द्वारा किए गए कार्यों के बारे में दीपांकर गुप्ता लिखते हैं:

शिवसेना का मानना है कि कारखानों में उच्च कौशल वाली नौकरियों के अलावा, अन्य ऐसी नौकरियां जिनमें किसी विशेष कौशल की आवश्यकता नहीं होती, महाराष्ट्रियों को दी जानी चाहिए। इसी प्रकार, उनका मानना है कि उच्च श्रेणी के पदों में भी महाराष्ट्रियों को क्लर्क, कार्यालयों में और होटलों में लॉबी मैनेजर, बेल हॉप, वेटर आदि के रूप में आसानी से रोजगार मिल सकता है। प्रत्येक शाखा कार्यालय में नौकरी चाहने वालों के लिए मुद्रित फॉर्म उपलब्ध हैं। इन फॉर्मों में आवेदक की शिक्षा, अनुभव और आर्थिक पृष्ठभूमि से संबंधित जानकारी मांगी जाती है। विज्ञान, कला और यहां तक कि इंजीनियरों की डिग्री वाले उच्च शिक्षित लोग भी इन फॉर्मों में शामिल

हैं। जब भी शिवसेना के अधिकारियों को रिक्तियों के बारे में कोई जानकारी मिलती है, तो वे नौकरी के प्रकार के आधार पर इन आवेदनों को जमा करते हैं।⁷⁷

एस.ए. डांगे के दामाद बानी देशपांडे बताते हैं कि किस प्रकार भावनात्मक अपील इस तरह के संगठन में समाहित हो गई:

ठाकरे ने एक बार व्यंग्यपूर्वक कहा था कि वह फोरस रोड की वेश्याओं को भी मराठी देखना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि सभी तस्कर गैर-मराठी हैं और उनके पास खूब पैसा है, तो मराठी युवा पैसा क्यों नहीं कमा सकते? यहां तक कि जब गिरोहों की बात आई, तो उन्होंने कहा कि अगर दाऊद 10 लोगों को मारता है, तो अंडरवर्ल्ड के मराठी युवाओं को 50 लोगों को मार देना चाहिए। अगर उनके लड़के मराठी लोगों के लिए कुछ लोगों के सिर फोड़ दें, तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी। उन्होंने अंडरवर्ल्ड में अपने हिंसक सैनिकों या महाराष्ट्रियों की निंदा नहीं की। वह आज भी अंडरवर्ल्ड में मराठी तत्वों का समर्थन करते हैं।⁷⁸

हिंदुत्व की हलचल
1967 के उत्तरार्ध में हुई एक घटना ने पहली बार हिंदू राष्ट्रवाद को शिवसेना के दर्शन के एक अंतर्धारा के रूप में चिह्नित किया।
ठाणे के पास स्थित कल्याण कस्बे में, दुर्गाड़ी किले के मंदिर पर हिंदू और मुस्लिम दोनों के दावों के बाद एक सांप्रदायिक रूप से संवेदनशील मुद्दा खड़ा हो गया था। स्थानीय हिंदुओं का मानना था कि किले के ऊपर स्थित मंदिर देवी दुर्गा का है, जबकि मुसलमानों का मानना था कि यह एक मस्जिद है और उन्होंने वहां नमाज अदा करना शुरू कर दिया था। इस तनावपूर्ण माहौल में पड़ोसी शहर भिवंडी का भी दंगा और बढ़ गया, जो एक मुस्लिम बहुल कस्बा है और जहां अक्सर सांप्रदायिक दंगे होते रहते हैं।
जब ठाकरे को इस बात की भनक लगी, तो उन्होंने घोषणा की कि वह 8 सितंबर 1967 को दुर्गाड़ी किले पर भगवा झंडा फहराएंगे।
ठाकरे कहते हैं, ‘हमने मुसलमानों को स्पष्ट कर दिया था कि हम सांप्रदायिक मुद्दे नहीं उठाना चाहते। लेकिन इस बात के अकाट्य प्रमाण थे कि वह मंदिर हिंदू था। वहां विशिष्ट हिंदू प्रतीक थे: ओम, स्वास्तिक और गणपति। हमने इस मुद्दे पर सभाओं को संबोधित किया। फिर नवरात्रि का त्योहार आया और मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक ने मंदिर में पूजा पर प्रतिबंध लगा दिया। मैं क्रोधित हो गया। मैंने पहले एक बयान जारी किया कि ऐसा कोई प्रतिबंध लागू नहीं किया जा सकता। फिर मैंने कहा कि मैं अपनी पत्नी के साथ वहां जाकर पूजा करूंगा; अगर किसी में हिम्मत है तो वह मुझे गिरफ्तार कर ले।’⁷⁹
जैसे ही यह खबर फैली कि ठाकरे, मनोहर जोशी और दत्ताजी साल्वी दुर्गादेवी मंदिर के सामने नारियल फोड़ेंगे और गुलाल छिड़ककर धार्मिक उत्साह का प्रदर्शन करेंगे, तनाव बढ़ गया। पुलिस ने इलाके में सभाओं पर प्रतिबंध लगा दिया।
ठाकरे ने प्रतिबंध का उल्लंघन करने की बात कही। 8 सितंबर को जब वे अपने दो सहयोगियों के साथ कल्याण पहुंचे, तो किले की तलहटी में सैनिकों और स्थानीय

हिंदुओं ने उनका स्वागत किया। भीड़ ने किले पर अपने सभी धार्मिक अनुष्ठान किए।
सभा पर प्रतिबंध केवल कागजों पर ही रहा था, और धार्मिक अनुष्ठानों के बाद कल्याण के सुभाष मैदान में आयोजित रैली में भारी भीड़ उमड़ी। जोशी ने भीड़ से कहा कि शिवसेना ने 'पाकिस्तान समर्थक मुसलमानों को भारत से बाहर निकालने' का फैसला कर लिया है, और ठाकरे ने स्थानीय विधायक कृष्णराव धुलप का जिक्र करते हुए, जिनसे स्थानीय मुसलमानों ने एक ज्ञापन मांगा था, कहा, '6,000 मुसलमानों के वोट पाने के लिए यह धुलप अपनी मां को बेचने से भी नहीं हिचकिचाएगा।'
उसी महीने के अंत में, शिवसेना प्रमुख ने किले में 8,000 लोगों की एक और रैली को संबोधित किया, और 12 अक्टूबर 1968 को, सभा पर प्रतिबंध को तीसरी बार नजरअंदाज कर दिया गया क्योंकि ठाकरे ने एक और बैठक आयोजित की और 'भारत के प्रति निष्ठाहीन और समान नागरिक संहिता का विरोध करने वालों' की निंदा की।

8

ग्रेटर महाराष्ट्र और पहली गिरफ्तारी

हिंदुत्व के अपने पहले प्रयोग के बाद, शिवसेना अपने मूल सिद्धांतों पर लौट आई। 1960 से चली आ रही नाराजगी अभी भी मराठी लोगों के मन में ताजा थी, जब बेलगाम, निपानी, कारवार और अन्य सीमावर्ती क्षेत्रों, जहाँ बड़ी संख्या में मराठी आबादी रहती थी, को मैसूर (उस समय कर्नाटक) में शामिल कर लिया गया था। इन क्षेत्रों से महाराष्ट्रियों के खिलाफ भेदभाव की घटनाएं सामने आने पर यह नाराजगी फिर से भड़क उठी।
यह विवाद 1960 से ही चला आ रहा था, लेकिन संयुक्त महाराष्ट्र समिति के पूरी तरह से बिखर जाने के बाद, इस मुद्दे पर महाराष्ट्र की आवाज तुलनात्मक रूप से महत्वहीन होने की भावना में उलझ गई, और राज्य के भीतर यह धारणा बन गई कि कांग्रेस सरकार मराठी आवाजों को सुनने के लिए कुछ खास नहीं करेगी। संपूर्ण महाराष्ट्र समिति, जिसमें समाजवादी और कम्युनिस्ट दोनों शामिल थे, का गठन 1966 में बेलगाम, निपानी और कारवार को महाराष्ट्र में वापस लाने के लिए किया गया था, लेकिन इसे 1968 में भंग कर दिया गया था। हालांकि शिवसेना ने अपनी स्थापना के समय से ही इस मुद्दे पर रुक-रुक कर आवाज उठाई, जिसमें ठाकरे ने मार्मिक पत्रिका में अपने दो पृष्ठों के कार्टून 'रविवारची जात्रा' (रविवार मेला) में 'मैसूर द्वारा बेलगाम-कारवार-निपानी को निगल जाने' को उजागर किया, लेकिन उसने 1968 से पहले इस मुद्दे पर कोई जन आंदोलन आयोजित करने की बात नहीं की। लेकिन जब इस आंदोलन ने गति पकड़ी, तो इसने मुंबई को हिंसा के भंवर में घसीट लिया।
25 फरवरी 1968 को ठाकरे ने मार्मिक में एक संपादकीय में इस विवाद को प्रमुखता दी। "राजकरण म्हंजे डोम्बर्याचा खेल" (राजनीति कलाबाजों का खेल है) शीर्षक वाले इस संपादकीय में कहा गया:

भारत में कुशल राजनेताओं की भारी कमी है। यही कारण है कि सीमा विवाद जैसे मुद्दे हल होने के बजाय एक घातक रोग का रूप ले चुके हैं... जब उत्तर प्रदेश को तीन राज्यों में विभाजित करने का सुझाव आया, तब तत्कालीन गृह मंत्री गोविंद वल्लभ पंत ने कहा था: “राम और कृष्ण की भूमि को विभाजित करने का अधिकार किसे है? वह भूमि सदा अखंड ही रहेगी।” लेकिन जब महाराष्ट्र को टुकड़ों में बांटा जा रहा था, तब उनके विचार बदल गए। 105 लोगों की हत्या के बाद बने महाराष्ट्र का विभाजन हो गया!

जब लाखों एकभाषी लोगों को अलग भाषाई संरचना वाले राज्यों की जेलों में बंद किया जा रहा था, तब जवाहरलाल और अन्य राजनेताओं को मानवता का कोई एहसास नहीं हुआ... आख़िरकार, वे सत्ता के घमंड में चूर महज़ राजनेता ही तो हैं? जब उन्होंने सीमा रेखा खींचने के लिए कलम उठाई, तो उन्हें महाराष्ट्र के

अलावा अन्य राज्यों में रहने वाले अपने मित्रों की स्वार्थी इच्छाओं का भी ध्यान रखना पड़ा। इसलिए उन्होंने हमारे बेलगाम-कारवार-निपानी को झट से फाड़कर राक्षस को दे दिया!

पिछले 10-12 वर्षों में मैसूर के मराठी भाइयों ने स्थानीय चुनावों में आसानी से जीत हासिल की है और कई बार यह साबित किया है कि वे महाराष्ट्र का हिस्सा बनना चाहते हैं। तो फिर राजनेता किस राष्ट्रीय सहमति की बात कर रहे हैं?

प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने कहा है कि अंतिम निर्णय लेने से पहले दोनों मुख्यमंत्रियों की राय पर विचार किया जाएगा, क्योंकि आखिरकार उन्हें ही इस स्थिति का सामना करना है। बिलकुल सही।

लेकिन केंद्रीय नेताओं की बात ही क्या करें? रोम जल रहा है, और वे बांसुरी बजा रहे हैं! अगर हालात बहुत बिगड़ जाते हैं, तो वे हमें राष्ट्रीय सहमति जैसे कुछ अस्पष्ट विचार दे देते हैं।

मैसूर के कांग्रेस प्रमुख निजलिंगप्पा एक उग्र स्वभाव के व्यक्ति हैं।
कहीं भी, किसी भी तरह से बटन दबाओ, ये तुरंत चिंगारी भड़का देते हैं। उन्होंने कहा कि यह समाधान हमें स्वीकार्य नहीं है, और हेगड़े ने उनका समर्थन करते हुए कहा कि महाजन रिपोर्ट⁸⁰ न्यायाधीश का अंतिम निर्णय है और इसे यथावत लागू किया जाना चाहिए।

ऐसी परिस्थितियों में दिल्ली के नेता दोनों मुख्यमंत्रियों की राय पर कैसे विचार करेंगे?

“राष्ट्रीय स्तर,” “जनमत” और “राय” जैसे शब्द लोगों को मूर्ख बनाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली कलाबाजियों का ही एक हिस्सा हैं।

महाराष्ट्र सरकार की स्थिति बेहद दयनीय है। राज्य में ऐसे विधायक हैं जो सिर्फ विरोध जताने के लिए सरकार का विरोध करते हैं और उसके हर कदम की आलोचना करने का कोई मौका नहीं छोड़ते। महाराष्ट्र के सांसदों से भी कोई उम्मीद नहीं जताई जा सकती, क्योंकि उनमें से कुछ ही लोकसभा में महाराष्ट्र का पक्ष मजबूती से रख सकते हैं। हर सांसद दलगत राजनीति के दलदल में फंसा हुआ है और जनता के प्रति उनकी वफादारी की बातें सिर्फ चुनाव तक ही सीमित हैं।

हमने पढ़ा है कि मुख्यमंत्री वसंतराव नाइक ने कुछ दिन पहले राज्य के सांसदों की बैठक बुलाई थी और उन्हें महाराष्ट्र की दुर्दशा के बारे में बताया था। लेकिन उनसे क्या उम्मीद की जा सकती है जिन्होंने सांसदों के कोटे से मिलने वाले धन का फायदा उठाने के अलावा कुछ नहीं किया? सच्चाई तो यह है कि मराठी लोगों का कोई उद्धारकर्ता नहीं है!

लेकिन यह शिवाजी राजे का महाराष्ट्र है। इसने अतीत में कई आसमानी और सुल्तानी (भयानक कठिनाइयों) का सामना किया है, और आज यह लोकतंत्र और कांग्रेस के कारनामों को ध्यान से देख रहा है। इसने तथाकथित राष्ट्रवाद के शाब्दिक जाल का चतुराई से विश्लेषण किया है। मराठा का शत्रु खेमे का अध्ययन अब पूरा हो चुका है। और वह मतपेटी की ताकत से भलीभांति परिचित है... शिवाजी का मराठा गरिमामय है। देखते हैं क्या होता है।

नवंबर 1968 में, उन्होंने बेलगाम का दौरा किया और उनका गर्मजोशी से स्वागत किया गया। अपनी वापसी के अगले दिन, उन्होंने शिवाजी पार्क में एक सभा को संबोधित किया और चेतावनी दी कि यदि सीमा विवाद को एक निश्चित समय सीमा के भीतर हल नहीं किया गया, तो प्रधानमंत्री, केंद्रीय मंत्रियों, मैसूर के मुख्यमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष को मुंबई में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।
29 दिसंबर 1968 को मध्य मुंबई के परेल स्थित कामगार मैदान में एक अन्य रैली में ठाकरे ने कहा कि 'प्रतिबंध' 26 जनवरी 1969 से प्रभावी होगा। 'परिणाम चाहे जो भी हो, हम अपनी धमकी को अंजाम देंगे।'
जनवरी 1969 के पहले सप्ताह में, ठाकरे एक सेमिनार के लिए नागपुर गए और वहां अपने प्रवास के दौरान, संघ के मुख्यालय में आरएसएस के सरसंघचालक गुरु गोलवलकर से मिले।
5 जनवरी की आधी रात को जब वह मुंबई जाने वाली फ्लाइट पकड़ने के लिए नागपुर हवाई अड्डे पर पहुंचे, तो उन्हें और उनके साथियों को 10 गुंडों ने घेर लिया।
ठाकरे जब एयरपोर्ट लाउंज में बैठकर किताब पढ़ रहे थे, तभी ये लोग उनके आसपास मंडराने लगे। उनकी हरकतों को देखकर शिवसेना प्रमुख के सहायकों ने ठाकरे की सुरक्षा के लिए एयरपोर्ट के बाहर खड़ी पुलिस जीप में जाकर पुलिसकर्मियों को मामले की जानकारी दी। लेकिन सेनाकर्मियों का कहना है कि पुलिसकर्मियों ने कुछ नहीं किया, जबकि गुंडे बदसलूकी करने लगे और शिवसेना प्रमुख को अपशब्द कहने लगे। इसके बाद सेनाकर्मियों ने गुंडों को घेर लिया और उनमें से तीन को पुलिस के हवाले कर दिया। बाकी भाग गए। सेनाकर्मियों का दावा है कि भागने वालों में से दो कम्युनिस्ट थे, जिनके नाम चौबे और शुक्ला थे।
मुंबई लौटकर, शिवसेना के जवानों ने 27 जनवरी 1969 की रणनीति तैयार करना शुरू कर दिया, जिस दिन केंद्रीय गृह मंत्री वाई.बी. चव्हाण का मुंबई दौरा निर्धारित था। ठाकरे ने दोहराया कि जब तक सीमा विवाद को सुलझाने के लिए कोई समयबद्ध कार्यक्रम घोषित नहीं किया जाता, शिवसेना प्रधानमंत्री, उप प्रधानमंत्री, गृह मंत्री, कांग्रेस अध्यक्ष एस. निजलिंगप्पा और मैसूर के मुख्यमंत्री वीरेंद्र पाटिल को मुंबई में प्रवेश नहीं करने देगी।

उन्होंने कहा कि यदि वे आए, तो शिवसेना के जवान उनकी गाड़ियों के सामने कूदकर उनका रास्ता रोक देंगे।
उन्होंने कहा, ‘यह बात तो सही है कि राष्ट्रीय संपत्ति को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया जाना चाहिए, लेकिन अगर जनभावना में उबाल आता है, तो लोगों को दोष नहीं दिया जा सकता।’ उन्होंने आगे कहा, ‘सैनिक माहिम, सिद्धिविनायक मंदिर के पास वाली सड़क और वर्ली नाका जैसी जगहों पर समूहों में इकट्ठा होंगे और चव्हाण की कार को रोकने के लिए सड़क के बीचोंबीच लेट जाएंगे। यह संघर्ष का पहला कदम है। इसकी तीव्रता सरकार के रवैये पर निर्भर करेगी।’⁸ ¹
पुलिस यह सुनिश्चित करने के लिए उत्सुक थी कि चव्हाण की यात्रा शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हो, और शिवसेना भी इसे शांतिपूर्ण होने से रोकने के लिए उतनी ही दृढ़ थी।
27 जनवरी को सुबह 9 बजे माहिम चर्च के पास लगभग 500 सैनिकों ने डेरा डाला और किसी भी अप्रिय घटना को रोकने के लिए लगभग 100 पुलिसकर्मियों का एक दल तैनात किया गया। जब चव्हाण की कार, एक सुरक्षा वाहन के साथ, सुबह 10:05 बजे पहुंची, तो पुलिस ने सैनिकों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए सड़क के दोनों ओर घेरा बना लिया। लेकिन लगभग 150 सैनिकों ने घेरा तोड़ दिया और सड़क के बीचोंबीच खड़े हो गए।
शिवसेना के ठाणे इकाई प्रमुख वसंत मराठे, कुछ अन्य दलीय सदस्यों के साथ, सुरक्षा वाहन और चव्हाण की कार के बीच की तंग जगह में कूद गए और सड़क पर लेट गए। लगभग 100 सैनिकों ने कार को घेर लिया और काले झंडे लहराते हुए सरकार और गृह मंत्री के खिलाफ नारे लगाने लगे: 'मुंबई के लिए 105 हुतात्माएं! बेलगाम के लिए कितनी चाहिए?' पुलिस और सैनिकों के बीच झड़प 5 मिनट तक चली, और जब सैनिकों ने पत्थरबाजी शुरू की, तो पुलिस ने उन पर लाठीचार्ज किया।
अंततः चव्हाण की गाड़ी चलने लगी और शिवाजी पार्क एवं वर्ली में संभावित उपद्रव की आशंका को देखते हुए मार्ग परिवर्तन का निर्णय लिया गया। शिवाजी पार्क, प्रभादेवी एवं वर्ली का वातावरण माहिम जैसा ही था। बड़ी संख्या में सैनिक एकत्रित थे। लेकिन आधिकारिक काफिला सेनापति बापट मार्ग से प्रभादेवी गया और बाद में तुलसी पाइप रोड से होकर गुजरा। फिर भी, किस्मत सिनेमा के पास, सिद्धिविनायक मंदिर से कुछ दूरी पर, प्रदर्शनकारियों ने एक बार फिर चव्हाण की गाड़ी को कुछ देर के लिए रोक दिया और वर्ली नाका पर विरोध प्रदर्शन किया गया।
मार्ग में बदलाव से मदद मिली और चव्हाण अपने रास्ते पर चल पड़ा।
बाद में, सुबह लगभग 11:30 बजे, जब विभिन्न स्थानों पर एकत्रित हुए सैनिकों के विभिन्न समूह उत्सवपूर्ण उत्साह के साथ दादर के रानाडे रोड स्थित शिवसेना के मुख्य कार्यालय की ओर बढ़े, तो ठाकरे ने उन्हें संबोधित किया। उन्होंने कहा, ‘चव्हाण को अपना रास्ता बदलना पड़ा। हमने नैतिक जीत हासिल की है।’⁸ ²
पहली चिंगारी भड़क उठी थी।
और शिवसेना ने अपना आंदोलन तेज करने का फैसला किया था। इसलिए मुख्यमंत्री नाइक ने मुंबई पुलिस की सहायता के लिए विशेष रिजर्व पुलिस (एसआरपी) को तैनात किया।
2 फरवरी को ठाकरे ने शिवाजी पार्क में एक रैली को संबोधित करते हुए शिवसेना की कार्ययोजना की रूपरेखा प्रस्तुत की और पार्टी कार्यकर्ताओं

से लाठियों, आंसू गैस के गोलों और गोलियों का सामना करने की शपथ ली। उन्होंने कार्यकर्ताओं से कहा:

पुलिस को शिवसेना को खत्म करने के निर्देश दिए गए हैं। लेकिन हम तैयार हैं। हमें न तो लाठियों की परवाह है और न ही गोलियों की। हमने यह भी तय कर लिया है कि हम अपना आंदोलन इस तरह चलाएंगे कि लाठियां टूट जाएंगी... हम कानून अपने हाथ में नहीं लेना चाहते, लेकिन अगर हमारी जायज मांगों को अन्यायपूर्ण तरीके से दबाया गया, तो हम जवाबी कार्रवाई करेंगे। शिवसेना नेताओं को अगले कुछ दिनों में जेल में डाला जा सकता है। लेकिन अगर ऐसा हुआ, तो सेनापति भड़क उठेंगे और अगर वे विरोध करेंगे तो पुलिस बल अपर्याप्त साबित होगा। तब सेना को बुलाना पड़ेगा।

चव्हाण को अपनी गाड़ी से उतरकर सत्याग्रहियों से पूछना चाहिए था कि वह उनके लिए क्या कर सकते हैं। इससे वे शांत हो जाते। सीमावर्ती इलाकों में रहने वाली मराठी आबादी 12 वर्षों से न्याय के लिए संघर्ष कर रही है, और हमारे मराठी भाइयों ने हाल ही में बेलगाम विधानसभा चुनाव जीता है। लेकिन उन्हें न्याय कब मिलेगा, यह बताए बिना चव्हाण कायरों की तरह भाग गए... नायक एक अच्छे इंसान हैं, उनके साथ हमारे संबंध अच्छे हैं, लेकिन इस मुद्दे पर हमारे संबंध बिगड़ने वाले हैं। मुझे परवाह नहीं कि ऐसा होता है या नहीं।

आज मैं अपने साथ कन्नड़ अखबार लाया हूँ। इसमें छपी तस्वीरें देखिए। मराठी में लिखे बोर्ड और मराठी नामपट्टियों वाली दुकानें तोड़ दी गई हैं। कल हुबली में बाबान प्रभु को अपना मराठी नाटक करने की अनुमति नहीं दी गई। और यह सब होते हुए भी, सड़क पर एक भी पुलिसकर्मी नहीं था! जब हम, बिना कोई ऐसा घिनौना काम किए, न्याय की गुहार लगाते हैं, तो पुलिस हमें घेर लेती है। दक्षिण में इतनी गड़बड़ी के बावजूद, वहाँ की सरकार कुछ नहीं करती।

इसके बाद उप प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की मुंबई यात्रा की बारी आई। 7 फरवरी की सुबह, अपनी यात्रा के दौरान, ठाकरे ने मुंबई पुलिस आयुक्त इमैनुअल मोदक से मुलाकात की और उन्हें आश्वासन दिया कि शिवसेना का आंदोलन शांतिपूर्ण रहेगा। पुलिस आयुक्त, पुलिस उपायुक्त दफले और ठाकरे के बीच हुए समझौते के अनुसार, शिवसेना माहिम में मोरारजी को एक लिखित ज्ञापन सौंपेगी।
ठाकरे बताते हैं, ‘हम उनकी कार रोकना चाहते थे, लेकिन हमें बताया गया कि इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। हमें आश्वासन दिया गया कि मोरारजी हमारी बात मान लेंगे।’⁸ ³
लेकिन 1960 में एसएमएम कार्यकर्ताओं पर हुए हमले के कारण महाराष्ट्र में नफरत का पात्र बन चुके मोरारजी का आगमन शिवसेना के लिए माहौल बिगाड़ने वाली घटना ही साबित हो सकता था।
रात 8 बजे तक ठाकरे और मनोहर जोशी उस स्थान पर पहुँच गए जहाँ शिवसेना को उप प्रधानमंत्री को अपना बयान सौंपना था। सड़क के दोनों ओर लगभग 100 फुट के

क्षेत्र में हजारों युवाओं ने भगवा झंडे लहराते हुए शिवसेना का उत्साहवर्धन किया और 'मोरारजी शर्म करो' तथा 'यहाँ इतने पुलिसकर्मी क्यों हैं? मोरारजी के अंतिम संस्कार के लिए ही तो हैं' के नारे लगाए।
रात 9:30 बजे, मोरारजी की कार दूर से आती हुई दिखाई दी। तय स्थान पर पहुँचते ही, उसने अपनी गति धीमी नहीं की, बल्कि सेना के लोगों और प्रतिनिधिमंडल के बीच से तेज़ी से निकल गई। एक सैनिक ने आगे बढ़कर उसे रोकने की कोशिश की, लेकिन वह कार के दाहिने पहिये से टकराकर गिर पड़ा। तीन अन्य सैनिक भी घायल हो गए।
भावनाएं उतनी ही तेजी से भड़क उठीं जितनी तेजी से मोरारजी की कार भागी थी, और भीड़ ने उस वाहन पर पत्थर फेंके, जो वहां से भागने का हताश प्रयास कर रहा था।
ठाकरे कहते हैं, ‘कितना नीच आदमी है!’⁸⁴ ‘उसने सभी वाहनों को बेतहाशा गति से आगे बढ़ने का आदेश दिया। वादा करने के बावजूद वह रुका नहीं। हमारे कैमरामैन (करम्बेलकर) को भी उसकी कार से टक्कर लगी, साथ ही हमारे वाहनों को भी। लड़के इतने गुस्से में थे कि उन्होंने उसकी कार पर पत्थर फेंके।’ मोरारजी की कार का शीशा चकनाचूर हो गया था, लेकिन वह किसी तरह शत्रुतापूर्ण भीड़ को पार करते हुए अपने रास्ते चले गए।
तब तक पुलिस ने सैनिकों पर लाठीचार्ज शुरू कर दिया था। लाठियाँ बरसते ही कुछ सैनिक पास की नवजीवन सोसाइटी में शरण लेने के लिए भागे, लेकिन पुलिस ने उनका पीछा किया और लाठियों का इस्तेमाल किया।
माहिम चर्च और माहिम बस डिपो के पास मौजूद प्रदर्शनकारियों ने पत्थर फेंकना शुरू कर दिया था, जिन पर लाठीचार्ज और आंसू गैस के गोले दागे गए। पुलिस की कार्रवाई से लोगों का गुस्सा और भड़क उठा और माहिम रेलवे स्टेशन पर भी पत्थरबाजी की घटनाएं देखने को मिलीं।
शिवाजी पार्क में भी तनाव का माहौल था। सैकड़ों सैनिक सड़कों पर उतर आए थे और पुलिस की घेराबंदी में मोरारजी की गाड़ी का इंतजार कर रहे थे। कुछ ही देर में मनोहर जोशी शिवाजी पार्क पहुंचे और पार्टी कार्यकर्ताओं से कहा कि उप प्रधानमंत्री ने 'विश्वासघात' किया है और कैडेल रोड से चले गए। इसके जवाब में सैनिक भड़क उठे, लेकिन इससे पहले कि वे अपना विरोध शुरू कर पाते, जोशी ने लाउडस्पीकर पर घोषणा की कि ठाकरे अपने रानाडे रोड स्थित कार्यालय गए हैं और सभी को वहां जाना चाहिए। यह संदेश कई जगहों पर प्रसारित हुआ और देखते ही देखते 10,000 सैनिक रानाडे रोड पर जमा हो गए।
ठाकरे, जिन्होंने शांतिपूर्ण प्रदर्शनों की अनिश्चितताओं के मुकाबले हिंसक विरोध प्रदर्शनों की निश्चितताओं में अपने विश्वास को कभी नहीं छिपाया, ने उनसे कहा: 'एक शिवसैनिक का खून बहाया गया है। हम बदला लेंगे।' अब से पुलिस और शिवसेना कार्यकर्ताओं के बीच सीधी लड़ाई होने वाली थी। दादर का पूरा इलाका युद्धक्षेत्र में तब्दील हो गया। पत्थरबाजी तेज हो गई और दादर रेलवे स्टेशन पर लगी घड़ियां, खाने-पीने की दुकानें और शोकेस तोड़ दिए गए। कैडेल रोड, लेडी जमशेदजी रोड और रानाडे रोड पर स्थित तीन पुलिस चौकियों और दो बीईएसटी बसों को आग लगा दी गई। पुलिस ने लाठियों और आंसू गैस का इस्तेमाल करके स्थिति को शांत करने की कोशिश की, लेकिन हिंसा में कोई कमी नहीं आई और रात में अशांति बायकुला तक फैल गई।
माहिम, प्रभादेवी (यहां भी मोरारजी की कार पर पथराव किया गया) और वर्ली बुरी तरह प्रभावित हुए, लेकिन दादर पूरी तरह से अराजकता में डूब गया।

आधी रात के बाद, पुलिस ने बताया कि 185 लोगों को गिरफ्तार किया गया है और दो पुलिस अधिकारी और 15 कांस्टेबल घायल हुए हैं। केईएम अस्पताल द्वारा रात में दिए गए आंकड़े इस प्रकार थे: 6 लोग गंभीर रूप से घायल हुए, जिनमें से 3 की हालत नाजुक थी और 50 अन्य घायलों को इलाज के बाद छुट्टी दे दी गई। ठाकरे का देर रात जारी मीडिया को दिया गया बयान कहता है: ‘पुलिस ने हमें धोखा दिया है। जिस घमंड के साथ मोरारजी चले गए, वह बेहद आक्रोशजनक है। अब हम वैसा ही संघर्ष करेंगे जैसा मुंबई के लिए करना पड़ा था। इसके परिणामों की जिम्मेदारी हम पर नहीं है। आज की घटनाओं के लिए जनता को दोषी नहीं ठहराया जा सकता।’⁸⁵
शनिवार, 8 फरवरी को अशांति और बढ़ गई, जब शिवसेना द्वारा एक राजनीतिक सेना में परिवर्तित किए गए मुंबई के मराठी युवाओं की भीड़ ने तेजी से हिंसक विरोध प्रदर्शन किए।
लालबाग और माहिम के बीच के इलाके में दिन भर बीईएसटी बसों पर लगातार हमले और पत्थरबाजी की घटनाएं होती रहीं, जिससे सामान्य जीवन पूरी तरह से बाधित हो गया।
शिवसेना ने कहा था कि ठाकरे पुलिस द्वारा सभाओं पर लगाए गए प्रतिबंध का उल्लंघन करते हुए शाम को मध्य मुंबई के परेल स्थित भोईवाड़ा मैदान में एक रैली को संबोधित करेंगे। इसके चलते इलाके में तनाव बढ़ गया।
ठाकरे स्वयं रैली में शामिल नहीं हुए। उन्होंने दत्ताजी साल्वी को भेजा, लेकिन पुलिस प्रतिबंध का उल्लंघन करने के आरोप में मैदान में प्रवेश करने से ठीक पहले दत्ताजी को अन्य सैनिकों के साथ गिरफ्तार कर लिया गया।
इससे हिंसा और बढ़ गई। पत्थरबाजी तेज हो गई, बसों में आग लगा दी गई, अंबेडकर रोड और दादर में सभी ट्यूबलाइटें तोड़ दी गईं, स्वान मिल्स के पास एक पुलिस चौकी जला दी गई, अशांति के मद्देनजर बायकुला से दादर और हाजी अली से माहिम तक बीईएसटी सेवाएं निलंबित करनी पड़ीं और सभी दुकानें और व्यावसायिक प्रतिष्ठान बंद कर दिए गए।
रात करीब 9:30 बजे, नाइगाम के बीडीडी चॉल से 1,000 लोगों का एक मोर्चा निकाला गया, और जब प्रदर्शनकारियों ने पुलिस द्वारा तितर-बितर होने के दिए गए आदेशों को मानने से इनकार कर दिया, तो लाठियों और आंसू गैस का इस्तेमाल किया गया।
रात दस बजे के कुछ देर बाद, दादर स्थित चित्रा टॉकीज के पास एक पेट्रोल पंप को भीड़ ने आग लगाने की कोशिश की। पुलिस तुरंत मौके पर पहुंची और एक बड़े हादसे को टाल दिया, लेकिन उन पर न केवल सैनिकों बल्कि थिएटर के पास की चॉलों में रहने वालों ने भी पत्थर फेंके। पुलिस के हमले को रोकने की कोशिश के दौरान, सड़क के दूसरी ओर बसों को आग लगा दी गई।
अंततः, लाठीचार्ज और आंसू गैस के गोले के इस्तेमाल जैसे उपायों को आजमाने के बाद, पुलिस ने दंगा करने वाली भीड़ को शांत करने के लिए अंबेडकर नगर में 11 राउंड गोलियां चलाईं।
9 फरवरी 1969।
हिंसा के रुकने या कम से कम कुछ समय के लिए शांत होने की उम्मीदें लगभग खत्म हो रही थीं, तभी राज्य सरकार ने शिवसेना नेताओं पर शिकंजा कसने का फैसला किया। तड़के सुबह बाल ठाकरे और मनोहर जोशी को निवारक नजरबंदी अधिनियम के तहत गिरफ्तार कर लिया गया (ठाकरे को तीन महीने बाद जेल से रिहा कर दिया गया)।

जेल और हिंसा
ठाकरे की गिरफ्तारी के बाद मुंबई में अभूतपूर्व हिंसा भड़क उठी। गिरफ्तारी की खबर दादर में सुबह 8 बजे से पहले ही फैल गई, जिसका श्रेय काफी हद तक सैनिकों को जाता है जिन्होंने न केवल गली-नुक्कड़ों पर ब्लैकबोर्ड लगाकर इस घटना की घोषणा की, बल्कि दादर की हर सड़क पर चाक से खबर लिख भी दी। पहले दो दिनों तक, निशाने पर बीईएसटी की बसें, दूध के स्टॉल और पुलिस चौकियां थीं। अब दुकानें, व्यावसायिक प्रतिष्ठान और होटल आसान निशाना बन गए।
एन.सी. केलकर मार्ग पर स्थित होटल विसावा जलकर राख हो गया, और आग इतनी भीषण थी कि उसके बगल की पांच दुकानें बुरी तरह जल गईं।
दम घोंटने वाले धुएं और व्यापक तबाही के बीच, सैनिकों ने पुलिस के साथ खुली झड़प की, और आग पर काबू पाने के लिए पुलिस का अभियान छोटा लगने लगा। नाइगाम और माटुंगा के बीच स्थित होटलों में आग लगा दी गई, सेंचुरी बाजार में संपत्ति को नुकसान पहुंचाया गया और दक्षिण मुंबई के लैमिंगटन रोड पर दो पेट्रोल पंप जला दिए गए। माहिम रेलवे स्टेशन पर हमला हुआ, जिसके चलते पुलिस को गोली चलानी पड़ी। इस हमले में दो लोगों की मौत हो गई और दो गंभीर रूप से घायल हो गए।
सेवरी चौकी पर पुलिस उप आयुक्त आर.एस. कुलकर्णी को भीड़ ने घेर लिया और प्रदर्शनकारियों को तितर-बितर करने के लिए पुलिस को हवा में छह राउंड फायरिंग करनी पड़ी।
माहिम स्टेशन की ओर आ रहे एक बख्तरबंद पुलिस वाहन पर भीड़ ने हमला कर दिया। गोलीबारी में एक पुलिसकर्मी शहीद हो गया। सेंट्रल रेलवे पर बायकुला में एक प्रथम श्रेणी का डिब्बा क्षतिग्रस्त हो गया और सेंट्रल रेलवे मार्ग पर अवरोध लगा दिए गए, जिसके परिणामस्वरूप कुछ समय के लिए सेवाएं ठप्प हो गईं। शाम 5 बजे शिवसेना के नेता सुधीर जोशी, कामगार सेना के महासचिव अरुण मेहता, भाई शिंगरे और सतम गुरुजी को गिरफ्तार कर लिया गया। पुलिस ने वर्ली नाका से माहिम तक रात 8 बजे से सुबह 5 बजे तक तीन दिनों के लिए कर्फ्यू लगाने का फैसला किया था।
रात 8 बजे तक पुलिस की गोलीबारी में सात लोग मारे गए और 35 घायल हो गए। रात 10 बजे दक्षिण मुंबई के गिरगाँव में अशांति बढ़ गई और पुलिस की गोलीबारी में एक और व्यक्ति की मौत हो गई।
देर रात मुख्यमंत्री नाइक ने नागरिकों से शांति बहाल करने के लिए अधिकारियों के साथ सहयोग करने की अपील जारी की और शिवसेना की कड़ी आलोचना की।
सोमवार, 10 फरवरी 1969।
नाइक की शांति की अपील को ठुकरा दिया गया, और राज्य तंत्र की कार्यप्रणाली में लगातार गड़बड़ी बनी रही।
गिरगाम और माहिम के बीच दोपहर 1 बजे से शाम 6 बजे तक और रात 8 बजे से सुबह 5 बजे तक कर्फ्यू लगा रहा, लेकिन दादर के कीर्तिकर बाजार को तड़के सुबह जला दिया गया, और पश्चिमी उपनगरों में अंधेरी के मारोल बस डिपो में पत्थरबाजी में 30 बसें क्षतिग्रस्त हो गईं।

दोपहर में, दादर प्लाजा सिनेमा के पास परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान से संबंधित तीन वाहनों को रोककर आग लगा दी गई। पुलिस की गोलीबारी में मरने वालों की संख्या बढ़कर तीस हो गई।
सेना को अलर्ट पर रहने के लिए कहा गया था, और शहर की पुलिस की सहायता के लिए अन्य राज्यों से राज्य रिजर्व पुलिस की टुकड़ियों को बुलाया गया था। इसके साथ ही, महाराष्ट्र सरकार ने एक और निर्णय लिया: उसने पुणे की येरवडा जेल में बंद ठाकरे से मुंबई में शांति स्थापित करने के लिए लोगों से अपील करते हुए एक लिखित संदेश जारी करने को कहा।
शायद स्वतंत्र भारत के इतिहास में पहली बार, निवारक नजरबंदी अधिनियम के तहत हिरासत में लिए गए एक व्यक्ति द्वारा जारी की गई अपील को पुलिस द्वारा कानून और व्यवस्था को नियंत्रण में लाने के लिए वितरित किया गया।
पुलिस वैन द्वारा पूरे शहर में वितरित किए गए ठाकरे के शिवसैनिकों से अपील में लिखा था:

अखबारों के जरिए यह जानकर मुझे बेहद दुख हुआ है कि कानून-व्यवस्था बहाल करने के लिए सेना को बुलाया गया है। व्यापक राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए, सभी राष्ट्रवादी भारतीयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आंतरिक शांति स्थापित करने के लिए सेना की आवश्यकता न पड़े। सेना का काम देश की सीमाओं की रक्षा करना है। मैं सभी शिवसैनिकों से अपील करता हूं कि वे मुंबई में तुरंत कानून-व्यवस्था बहाल करवाएं। साथ ही, शिवसैनिकों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी भी परिस्थिति में कम्युनिस्ट हमारे संघर्ष का फायदा न उठा सकें।

क्या यह ‘आंदोलन’ वापस लेने के कारणों को समझाने के लिए कुशल लेखनी है? ‘नहीं,’ शिवसेना नेता प्रमोद नवलकर ने कहा। उनके अनुसार, ठाकरे ने ‘राष्ट्रीय हित’ के नाम पर अपील जारी की थी।⁸⁶
मंगलवार दोपहर तक, दंगे की कुछ छिटपुट घटनाएं ही हुई थीं।
अब सैनिक सफाई अभियान में सबसे आगे थे, वे उन बाधाओं को हटा रहे थे जिन्हें उन्होंने खुद पुलिस की आवाजाही को धीमा करने के लिए सड़कों पर लगाया था। 12 फरवरी को स्थिति सामान्य हो गई और दिन के समय कर्फ्यू हटा लिया गया, हालांकि यह शाम के समय अभी भी लागू था।
13 फरवरी को कर्फ्यू पूरी तरह हटा लिया गया और अगले दिन मुख्यमंत्री ने नई दिल्ली में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से मुलाकात की और उन्हें कानून-व्यवस्था की सुधरती स्थिति से अवगत कराया। गृह मंत्री चव्हाण पहले ही श्रीमती गांधी को मुंबई दंगों पर एक रिपोर्ट सौंप चुके थे: कुल मिलाकर 59 लोगों की मौत हुई थी, जिनमें से 56 पुलिस फायरिंग में मारे गए थे और करोड़ों की संपत्ति नष्ट हो गई थी।
अपने तीसरे वर्ष में ही शिवसेना को अपनी क्षमता का एहसास हो गया था। उसने मुंबई में लगभग पांच दिनों तक सामान्य जीवन को पूरी तरह से अस्त-व्यस्त कर दिया और राज्य तंत्र को पंगु बना दिया।
संसद का बजट सत्र फरवरी के तीसरे सप्ताह में शुरू होना था, इसलिए यह स्वाभाविक था कि मुंबई हिंसा का मुद्दा ही कार्यवाही पर हावी रहे। उसी समय तेलंगाना में भी हिंसा भड़की थी, और यह व्यापक रूप से ज्ञात जानकारी होने

इंदिरा गांधी ने बहस के दौरान कहा: ‘शिवसेना देश की एकता, प्रगति और विकास के लिए खतरा है। यह खेदजनक है कि ऐसे आंदोलन को वीर पुरुष शिवाजी का नाम दिया जाए। शिवाजी महाराज पूरे देश के नायक थे। भारत के विभिन्न हिस्सों से लोग मुंबई में बौद्धिक संपदा, धन और व्यापार एवं व्यावसायिक गतिविधियाँ लेकर आए हैं। मुंबई को ठप्प करने की कोशिश करने वाला आंदोलन इस महान शहर को बर्बाद कर देगा। हम सभी को इस बात पर गहन आत्मनिरीक्षण करने की आवश्यकता है कि शिवसेना जैसे आंदोलन क्यों पनपते हैं।’⁹⁰
केरल के मुख्यमंत्री ईएमएस नंबूदिरिपाद, तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम. करुणानिधि और मैसूर के मुख्यमंत्री वीरेंद्र पाटिल ने भी अपना-अपना पक्ष रखा। नंबूदिरिपाद ने कहा कि उन्होंने प्रधानमंत्री और गृह मंत्री से मुलाकात कर मुंबई में केरलवासियों की सुरक्षा का आश्वासन मांगा था; करुणानिधि ने कहा कि उन्होंने चव्हाण और नाइक को पत्र लिखकर शिवसेना के आतंक को रोकने का आग्रह किया था; और पाटिल ने मैसूर विधानसभा में घोषणा की कि उन्होंने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर शिवसेना पर प्रतिबंध लगाने की मांग की थी।
महाराष्ट्र विधानसभा का सत्र दंगों के एक महीने बाद शुरू हुआ और राज्य में विपक्षी दलों ने भी नाइक सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पेश किया। लेकिन बहस शुरू होने से पहले ही, गृह राज्य मंत्री कल्याणराव पाटिल ने सदन में दंगों पर एक बयान दिया, जो सरकार की विफलता की स्वीकारोक्ति जैसा प्रतीत हुआ।
‘हिंसा की घटनाएं बढ़ने के साथ-साथ पुलिस फायरिंग की घटनाएं भी बढ़ गईं। यह सच है कि कुछ जगहों पर पुलिस बंदोबस्त ठप्प पड़ गया था। लेकिन इसके लिए जिम्मेदार दंगाइयों की सड़कों पर अवरोध लगाने और हमले के बाद भाग जाने की नीति थी। कुछ जगहों पर पुलिस द्वारा हटाए गए अवरोधों की जगह दंगाइयों ने फिर से अवरोध लगा दिए। छतों से और भीड़ के बीच से पत्थर फेंके जाने के कारण लाठीचार्ज और आंसू गैस के गोले काफी अप्रभावी साबित हुए। और चूंकि दंगाइयों में बच्चों की संख्या काफी अधिक थी, इसलिए पुलिस के लिए हर जगह गोली चलाना मुश्किल था।’⁹ ¹
उन्होंने हिंसा के धीरे-धीरे समाप्त होने का श्रेय मुख्यमंत्री द्वारा जारी अपील को दिया और साथ ही ठाकरे की अपील के प्रसार के लिए एक कमजोर बहाना पेश किया।
उन्होंने कहा, ‘पुलिस द्वारा शांति बनाए रखने के लिए कड़े कदम उठाने और मुख्यमंत्री द्वारा रेडियो पर जनता से अपील करने के बाद स्थिति में धीरे- धीरे सुधार हुआ। ऐसे हालात में शांति के लिए किसी की भी अपील को जरूरी समझा जाना चाहिए था। इसीलिए सरकार ने येरवडा से ठाकरे द्वारा की गई अपील को जारी करने में जरा भी संकोच नहीं किया।’
अविश्वास प्रस्ताव 52 वोटों के मुकाबले 169 वोटों से हार गया, लेकिन विपक्ष ने इस गड़बड़ी के लिए सरकार को जिम्मेदार ठहराया।
लगभग उसी समय, गृह मंत्री चव्हाण मुंबई आए और एक सभा को संबोधित करते हुए कहा कि प्रत्येक भारतीय को शिवसेना की हानिकारक विचारधारा पर शर्म आनी चाहिए और उन्होंने यह भी कहा कि भारत के किसी भी हिस्से में रोजगार पाने का सभी को अधिकार है। उन्होंने शिवसेना के कृत्यों पर अपनी संवेदना व्यक्त करते हुए कहा कि वे ‘दुखी और निराश’ हैं।⁹ ²
इसी यात्रा के दौरान, चव्हाण ने रेलवे मुख्यालय में बाल ठाकरे से मुलाकात की। उस बैठक में मौजूद परेल से शिवसेना के तत्कालीन पार्षद विजय गांवकर ने

मुझे बताया: ‘बालासाहेब बहुत क्रोधित थे और उन्होंने 59 शिवसैनिकों की मौत के लिए चव्हाण की कड़ी आलोचना की। मैंने उन्हें कभी किसी पर इस तरह हमला करते नहीं देखा था। चव्हाण चुप रहे और बैठक समाप्त करते हुए कहा: “अब जो हो चुका है, वो हो चुका है। हम क्या कर सकते हैं?”’⁹³

मुसलमानों
फरवरी 1970 में अपने पहले कोंकण दौरे पर निकलने से पहले, ठाकरे को एक और धार्मिक मुद्दे में 'जीत का संकेत' नज़र आया। इसमें महाराष्ट्र के तटीय कोंकण क्षेत्र में शिवसेना को स्थापित करने और हिंदुओं के घोषित संरक्षक के रूप में इसे और आगे ले जाने की संभावना थी।
महाड स्थित महिकावती मंदिर पर हिंदू और मुसलमान दोनों अपना दावा करते रहे हैं। ठाकरे के दौरे से पहले शिवसेना की पनवेल शाखा के प्रमुख माधव भिडे ने पार्टी की महाड शाखा का उद्घाटन करते हुए इस मुद्दे को उठाया: 'अब तक किसी भी पार्टी ने हिंदू धर्म पर ध्यान नहीं दिया है। महिकावती मंदिर को ध्वस्त कर दिया गया और उसमें रखी मूर्तियां हटा दी गईं, लेकिन किसी ने भी मंदिर के पुनर्निर्माण के बारे में नहीं सोचा। वास्तव में, मुसलमानों ने यह कहते हुए अभियान शुरू कर दिया है कि यह मंदिर नहीं, बल्कि मस्जिद है। हमें यहां एक मंदिर बनाना चाहिए और देवी की मूर्ति को फिर से स्थापित करना चाहिए। शिवसेना प्रमुख बालासाहेब ठाकरे इसी उद्देश्य से महाड आ रहे हैं। हमें उन्हें अपना पूरा समर्थन देना चाहिए।'
2 नवंबर 1969 को गिरगाँव चौपाटी में एक रैली को संबोधित करते हुए ठाकरे ने कहा: 'जिस प्रकार मैंने दुर्गादी देवी मंदिर हिंदुओं को वापस दिया, उसी प्रकार मैं महिकावती मंदिर भी उन्हें सौंपने जा रहा हूँ। मैं स्वयं वहाँ नारियल फोड़ूँगा, और यदि कोई मेरा रास्ता रोकने की कोशिश करेगा, तो मैं उसके सिर पर नारियल फोड़ दूँगा।'
पनवेल-महाड क्षेत्र में तनाव का माहौल छा गया था और ठाकरे की यात्रा के दौरान क्या घटित होता है, यह देखने के लिए सभी लोग सांस रोककर इंतजार कर रहे थे।
17 जनवरी 1970 को, सेना नेता वाहनों के काफिले के साथ महाड में दाखिल हुए। ठाकरे कहते हैं, ‘मैं अपनी पत्नी मनोहर जोशी और अन्य सहयोगियों के साथ उस पहाड़ी पर गया, जिस पर मंदिर स्थित है, मंदिर में नारियल फोड़ा और भगवा ध्वज फहराया।’⁹⁴
दोपहर की चिलचिलाती धूप में, सभी वाहन, एकत्रित शिवसैनिकों के साथ, रैली के लिए पास के आज़ाद मैदान की ओर जुलूस के रूप में रवाना हुए। ठाकरे का भाषण सुनने के लिए लगभग 7,000 लोग एकत्रित हुए थे।
जब ठाकरे 15 फरवरी को अपने कोंकण दौरे के लिए रवाना हुए, तो महाड में शिवसैनिक गांव के बाहरी इलाके में उनके वाहन का स्वागत करने के लिए खड़े थे और वाहन के पहुंचने पर, उन्होंने अपने नेता से महाड में चाय और बिस्कुट के लिए थोड़ी देर इंतजार करने का अनुरोध किया।
लेकिन जैसे ही ठाकरे की कार गांव के प्रवेश द्वार पर पहुंची, पुलिसकर्मियों के एक दल ने उसका रास्ता रोक दिया और तालुका कार्यकारी मजिस्ट्रेट का लिखित आदेश उन्हें सौंप दिया। आदेश में लिखा था: 'चूंकि शिवसेना नेताओं के आने से महाड में हिंदू और मुसलमानों के बीच कलह पैदा हो सकती है, इसलिए बाल ठाकरे, मनोहर जोशी, दत्ता साल्वी, प्रमोद नवलकर, माधव

भिडे और अन्य लोगों के प्रवेश पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत प्रतिबंध लगाया जाता है।'
ठाकरे ने जवाब दिया: 'कोंकण से लौटते समय 22 फरवरी को महाड में एक जनसभा आयोजित की जाएगी। और यदि आवश्यक हुआ तो शिवसेना प्रतिबंध आदेश का उल्लंघन करेगी।'
प्रतिबंध को चुनौती देने के विचार मात्र से ही शिवसेना कार्यकर्ताओं में जोश भर गया। 22 फरवरी को मुंबई और ठाणे से ट्रक भरकर लोग महाड के लिए रवाना हुए। दोपहर करीब 2 बजे, मुंब्रा से सैनिकों को ले जा रहे दो ट्रक अन्य वाहनों में शामिल हो गए। कुल मिलाकर तीन ट्रक थे, जिनमें कुछ निजी वाहन भी शामिल थे। मनोहर जोशी, सुधीर जोशी और दत्ताजी साल्वी जैसे शिवसेना नेता भी पार्टी कार्यकर्ताओं के साथ थे।
मुंब्रा से आधा मील दूर कौशे गाँव है। जब काफिला 'शिव सेना जिंदाबाद' के नारे लगाते हुए वहाँ से गुजर रहा था, तो सेना के वाहनों की कतार में सबसे पीछे खड़ी एक एम्बेसडर कार पर पत्थर फेंके गए। आगे जा चुके सैनिक अपने साथियों की रक्षा के लिए वापस दौड़े, लेकिन आसपास के होटलों से उन पर सोडा पानी की बोतलें फेंकी गईं।
हिंसा भड़क उठी और कई होटलों और घरों में आग लगा दी गई। सड़क पर यातायात एक घंटे तक बाधित रहा और अंततः एसआरपी को दंगा रोकने के लिए हवा में गोलियां चलानी पड़ीं।
उस दिन शिवसेना ने महाड में बंद का आह्वान किया था, और केवल सैनिकों की गतिविधियाँ ही पूरे जोश में दिखाई दे रही थीं। रैली विशाल थी, लेकिन शिवसेना प्रमुख की अनुपस्थिति स्पष्ट रूप से नजर आ रही थी।
फिर भी, शिवसेना नेता वामनराव महादिक ने पार्टी की चेतावनी जारी करते हुए कहा: 'जो भी हमारी मदद करेगा, वह हमारा ही होगा, यह शिवसेना का रुख है। लेकिन अगर अल्पसंख्यक हमारा साथ देने के बजाय हमें धोखा देते हैं, तो हमें हिंदू समुदाय की गरिमा साबित करने के लिए सख्त कदम उठाने पड़ेंगे।'
उसी वर्ष मई में भिवंडी शहर आग की लपटों में घिर गया, जो सांप्रदायिक संघर्ष में शिवसेना की भूमिका का एक प्रदर्शन था।

9

BHIWANDI BURNS

ठाणे से लगभग 12 मील दूर स्थित हिवांडी अपने सांप्रदायिक तनाव से भरे वातावरण के साथ-साथ हथकरघा और पावरलूम उद्योग के लिए भी जाना जाता है। 1896 में जब हिंदू-मुस्लिम दंगे पहली बार भड़के थे, तब से इस कस्बे की आर्थिक प्रगति के साथ-साथ सांप्रदायिक तनाव भी बढ़ता ही जा रहा है। उस समय सड़कों और पुलों की कमी के कारण मुंबई और ठाणे से पुलिस टीमों का समय पर पहुंचना भी मुश्किल हो जाता था।
मई 1970 में शिवाजी जयंती के अवसर पर, धीमी आंच पर पक रही आग चरम पर पहुंच गई।
शिव जयंती की शोभायात्रा 7 मई को शाम लगभग 7 बजे भिवंडी पुलिस स्टेशन से शुरू हुई, जिसमें गुलाल छिड़का गया, नारे लगाए गए और इससे जुड़ी हर तरह की चकाचौंध देखने को मिली। जब लगभग 10,000 लोगों की भीड़ मछली बाजार के पास भुसारी अली से गुजर रही थी, तो पास की एक गली से उन पर पत्थर और बल्ब फेंके गए।
खबर तेजी से फैल गई और भिवंडी भर में पत्थर और बल्ब बेधड़क फेंके जाने लगे। दुकानें और घर जला दिए गए और लूटे गए, और चाकूबाजी की कई घटनाएं सामने आईं। उसी समय बिजली भी काट दी गई थी, जिससे चारों ओर अंधेरा छा गया था। पुलिस ने हिंसा को नियंत्रित करने के लिए आंसू गैस और गोलियां चलाईं, लेकिन हिंसा कम होने के बजाय और भी भयंकर हो गई।
मुंबई और ठाणे से पुलिस की टुकड़ियाँ भिवंडी भेजी गईं और रात 10 बजे अनिश्चितकालीन कर्फ्यू लगा दिया गया। जब अतिरिक्त आईजीपी ई.एस. मोदक रात 11 बजे स्थिति का जायजा लेने पहुंचे, तो आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार मृतकों की संख्या दो थी; अनौपचारिक आंकड़ा पंद्रह था। 300 से अधिक लोग घायल हुए थे; 30 लोगों को चाकू के घाव, जलने या पुलिस फायरिंग में घायल होने के कारण ठाणे सिविल अस्पताल में भर्ती कराया गया था; और 105 लोगों को गिरफ्तार किया गया था।
कर्फ्यू के बावजूद अगले दिन भी दंगे जारी रहे और भीड़ ने देसी बमों का भी इस्तेमाल किया। देखते ही गोली मारने का कोई आदेश जारी नहीं किया गया था, जिससे पुलिस की प्रभावी कार्रवाई में बाधा आई। कम से कम 100 घरों को जला दिया गया, 11 साइजिंग यूनिट और 5,000 पावरलूम क्षतिग्रस्त हो गए, और सोमनगर, माधवनगर, वेटलपाड़ा और दरगा रोड की झुग्गियां नष्ट हो गईं। कम से कम 5,000 लोग बेघर हो गए।
उसी दिन हिंसा जलगांव और महाड तक फैल गई। जलगांव में एक विवाह जुलूस पर हमले में 20 लोग मारे गए। 11 मई 1970 तक, जब संघर्ष समाप्त हुआ और भिवंडी, जलगांव और महाड में हालात धीरे-धीरे सामान्य होने लगे, तब तक भिवंडी में मृतकों की संख्या 43 और जलगांव में 39 हो चुकी थी।
उस समय विधानसभा का सत्र चल रहा था और विपक्ष ने सरकार की आलोचना करते हुए शिवसेना और जनसंघ पर आरोप लगाए। कांग्रेस सरकार ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति डी.पी. मैडन की अध्यक्षता में एक जांच आयोग का गठन किया।

आयोग की कार्यवाही के दौरान, अच्युत चाफेकर शिवसेना के वकील के रूप में पेश हुए। उन्होंने मुझसे कहा:

शिव जयंती से चार दिन पहले, भिवंडी के मुसलमानों ने धमकी दी थी कि वे शिव जयंती जुलूस नहीं निकलने देंगे। मराठी लेखक और हिंदुत्व के पैरोकार पु भा भावे ने भी शिव जयंती से एक दिन पहले भिवंडी में भाषण दिया, जिसमें उन्होंने कथित तौर पर कहा कि शिवाजी ने भिवंडी में एक मस्जिद को ध्वस्त कर दिया था और लोगों से राष्ट्र के शत्रुओं के विरुद्ध उनके उदाहरण का अनुकरण करने का आह्वान किया। ठाकरे पर भी इसी तरह का आरोप लगा कि उन्होंने अपने भाषण में कहा था कि वह जो नारियल फोड़ रहे हैं, वह मुसलमानों के सिर पर गिरेगा।

इन सब बातों से कस्बे में पहले ही तनाव पैदा हो चुका था, और सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए एक शांति समिति का गठन किया गया था।

लेकिन शिव जयंती जुलूस पर हमला पूर्व नियोजित था, क्योंकि इसे चारों ओर से एक साथ अंजाम दिया गया था। अगले दिन सुबह 4 बजे तक भिवंडी में हिंदुओं पर हमला किया गया और उन्हें हमले का खामियाजा भुगतना पड़ा। लेकिन सुबह 4 बजे से जवाबी कार्रवाई शुरू हो गई। अगले दो दिनों तक भिवंडी में अफरा-तफरी मची रही और ए.बी. वाजपेयी ने संसद में कहा: “हिंदू अब चुपचाप अपने ऊपर होने वाले हमलों को बर्दाश्त नहीं करेंगे।”⁹⁵

न्यायमूर्ति मैडन ने भावे और ठाकरे दोनों को तलब किया, जिन पर भड़काऊ भाषण देने का आरोप था।
अपनी रिपोर्ट में, न्यायमूर्ति मैडन ने उल्लेख किया कि कैसे भावे ने लगभग 800 लोगों की सभा के सामने, औरंगजेब द्वारा हिंदू मंदिरों को ध्वस्त करने के बाद शिवाजी द्वारा भिवंडी में मस्जिदों और दरगाहों को ध्वस्त करने के कृत्य का विस्तार से वर्णन किया था।

पी.बी. भावे का उक्त भाषण अत्यंत भड़काऊ और सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काने वाला था। इससे श्रोताओं में मौजूद मुसलमान, जिनमें वे मुस्लिम नेता भी शामिल थे जो सांप्रदायिक सद्भाव के लिए प्रयासरत थे और यह सुनिश्चित करने की कोशिश कर रहे थे कि शिव जयंती की शोभायात्रा शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हो, बेहद नाराज हुए।

भावे पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देने का आरोप लगाया गया था। न्यायमूर्ति मैडन ने यह भी उल्लेख किया कि शिव जयंती जुलूस में शामिल लोगों ने भड़काऊ नारे लगाए थे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि बड़ी संख्या में

प्रतिभागी शिवसेना, जनसंघ और राष्ट्रीय उत्सव मंडल के कार्यकर्ता, अनुयायी या समर्थक थे। ठाकरे का जिक्र करते हुए उन्होंने टिप्पणी की:
13 मई 1969 को ठाणे में दिए गए अपने एक सार्वजनिक भाषण में शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे ने भिवंडी पर विशेष हमला किया, जिसमें उन्होंने भिवंडी को दूसरा पाकिस्तान बताया और आरोप लगाया कि भिवंडी में मुसलमानों द्वारा ऐसे शर्मनाक कृत्य किए जा रहे थे कि उन्हें महिलाओं की उपस्थिति में उन घटनाओं का जिक्र करने में शर्म आती थी।

भिवंडी की घटना पहली ऐसी घटना थी जिसमें शिवसेना ने हिंदुत्व के नाम पर खुलेआम हिंसा का सहारा लिया। इसके बाद भी नाटक और विनाश से भरी ऐसी कई घटनाएं हुईं।

10

हत्या और जनादेश

शिवसेना ने अब तक मध्य मुंबई के लालबाग-परेल क्षेत्र में महत्वपूर्ण पैठ बना ली थी, जो शहर की श्रमिक वर्ग की आबादी का गढ़ है, और जैसे-जैसे कम्युनिस्ट गढ़ में दरारें बढ़ती गईं, वामपंथियों को यह आभास होने लगा कि दशकों से उन्होंने जिस इमारत की रक्षा की थी, वह ढहने के खतरे में है। शिवसेना के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए कम्युनिस्टों को डर था कि कहीं वे इतिहास के कूड़ेदान में न गुम न हो जाएं। इसलिए उन्होंने अपने सांस्कृतिक मोर्चे, लोक सेवा दल को मजबूत किया। शिवसेना ने लोक सेवा दल का जवाब भगवा गार्ड (भगवा रक्षक दल) के रूप में दिया, जिसे शिवसेना चीन के उग्रवादी रेड गार्ड्स से जोड़ती थी।
बाल ठाकरे ने मुंबई में बढ़ते गुंडागर्दी और असामाजिक तत्वों से लड़ने की आवश्यकता का हवाला देते हुए गार्ड के गठन का समर्थन किया, जो न केवल एक सांस्कृतिक शक्ति बल्कि बढ़ती असुरक्षा के खिलाफ आम आदमी की ढाल भी बनने वाला था। फरवरी 1970 की एक शाम उन्होंने एक सभा को संबोधित करते हुए कहा, “पुलिस बल खत्म हो चुका है। केवल हफ्ता देने वालों को ही न्याय मिलता है। डेलीसल रोड इलाके में गुंडे तलवार लेकर घूमते हैं, लोगों को आतंकित करते हैं और पुलिस उन्हें बढ़ावा देती है। लेकिन अगर किसी शिवसैनिक के पास चाकू मिलता है, तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। अब पुलिस पर भरोसा करना व्यर्थ है। मैंने इस गुंडागर्दी से लड़ने के लिए 500 युवाओं का एक विशेष दस्ता बनाने का फैसला किया है। 200 युवा तैयार हैं और 300 और जुटाए जाएंगे। यह भगवा गार्ड सभी मटका और अवैध शराब के अड्डों को नष्ट कर देगा।”⁹⁶
ठाकरे के बयान के बाद, लिंक पत्रिका ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें कम्युनिस्ट नेता बी.एस. धूमे के हवाले से कहा गया था कि वे भी भगवा गार्ड का मुकाबला करने के लिए 500 युवाओं का एक दस्ता बनाएंगे। धूमे की कथित घोषणा का जिक्र करते हुए - जिसके बारे में धूमे ने मुझसे कहा था कि उन्होंने कभी नहीं की थी - ठाकरे ने कहा: 'मैं धूमे को चुनौती देता हूं। 500 ही क्यों, उन्हें 1,000 युवाओं का दस्ता बनाना चाहिए। उनके हजार के मुकाबले मेरे दस शिवसैनिक। चलो, मुकाबला करते हैं, वह जहां चाहे। हम देखेंगे कि कौन डटकर खड़ा रहता है और कौन हार जाता है।'⁹⁷
भगवा गार्ड जल्द ही सक्रिय हो गया और इसके हट्टे-कट्टे सदस्य भगवा झंडे लगी साइकिलों पर मुंबई की सड़कों पर गश्त करने लगे। जब भी ठाकरे किसी रैली के लिए निकलते, ये युवा उनके वाहन के आगे और पीछे तैनात हो जाते और सुरक्षा घेरे की तरह उन्हें रैली स्थल तक ले जाते।
इसके जवाब में, परेल और लालबाग में मौजूदा विधायक कृष्णा देसाई के नेतृत्व में कम्युनिस्टों ने अपने रेड गार्ड की गतिविधियों को तेज कर दिया। और संघर्ष ने एक गंभीर मोड़ ले लिया।
5 जून 1970 की रात को कृष्णा देसाई की चाकू मारकर हत्या कर दी गई।
वह और उनके पार्टी कार्यकर्ता पटकर, फोन करने के लिए लालबाग के तावरीपाड़ा स्थित उनके घर के पास ही स्थित चावल मिलों की ओर निकले थे। उस समय इलाके

में अंधेरा छाया हुआ था, बिजली गुल थी और बारिश हो रही थी। जब दोनों चावल मिलों की ओर जाते हुए एक संकरी घाटी में दाखिल हुए, तो कुछ अज्ञात हथियारबंद लोगों ने उन्हें घेर लिया। पटकर ने देसाई को बचाने की कोशिश की, लेकिन उन पर हमला हो गया। इसके बाद, देसाई की पसलियों में दो तलवारें घोंप दी गईं। वे गिर पड़े।
6 जून की सुबह परेल और लालबाग में मातम छाया रहा और यह खबर फैल गई कि सीपीआई विधायक की हत्या शिवसेना ने कर दी है। कम्युनिस्ट पार्टी के ब्लैकबोर्ड हर गली के कोने पर लगाए गए थे, जिनमें ठाकरे की पार्टी को हत्या का दोषी ठहराया गया था।
जब देसाई की अंतिम यात्रा दादर की चैत्यभूमि पर एक सभा में तब्दील हो गई, तो वामपंथी नेताओं ने 'बढ़ती राजनीतिक गुंडागर्दी' की निंदा की और कांग्रेस सरकार द्वारा इसका समर्थन करने की भर्त्सना की। शिवसेना को फासीवाद और सांप्रदायिकता के भयावह गठजोड़ की उपज के रूप में चित्रित किया गया।
उसी दिन ठाकरे ने एक बयान जारी कर देसाई की मौत को 'दुर्भाग्यपूर्ण' बताया। 7 जून को, हत्या की निंदा करने के लिए नारे पार्क, परेल में एक सर्वदलीय रैली का आयोजन किया गया। इस रैली में, किसान एवं मजदूर पार्टी (पीडब्ल्यूपी) के एन.डी. पाटिल ने मुंबई में प्रतिक्रियावादी ताकतों के उदय पर चिंता व्यक्त की और समाज के लिए ऐसे 'खतरों' को मिटाने की आवश्यकता पर जोर दिया।⁹⁸ देसाई की मृत्यु के बाद ठाकरे द्वारा जारी बयान का जिक्र करते हुए, सीपीआई के प्रभाकर वैद्य ने कहा: 'ठाकरे ने दुख व्यक्त किया है। लेकिन लोग अब मूर्ख नहीं बनेंगे। ठाकरे ढोंगी हैं, और लोग उनके पुराने बयानों को नहीं भूले हैं। जब पुणे में एक रैली में कॉमरेड डांगे पर पत्थर फेंके गए थे, तब ठाकरे ने कहा था, "आपने चार पत्थर फेंके, मुझे बुरा लगा। आपको उन पर और पत्थर फेंकने चाहिए। उनकी रैलियों को होने मत दो, लाल झंडा जला दो।" ऐसे व्यक्ति से और क्या उम्मीद की जा सकती है?'
हत्या के दो सप्ताह के भीतर संयुक्त समाजवादी पार्टी की राज्य समिति की एक बैठक आयोजित की गई और शिवसेना की 'आतंकवादी रणनीति' के खिलाफ एक प्रस्ताव पारित किया गया।
राजनीतिक हलकों में हो रहे हमलों की उम्मीद तो थी ही। लेकिन ठाकरे को सबसे ज्यादा गुस्सा पीएसपी नेता दंडवते की आलोचना पर आया। शिवसेना और पीएसपी नगर निगम में सहयोगी थे, और ठाकरे इस बात से नाराज थे कि दंडवते ने अन्य पार्टियों के साथ मिलकर शिवसेना की निंदा की।
देसाई के अंतिम संस्कार में शामिल होने और शिवसेना विरोधी टिप्पणी करने के लिए दंडवते की कड़ी आलोचना करते हुए ठाकरे ने मार्मिक में लिखा: “सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि दंडवते जैसा कौआ भी, जिसे अक्सर कम्युनिस्टों के जूते और चप्पलें प्रसाद के रूप में मिलती रही हैं, श्मशान घाट आकर मृतकों को अर्पित की गई आहुति पर दावत खाने की जरूरत महसूस कर रहा है। क्या वह भूल गया है कि जब दांगे की एक रैली के बाद उसका चप्पलों से स्वागत किया गया था, तब शिवसेना ने ही उसे बचाया था? पीएसपी के साथ हमारा गठबंधन अब लगभग टूट चुका है। हम उनसे सीधा मुकाबला करेंगे।”
इसी पृष्ठभूमि में, लालबाग स्थित शिवसेना कार्यकर्ता सदाकांत धवन की हत्या कर दी गई, और ठाकरे ने इस मौत का दोष पीएसपी पर मर्मिक में यह कहते हुए लगाया कि धवन का हत्यारा पीएसपी कार्यकर्ता था।

बाद में, देसाई की हत्या के आरोप में 19 युवकों को गिरफ्तार किया गया, जिनके बारे में माना जाता है कि वे शिवसेना के स्वयंसेवक थे। इनमें से तीन को बरी कर दिया गया और बाकी को दोषी ठहराया गया। लेकिन गिरफ्तारी के बाद भी, पीडब्लूपी ने दबाव बनाए रखा: 'इस हत्या के पीछे सिर्फ बाल ठाकरे का ही दिमाग नहीं है; इस तरह के संगठित राजनीतिक आतंक के पीछे अन्य 'दिमाग' और 'धन स्रोत' भी हैं।'
कांग्रेस भी पीछे नहीं रही। जुलाई 1970 की शुरुआत में, महाराष्ट्र कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने राजनीतिक हिंसा की निंदा करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया, लेकिन उसमें केवल देसाई की हत्या का उल्लेख किया गया, सैनिक सदाकांत धवन की हत्या का नहीं। जब मीडियाकर्मियों ने पूछा कि धवन का नाम क्यों छोड़ दिया गया, तो कांग्रेस प्रवक्ता वी.एन. गाडगिल ने कहा, 'कांग्रेस सभी राजनीतिक हत्याओं की निंदा करती है।'⁹⁹
जब उपगृह मंत्री कल्याणराव पाटिल ने विधानसभा में स्वीकार किया कि देसाई की हत्या के आरोप में गिरफ्तार किए गए 19 युवकों में से अधिकांश सैनिक थे, तो विपक्षी नेताओं ने सवाल उठाया कि सरकार सूत्रधार (मुख्य साजिशकर्ता) को पकड़ने के लिए कुछ क्यों नहीं कर रही है।
इस मामले में पुलिस की चार्जशीट में लिखा था:

देसाई की हत्या शिवसेना के गुंडा विरोधी मोर्चे, भगवा संरक्षक गार्ड और कम्युनिस्ट पार्टी के लोक सेवा दल के बीच की दुश्मनी का नतीजा थी। गिरफ्तार किए गए सभी आरोपी और फरार आरोपी या तो शिवसैनिक हैं या शिवसेना के अनुयायी। शिवसेना के सदस्यों में से एक, आरोपी नंबर 1 दिलीप हाते, इस हत्या का मुख्य सूत्रधार है। उसने भगवा संरक्षक दल नामक गुंडा विरोधी मोर्चे के गठन में अहम भूमिका निभाई थी। देसाई लोक सेवा दल के नेता थे, इसलिए लोक सेवा दल को खत्म करने के लिए उनकी हत्या की साजिश रची गई थी।

बाल ठाकरे ने देसाई की हत्या में अपने दल के सदस्यों के शामिल होने से इनकार किया, लेकिन सीपीआई नेता अहिल्या रंगनेकर को इस बात में कोई संदेह नहीं था कि बाल ठाकरे के लड़कों ने वामपंथियों को खत्म करने की कोशिश की। उन्होंने मुझसे कहा:

वे जानते थे कि श्रमिकों की आवाज़ दबाने का यही सबसे अच्छा तरीका है। एक बार जब हमने कामगार मैदान में एक जनसभा आयोजित की थी, तो उसे सेनापतियों ने बाधित कर दिया था। कृष्णा देसाई और मैं वहाँ मौजूद थे, और हम पर पत्थर फेंके गए, लेकिन हमारे कार्यकर्ताओं ने हमारी रक्षा की। हालाँकि, देसाई दूसरी बार खुद को नहीं बचा सके। न केवल उनकी, बल्कि हमारे एक और कार्यकर्ता, नायडू नाम के व्यक्ति की भी सेना द्वारा हत्या कर दी गई।¹⁰⁰

परेल विधानसभा उपचुनाव 18 अक्टूबर 1970 को होने की घोषणा की गई थी, और चूंकि हत्या का आरोप पुख्ता होता दिख रहा था, जनसंघ, स्वतंत्र पार्टी,

हिंदू महासभा और कांग्रेस (ओ) जैसी दक्षिणपंथी पार्टियों के सामने एक दुविधा खड़ी हो गई थी - शिवसेना के साथ रहना है या नहीं।
कम्युनिस्टों ने देसाई की विधवा को अपना उम्मीदवार बनाया था और समाजवादी दलों और कांग्रेस (आर) का समर्थन प्राप्त किया था।
वामपंथी दलों की एकजुटता को देखते हुए – 13 दलों ने अपने गढ़ की रक्षा के लिए गठबंधन कर लिया था – दक्षिणपंथी दलों ने यह सुनिश्चित करने का निश्चय किया कि व्यापक दक्षिणपंथी समझौते को विफल न होने दिया जाए। हालांकि हिचकिचाहट के बावजूद, उन्होंने शिवसेना के साथ समझौता कर लिया।
लेकिन मिल मजदूरों के बहुल निर्वाचन क्षेत्र में वामपंथियों का प्रभाव कहीं अधिक मजबूत था, और जनसंघ, हिंदू महासभा, स्वतंत्र पार्टी और कांग्रेस (ओ) का वहां कोई खास महत्व नहीं था।
इस प्रकार शिवसेना को अपने उस प्रभाव की सीमा का पता चला, जिसे हासिल करने के लिए वह अथक प्रयास कर रही थी। चुनाव परिणामों से यह स्पष्ट होने की उम्मीद थी कि ठाकरे के संगठन को अपने चार वर्षों के अस्तित्व में, विवादास्पद कार्यप्रणाली के खिलाफ लगाए गए आरोपों की एक श्रृंखला के बावजूद, मुंबई के आम मराठी मतदाता द्वारा कितना समर्थन मिला था।
शिवसेना के उम्मीदवार वामनराव महादिक थे, जो पहले से ही परेल से मौजूदा पार्षद, नागरिक सुधार समिति के अध्यक्ष और ठाकरे के भरोसेमंद सहयोगियों में से एक थे।
मूल रूप से बीएमसी में क्लर्क रहे महादिक ने आरएसएस में अपनी पहचान बनाई।
परेल में एक रैली में ठाकरे से मुलाकात के बाद वे शिवसेना में शामिल हो गए। ठाकरे भी उनका सम्मान करते थे, और उपचुनाव के लिए वे स्वाभाविक पसंद थे। शिवसेना ने 20 सितंबर को कामगार मैदान में एक विशाल रैली के साथ अपने अभियान की शुरुआत की, जहां ठाकरे ने पार्टी के विरोधियों पर तीखे हमले किए। उन्होंने कहा:

जिन्होंने आज तक मराठी मानुष का खून चूसा है, उन्हें हमें शांति का पाठ नहीं पढ़ाना चाहिए। अगर राष्ट्रविरोधी कम्युनिस्ट मुंबई और महाराष्ट्र में नक्सलवादी नाच शुरू करते हैं, तो हमारा जवाब मुंहतोड़ होगा... हम यह चुनाव सिद्धांतों के आधार पर लड़ रहे हैं, और हमें इस सिद्धांत के लिए हारने की परवाह नहीं है। लेकिन हम राष्ट्रविरोधियों को सबक सिखाएंगे। पिछले चार वर्षों से विधानसभा में शिवसेना पर तरह-तरह के आरोप लगाए गए हैं। इन आरोपों का जवाब सिर्फ शिवसेना विधायक ही दे सकते हैं। पुलिस शिवसेना के खिलाफ कार्रवाई करती है। शिवसेना के साथ अन्याय होता है और उसे गालियां दी जाती हैं। अगर इसे खत्म करना है, तो हमें शिवसेना का विधायक चाहिए। लेकिन हमें जीत का पूरा भरोसा है। अगर प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी भी यहां चुनाव प्रचार के लिए आती हैं, तो भी हम जीतेंगे।

शिवसेना के खिलाफ 13 दलों के गठबंधन ने भी टकराव के लिए कमर कस ली। 29 सितंबर को नारे पार्क में आयोजित एक विशाल रैली में एस.ए. डांगे (कम्युनिस्ट पार्टी), बाबूराव सामंत (संयुक्त समाजवादी पार्टी), सदानंद वर्दे (पीएसपी), टी.एस. करखानिस (पीडब्ल्यूपी) और दत्ता देशमुख (लाल निशान)

जैसे नेताओं ने 'फासीवाद के खिलाफ लोकतंत्र समर्थक ताकतों के एकीकरण' की सराहना की।
इंडिकेट कांग्रेस ने भी देसाई की विधवा के समर्थन में परेल में एक बैठक आयोजित की, और उसके नेता मोहन धारिया ने कहा कि अगर कोई अन्य पार्टी जीतती है तो ठीक है, लेकिन शिवसेना के उम्मीदवार की जीत अस्वीकार्य है। दंडवते और कम्युनिस्ट नेता ए.बी. बर्धन ने भी जोरदार तरीके से प्रचार किया।
ठाकरे के अनुसार, शिवसेना ने परेल में कुल 28 बैठकें आयोजित कीं और उन्होंने स्वयं उनमें से 15 को संबोधित किया।
मैरी एफ. कैटजेनस्टीन, जो उस समय मुंबई में शिवसेना पर अपनी थीसिस पर काम कर रही थीं, ने चुनाव अभियान को करीब से देखा।
हालांकि यह अनुमान लगाया जा रहा था कि शिवसेना और कम्युनिस्टों के बीच कड़ा मुकाबला होगा, क्योंकि चुनाव दोनों पार्टियों के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण था, लेकिन मतदान से दो दिन पहले पार्टी कार्यालयों में उनकी यात्रा से ऐसा प्रतीत हुआ कि परिणाम पहले से ही तय था। दोनों कार्यालयों के बीच अंतर की ओर इशारा करते हुए उन्होंने लिखा: ‘शिवसेना कार्यालय उल्लासपूर्ण, भीड़भाड़ वाला और शोरगुल से भरा था। सीपीआई कार्यालय आधा खाली था, कार्यकर्ता शांत थे।’ शिवसेना कार्यालयों में अधिकांश स्वयंसेवक ‘किशोरावस्था और बीस वर्ष की आयु के युवा लड़के’ थे, जबकि सीपीआई कार्यालय में लगभग सभी कार्यकर्ता ‘चालीस और पचास वर्ष की आयु’ के थे।¹⁰¹
उन्होंने एक सैनिक को पत्रकारों से यह कहते हुए सुना कि उनकी पार्टी को जीत का पूरा भरोसा है, और यह सब उन्होंने 'पहले से तैयार भाषण की तरह' फुर्तीले अंदाज में कहा। उन्होंने यह भी गौर किया कि कुछ कार्यकर्ताओं ने कम्युनिस्टों की निंदा 'किसी खेल प्रतियोगिता के जोश की तरह' की। कम्युनिस्टों के कार्यालय में, 'वहाँ जमा हुए लोग न तो कोई भविष्यवाणी करने में रुचि रखते थे और न ही दूसरी पार्टी की सामान्य चुनावी निंदा में; इसके बजाय, बॉम्बे ट्रेड यूनियन आंदोलन में पार्टी की ऐतिहासिक भूमिका पर एक तीखी बहस छिड़ गई।'
अंततः मुकाबला कांटे का रहा, लेकिन शिवसेना विजयी रही और उसे कम्युनिस्टों से 1,679 अधिक वोट मिले। महादिक को 31,592 वोट मिले, जबकि देसाई की विधवा को 29,913 वोट प्राप्त हुए।
अगले दिन, शिवसेना ने शिवाजी पार्क में एक विशाल विजय रैली निकाली। और 'जला दो, जला दो, लाल बावता जला दो' के नारे की जगह 'जल गया, जल गया, लाल बावता जल गया' का नारा गूंजने लगा। प्रसन्न ठाकरे ने सैनिकों से कहा: 'यह हमारा धर्मयुद्ध है। शिवसेना का उद्देश्य राष्ट्र के प्रति विश्वासघाती सभी को नष्ट करना है। हम कम्युनिस्टों के खिलाफ ठोकशाही की भाषा का प्रयोग करेंगे, क्योंकि वे लोकशाही की भाषा नहीं समझते। मैं जनसंघ, आरएसएस और स्वतंत्र पार्टी के समर्थन के लिए आभारी हूं। मुझे खुद को हिंदू कहने में कोई शर्म नहीं है। हमारी जीत हिंदुत्व की जीत है।'
कम्युनिस्टों का एक गढ़ गिर गया था, और वामनराव महादिक महाराष्ट्र विधानसभा में प्रवेश करने वाले पहले शिवसेना सदस्य बन गए थे।

11

थोकशाही के सिद्धांत
और पारेल में मिली सफलता

ठाकरे ने आक्रामक रूप से अपनी ठोकशाही की विचारधारा को आगे बढ़ाया और इसे 'रचनात्मक हिंसा' का नाम दिया, जिससे त्वरित न्याय मिलेगा और विकास में बाधा डालने वाली नौकरशाही की अड़चनें दूर होंगी। वास्तव में, सेवाओं और सुविधाओं के वितरण की अक्षम प्रणाली को शिवसेना द्वारा धीरे-धीरे प्रभावी माने जाने वाले अपने दमनकारी कृत्यों से बदलना, परेल के मतदाताओं द्वारा शिवसेना का समर्थन करने के कारणों में से एक था।
इसका एक उदाहरण उस क्षेत्र के तत्कालीन शिवसेना पार्षद विजय गांवकर द्वारा की गई कार्रवाई थी, जिन्होंने ठाकरे के अनुसार, 'सभी को लोकतंत्र के बारे में हमारे विचार का प्रदर्शन किया'।
1970 के दशक की शुरुआत में परेल में पानी की कमी हो गई थी, और जनता की मांगों के बावजूद, बीएमसी के हाइड्रोलिक इंजीनियर, विसे ने मुख्य पाइपलाइन के ऊपर स्थानीय निवासियों को क्रॉस-कनेक्शन प्रदान करने में अत्यधिक देरी की। स्थानीय लोगों में असंतोष बढ़ता गया, लेकिन विसे टालमटोल करता रहा।
तभी गांवकर उनके पास आए और अधीरता से उनसे समस्या का समाधान करने का आग्रह किया। 'ज्यादा शोर मत मचाओ', वाइज ने पलटकर जवाब दिया, 'यह काम मेरा नहीं, जनता का है। अगर आप इस मामले को तुरंत हल नहीं करते हैं, तो मेरे मुंह से नहीं, मेरे हाथों से जवाब मिलेगा।'
हाइड्रोलिक इंजीनियर ने कुछ और दिनों तक इस मामले पर विचार किया, और गाँवकर ने उसकी चेतावनी पर अमल किया: वह गया और उसने विसे की पिटाई कर दी। तुरंत ही क्रॉस-कनेक्शन लगा दिया गया।
लगभग उसी समय, जब आवश्यक वस्तुओं की कीमतें आसमान छू रही थीं, शिवसेना ने महंगाई के खिलाफ एक व्यापक आंदोलन चलाया। दक्षिण मुंबई के महात्मा फुले बाजार में एक मोर्चा निकाला गया और ठाकरे ने व्यापारियों को चेतावनी दी कि यदि वे कृत्रिम कमी पैदा करते हैं, तो शिवसेना उनसे निपटने के लिए अपने ही तरीके अपनाएगी।
शिवसेना की महिला शाखा, महिला अघाड़ी ने मुंबई भर में कई दुकानों में धावा बोल दिया, जिनके मालिकों ने डाल्डा घी की कमी का दावा किया था (केंद्र सरकार ने उस समय वनस्पति घी की दरें बढ़ा दी थीं) और गोदामों में छिपाए गए हजारों डाल्डा के डिब्बे बाहर निकाल लाए।
शिवसेना ने घी के डिब्बों को उन पर छपे दामों पर बेचा और हजारों गृहिणियां उन्हें खरीदने के लिए कतार में लग गईं। शिवसेना ने कहा कि उसने बिक्री से अर्जित सारी रकम उन दुकान मालिकों को सौंप दी जिन्होंने गुपचुप तरीके से घी का भंडार किया था।
जिन परिवारों को इस प्रकार अपनी मूलभूत आवश्यकताएं प्राप्त हुईं, उन्होंने उपचुनाव में पार्टी का समर्थन किया।

शिवसेना एक और मामले में भी अलग दिखी, और वह भी परेल और लालबाग के निम्न-मध्यम वर्ग और गरीब मतदाताओं को प्रभावित करने में प्रभावशाली साबित हुई। इसने दादर, गिरगाम और लालबाग-परेल के बीच लंबे समय से चली आ रही बाधाओं को ध्वस्त कर दिया।
ये सभी क्षेत्र महाराष्ट्रीयन चरित्र के थे, लेकिन 1960 के दशक में दादर-गिरगाँव और लालबाग-परेल के बीच मनोवैज्ञानिक विभाजन काफी गहरा था, और किसी भी पार्टी ने इसे पाटने का प्रयास नहीं किया था। जैसा कि विजय गाँवकर ने बताया:

परेल का कोई मराठी भाषी व्यक्ति दादर जाने से हिचकिचाता था, क्योंकि दादर को उच्च वर्ग का मराठी इलाका माना जाता था, जबकि परेल निम्न-मध्यम वर्ग और श्रमिक वर्ग का इलाका था। लेकिन बालासाहेब ने चमत्कार कर दिखाया। उन्होंने दादर और परेल के मराठी युवाओं के बीच की खाई को पाट दिया। लालबाग और परेल अपनी शारीरिक शक्ति के लिए जाने जाते थे, जबकि गिरगाँव और दादर अपनी बुद्धिमत्ता के लिए। ऐसा माना जाता था कि वे कभी नहीं मिलेंगे। लेकिन ठाकरे ने उन्हें मिला दिया।¹⁰²

1960 के दशक में, मराठा, कुनबी, ब्राह्मण, 96 कुली और 92 कुली जैसी उपजातियों के आधार पर महाराष्ट्रियों के बीच तीखा विभाजन था। विभिन्न दलों की राजनीति इन्हीं उपजातियों के इर्द-गिर्द घूमती थी।
उदाहरण के लिए, कांग्रेस मराठा राजनीति की एक प्रभावी समर्थक रही है और आज भी है। महाराष्ट्र की राजनीति में पारंपरिक रूप से मराठा उपजाति का वर्चस्व रहा है, और राज्य की कुल मराठी आबादी का लगभग 42 प्रतिशत मराठा हैं। इसलिए कांग्रेस ने मराठा राजनीति को एक विजयी दांव के रूप में देखा और एक उपजाति को दूसरी उपजाति के खिलाफ खड़ा कर दिया। उस समय के सर्वोच्च महाराष्ट्रीयन कांग्रेस नेता वाई.बी. चव्हाण एक मराठा थे, और यद्यपि मुख्यमंत्री वी.पी. नाइक बंजारा-लमन समुदाय से थे, फिर भी उनकी वफादारी चव्हाण के प्रति पूर्ण थी, और उन्होंने कांग्रेस की नीति को बरकरार रखा। जनसंघ और आरएसएस ब्राह्मणों से भरे हुए थे और उन्होंने न केवल ब्राह्मणवादी नेतृत्व को बल्कि ब्राह्मणवाद को भी बेशर्मी से फलने-फूलने दिया था।
दलित आबादी डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा स्थापित रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (आरपीआई) के विभिन्न गुटों में बंटी हुई थी। वहीं, कम्युनिस्टों ने निम्न-मध्यम वर्ग और गरीब वर्गों को मध्यम और उच्च-मध्यम वर्गों के खिलाफ भड़का दिया।
लालबाग और परेल का यह साधारण व्यक्ति, जो तथाकथित निम्न वर्गों और जातियों से संबंध रखता था, मूल रूप से कोंकण का निवासी था और एक मजदूर था। वह कम्युनिस्टों और समाजवादियों से निराश होता जा रहा था, क्योंकि उसे लगता था कि वे उसकी दुर्दशा का राजनीतिक लाभ उठा रहे हैं। लेकिन जातिगत भेदभाव के कारण वह कांग्रेस, जनसंघ, आरएसएस और आरपीआई जैसी पार्टियों में शामिल नहीं हो सका।
शिवसेना ने उन्हें एक अवसर प्रदान किया। महाराष्ट्रियों के आर्थिक उत्थान और रोजगार में स्थानीय निवासियों को प्राथमिकता देने की शिवसेना

As part of its cadre, the Sena had youths from all sub-castes, including Brahmins, Marathas, Chandraseniya Kayastha Prabhus, Bhandaris, Vaishyas, Kunbis, Malis and others.

[illegible]

12

चुनाव प्रचार में अपमानित

इंदिरा गांधी की नई कांग्रेस और पुराने नेताओं के बीच मतभेद के कारण 1969 में कांग्रेस में विभाजन हुआ, जिसके बाद श्रीमती गांधी की नई कांग्रेस द्वारा संचालित केंद्र सरकार अल्पमत में आ गई। अब विपक्ष में साठ सांसद थे, हालांकि श्रीमती गांधी क्षेत्रीय दलों और निर्दलीय उम्मीदवारों के समर्थन से कार्यकारी बहुमत जुटाने में सक्षम थीं।
लेकिन घटती संख्या और अन्य दलों पर निर्भरता के कारण इंदिरा गांधी असुरक्षित महसूस कर रही थीं और उन्हें एक आक्रामक विपक्ष का सामना करना पड़ रहा था। उन्होंने भारत में इच्छित समाजवादी परिवर्तन लाने के लिए संसद से इतर तरीकों का सहारा लिया था, लेकिन उनका रास्ता आसान नहीं था। सुप्रीम कोर्ट ने फरवरी 1970 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण को रद्द कर दिया था। अप्रैल में, भारतीय सिविल सेवा (आईसीएस) के विशेष विशेषाधिकारों को समाप्त करने वाले विधेयक को संसद में दो-तिहाई बहुमत प्राप्त नहीं हो सका था।
15 दिसंबर को, सर्वोच्च न्यायालय की एक विशेष पीठ ने रियासती विशेषाधिकारों को समाप्त करने के राष्ट्रपति के आदेश को संविधान के विरुद्ध करार दिया, और श्रीमती गांधी ने सोचा कि अब बहुत हो चुका है। संविधान में कुछ संशोधन पेश करने के लिए उन्हें दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता थी, जिसे वह 'समाजवादी प्रक्रियाओं को सामाजिक क्रांति के चरम तक ले जाने' के लिए आवश्यक मानती थीं।
इसलिए चुनाव में जाकर नया जनादेश प्राप्त करने का निर्णय लिया गया। प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति वी.वी. गिरि ने 27 दिसंबर 1970 को लोकसभा भंग कर दी और फरवरी और मार्च 1971 में दो चरणों में मध्यावधि चुनाव कराने का आदेश दिया।
एस.ए. डांगे, जॉर्ज फर्नांडीस, एस.के. पाटिल और अन्य जैसे दिग्गजों की भूमिका के कारण मुंबई के राजनीतिक परिदृश्य ने पूरे देश का ध्यान आकर्षित किया, और जैसे ही पार्टियों के बीच सीटों के बंटवारे को लेकर बातचीत शुरू हुई, शिवसेना और जनसंघ के नेताओं ने गठबंधन की नींव रखने का प्रयास किया। परेल उपचुनाव में शिवसेना की जीत के कुछ ही दिनों बाद, ठाकरे और जनसंघ के नेता बलराज मधोक ने शिवाजी पार्क में एक सभा को संयुक्त रूप से संबोधित किया था, जिसमें शिवसेना प्रमुख ने हिंदुत्ववादी दलों के गठबंधन का विचार रखा था।
मध्यावधि चुनाव घोषित होने के बाद, बातचीत सुचारू रूप से चलती दिख रही थी और दोनों पार्टियां गठबंधन बनाने के करीब आ गई थीं, लेकिन यह समझौता तब टूट गया जब जनसंघ ने उत्तर-पश्चिम मुंबई की सीट शिवसेना को देने से इनकार कर दिया।
गतिरोध जारी रहने पर ठाकरे ने कहा: 'हम राष्ट्रीय हित में संघ के साथ चुनावी समझौता करना चाहते हैं, लेकिन हम इस बात को स्वीकार नहीं करते कि जब

हम राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हैं, तो दूसरे लोग सीटों पर नजर रखते हुए राजनीतिक खेल खेलते हैं।'
इस अनिश्चितता के बीच, शिवसेना ने मध्य मुंबई से मनोहर जोशी, उत्तर-मध्य मुंबई से दत्ता प्रधान, पुणे शहर से नंदू घाटे और रत्नागिरी उत्तर से डॉ. अनिल बिरजे की उम्मीदवारी की घोषणा की और कहा कि वह जनरल के.एम. कारियाप्पा और लेफ्टिनेंट जनरल एस.पी.पी. थोरात जैसे सेवानिवृत्त सेना कर्मियों के नामांकन का समर्थन करेगी, जो मुंबई से चुनाव लड़ने पर विचार कर रहे थे, यदि वे निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में खड़े होते हैं।
जब कारियाप्पा ने उत्तर-पश्चिम मुंबई से निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ने का फैसला किया, तो ठाकरे ने शिवसेना के समर्थन की घोषणा कर दी। जनसंघ ने इसका कड़ा विरोध किया।
भारतीय सेना में जनरल अयूब खान जैसे दिग्गजों के साथ काम कर चुके कारियाप्पा, इंदिरा गांधी की कांग्रेस के खिलाफ एकजुट हुए सभी विपक्षी दलों के लिए एक स्वीकार्य उम्मीदवार थे। लेकिन जनसंघ के विचारकों के मन में शिवसेना की साजिश का संदेह पैदा हो गया और उन्होंने घोषणा की कि वे कारियाप्पा की उम्मीदवारी का स्वागत करेंगे, लेकिन अगर यह जनसंघ को मात देने के लिए शिवसेना की कोई चाल है तो नहीं।
शिवसेना प्रमुख ने स्पष्ट किया कि कोई साजिश नहीं थी, लेकिन जनसंघ का रुख दृढ़ था और भगवा पार्टियों के बीच बातचीत समाप्त हो गई।
शिवसेना को अपने विरोधियों की आलोचना का सामना करना पड़ा क्योंकि उसने अपने घोषित मराठी मुद्दे और लुंगी विरोधी नारों के बावजूद एक गैर-मराठी उम्मीदवार, वह भी एक दक्षिण भारतीय उम्मीदवार का समर्थन किया था। प्रतिद्वंद्वियों द्वारा लगाए गए चुनावी पोस्टरों में लिखा था, 'वे मराठी मानुष की बात करते हैं और कारियाप्पा को निर्वाचित कराने के लिए काम करते हैं।'
ठाकरे के स्वयं के बयान के अनुसार, चेंबूर के एक सैनिक ने उनसे पूछा कि उन्होंने 'बाहरी' होने के बावजूद करियप्पा का समर्थन क्यों किया। शिवसेना प्रमुख ने जवाब दिया: 'करियप्पा भारतीय सेना का हिस्सा रहे हैं। उन्होंने देश को बाहरी लोगों से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन पर भरोसा करने में कोई खतरा नहीं है। और वे स्वयं कहते हैं कि वे सबसे पहले एक भारतीय हैं।'
लेकिन इंदिरा गांधी का विरोध करने के लिए गठित ढीले-ढाले गठबंधन, जिसे मीडिया ने 'महागठबंधन' नाम दिया था, किसी साझा कार्यक्रम पर एकजुट नहीं हो सका। इसमें शामिल लोग आपस में सहज नहीं थे और केवल श्रीमती गांधी को सत्ता से हटाने के अपने संकल्प पर सहमत थे। उनका नारा 'इंदिरा हटाओ' श्रीमती गांधी के नारे 'गरीबी हटाओ' से बिल्कुल विपरीत था, और इंदिरा गांधी की लहर पूरे देश में फैल गई।
अधिकांश मतदाता एक स्थिर सरकार चाहते थे, और किसी अन्य विकल्प के अभाव में, उन्हें लगा कि पर्याप्त बहुमत वाली नई कांग्रेस चरमपंथियों, यहां तक कि अपनी ही पार्टी के लोगों के रहमो-करम पर नहीं रहेगी।
ऐसा माना जाता था कि श्रीमती गांधी पर अपनी ही पार्टी के साथ मतभेद और अन्य पार्टियों पर निर्भरता के वर्ष के दौरान दबाव था, और एक बार इन दबावों से मुक्त होने के बाद, वह अच्छा निर्णय दिखाएंगी।
फिर भी, उनकी सफलता अप्रत्याशित थी: नई कांग्रेस ने लोकसभा की 518 सीटों में से 350 सीटें जीतकर दो-तिहाई बहुमत हासिल किया।

मुंबई की सभी पांच सीटें इस गणना में शामिल थीं। शिवसेना के मनोहर जोशी, दत्ता प्रधान और करियप्पा इंदिरा गांधी की लहर में दब गए, हालांकि उन्हें क्रमशः 1,46,000, 75,000 और 90,110 वोट मिले।
शिवसेना की हार का एक और कारण था: कांग्रेस में हुए विभाजन से ठाकरे की पार्टी भी अछूती नहीं रही थी।
चुनाव से ठीक पहले, एक शिवसेना कार्यकर्ता और 1,000 शिवसेना सदस्यों ने तत्कालीन ऊर्जावान नई कांग्रेस में शामिल होकर भव्य स्वागत प्राप्त किया। ठाकरे ने इसका विरोध किया और कांग्रेस पर दलबदल को बढ़ावा देने का आरोप लगाया, लेकिन नगर निगम में भी, कुछ शिवसेना पार्षदों ने, जिन्हें लगा कि कांग्रेस के पक्ष में माहौल बदल रहा है, शिवसेना छोड़ दी।
कांग्रेस में विभाजन के बाद, शिवसेना ने कांग्रेस (ओ) का समर्थन कांग्रेस (आर) के खिलाफ किया था, क्योंकि उसे संदेह था कि बाद वाली पार्टी कम्युनिस्टों से भरी हुई है, लेकिन शिवसेना पार्षदों द्वारा दल-बदल करने से कांग्रेस (आर) मजबूत स्थिति में आ गई।
चुनावी हार के बावजूद, शिवसेना अप्रैल 1971 में अपने उम्मीदवार डॉ. हेमचंद्र गुप्ते को मुंबई का महापौर निर्वाचित कराने में सफल रही। कांग्रेस में फूट का फायदा उठाते हुए, शिवसेना ने इन चुनावों में पुरानी कांग्रेस का समर्थन हासिल किया और अपने पूर्व राजनीतिक सहयोगी पीएसपी को नीचा दिखाने से संतोष प्राप्त किया, जिसके उम्मीदवार ने शिवसेना के उम्मीदवार के खिलाफ चुनाव लड़ा था।

कांग्रेस-सेना का रिश्ता: कभी बनता, कभी बिगड़ता
शिवसेना और कांग्रेस के संबंधों ने हमेशा राजनीतिक पर्यवेक्षकों के बीच जिज्ञासा जगाई है, और कुछ ने तो ठाकरे की पार्टी को उसके शुरुआती वर्षों में कांग्रेस की दासी तक कह दिया है।
दोनों पक्षों के बीच काफी हद तक मौन और खुला सहयोग हुआ, हालांकि संबंध कभी भी एकसमान नहीं रहे।
आइए दोनों पक्षों के एक-दूसरे के प्रति दिलचस्प दृष्टिकोण को देखें। अपने पहले दो वर्षों, 1966 और 1967 में, शिवसेना ने मराठी मुद्दे के प्रति सहानुभूति रखने वाले कुछ कांग्रेस नेताओं की प्रशंसा करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।
30 अक्टूबर 1966 को अपनी पहली रैली में ठाकरे ने तत्कालीन गृह मंत्री बालासाहेब देसाई की प्रशंसा करते हुए कहा था कि वही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जिनसे मराठी जनता को उम्मीदें हो सकती हैं। कांग्रेस नेता वसंतदादा पाटिल ने अगस्त 1967 में मार्मिक के वार्षिक समारोह में भाग लिया और अगले वर्ष इसी अवसर पर एस.के. पाटिल मुख्य अतिथि थे।
लेकिन 1967 के लोकसभा चुनावों में अपने उम्मीदवारों के लिए शिवसेना का समर्थन प्राप्त करने के बाद, कांग्रेस ने अपनी अखिल भारतीय छवि को बरकरार रखने के लिए ठाकरे की पार्टी के खिलाफ आरोपों की झड़ी लगा दी, और शिवसेना ने कांग्रेस की आलोचना करके जवाब दिया।
फिर भी, महाराष्ट्र प्रदेश कांग्रेस कमेटी (एमपीसीसी) के कुछ सदस्यों ने लगातार शिवसेना के प्रति सहानुभूति दिखाई और शुरू से ही ठाकरे ने मुंबई प्रदेश कांग्रेस कमेटी (बीपीसीसी) के खिलाफ एमपीसीसी का समर्थन किया।

बीपीसीसी में रजनी पटेल जैसे गैर-महाराष्ट्रियों का वर्चस्व था और शिवसेना ने उस पर मराठी हितों के खिलाफ काम करने का आरोप लगाया था। ठाकरे ने एस. निजलिंगप्पा, के. कामराज और सी. सुब्रमण्यम जैसे कांग्रेस नेताओं के प्रति शत्रुतापूर्ण रुख अपनाया, क्योंकि वे उन्हें सीमा विवाद में मैसूर का समर्थक मानते थे और उन्हें अक्षम और भ्रष्ट बताते थे। उन्होंने कांग्रेस के अन्य सदस्यों पर भी नियमित रूप से हमला किया, जिन्हें वे 'बेईमान' और 'मुनाफाखोरों और कुछ व्यापारियों के इशारों पर चलने वाला' बताते थे।
शिवसेना ने तर्क दिया कि कांग्रेस के ऐसे ही नेताओं के कारण मराठी लोगों की दुर्दशा और भी बदतर हो गई है।
बेशक, उन स्थितियों में निंदा की जगह सहयोग ने ले ली जहां कम्युनिस्टों को कांग्रेस-सेना के टकराव से लाभान्वित होते देखा गया।
शिवसेना ने मुंबई में महाराष्ट्रियों की स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव डालने वाले किसी भी कदम का चतुराई से विरोध किया, और कांग्रेस ने शिवसेना की कुछ हिंसक, 'बाहरी विरोधी' कार्रवाइयों की निंदा करके एक राष्ट्रीय पार्टी के रूप में अपनी छवि को सावधानीपूर्वक बनाए रखा।
कांग्रेस ने कई बार शिवसेना का मुखर विरोध किया, लेकिन इसे रोकने या इसे खत्म करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया क्योंकि वह जानती थी कि शिवसेना उसे वामपंथी दलों के हमले से बचा सकती है।
जब भी यह माना जाता था कि कम्युनिस्टों को बढ़त मिलने की संभावना है, तो शिवसेना कांग्रेस का समर्थन करती थी और बदले में कांग्रेस शिवसेना का समर्थन करती थी, लेकिन कम से कम 1973 तक, दोनों ने यह सुनिश्चित करने का ध्यान रखा कि दोनों पार्टियों की विशिष्ट विचारधाराओं और पहचानों के बीच की रेखाएं धुंधली न हों।
1971 में कांग्रेस से चुनावी और दलबदल दोनों ही दृष्टि से मिली हार के बाद, शिवसेना को कुछ कांग्रेसियों को अपनी ओर आकर्षित करने और 1973 में बीएमसी चुनावों के समय सत्तारूढ़ पार्टी को कड़ी टक्कर देने का मौका मिला। लेकिन उससे पहले, उसे और भी कई हार का सामना करना पड़ा।
1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के दौरान इंदिरा गांधी के नेतृत्व ने 1972 की शुरुआत में हुए विधानसभा चुनावों में कांग्रेस को काफी फायदा पहुंचाया।
कांग्रेस को पूरे भारत में शानदार सफलता मिली। महाराष्ट्र में उसे कुल 270 सीटों में से 222 सीटें मिलीं। निर्दलीय उम्मीदवारों ने दूसरे सबसे अधिक सीटें जीतीं: तेईस। पीडब्लूपी ने सात सीटें और जनसंघ ने पांच सीटें जीतीं।
शिवसेना ने विधानसभा चुनाव में कुछ उम्मीदवार उतारे थे, लेकिन प्रमोद नवलकर को छोड़कर, जिन्होंने गिरगाम से 25,000 से अधिक वोटों के अंतर से जीत हासिल की, बाकी सभी उम्मीदवार कांग्रेस की लगातार दूसरी लहर में हार गए। हालांकि, उसी साल मनोहर जोशी को विधान परिषद सदस्य (एमएलसी) के रूप में मनोनीत किया गया था।

13

बाघ का सफेद कॉलर

चुनावी मैदान में मिली हार के बावजूद, शिवसेना की गतिविधियों पर कोई असर नहीं पड़ा।
दक्षिण भारतीय प्रतिष्ठानों पर हमले जारी रहे, साथ ही मराठी मानुष की शब्दावली भी, लेकिन शिवसेना ने 1972 में स्थानीय लोगों के लिए रोजगार सृजन की दिशा में एक वास्तविक छलांग लगाई, जब उसने अपने पूर्ववर्ती ब्यूरो के स्थान पर कई सरकारी और व्यावसायिक संगठनों में स्थानीय लोकाधिकार समिति (शाब्दिक रूप से, स्थानीय लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए समिति) की स्थापना की।
इस समिति का गठन शिवसेना की उस प्रमुख मांग को आगे बढ़ाने के लिए किया गया था कि मुंबई और महाराष्ट्र में सरकारी और अर्ध-सरकारी उपक्रमों, बैंकों, बीमा कंपनियों और कॉर्पोरेट कार्यालयों में सभी नौकरियों में से 80 प्रतिशत नौकरियां स्थानीय निवासियों के लिए आरक्षित की जाएं।
इस शाखा की सबसे खास बात यह थी कि इसे सफेदपोश कर्मचारियों और वेतनभोगी लोगों को संगठित करने और बेरोजगारों के रोजगार अधिकारों के लिए लड़ने के लिए नियोजित लोगों को एकजुट करने के लिए स्थापित किया गया था।
समिति ने अपने गठन के कुछ ही महीनों के भीतर भारतीय रिज़र्व बैंक, बैंक ऑफ अमेरिका, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, जीवन बीमा निगम और जनरल एश्योरेंस कंपनी जैसी संस्थाओं में अपनी इकाइयाँ स्थापित करके शिवसेना के मूल सिद्धांतों को मूर्त रूप दिया। इसे धीरे-धीरे शिवसेना की प्रमुख इकाई के रूप में मान्यता मिलने लगी।
स्थानीय लोगों के लिए 80 प्रतिशत आरक्षण की अपनी मांग को आगे बढ़ाने के लिए समिति ने छंटनी की मांग नहीं की, बल्कि यह घोषणा की कि भविष्य में होने वाली सभी भर्तियों में इसी सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए। अन्य मांगें थीं: 1) महाराष्ट्रीयन कर्मचारियों को परेशान नहीं किया जाना चाहिए और उनकी पदोन्नति और तबादले निष्पक्ष होने चाहिए; 2) भर्ती योजनाओं और रिक्त पदों को भरने की घोषणा करने वाले विज्ञापन मराठी समाचार पत्रों में प्रकाशित किए जाने चाहिए, यहां तक कि जिला स्तर के समाचार पत्रों में भी; और 3) साक्षात्कारकर्ताओं के पैनल में कम से कम एक महाराष्ट्रीयन होना चाहिए।
ठाकरे को यह आभास हो गया था कि उनके करीबी नेता सुधीर जोशी के नेतृत्व वाली यह समिति उनके हाथों में एक शक्तिशाली हथियार साबित होगी, क्योंकि देश की 65 प्रतिशत अर्थव्यवस्था मुंबई में केंद्रित थी और 85 प्रतिशत बैंक मुख्यालय भी यहीं थे। पार्टी का तर्क था कि अगर शिवसेना इन संस्थानों में अपनी पकड़ बना लेती है, तो न केवल महाराष्ट्रियों के रोजगार अधिकारों की गारंटी होगी, बल्कि मुंबई को महाराष्ट्र से अलग करने के किसी भी प्रयास को विफल किया जा सकेगा।

शिवसेना द्वारा लक्षित पहला सफेदपोश संस्थान एयर इंडिया था, जहां नौकरी की तलाश कर रहे मराठी युवाओं को मुख्य कार्मिक अधिकारी एस.के. नंदा के रूप में एक बड़ी बाधा का सामना करना पड़ा।
नवंबर 1972 में, शिवसेना ने एयर इंडिया के नरीमन प्वाइंट कार्यालय के सामने प्रदर्शन किया। जब नंदा ठाकरे के नेतृत्व वाले शिवसेना प्रतिनिधिमंडल से बात करने के लिए आगे आए, तो उनका लातों और मुट्ठियों से स्वागत किया गया। ठाकरे ने चेतावनी दी कि अगर किसी को भी गिरफ्तार किया गया, तो एयर इंडिया कार्यालय के बाहर जमा हुए सैनिक चुप नहीं बैठेंगे। संभवतः हिंसा के डर से पुलिस मूकदर्शक बनी रही। सैनिकों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई।
बाद में शिवसेना प्रमुख ने कहा कि उन्हें नंदा पर हमले का कोई पछतावा नहीं है। बल्कि उन्होंने कहा कि नंदा ने खुद ही ऐसा चाहा था।
लगभग उसी समय, शिवसेना ने बैंक ऑफ बड़ौदा में कार्यरत एक मराठी चपरासी, राणे का मामला उठाया। वाणिज्य स्नातक होने के बावजूद, राणे को उसके शाखा प्रबंधक द्वारा पदोन्नति से वंचित किया जा रहा था, जबकि अन्य समुदायों के कम योग्य लोगों को पदोन्नत किया जा रहा था।
ठाकरे के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल बैंक गया, लेकिन शाखा प्रबंधक ने राणे की पदोन्नति में देरी को उचित ठहराया। उसने ठाकरे से कहा, 'मैं वही करूंगा जो मैं चाहता हूं,' जिस पर ठाकरे ने मेज पर पड़े कागज़ प्रबंधक के चेहरे पर फेंक दिए। सैनिकों को संदेश मिल गया और प्रबंधक की जमकर पिटाई की गई।
ओबेरॉय शेरेटन, रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया, फर्टिलाइजर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया, इंडियन ऑयल और अन्य संस्थानों के खिलाफ इस तरह के कई हिंसक मोर्चों के बाद, महाराष्ट्रियों की भर्ती में वास्तव में तेजी आई।
कम्युनिस्ट नेता रोजा देशपांडे ने मुझे शिवसेना के कामकाज का एक उदाहरण दिया:

चेम्बूर स्थित राष्ट्रीय रसायन एवं उर्वरक (आरसीएफ) इकाई ने कुछ पदों के लिए आवेदन आमंत्रित किए थे। आवेदनों की जांच कर रहे अधिकारियों, जिनमें से अधिकांश उत्तर प्रदेश के थे, को यदि पता चलता कि आवेदक महाराष्ट्रीयन है, तो वे फॉर्म फाड़कर कूड़ेदान में फेंक देते थे। शिवसेना को इसकी भनक लग गई। सैनिकों ने कूड़ेदान में फेंके गए सभी फटे हुए फॉर्मों को इकट्ठा किया, उन्हें संबंधित अधिकारियों के पास ले गए और स्पष्टीकरण मांगा। जब अधिकारियों ने कोई जवाब नहीं दिया, तो उनकी पिटाई की गई। अगले दिन से ही फॉर्म फाड़ने का सिलसिला बंद हो गया और मराठी युवाओं को आरसीएफ में नौकरियां मिलने लगीं।¹⁰³

बीएमसी चुनावों में जीत
ठीक उसी समय जब शिवसेना के आंदोलन जोर पकड़ रहे थे, 1973 की शुरुआत में बीएमसी के चुनाव घोषित कर दिए गए।
शिवसेना ने एक बार फिर मुंबईवासियों को चौंकाते हुए रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया (आरपीआई) के साथ हाथ मिला लिया और घोषणा की कि यह गठबंधन नव-बौद्धों के भाग्य को बेहतर बनाने में काफी मददगार साबित होगा।

फरवरी 1973 में शुरू किए गए अपने मूल्य वृद्धि विरोधी आंदोलन की गति को बरकरार रखा।
फरवरी में हुए आंदोलन का केंद्र बिंदु दूध की बढ़ती कीमतें थीं, और सैनिकों ने दूध की वैन जब्त कर ली थीं, दूध के बूथों का नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया था और लोगों को कम दरों पर दूध वितरित किया था।
जुलाई में, मटन और मछली की ऊंची कीमतों ने आंदोलन को जन्म दिया। मटन विक्रेताओं की दुकानों के सामने धरना दिया गया और मांग की गई कि मटन 7 रुपये प्रति किलो बेचा जाए। 28 जुलाई को टाइम्स ऑफ इंडिया की रिपोर्ट के बाद कि शिवसेना के आंदोलन के कारण मटन की कीमतें वास्तव में गिर गई थीं, शिवसेना के वरिष्ठ नेता प्रमोद नवलकर ने धमकी दी कि अब शिवसेना आवश्यक वस्तुओं की दुकानों के सामने धरना देगी।
पार्टी ने बाज़ारों और नुक्कड़ों पर मूल्य सूचियाँ लगाईं और उपभोक्ताओं से अपील की कि यदि उन्हें किसी प्रकार की गड़बड़ी नज़र आए तो वे सेना शाखाओं को सूचित करें। सेना नेताओं के अनुसार, दुकानदारों ने उनकी माँगें मान लीं और पुलिस ने कहा कि सब ठीक है। कोई गड़बड़ी नहीं हुई, कोई परेशानी नहीं हुई।
आंदोलन का दायरा धीरे-धीरे सब्जी विक्रेताओं और अन्य वस्तुओं की दुकानों तक फैल गया, और 30 जुलाई को, शिवसेना कार्यकर्ताओं ने ग्रांट रोड और कुर्ला बाजारों पर हमला किया और मैदा (परिष्कृत गेहूं का आटा) और वनस्पति तेल ले जा रहे कुछ ट्रकों को लूट लिया।
दुकानदारों ने इन दमनकारी हथकंडों की निंदा की और विरोध में अपनी दुकानें बंद कर दीं, लेकिन जनता का समर्थन सकारात्मक रहा। मुंबई में मिले इस सफल प्रयोग को देखते हुए पार्टी ने अपना आंदोलन पुणे तक पहुंचाया, जहां दुकानों पर हमले हुए।
जब गणेश उत्सव आया, तो सेना ने पेड़ा का भाव 10 रुपये प्रति किलो 'तय' कर दिया, और सितंबर के दूसरे सप्ताह में, सैनिकों ने कुछ मछली विक्रेताओं पर 'छापा' मारा और जेल पहुंच गए।
सितंबर के मध्य तक, ठाणे और कोलाबा (अब रायगढ़) जिले भी आंदोलन की चपेट में आ गए थे, और मिली सफलता से उत्साहित होकर, मुंबई में मौजूद सैनिकों ने आलू और प्याज के थोक व्यापारियों पर भी धावा बोल दिया।
विरोधी दलों ने इन ‘गुंडागर्दी’ की चालों की कड़ी निंदा की और होटल मालिकों ने कहा कि वे सैनिकों द्वारा सुझाई गई कीमतों पर अपने प्रतिष्ठान नहीं चला सकते। लेकिन ठाकरे की पार्टी ने मूल्य निर्धारण समिति द्वारा लिए गए निर्णयों को मानने से इनकार कर दिया क्योंकि समिति में एकमात्र विपक्षी सदस्य, नवलकर, निर्णय लेते समय अनुपस्थित थे। आंदोलन अक्टूबर तक जारी रहा, लेकिन 2 नवंबर को सरकार ने मूल्य नियंत्रण हटा दिया और बढ़ती कीमतों की समस्या बनी रही।

14

सीनेट ने कांग्रेस के रोजगार निर्देशों पर मुहर लगाई: स्थानीय लोगों को प्राथमिकता

अगर वह कीमतों को आसमान छूने नहीं दे सकती, तो शिवसेना ने कहा कि वह मुंबई की आबादी को 'बाहरी लोगों के आगमन के कारण अनियंत्रित स्तर तक पहुंचने' की भी अनुमति नहीं दे सकती।
मुंबई नगर निगम में सत्ताधारी दल के रूप में, शिवसेना ने 29 जून 1973 को अन्य राज्यों से मुंबई आने वाले प्रवासियों के प्रवाह को रोकने के लिए एक प्रस्ताव पारित करने का प्रयास किया। लेकिन यह प्रयास विफल रहा और शिवसेना ने नगर निगम में अपने सभी सहयोगियों को भी खो दिया, जिन्होंने इस मुद्दे पर इसके खिलाफ मतदान किया और इस कदम को 'असंवैधानिक' बताया।
सभी दलों के विरोध के कारण प्रस्ताव पारित नहीं हो सका, लेकिन महाराष्ट्र में कांग्रेस सरकार ने सितंबर 1973 में एक आदेश जारी किया जिससे यह स्पष्ट हो गया कि शिवसेना का प्रचार कितना कारगर रहा था। यह कदम शिवसेना को मराठी आंदोलन पर कब्ज़ा करने से रोकने के लिए उठाया गया एक हताश राजनीतिक कदम था।
1968 में, राज्य ने मुंबई के सरकारी कार्यालयों और बड़े व्यापारिक संगठनों को स्थानीय श्रमिकों को नियुक्त करने का आदेश जारी किया था। सरकार का तर्क था कि स्थानीय श्रमिकों में अधिक स्थिरता होती है और इससे लाभ में वृद्धि होगी। आदेश में नियोक्ताओं को रिक्तियों अधिनियम संबंधी अधिसूचना का अनुपालन करने के उनके कर्तव्य की भी याद दिलाई गई थी, लेकिन आदेश का लहजा और यह तथ्य कि रिक्तियों अधिनियम में स्थानीय लोगों की भर्ती को अनिवार्य नहीं बनाया गया था, यह दर्शाता है कि राज्य का स्थानीय लोगों के समर्थन में रुख अनिश्चित था।
इसके अलावा, चूंकि वरीयताओं को शहर में किसी व्यक्ति के रहने की अवधि के संदर्भ में परिभाषित किया गया था, इसलिए कई सार्वजनिक और निजी प्रतिष्ठान यह तर्क दे सकते थे कि उनकी रोजगार सूचियां शर्तों को पूरा करती हैं। 1973 तक, कांग्रेस सरकार उन दिशानिर्देशों पर कायम रही जिनमें सुझाव दिया गया था कि तीसरे और चौथे दर्जे की सरकारी नौकरियों और अर्ध-कुशल और अकुशल पदों में स्थानीय लोगों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, जिन्हें महाराष्ट्र में 15 वर्षों से रहने वाले लोगों के रूप में परिभाषित किया गया था।

1973 में एक बड़ा बदलाव किया गया।
25 सितंबर को महाराष्ट्र सरकार के उद्योग निदेशक ने सरकारी और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों को एक निर्देश जारी कर सभी श्रेणियों के पदों पर स्थानीय व्यक्तियों को नियुक्त करने को कहा। इसमें आग्रह किया गया कि प्रबंधकीय पदों में से 60 प्रतिशत स्थानीय लोगों को दिए जाएं और निचले पदों पर 90 प्रतिशत कर्मचारियों का चयन स्थानीय आवेदकों में से किया जाए।

इस निर्देश में 'स्थानीय' की परिभाषा को और अधिक स्पष्ट किया गया: इसमें 'मूल मराठी भाषी लोग' भी शामिल किए गए। 1948 के कारखाना अधिनियम का हवाला देते हुए, जिसमें श्रम अधिकारियों को श्रमिकों से बहुसंख्यक भाषा में बात करने की आवश्यकता थी, इसमें कहा गया कि नियोक्ताओं को ऐसे कर्मियों या भर्ती अधिकारियों को नियुक्त करना चाहिए जिनकी मातृभाषा मराठी हो। संसद में विपक्ष ने इस निर्देश की कड़ी आलोचना की और केंद्र सरकार ने महाराष्ट्र सरकार से 'स्थानीय' शब्द की परिभाषा बदलने को कहा। इस नई परिभाषा में मातृभाषा का कोई ज़िक्र नहीं किया गया और केवल निवास संबंधी मानदंड को ही बरकरार रखा गया। बाद में भी, कंपनियों द्वारा निर्देश का पालन सुनिश्चित करने के लिए कोई आधिकारिक दबाव नहीं डाला गया और निर्देश का पालन न करने वाले प्रतिष्ठानों पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया। लेकिन यह तथ्य कि राज्य में कांग्रेस सरकार को केंद्र की नीति से काफी आगे जाना पड़ा, भले ही यह अस्थायी रूप से ही क्यों न हो, इस कदम की राजनीतिक तात्कालिकता को दर्शाता है।
जब 1966 में शिवसेना मुंबई के राजनीतिक परिदृश्य में उभरी, तो उसके आधिकारिक नीति वक्तव्य, 'शिव सेना बोलती है', में उसकी सर्वोच्च मांग के रूप में निम्नलिखित को सूचीबद्ध किया गया था:

महाराष्ट्रवासियों को गरीबी के दुष्चक्र और जीवन के सभी क्षेत्रों में व्याप्त निराशा से मुक्त कराने के लिए, सरकारी, अर्ध-सरकारी, निजी और सार्वजनिक उपक्रमों में 80 प्रतिशत नौकरियां, चाहे कुशल हों या नहीं, आरक्षित की जानी चाहिए। मौजूदा उपक्रमों को इस मांग को पूरा करने के लिए राजी किया जाना चाहिए और नए उपक्रमों को लाइसेंस केवल इसी शर्त पर जारी किए जाने चाहिए।¹⁰⁴

इसके बाद संगठनों को महाराष्ट्रियों को रोजगार देने के लिए दबाव बनाने का अभियान चलाया गया। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, फर्टिलाइजर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया, ग्लेक्सो, इंडियन ऑयल, साराभाई केमिकल्स, जयंती शिपिंग कॉर्पोरेशन, बर्मा शेल, न्यू इंडिया एश्योरेंस और कई अन्य कंपनियों के खिलाफ मोर्चे निकाले गए। उच्च पदस्थ अधिकारियों को तलब किया गया, अक्सर उनकी पिटाई की गई और बल प्रयोग किए गए जिन्हें खुलेआम उचित ठहराया गया। एक घटना, जिसकी अक्सर शिवसेना कार्यकर्ताओं के बीच चर्चा होती है, में एक शिवसेना नेता ने इंडियन ऑयल के एक अधिकारी से मुलाकात की और उनसे कहा कि उन्हें और अधिक महाराष्ट्रीयन लोगों को नौकरी पर रखना चाहिए। अधिकारी को चेतावनी दी गई, 'आप भले ही अंदर बैठे हों, लेकिन आपके तेल के टैंक बाहर हैं।' इस तरह के अल्टीमेटम मिलने के बाद, कई फर्मों के प्रबंधकों ने दबाव में आकर शिवसेना से महाराष्ट्रियों को रोजगार देने में मदद मांगी, और इस तरह अधिक मराठी भाषी लोगों को नौकरी पर रखा गया।
ग्लेक्सो कंपनी के विरोध प्रदर्शन के दौरान, जिसमें मुंबई में जन्मे ईसाई कर्मचारियों की अच्छी खासी संख्या थी, ठाकरे और शिवसेना के कुछ कार्यकर्ता मैनेजर के कार्यालय में घुस गए और उनसे पूछा कि इतने कम कर्मचारी महाराष्ट्रीयन क्यों हैं। मैनेजर ने कहा कि अधिकांश कर्मचारी

महाराष्ट्रीयन हैं और उन्होंने शिवसेना प्रतिनिधिमंडल के सामने कंपनी के रिकॉर्ड पेश कर दिखाया कि अधिकांश कर्मचारी कहाँ पैदा हुए थे।
सैनिकों ने जवाब दिया: 'हम यह जानना चाहते हैं कि वास्तव में कितने लोग महाराष्ट्रीयन हैं - जिनकी मातृभाषा मराठी है।'
अक्सर, कार्यरत सैनिक समूह बनाकर अपने-अपने प्रबंधन से संपर्क करते थे और पार्टी का दबाव बनाते थे; शिवसेना पार्षद अपने-अपने वार्डों में कंपनियों के कार्मिक अधिकारियों से फोन पर बात करते थे और उनसे मिलते थे; और शाखाएं रोजगार सूची तैयार करती थीं। मराठी युवाओं को सूची में अपना नाम दर्ज कराने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था, और जब भी कोई कंपनी या शिवसेना कार्यकर्ता शाखा को किसी रिक्ति की सूचना देता था, तो सूची में शामिल युवाओं को सूचित किया जाता था और आवेदन जमा करने का तरीका बताया जाता था। शिवसेना के दबाव के साथ-साथ मुंबई के मराठी भाषी लोगों में यह धारणा विकसित हुई कि उन्हें अधिक अवसर मिल रहे हैं। 1973 तक, यह भावना व्यापक रूप से फैल गई थी कि उनकी स्थिति में सुधार हो रहा है। यह भावना निश्चित रूप से शिवसेना कार्यालयों में सबसे अधिक प्रचलित थी, लेकिन मुंबई के मतदाताओं में भी यह मौजूद थी, चाहे वे शिवसेना समर्थक हों या न हों।
1971 के संसदीय चुनावों के बाद मैरी एफ. कैटजेनस्टीन और कार्तिकेय साराभाई द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में, साक्षात्कार किए गए लोगों में से 51.5 प्रतिशत ने कहा कि उन्हें लगता है कि पहले की तुलना में अधिक महाराष्ट्रियों को नौकरियां मिल रही हैं, 19 प्रतिशत ने महसूस किया कि अधिक महाराष्ट्रियों को नौकरियां नहीं मिल रही हैं, 25 प्रतिशत ने उत्तर दिया कि वे निश्चित नहीं हैं, और 4.5 प्रतिशत ने जवाब देने से इनकार कर दिया।
क्या ये धारणाएँ वास्तविकता से मेल खाती थीं? क्या शिवसेना के उदय के बाद मराठी भाषी लोगों की आर्थिक स्थिति में वास्तव में सुधार हुआ था?
चूंकि जनगणना सर्वेक्षणों में व्यवसायिक विभाजनों का सामुदायिक स्तर पर सीमांकन दर्ज नहीं किया जाता है, इसलिए रोजगार परिदृश्य में परिवर्तनों के बारे में केवल उदाहरण स्वरूप निष्कर्ष ही दिए जा सकते हैं।
आइए मुंबई में सार्वजनिक और निजी रोजगार से संबंधित तीन अध्ययनों पर विचार करें।
पहला अध्ययन मुंबई स्थित प्रबंधन के छात्रों द्वारा किया गया, जिन्होंने मुंबई की 25 कंपनियों के 125 प्रबंधकों का साक्षात्कार लिया। 1950 से पहले इन कंपनियों में कार्यरत महाराष्ट्रीयन प्रबंधकों का प्रतिशत शून्य था; 1950 से 1960 के बीच, प्रबंधकीय पदों में से 10 प्रतिशत महाराष्ट्रीयन थे; 1960 के बाद, मराठी भाषी व्यक्तियों ने प्रबंधकीय पदों में से 21 प्रतिशत पर कब्जा कर लिया। इन तीन दशकों के दौरान प्रबंधकों के रूप में कार्यरत गुजराती लोगों का प्रतिशत क्रमशः 56, 34 और 44 था, जबकि दक्षिण भारतीयों का प्रतिशत क्रमशः 25, 29 और 12 था।
मुंबई में मराठी भाषी आबादी के कुल प्रतिशत की तुलना में मराठी प्रबंधकों का प्रतिशत अभी भी कम था (42)। लेकिन कंपनियों द्वारा भर्ती किए गए मराठी भाषी लोगों की संख्या में वृद्धि किसी भी अन्य समुदाय की तुलना में कहीं अधिक थी।
दूसरा अध्ययन मुंबई टेलीफोन डायरेक्टरी का विश्लेषण है, जिसे दो शोधकर्ताओं, नीलम कनोडिया और टी.सी. दासवानी ने किया है। सरकारी कार्यालयों और निजी कंपनियों की सूची में, डायरेक्टरी में किसी संस्थान

या फर्म के अधिकारियों के नाम, पद और टेलीफोन नंबर दिए गए थे। नामों से व्यक्तियों की जातीय पृष्ठभूमि का पता लगाना संभव था और इस प्रकार कार्यरत मराठी भाषी और गैर-मराठी भाषी लोगों की संख्या का अनुमान लगाया जा सकता था। कुछ नाम ऐसे थे जिनकी भाषाई श्रेणी की पहचान करना कठिन था: उदाहरण के लिए, देसाई उपनाम मराठी या गुजराती दोनों हो सकता है। लेकिन महाराष्ट्रीयन नामों से परिचित मूल वक्ताओं द्वारा पहचान किए जाने पर, 85 प्रतिशत से अधिक सटीकता प्राप्त हुई।
विश्लेषण में केंद्र सरकार के ग्यारह संस्थानों को शामिल किया गया था, और यह पाया गया कि इनमें मराठी भाषी लोगों का प्रतिशत, जो 1962 में 19 था, 1967 में बढ़कर 25 और 1973 में 29 हो गया था। जिन संस्थानों का नमूना लिया गया था उनमें एयर इंडिया, इंडियन एयरलाइंस, भारतीय रिजर्व बैंक, परमाणु ऊर्जा विभाग, इंडियन ऑयल, न्यू इंडिया एश्योरेंस, जहाजरानी महानिदेशालय, पश्चिमी रेलवे, डाक और तार विभाग, बॉम्बे टेलीफोन और जीवन बीमा निगम शामिल थे।
अध्ययन किए गए सात राज्य और नगरपालिका सरकारी प्रतिष्ठानों में, मराठी भाषी लोगों का प्रतिशत 1962 में 64 से बढ़कर 1967 में 75 प्रतिशत और 1973 में 82 हो गया था। राज्य और नगरपालिका कार्यालयों में उद्योग, श्रम और रोजगार कार्यालय, पश्चिमी रेलवे पुलिस, रोजगार निदेशालय, वित्त विभाग और बृहन्मुंबई विद्युत और परिवहन आपूर्ति (बीईएसटी) उपक्रम शामिल थे।
निजी क्षेत्र की पंद्रह कंपनियों का विश्लेषण किया गया, और यहाँ भी, भर्ती किए गए मराठी भाषी कर्मचारियों का प्रतिशत 1962 में 7 से बढ़कर 1967 में 12 और 1973 में 16 हो गया था। अध्ययन की गई कंपनियों में एल एंड टी, माफतलाल, फिलिप्स, बजाज, बर्मा शेल, ग्लैक्सो, कैल्टेक्स, सीआईबीए, फोर्ब्स, फोर्ब्स एंड कैंपबेल, इंडियन एक्सप्रेस, क्रॉम्पटन एंड ग्रीव्स, पोदार मिल्स, श्री राम मिल्स, श्री निवास कॉटन और इंडिया यूनाइटेड मिल्स शामिल थीं।
इसलिए सरकारी और निजी दोनों ही उपक्रमों में उच्च और मध्य स्तर के पदों पर मराठी भाषी लोगों का प्रतिशत लगातार बढ़ता रहा है।
तीसरा अध्ययन मुंबई स्थित एक मार्केटिंग रिसर्च ग्रुप द्वारा किया गया एक सर्वेक्षण था, जिसमें 12 सार्वजनिक और निजी संगठनों के 126 लिपिकीय कर्मचारियों को शामिल किया गया था। यह सर्वेक्षण मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के माइग्रेशन एंड डेवलपमेंट स्टडी ग्रुप द्वारा 1976 में करवाया गया था। अध्ययन से पता चला कि 1971 के दौरान या उससे पहले भर्ती किए गए लिपिकीय कर्मचारियों में मराठी भाषी लोगों की संख्या 45.6 प्रतिशत थी। लेकिन 1971 के बाद भर्ती किए गए लोगों में यह संख्या 61.7 प्रतिशत थी।
यहां तक कि अखबारों की रिपोर्टों में भी महाराष्ट्रियों की बेहतर व्यावसायिक स्थिति का जिक्र किया गया था। 6 जनवरी 1974 को हिंदुस्तान टाइम्स (संडे स्टैंडर्ड, दिल्ली) में 'उडुपी होटल्स का फलता-फूलता कारोबार' शीर्षक से प्रकाशित एक लेख में यह उल्लेख किया गया था कि हालांकि यह निर्विवाद था कि मुंबई के दक्षिण भारतीय रेस्तरांओं में कुछ ही महाराष्ट्री कार्यरत थे, लेकिन 'अपने गृह जिलों से निकट और दूर के रिश्तेदारों को लाकर, अब काफी संख्या में महाराष्ट्री उनमें काम करते हैं। वास्तव में, शाकाहारी खानपान व्यवसाय में सबसे बड़ा नाम, सतकार समूह

के रेस्तरां, इस बात का दावा करते हैं कि उनके लगभग 70 प्रतिशत कर्मचारी महाराष्ट्री हैं।'
शिवसेना के 1967 के आधिकारिक बयान, 'शिव सेना स्पीक्स' में कहा गया था:

हमारी (शिव सेना की) मांग आर्थिक है। यह किसी विशेष समुदाय के विरुद्ध नहीं, बल्कि उनकी सांप्रदायिक मानसिकता के विरुद्ध है। हम सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग करते हैं, जो हमारा अधिकार है। हमें किसी से कोई दान नहीं चाहिए। यह हमारा वैध अधिकार है… इसलिए, शिव सेना मांग करती है कि निजी या सार्वजनिक क्षेत्रों में उपलब्ध 80 प्रतिशत नौकरियां महाराष्ट्रियों के लिए आरक्षित होनी चाहिए।

महाराष्ट्र सरकार द्वारा 1973 में जारी किया गया निर्देश अभी भी लागू है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, राज्य में कांग्रेस की लगातार सरकारों ने यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ खास नहीं किया कि नियोक्ता इस निर्देश का पालन करें।
1995 में सत्ता में आने के बाद शिवसेना ने भी इस आदेश को लागू करने के लिए कुछ नहीं किया।

15

[illegible] of the [illegible],
[illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible]

1973 of the [illegible], [illegible] of [illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] of of the [illegible] [illegible]
[illegible] of [illegible] the [illegible] [illegible] of [illegible] of, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] the [illegible] [illegible] of the of of [illegible] [illegible] of of [illegible] the of the [illegible]
[illegible] [illegible] of [illegible] the [illegible] ‘[illegible]’ of [illegible] the 18 [illegible] of [illegible] the of [illegible] [illegible] the [illegible] the of the the of [illegible] the [illegible] of [illegible], of of [illegible] [illegible] of [illegible] of of the the [illegible] of [illegible] of of of [illegible] the of [illegible] the [illegible] [illegible] [illegible] of the [illegible] of the 1,074 [illegible] of [illegible] [illegible], [illegible] of 402 of [illegible] of [illegible] of [illegible] the [illegible] [illegible] the
the of the [illegible] [illegible] of of [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] of of [illegible] of [illegible] of [illegible] the, '[illegible] [illegible]' of [illegible] of of of [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible], [illegible] of [illegible] of [illegible] the [illegible]
[illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] the of [illegible] of [illegible] [illegible] of, [illegible] [illegible] [illegible] 1974 the [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] the [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] the
[illegible] of [illegible] 1973 the [illegible] (in) of the [illegible] of [illegible] of [illegible] the [illegible] of of the of of [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] the [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] the [illegible] [illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] the of, [illegible] of [illegible] the the [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] of, of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] the [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

या शेनापति?' शीर्षक से संपादकीय लिखा। मराठी में शेना का अर्थ गोबर होता है।
ठाकरे और बेहेरे के बीच शुरू से ही अच्छे संबंध थे, जब बाल के सहयोगी और विद्वान डी.वी. देशपांडे ने दोनों का परिचय कराया था। शिवाजी और सावरकर, दोनों के समान आदर्शों के कारण पनपी उनकी दोस्ती, बेहेरे के संपादकीय के साथ समाप्त हो गई।
इस अभियोग के प्रकाशित होने के तुरंत बाद, बेहेरे अपनी पत्रिका के पाठकों की बैठक में भाग लेने जा रहे थे, तभी सेना भवन के पास सैनिकों ने उन्हें घेर लिया और उनकी पिटाई कर दी। इतना ही नहीं, संपादक, जिन्होंने सैनिकों से सेनापति के वस्त्र उतारने की अपील की थी, उन्हें भी निर्वस्त्र कर दिया गया। फिर भी, बेहेरे ने किसी द्वारा दी गई लुंगी पहनी और उसी वस्त्र में बैठक स्थल की ओर चल दिए।
बेहेरे कांड से पहले भी शिवसेना असहमति और आलोचना के प्रति अपनी असहिष्णुता का प्रदर्शन कर चुकी थी। अपने शुरुआती वर्षों में, शिवसेना ने आचार्य अत्रे की कड़ी आलोचना की थी, जिन्होंने तत्कालीन मुख्यमंत्री वसंतराव नाइक के समर्थन के कारण ठाकरे की पार्टी को वसंत सेना का नाम दिया था, और यहां तक कि उन पर शारीरिक हमला भी किया था। 1972 में, जिस वर्ष विजय तेंदुलकर ने अपना नाटक 'घाशीराम कोतवाल' लिखा था, जिसे कई लोगों ने शिवसेना के उदय की प्रतिक्रिया माना था, उसी वर्ष पार्टी ने नाटककार को निशाना बनाया। पेशवाओं के दरबार में प्रधानमंत्री रहे नाना फड़नवीस के जीवन पर आधारित 'घाशीराम' का मूल विषय सत्ताधारियों द्वारा कुछ विचारधाराओं को जानबूझकर बढ़ावा देना और अपने स्वार्थों की पूर्ति के बाद उन विचारधाराओं को नष्ट करना है। शिवसेना और आरएसएस ने नाटक के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया, यह कहते हुए कि इसमें ब्राह्मणों के साथ-साथ फड़नवीस को भी गलत तरीके से चित्रित किया गया है, और प्रदर्शनों को रद्द करने के लिए मजबूर किया। शिवसेना ने मुंबई के उपनगर विले पार्ले में उस हाउसिंग सोसाइटी के बाहर काले बोर्ड चिपका दिए, जिन पर गालियां लिखी हुई थीं, जहां तेंदुलकर रहते थे, जिससे नाटककार को कुछ समय के लिए एक दोस्त के घर में शरण लेनी पड़ी और उनके परिवार को भी परेशानी का सामना करना पड़ा।
1975 में बेहेरे पर हुए हमले के कुछ समय बाद, शिवसेना ने भाऊ पाध्ये द्वारा लिखित मराठी उपन्यास 'राडा' के प्रकाशन पर रोक लगा दी। इस उपन्यास में न केवल शिवसेना का सीधा ज़िक्र था, बल्कि इसमें गोरेगांव के एक शाखा प्रमुख, नानासाहेब खरकर नामक एक काल्पनिक पात्र को मुख्य किरदार के रूप में दिखाया गया था। उपन्यास में, महाराष्ट्र के एक कारखाने मालिक के विद्रोही पुत्र, मंदार अनेगिरी, शिवसेना शाखा की गतिविधियों का मज़ाक उड़ाते हैं, पार्टी के पाखंड और मुंबई पर थोपी गई उसकी नैतिक संहिता का पर्दाफ़ाश करते हैं, और अपने पिता के कारखाने से कम्युनिस्ट संघ को हटाने के शिवसेना श्रमिक विंग के प्रयासों पर टिप्पणी करते हैं। फिर भी, कुछ प्रतियां प्रकाशित हुईं, दूसरा संस्करण 1997 में और तीसरा संस्करण हाल ही में, 2011 में प्रकाशित हुआ।
1977-78 में, शिवसेना ने आरएसएस और हिंदू महासभा के साथ मिलकर किरण नागरकर द्वारा लिखित नाटक 'बेडटाइम स्टोरी' पर गैरकानूनी रूप से प्रतिबंध लगा दिया। ठाकरे की पार्टी वैसे भी नागरकर को अपने समर्थकों में नहीं गिन सकती थी, क्योंकि लेखक ने अपने उपन्यास 'सात सक्कम त्रेचालिस' (जिसका बाद में अंग्रेजी में अनुवाद 'सेवन सिक्स आर फोर्टी-थ्री' हुआ) में - जिसे आधुनिक

मराठी साहित्य की महत्वपूर्ण कृतियों में से एक माना जाता है - जो 1974 में प्रकाशित हुआ था, शिवसेना की हिंसा के बारे में लिखा था। राज्य सेंसर बोर्ड द्वारा 28 कट के साथ नाटक को मंजूरी देने के बाद (पहले 78 कट की मांग की गई थी), शिवसेना ने इसका विरोध किया और रिहर्सल की भी अनुमति नहीं दी गई। अंततः 17 वर्षों के बाद नाटक का मंचन हुआ।
शिंगरे के विद्रोह और बेहेरे प्रकरण से उत्पन्न परेशानी के बावजूद, शिवसेना के नेताओं ने एकजुट होकर ठाकरे के कांग्रेस के पक्ष में लिए गए रुख का समर्थन किया।
लेकिन रामराव आदिक का रास्ता आसान नहीं था। पिछले चुनावों में, कांग्रेस उम्मीदवार ने आरपीआई के नव-बौद्धों के समर्थन के कारण भारी जीत हासिल की थी, जो निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं का एक महत्वपूर्ण प्रतिशत थे।
इस बार, नव-बौद्धों का एक नया उग्रवादी संगठन, दलित पैंथर्स, मध्य मुंबई में आरपीआई और उसके गुटों का मुकाबला करने के लिए उभरा था। इसके नेता नामदेव धसाल, राजा ढाले और रामदास अठावले ने कांग्रेस के साथ गठबंधन करने से इनकार कर दिया, क्योंकि उनका मानना था कि कांग्रेस ने नव-बौद्धों के साथ अन्याय किया है। उन्होंने अपनी ताकत कम्युनिस्टों के समर्थन में लगा दी। 5 जनवरी 1974 को तनाव और बढ़ गया, जब पैंथर्स ने बीडीडी (बॉम्बे डेवलपमेंट डायरेक्टोरेट) की एक चॉल में एक सार्वजनिक बैठक आयोजित करके उपचुनावों के बहिष्कार के अपने आह्वान को उचित ठहराया, जिसका उद्देश्य 'सरकार की मिलीभगत से उच्च जाति के हिंदुओं द्वारा दलितों के साथ लगातार हो रहे दुर्व्यवहार' का विरोध करना था।
वहां पैंथर्स के नेताओं ने कथित तौर पर हिंदू देवी-देवताओं के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणियां कीं, जिसके बाद पत्थरबाजी शुरू हो गई और पुलिस ने लाठीचार्ज किया। जल्द ही शिवसेना और पैंथर्स के बीच बड़े पैमाने पर हिंसा भड़क उठी।
बाद में सेना के बोर्ड इलाके में जगह-जगह लग गए, जिन पर लिखा था कि पार्टी हिंदू देवी-देवताओं का अपमान करने वालों को माफ नहीं करेगी। जब पैंथर्स के नेताओं को गिरफ्तार किया गया, तो समाजवादी युवाओं के संगठन युवा क्रांति दल ने उनकी रिहाई की मांग को लेकर एक मोर्चा निकाला। मोर्चे पर हमला हुआ और एक दलित युवक की जान चली गई।
पैंथर्स के बहिष्कार के आह्वान के जवाब में और आंशिक रूप से हिंसा के कारण, अधिकांश नव-बौद्ध मतदाता अपने मताधिकार का प्रयोग करने के लिए अपने घरों से बाहर नहीं निकले।
इस प्रकार कांग्रेस को सीधे तौर पर 75,000 से अधिक वोटों का नुकसान हुआ और कम्युनिस्ट पार्टी की रोजा देशपांडे 11,000 वोटों के मामूली अंतर से विजेता बनकर उभरीं।
उसी महीने बैंक ऑफ इंडिया (बीओआई) के सामने निकाले गए शिवसेना के मोर्चे की सैनिकों की हिंसा और पुलिस की कथित निष्क्रियता के कारण कड़ी आलोचना हुई। मोर्चे से लौट रही भीड़ ने दुकानों, फेरीवालों के स्टॉलों और अन्य प्रतिष्ठानों को निशाना बनाया। काफी संपत्ति नष्ट हो गई, और जब पुलिस ने अंततः लाठीचार्ज किया, तो घर लौट रहे कार्यालय जाने वाले लोगों और वकीलों को कथित तौर पर हमले का खामियाजा भुगतना पड़ा। रेल यात्रियों को सैनिकों ने घेर लिया, उनसे पूछा कि क्या वे दक्षिण भारतीय हैं, और उनकी पिटाई की।

दो दिन बाद, जब फेरीवालों ने सुरक्षा की मांग करते हुए पुलिस आयुक्त के कार्यालय के सामने मार्च निकाला, तो उन पर लाठीचार्ज किया गया और उनमें से कई घायल हो गए।
मध्य मुंबई के उपचुनाव में मिली हार शिवसेना के लिए एक बड़ा झटका थी, लेकिन उसने कांग्रेस के साथ अपना संबंध जारी रखा और वास्तव में समय बीतने के साथ इसे और मजबूत किया।
जैसे-जैसे सहयोग बढ़ता गया, बाल ठाकरे, जो पहले इंदिरा गांधी की कड़ी आलोचना करते थे, ने उनमें कुछ गुण देखे और कहा कि उन्हें उनके नेतृत्व पर भरोसा है।
इसी दौरान, शिवसेना ने कथित तौर पर कांग्रेस के संरक्षण में अपने संघों को मजबूत करने का काम किया। लेकिन जैसे-जैसे वह कांग्रेस के करीब आती गई, मतदाताओं की नजर में अन्य राजनीतिक दलों से खुद को अलग करने में वह असमर्थ होती चली गई।
जब इंदिरा गांधी ने 25 जून 1975 को आपातकाल लागू किया, तो बाल ठाकरे ने इसका समर्थन किया।
यह स्वार्थ का परिणाम हो सकता है, या यह इस विश्वास का परिणाम हो सकता है कि सत्तावादी शासन 'अनुशासन' लाएगा और देश को दिशा प्रदान करेगा। या, इन दोनों कारकों के संयोजन ने सेना की नीति को निर्धारित किया हो सकता है। दोनों सिद्धांतों के समर्थक अनेक हैं।
कुछ लोगों का मानना है कि ठाकरे को शिवसेना पर प्रतिबंध लगने, अपने दल के सदस्यों के खिलाफ दमनकारी हथकंडे अपनाने और खुद जेल जाने की आशंका सता रही थी। श्रीमती गांधी ने स्थिति को कांग्रेस और अन्य मतों के बीच एक युद्ध जैसी स्थिति में बदल दिया था, जिसमें समझौते या छल-कपट की कोई गुंजाइश नहीं बची थी।
लेकिन चाहे वह सिर्फ सुरक्षित रास्ता अपनाना चाहते हों या नहीं, सच्चाई यह है कि आपातकाल का विरोध करना ठाकरे के लिए उनके सार्वजनिक रूप से घोषित विश्वासों का खंडन करने जैसा होता।
यह इंदिरा गांधी द्वारा अपनाई गई एक राजनीतिक रणनीति थी, जिसकी स्वयं ठाकरे ने वांछनीयता के रूप में वकालत की थी।
आपातकाल के दौरान नीति और निर्णय एक ही व्यक्ति द्वारा लिए जाते थे, और शिवसेना प्रमुख का यही मानना था। उन्होंने बार-बार कहा था, 'मुझे लोकशाही में विश्वास नहीं है, मैं ठोकशाही में विश्वास करता हूं', और अपने संगठन में वे किसी भी असहमति को बर्दाश्त नहीं करते थे।
‘इस देश को एक तानाशाह की जरूरत है’, यह उनका बार-बार दोहराया जाने वाला वाक्य था, और इंदिरा गांधी ठीक वैसी ही बन चुकी थीं। ठीक वैसे ही जैसे ठाकरे एक शासक से अपेक्षा रखते थे, उन्होंने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को भंग करने के लिए कदम उठाए, राज्य तंत्र पर पूर्ण नियंत्रण हासिल कर लिया और एक सर्वशक्तिशाली कमान स्थापित कर ली।
इस तरह की तानाशाही का समर्थन करने से शिवसेना को कोई फायदा नहीं हुआ। प्रेस की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने के तहत मार्मिक का प्रकाशन वैसे भी प्रतिबंधित कर दिया गया था, और शिवसेना की छवि जनता की नजरों में धूमिल हो गई क्योंकि उसके हित इंदिरा गांधी की कांग्रेस के हितों से घनिष्ठ रूप से जुड़ गए थे।

आपातकाल की ज्यादतियों ने जनता को आक्रोशित कर दिया और जयप्रकाश नारायण और अन्य विपक्षी नेताओं के पक्ष में समर्थन बढ़ गया, जिन्होंने कांग्रेस शासन के खिलाफ बोलने का साहस किया।
लेकिन ठाकरे ने आपातकाल के वर्षों (1975 से 1977) के दौरान श्रीमती गांधी के नेतृत्व की लगातार प्रशंसा करके अपनी सीमा पार कर ली और इस तथ्य को नजरअंदाज कर दिया कि उनकी बढ़ती अलोकप्रियता शिवसेना के लिए राजनीतिक प्रतिशोध का कारण बन सकती है।
बाद में, अपने रुख को सही ठहराते हुए, शिवसेना प्रमुख ने अपने समर्थकों से कहा:

आपातकाल के दौरान मैंने इंदिरा कांग्रेस का समर्थन नहीं किया क्योंकि मुझे जेल जाने का डर था। यह सच है कि उस दौर में शिवसेना गंभीर संकट में थी, क्योंकि शंकरराव चव्हाण (तत्कालीन मुख्यमंत्री) हम पर पूरी तरह हावी थे। उस समय मेरे दांत में तेज दर्द था और मैं जसलोक अस्पताल में बुरी तरह बीमार पड़ा था। मुंह से खून बह रहा था, उसमें रुई ठूंसी हुई थी; मैं बोल भी नहीं पा रहा था।

ऐसी परिस्थितियों में, रजनी पटेल (उस समय मुंबई में कांग्रेस के कद्दावर नेता) ने डॉ. शांतिलाल मेहता के माध्यम से मुझे एक टाइप किया हुआ बयान भेजा और मुझसे उस पर हस्ताक्षर करने को कहा। रजनी पटेल ने खुद उस बयान में दो लाइनें जोड़ दी थीं! मैंने डॉ. मेहता से कहा कि मैं इस पर हस्ताक्षर नहीं करूंगा। मैंने पूछा, आखिर रजनी पटेल कौन हैं? डॉ. मेहता ने मुझे चेतावनी दी कि अगर मैंने हस्ताक्षर करने से इनकार किया, तो सभी शिवसेना नेताओं को जेल में डाल दिया जाएगा। मैंने जवाब दिया: रजनी पटेल को बता दो, अगर ऐसा हुआ, तो उनका अंतिम संस्कार अवश्य होगा। उनकी हिम्मत कैसे हुई मुझे यह कहने की कि अगर मैंने हस्ताक्षर नहीं किए, तो वे शिवसेना पर प्रतिबंध लगा देंगे? आपातकाल के दौरान हमने अपनी आत्मसम्मान को गिरवी नहीं रखा था। हम इंदिरा शासन का अध्ययन कर रहे थे।¹⁰⁵

आपातकाल हटने के बाद भी यह 'अध्ययन' जारी रहा, जब बाल ठाकरे ने अपने पहले के रुख से पीछे हटते हुए मार्च 1977 में मुंबई मेयर चुनाव में कांग्रेस उम्मीदवार मुरली देवरा का समर्थन किया।
जब इंदिरा गांधी ने मार्च 1977 में आम चुनाव की घोषणा की, यह सोचते हुए कि विपक्ष, जो 19 महीनों तक जनता की नजरों से दूर रहा और जिसे अपने विचार व्यक्त करने का कोई मौका नहीं मिला, उनका मुकाबला नहीं कर पाएगा, तो ठाकरे एक बार फिर उनके साथ खड़े रहे।
श्रीमती गांधी को विश्वास था कि चुनाव से उन्हें फिर से जनादेश मिलेगा, लेकिन शिवसेना नेता ने कोई जोखिम नहीं लिया और कांग्रेस के लिए पूरे राज्य में प्रचार किया। उन्होंने इंदिरा गांधी के तानाशाही के प्रयोग का बचाव किया और संजय गांधी की गतिशीलता और मजबूत राजनीतिक क्षमता की प्रशंसा की।

कांग्रेस को करारी हार का सामना करना पड़ा। भारत के कुल 32 करोड़ मतदाताओं में से लगभग 60 प्रतिशत ने जनता पार्टी को सत्ता में पहुंचाया, जिससे स्वतंत्रता के बाद पहली बार कांग्रेस अल्पमत में आ गई।
महाराष्ट्र में कांग्रेस ने चुनाव लड़े गए 47 सीटों में से 20 सीटें जीतीं, जबकि जनता पार्टी ने चुनाव लड़े गए 31 सीटों में से 19 सीटें हासिल कीं।
शिवसेना ने किसी भी सीट पर चुनाव नहीं लड़ा था, लेकिन कांग्रेस के साथ उसके घनिष्ठ संबंध थे। अब, कांग्रेस की उम्मीदें धूमिल होने के साथ, उसका भविष्य एक चौराहे पर आ गया था।
आगे आने वाली चुनौतियों को भांपते हुए, शिवसेना नेतृत्व के एक वर्ग ने जनता पार्टी के साथ समझौता करने के प्रयास शुरू कर दिए - जो उस समय सफलता की लहर पर सवार थी - ताकि 1978 की शुरुआत में होने वाले विधानसभा चुनावों के लिए कोई व्यवस्था की जा सके।
ठाकरे ने जनता पार्टी के साथ गठबंधन करने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन बातचीत से कोई नतीजा नहीं निकला। अंततः शिवसेना ने कांग्रेस-आई के साथ गठबंधन कर लिया, जिसका गठन 2 जनवरी 1978 को पार्टी के भीतर कार्ययोजना को लेकर मतभेदों के बाद हुआ था, जबकि कांग्रेस (एआरएस) इसके विपरीत थी। इसने चुनाव में कुछ उम्मीदवार उतारे। कोई भी निर्वाचित नहीं हुआ। डॉ. गुप्ते, जो शिवसेना छोड़कर जनता पार्टी में शामिल हो गए थे, ने दादर निर्वाचन क्षेत्र से मनोहर जोशी को हराया, जो शिवसेना का गढ़ है।
जनता पार्टी को 99 सीटें मिलीं, लेकिन कांग्रेस-आई और कांग्रेस-यूआरएस ने क्रमशः 62 और 69 सीटों के साथ गठबंधन करके सरकार बनाई।

16

आश्चर्यजनक घोषणा

कांग्रेस के साथ बढ़ती पहचान के परिणामस्वरूप गंभीर संकट का सामना कर रही शिवसेना को नवंबर 1978 में होने वाले बीएमसी चुनाव लड़ने पड़े। बाल ठाकरे जानते थे कि चुनावी हार और पार्टी के जन आधार में आई गिरावट के मद्देनजर यह सफर आसान नहीं होगा। कांग्रेस और जनता पार्टी के बीच तीव्र टकराव चल रहा था और दोनों के बीच की लड़ाई मुख्य रूप से राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर केंद्रित थी। जनता पार्टी अपने साथ एक नई ऊर्जा लेकर आई थी और लोकसभा चुनाव में अपनी जीत के बाद, उसने समग्र सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्रांति के विचार में नई उम्मीद जगाई थी। शिवसेना के दो पूर्व नेता, डॉ. हेमचंद्र गुप्ते और दत्ता प्रधान भी जनता पार्टी में शामिल हो गए थे।
नगरपालिका सत्ता के शिखर तक पहुंचने का रास्ता बाधाओं से भरा देखकर ठाकरे ने अपना सब कुछ दांव पर लगाने का फैसला किया, जिसमें उनका नेतृत्व भी शामिल था। चुनाव प्रचार के दौरान उन्होंने कहा, 'अगर मैं बीएमसी के शीर्ष पर भगवा झंडा नहीं फहरा सका, तो मैं शिवसेना अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दूंगा।' मुंबई की जनता ने चेतावनी पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। उन्होंने शिवसेना के 21 पार्षदों को चुना, जो 1973 के चुनावों के बाद पार्टी के 40 सदस्यीय गठबंधन की तुलना में लगभग 50 प्रतिशत की गिरावट थी। जब शिवसेना ने पहली बार 1968 में बीएमसी चुनाव लड़ा था, तब उसके 42 उम्मीदवार निर्वाचित हुए थे। नवंबर 1978 के चुनावों में यह संख्या घटकर आधी हो गई।
जनता पार्टी ने 140 में से 83 सीटें जीतीं और कांग्रेस 17 सीटों के साथ तीसरे स्थान पर सिमट गई, जो शिवसेना की सीटों से भी कम है।
परिणामों से पता चला कि मुंबई में शिवसेना की शक्ति कमज़ोर हो गई थी। पहले से ही संसद या विधानसभा में उसका कोई सदस्य नहीं था। अब तो नगर निगम भी उसके हाथ से निकल चुका था।
इस समय ठाकरे के स्तब्ध और परेशान शिवसेना समर्थक एकदम अचंभित रह गए। चुनाव में मिली करारी हार के बाद शिवाजी पार्क में एक रैली में भाषण देते हुए उन्होंने अपनी जेब से एक कागज निकाला और पढ़ना शुरू किया: ‘मैं नगर निगम के ऊपर भगवा झंडा फहराने में असफल रहा हूं। अगर जनता को मुझ पर भरोसा नहीं है, तो मैं उनकी शिकायतों को दोहराने में अपना समय क्यों बर्बाद करूं? मैं अपने वचन का पक्का हूं। चूंकि जनता मुझे नहीं चाहती, इसलिए मैं शिवसेना छोड़ रहा हूं।’
वहां जमा हुए सैनिकों के लिए यह घोषणा एक बड़ा झटका थी। वे सब एक साथ चिल्लाए: 'आप नहीं जा सकते। आप हमारे नेता हैं।'
वह सुनने को तैयार नहीं था। आवाज़ तेज़ होती गई, मनाने का प्रयास और भी ज़ोरदार होता गया। अंततः, जब सभी ने बार-बार उसके प्रति अपनी वफ़ादारी दोहराई, तो ठाकरे ने अपना रुख बदल दिया। उसने त्यागपत्र फाड़ते हुए कहा, 'यह केवल आपका असाधारण प्रेम और स्नेह है जो मुझे अपना निर्णय वापस लेने के लिए विवश कर रहा है।'

यह कदम ठाकरे की कार्यशैली के अनुरूप था और इससे उन्हें अपना लक्ष्य हासिल करने में मदद मिली। उन्होंने चतुराई से चुनावी हार के बाद हतोत्साहित हुए अपने पार्टी कार्यकर्ताओं को अपने और शिवसेना के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को फिर से मजबूत करने के लिए प्रेरित किया था।
ठाकरे के बिना शिवसेना की कल्पना एक आम शिवसैनिक के लिए अकल्पनीय थी, और ठाकरे ने अपना इस्तीफा देकर शिवसैनिकों के साथ अपने बंधन को फिर से मजबूत किया था।

अंतुले के आवरण के तहत
1978 के विधानसभा चुनावों के बाद महाराष्ट्र में बनी कांग्रेस सरकार ज्यादा समय तक नहीं टिक पाई। शरद पवार ने कांग्रेस-आई (नासिकराव तिरपुडे के नेतृत्व में) और कांग्रेस-यू (वसंतदादा पाटिल के नेतृत्व में) के गठबंधन से अलग होकर समाजवादी कांग्रेस का गठन किया, जनता पार्टी के साथ समझौता किया और पुरोगामी लोकशाही अघाड़ी (प्रगतिशील लोकतांत्रिक मोर्चा) की सरकार बनाई।
इन घटनाक्रमों पर शिवसेना मूक दर्शक बनी रही, उसने न तो किसी का पक्ष लिया और न ही किसी गठबंधन की प्रशंसा या आलोचना की।
केंद्र में जनता सरकार में कलह पहले दिन से ही शुरू हो गई थी, और 1979 के अंत तक, इससे उत्पन्न सभी उम्मीदें चकनाचूर हो गईं, और लोगों ने केंद्र को कमजोर और अक्षम समझा। सरकार के पतन के बाद, राष्ट्रपति संजीव रेड्डी ने जनवरी 1980 में चुनाव कराए, और भारतीय जनता ने इंदिरा गांधी को फिर से सत्ता में वापस लाया।
प्रधानमंत्री की गद्दी पर पुनः कब्जा करने के तुरंत बाद, श्रीमती गांधी ने महाराष्ट्र में पवार की पीडीएफ सरकार को बर्खास्त कर दिया। विधानसभा चुनाव जून 1980 में होने की घोषणा की गई।
शिवसेना ने एक बार फिर कांग्रेस-आई के साथ समझौता किया। समझौते के अनुसार, शिवसेना राज्य में किसी भी सीट पर चुनाव नहीं लड़ेगी, बल्कि कांग्रेस के समर्थन में अपनी पूरी ताकत लगाएगी और कांग्रेस बदले में विधानसभा परिषद में शिवसेना के तीन सदस्यों को मनोनीत करेगी।
जनता पार्टी को करारी हार का सामना करना पड़ा, उसे केवल 17 सीटें मिलीं, और पवार की समाजवादी कांग्रेस, जिसे दूसरे नंबर पर सबसे अधिक सीटें मिलीं, 47 से अधिक सीटें जीतने में सफल नहीं हो सकी। कांग्रेस-आई ने 186 सीटों के साथ स्पष्ट बहुमत प्राप्त किया। ए.आर. अंतुले महाराष्ट्र के नए मुख्यमंत्री बने।
शिवसेना प्रमुख के अंतुले के साथ बेहतरीन संबंध थे, और जब मुख्यमंत्री चुने जाने के बाद अंतुले ने श्रीवर्धन विधानसभा से चुनाव लड़ा, तो शिवसेना ने उनके लिए प्रचार किया और उनका चुनाव अभियान चलाया। ठाकरे ने तो अंतुले के लिए वोट मांगने के लिए कांग्रेस नेता रामराव अडिक के साथ निर्वाचन क्षेत्र में एक संयुक्त रैली को भी संबोधित किया था।
इस सौदे को पूरी ईमानदारी से अंजाम दिया गया: ठाकरे और उनकी पार्टी द्वारा चुनाव से पहले और बाद में किए गए कठिन परिश्रम के लिए, कांग्रेस ने मनोहर जोशी, प्रमोद नवलकर और वामनराव महादिक को परिषद में मनोनीत किया।

17

कपड़ा उद्योग में हुई त्रासदी के कारण तलाक हुआ

आर. अंतुले का मुख्यमंत्री के रूप में कार्यकाल कठिनाइयों से भरा था, 1981 में मुंबई की मिलों और उद्योगों में श्रम अशांति बढ़ रही थी और उन पर सत्ता के दुरुपयोग के आरोप लगाए जा रहे थे।
शिवसेना ने इन सब बातों को नजरअंदाज कर दिया और कांग्रेस के मुख्यमंत्री का समर्थन किया, जो बाल ठाकरे के करीबी थे।
हालांकि, शहर के कपड़ा उद्योग के श्रमिकों द्वारा बोनस और वेतन वृद्धि के लिए किए जा रहे संघर्ष में बढ़ती मुखरता को वह नजरअंदाज नहीं कर सका। उनकी मनोदशा को भांपते हुए, शिवसेना की गिरनी कामगार सेना (जीकेएस) ने 12 अक्टूबर 1981 को मिल ओनर्स एसोसिएशन (एमओए) के कार्यालय में जबरन प्रवेश किया और मांगों का एक चार्टर प्रस्तुत किया।
ठाकरे ने 1 नवंबर को एक दिवसीय हड़ताल का आह्वान किया और प्रति माह कम से कम 200 रुपये की वेतन वृद्धि की मांग की। उन्होंने कहा कि अगर मध्य नवंबर तक यह मांग पूरी नहीं हुई तो वे अनिश्चितकालीन हड़ताल का आह्वान करेंगे। लगभग सभी कार्यकर्ताओं ने आंदोलन में भाग लिया। लेकिन अगले कुछ दिनों में शिवसेना का रुख नरम पड़ गया और अनिश्चितकालीन हड़ताल का आह्वान नहीं किया गया।
मिल मजदूरों में असंतोष बढ़ता जा रहा था, और इस आग को और भड़काने का काम डॉ. दत्ता सामंत ने किया, जो अपने उग्र स्वभाव के लिए जाने जाते थे। महाराष्ट्र गिरनी कामगार यूनियन नामक एक नई कपड़ा यूनियन की स्थापना करते हुए, सामंत ने भी अपनी मांगें पूरी न होने पर नवंबर के मध्य से अनिश्चितकालीन हड़ताल की धमकी दी और दिनों दिन उनका रवैया और भी आक्रामक होता चला गया। उच्च बोनस के अलावा, उनकी मांगों में प्रति माह 200 से 400 रुपये की वेतन वृद्धि भी शामिल थी।
अंतुले ने 11 नवंबर को मिल श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए एक उच्चस्तरीय समिति (एचपीसी) नियुक्त की, और सामंत ने इसकी रिपोर्ट आने तक आम हड़ताल स्थगित कर दी। लेकिन उन्होंने आठ मिलों में जारी हड़ताल को समाप्त करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और श्रमिकों से हड़ताल के लिए तैयार रहने को कहा, जिसका कपड़ा मालिक स्वयं स्वागत करेंगे।
मिल ओनर्स एसोसिएशन द्वारा चल रही हड़ताल को समाप्त करने में असमर्थता का हवाला देते हुए एचपीसी की कार्यवाही से बाहर निकलने के बाद, सामंत ने 6 जनवरी 1982 को एक दिवसीय सांकेतिक हड़ताल का आह्वान किया, जिसने कपड़ा उद्योग को पंगु बना दिया।
संबंधित पक्षों के सहयोग न मिलने के कारण एचपीसी की कार्यवाही ठप हो गई, और अंतुले के मुख्यमंत्री पद से हटने से स्थिति और भी खराब हो गई।¹⁰⁶
18 जनवरी 1982 को, बाबासाहेब भोंसले द्वारा अंतुले को मुख्यमंत्री के पद से हटाने से एक दिन पहले, लगभग 2.5 लाख मिल श्रमिकों की अनिश्चितकालीन कपड़ा हड़ताल शुरू हुई।

शिवसेना ने हड़ताल का विरोध करते हुए कहा कि इससे श्रमिकों के आश्रित परिवारों पर असर पड़ेगा।
सामंत की मांगें चाहे कितनी भी बेतुकी क्यों न हों, शिवसेना उनके नेतृत्व वाले अभियान का समर्थन नहीं करती क्योंकि उनके साथ उसकी दुश्मनी सितंबर 1972 से चली आ रही थी।
उस साल शिवसेना से टकराव के बाद सामंत एक श्रमिक संघ नेता के रूप में तेज़ी से उभरे। जब गोदरेज की विक्रोली फैक्ट्री के श्रमिकों ने अधिक बोनस की मांग को लेकर हड़ताल की, तो उन्होंने इलाके में रैलियां निकालीं और असंतुष्ट श्रमिकों को काम पर लौटने से रोकने के लिए उग्रवादी हथकंडे अपनाए। सामंत के आदमियों ने एक शिवसैनिक की पिटाई की, और जब शिवसेना ने मनोहर जोशी को स्थिति का जायजा लेने के लिए भेजा, तो फैक्ट्री के आसपास तनाव बढ़ गया और पुलिस बंदोबस्त और भी मज़बूत कर दिया गया।
जोशी पहले घायल सैनिक के घर गए और फिर भावुक सैनिकों के साथ कारखाने की ओर बढ़े। जैसे ही वे कारखाने के परिसर में दाखिल हुए, उन पर पत्थर और सोडा- पानी की बोतलें फेंकी गईं। जल्द ही सामंत के समर्थकों और सैनिकों के बीच हिंसक झड़प हुई और पुलिस जोशी को अपनी वैन में बिठाकर कारखाने से बाहर ले गई। इसके बाद सामंत के समर्थकों ने हिंसक होकर पुलिस अधिकारी चंदगुडे की पत्थर मारकर हत्या कर दी और उन्हें शिवसेना नेता को वहां से ले जाने के लिए 'जिम्मेदार' ठहराया। इस हिंसा में दो हवलदार भी मारे गए।
इस घटना के बाद सामंत को लगभग एक साल के लिए जेल भेज दिया गया, लेकिन इस घटना ने उग्रवाद के लिए उनकी प्रतिष्ठा को स्थापित कर दिया।
1982 की हड़ताल शुरू होने के दिन से ही ठाकरे और अन्य शिवसेना नेताओं ने दत्ता सामंत पर मजदूरों को गुमराह करने का आरोप लगाया था।
फिर भी, श्रमिकों ने न तो शिवसेना की बात सुनी और न ही अपने आधिकारिक प्रतिनिधि संघ, राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ (आरएमएमएस) की। वे सामंत के साथ खड़े रहे।
नए मुख्यमंत्री ने हड़ताल को अवैध घोषित कर दिया और कहा कि चूंकि आरएमएमएस एकमात्र प्रतिनिधि संघ है, इसलिए सामंत के साथ बातचीत का कोई सवाल ही नहीं उठता।
हड़ताल शुरू होने के एक महीने बाद, ठाकरे ने कहा कि वह हजारों मराठी मिल श्रमिकों के जीवन को बर्बाद नहीं होने देंगे।
उन्होंने कहा कि शिवसेना मजदूरों के लिए अपना ‘संघर्ष’ शुरू करेगी। ‘विभिन्न व्यक्तियों से हमारी बातचीत चल रही है। शिवसेना मजदूरों को न्याय दिलाने के लिए हर संभव प्रयास कर रही है। हमें अपना विश्वास और भरोसा दें।’
लेकिन आरएमएमएस को लेकर श्रमिकों का मोहभंग इतना गहरा था और सामंत के वादों से इतनी उम्मीदें जगी थीं कि श्रमिकों को लगा कि डॉक्टर अपनी बात मनवा ही लेंगे।
हड़ताल लंबे समय तक जारी रही।
ठाकरे ने अप्रैल 1982 में मुख्यमंत्री भोंसले से मुलाकात की और सुझाव दिया कि वे हड़ताल समाप्त करने के लिए श्रमिकों को 50 की अंतरिम वेतन वृद्धि दें, लेकिन बातचीत से कुछ भी नतीजा नहीं निकला।
ठाकरे ने सरकार को इस मुद्दे का समाधान निकालने के लिए 1 मई की समय सीमा दी थी - उन्होंने कहा था कि अगर तब तक मामला हल नहीं हुआ तो वह कांग्रेस को

अपना मित्र नहीं मानेंगे - और यह समय सीमा बीत गई, और उसके दो महीने बाद भी हड़ताल के खत्म होने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे थे।
ठाकरे और दत्ताजी साल्वी की आवाज़ और तेज़ हो गई; अब सामंत और कांग्रेस-आई दोनों निशाने पर थे। शिवसेना प्रमुख हमेशा से यही कहते आए थे कि सामंत के हठधर्मी रवैये के कारण मिल मजदूरों की समस्याएं और बढ़ गई हैं। अब, जब उनके मित्र अंतुले भी मुख्यमंत्री नहीं रहे, तो कांग्रेस-आई भी उतनी ही दोषी हो गई।
अगस्त के मध्य में, शिवसेना ने एक समाधान सुझाया। उसने कहा कि पवार की पिछली सरकार द्वारा दी गई 45 रुपये की मासिक वेतन वृद्धि और केंद्रीय श्रम मंत्री द्वारा स्वीकृत 30 रुपये की राशि को श्रमिकों के वेतन में शामिल किया जाना चाहिए, और 1,500 से 2,000 रुपये अग्रिम के रूप में दिए जाने चाहिए।
अगर इसे स्वीकार नहीं किया गया, तो शिवसेना ने धमकी दी कि वह सितंबर में, जब राज्य विधानसभा का सत्र शुरू होने वाला था, तब विधान भवन तक मोर्चा निकालेगी।
यह समाधान अस्वीकृत रहा और सरकार को उसकी निष्क्रियता के लिए सभी पक्षों द्वारा दोषी ठहराया गया। राज्य और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर, सरकार ने हस्तक्षेप करने से परहेज किया और प्रतीक्षा करना और देखना बेहतर समझा। ठाकरे के पास अब कांग्रेस से संबंध तोड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। सरकार की निष्क्रियता के बावजूद कांग्रेस का साथ देते रहने से लालबाग, परेल, वर्ली और कालाचौकी जैसे मजदूर बहुल क्षेत्रों में पार्टी को भारी नुकसान उठाना पड़ता।
9 सितंबर को ठाकरे ने कामगार मैदान में एक रैली आयोजित की और लगभग सात साल बाद अपनी पार्टी को कांग्रेस-आई से अलग कर लिया।
उन्होंने दोहराया कि हड़ताल गिरनी के कामगारों (मिल मजदूर) को बर्बाद कर देगी, लेकिन शिवसेना हमेशा मजदूरों के साथ खड़ी रहेगी। उन्होंने जोर देकर कहा, ‘कामगार मराठी हैं, वे बर्बाद हो जाएंगे। विद्रोह करने वाले पुलिसकर्मी (1982 में पुलिस हड़ताल हुई थी) मराठी हैं। और सीमा विवाद पर लड़ने वाले भी मराठी हैं। शिवसेना इन सभी के लिए चिंतित है।’
उस समय यह अटकलें लगाई जा रही थीं कि भोंसले को जल्द ही हटा दिया जाएगा। ठाकरे ने अपने भाषण का समापन यह कहते हुए किया कि उनकी जगह शरद पवार लेंगे। 28 अक्टूबर को, जब शिवसेना ने दशहरा के अवसर पर अपनी वार्षिक रैली का आयोजन किया - जो कि सीमाओं को पार करने के लिए प्रसिद्ध त्योहार है - तब पार्टी ने एक अलग ही तरह की सीमा पार की। लोक दल के नेता जॉर्ज फर्नांडीस और कांग्रेस-एस के प्रमुख शरद पवार उस दिन शिवसेना के मंच पर आए और संयुक्त रूप से रैली को संबोधित किया। तीनों ने कांग्रेस-आई और सामंत की जमकर आलोचना की और धमकी दी कि अगर एक सप्ताह के भीतर हड़ताल का समाधान नहीं हुआ तो कार्रवाई की जाएगी।
जॉर्ज फर्नांडीस ने कहा:

विजयदशमी के शुभ दिन मुंबई की हालत इतनी दयनीय कभी नहीं थी। महाराष्ट्र ही नहीं, बल्कि पूरे भारत की परिस्थितियों ने हम तीनों को एक साथ ला खड़ा किया है। बालासाहेब ने इसमें अहम भूमिका निभाई है। हम, तीन अलग-अलग पार्टियों के नेता, बैठकर देश को जकड़े इस संकट का समाधान निकालने पर विचार करेंगे।

पवार ने कहा:

लोगों को यकीन नहीं है कि हम एकजुट रह पाएंगे। लेकिन जॉर्ज द्वारा बताए गए हालात ऐसी एकता की मांग करते हैं। भारत में कहीं भी चले जाइए, आपको पता चलेगा कि कांग्रेस द्वारा चुनाव पूर्व किए गए वादे पूरे नहीं हुए हैं। हमें इस शासन को उखाड़ फेंकना होगा...

ठाकरे ने कहा:

मैंने सेना भवन में एक सभा में घोषणा की थी कि मैं दशहरा के दिन चमत्कार कर दिखाऊंगा। मैंने वह कर दिखाया है। लोग कांग्रेस-आई के शासन से तंग आ चुके हैं। इंदिरा गांधी के लिए एकमात्र नीति यही मायने रखती है, “मेरा राजीव कैसे आगे बढ़ेगा?”... बाल ठाकरे सत्ता की कोई कुर्सी नहीं मांगते। लेकिन मैं यह सुनिश्चित करना चाहता हूं कि 1985 में कांग्रेस सत्ता में न रहे... पवार के साथ मेरी मित्रता बरकरार है। जब वे मुख्यमंत्री थे, तब उन्होंने कार्यकर्ताओं को अभूतपूर्व रूप से 45% वेतन वृद्धि दी थी। अब हमें आम सहमति पर पहुंचना होगा।

लेकिन 'यदि हड़ताल एक सप्ताह में समाप्त नहीं हुई' तो की जाने वाली कार्रवाई कभी नहीं हुई, और हड़ताल अठारह-साढ़े अठारह महीने बाद, अगस्त 1983 में समाप्त हुई। इसके परिणाम विनाशकारी थे: बड़े पैमाने पर छंटनी और हजारों श्रमिकों के लिए बेरोजगारी।
हड़ताल शुरू होने पर कपड़ा मिल के अधिकांश मजदूर सामंत के साथ खड़े थे, लेकिन समय बीतने के साथ यह संख्या घटकर अल्पसंख्यक रह गई।
छह महीने तक काम पर न जाने के बाद अधिकांश श्रमिकों का मनोबल गिर गया था; हड़ताल के नेतृत्व को इस बात का पता था लेकिन उन्होंने इसे नजरअंदाज कर दिया। लगभग 80 प्रतिशत श्रमिकों का मानना था कि हड़ताल दो या तीन महीनों में समाप्त हो जाएगी; लेकिन ऐसा नहीं हुआ।
लगभग 75,000 हड़तालियों, जिनमें से अधिकांश अपने परिवार के इकलौते कमाने वाले थे, ने अपनी नौकरियाँ खो दीं। हड़ताल से श्रमिकों को बोनस और वेतन वृद्धि मिलने के बजाय, नौकरियों और वेतन के मामले में नुकसान हुआ और श्रमिकों का संघर्षशील मनोबल टूट गया।
ठाकरे ने सामंत के पूरे करियर के दौरान उनकी आलोचना करने का कोई मौका नहीं छोड़ा और अक्सर उन्हें कीड़ा कहते थे। 16 जनवरी 1997 को चेंबूर स्थित उनके आवास के पास सामंत पर गोलियों की बौछार होने के बाद भी, शिवसेना नेता की भाषा उनके लिए वही रही। फरवरी 1997 में शिवाजी पार्क में एक रैली को संबोधित करते हुए, ठाकरे ने सामंत की हत्या के बाद तत्कालीन शिवसेना-भाजपा सरकार को बर्खास्त करने की मांग को खारिज करते हुए कहा: 'लोग कहते हैं कि कार्यकर्ताओं का नेता मर गया। लेकिन वह अपने कर्मों के फल के कारण मरा।'

18

समाजवादी गीत पर झूमते हुए

कांग्रेस का आवरण हट जाने के बाद भी शिवसेना की सुस्त भटकन जल्द ही समाप्त नहीं हुई। यह 1984 तक अनिश्चितता के दलदल में भटकती रही, कभी इधर तो कभी उधर जाती रही, लेकिन कहीं नहीं पहुंच पाई।
अनिश्चितता के इस दौर में, बाल ठाकरे ने समाजवाद के साथ एक क्षणिक जुड़ाव का अनुभव किया।
सबसे अधिक बिकने वाले मराठी दैनिक 'नवा काल' के संपादक और ठाकरे के मित्र नीलकंठ खाडिलकर ने 1983 में सोवियत संघ का दौरा किया। लौटने पर उन्होंने 'व्यावहारिक समाजवाद' नामक पुस्तक लिखी, जो सोवियत संघ में उनके अनुभवों और वहां समाजवादी सिद्धांतों के अनुप्रयोग पर आधारित थी। उन्होंने उल्लेख किया कि कैसे परमिट प्रणाली की शुरुआत ने मॉस्को में बाहरी लोगों के आगमन की समस्या का प्रभावी समाधान प्रदान किया।
ठाकरे, मुंबई में बाहरी लोगों के आगमन को रोकने के लिए उत्सुक थे, उन्हें परमिट प्रणाली का विचार शानदार लगा और वे समाजवाद की ओर आकर्षित हुए। खादिलकर बताते हैं:

जब मैंने व्यावहारिक समाजवाद का विचार रखा, तो बालासाहेब को यह इतना पसंद आया कि उन्होंने इसे शिवसेना के लिए स्वीकार कर लिया। उन्होंने अपने साथियों को बुलाया और कहा कि वे दशहरा रैली में इसे शिवसेना की विचारधारा के रूप में घोषित करने जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि भले ही वे सब उनका साथ छोड़ दें, वे अकेले इस विचारधारा को अपनाएंगे। और उन्होंने उत्साहपूर्वक व्यावहारिक समाजवाद के लिए अभियान शुरू किया। लेकिन कुछ महीनों बाद, उन्होंने मुझे फोन किया और कहा, “सत्ता में आए बिना इस विचारधारा को लागू करना संभव नहीं है। दशहरा रैली में, मैं हिंदुत्व के लिए लड़ाई शुरू करने जा रहा हूँ। क्या इस विचार को हिंदू समाजवाद के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता?”

1984 की शुरुआत में (21 जनवरी को), समाजवाद के प्रभाव में डूबे ठाकरे ने दादर के सावरकर स्मारक में आयोजित शिवसेना के अधिवेशन (सम्मेलन) में इसकी प्रशंसा की।
इस अवसर पर ठाकरे ने भारतीय कम्युनिस्टों के गुरु एस.ए. डांगे को सैनिकों को संबोधित करने के लिए आमंत्रित किया था। ठाकरे और डांगे राजनीतिक रूप से कट्टर प्रतिद्वंद्वी रहे थे, लेकिन दोनों एक-दूसरे का बहुत सम्मान करते थे और जनसभा करने की एक-दूसरे की क्षमता को स्वीकार करते थे। डांगे ने तुरंत प्रतिक्रिया दी।
सम्मेलन में उपस्थित डांगे के दामाद बानी देशपांडे ने मुझे बताया:

सात हज़ार शिवसेना प्रतिनिधि उपस्थित थे। और जब डांगे ने उन्हें संबोधित किया, तो उन्हें ऐसी प्रतिक्रिया मिली कि हर कोई यह सोचने पर मजबूर हो गया कि प्रतिनिधियों का असली नेता कौन था - डांगे या ठाकरे। मुझे यकीन है कि बाल भी हैरान रह गए होंगे। बीच-बीच में, डांगे के शब्दों पर सैनिकों ने ज़ोरदार तालियाँ बजाईं। उन सभी ने उन्हें संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के दौरान सुना था। वे वही मराठी युवा थे जिन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र के लिए संघर्ष किया था और उस आंदोलन के एक दिग्गज को फिर से सुनने का मौका पा रहे थे। वे डांगे के दुश्मन नहीं थे, बस इतना था कि वे उनसे दूर हो गए थे।¹⁰⁷

ठाकरे ने ट्रेड यूनियन नेता एस.आर. कुलकर्णी और बुद्धिजीवी डी.वी. देशपांडे को भी 'शिव सेना से अपेक्षाएं' विषय पर बोलने के लिए आमंत्रित किया था।
तीनों के भाषण के अगले दिन उनकी आलोचना करते हुए शिवसेना प्रमुख ने कहा: ‘हमें किसी ने यह नहीं बताया कि हमसे कहाँ गलती हुई या सही मार्गदर्शन नहीं दिया। उन्होंने तो बस अपनी चतुराई साबित करने की कोशिश की। डांगे ने हमारी गलतियाँ नहीं बताईं, क्रांति की दिशा नहीं दिखाई। उन्होंने तो बस यह कहकर अहंकार दिखाया कि शिवसेना का कोई सिद्धांत नहीं है और कोई संगठन बिना सिद्धांत के नहीं टिक सकता। तो फिर हमारा संगठन 18 साल तक कैसे टिका रहा? और सिद्धांत होने के बावजूद आपका संगठन कैसे खत्म हो गया? हमने उन्हें आमंत्रित किया और मौका दिया। लेकिन उन्होंने तो बस अपनी अक्ल का प्रदर्शन किया।’
हालांकि, ठाकरे कम्युनिस्ट नेता के प्रति अपनी प्रशंसा बरकरार रखते हैं, खासकर उनकी वाक्पटुता के लिए। वे कहते हैं, ‘डांगे की बातों में एक शरारत भरी तेवर होती थी। और उनके बोलने के तरीके से यह भी पता चलता था कि वे कितने विद्वान थे। मुंबई में मजदूर आंदोलन मुख्य रूप से उनकी वाक्पटुता के कारण ही फला-फूला। बेशक, उन्होंने मजदूरों को कुछ नहीं दिया, लेकिन अपनी वाक्पटुता के बल पर उन्होंने उन्हें लड़ने की ताकत दी।’¹⁰⁸

19

अब हिंदुत्व की बारी।
AND BACK TO BHIWANDI

कुछ समय तक दुविधा में रहने के बाद, शिवसेना ने 1984 में हिंदुत्व की ओर निर्णायक रुख अपनाया। अप्रैल और मई 1984 में भिवंडी में दंगे भड़कने के साथ ही हिंदुत्व के प्रति उसका आकर्षण स्पष्ट हो गया, लेकिन जब ठाकरे ने उसी वर्ष जनवरी में हिंदू राष्ट्रवाद के अपने विचार को पहली बार स्पष्ट किया, तो इस पर किसी का ध्यान नहीं गया। 22 जनवरी को शिवाजी पार्क में एक रैली को संबोधित करते हुए, ठाकरे ने हिंदू संगठनों के एक संघ, हिंदू महासंघ, के विचार को सामने रखा और एक तीन सूत्री कार्यक्रम का अनावरण किया:

पहला, मुसलमानों को हिंदुओं की तरह एक विवाह के नियम का पालन करना चाहिए और परिवार नियोजन अपनाना चाहिए। ऐसा न करने के कारण ही भारत में मुसलमानों की आबादी 1947 में 25 करोड़ से बढ़कर 14 करोड़ हो गई है। दूसरा, उन्हें गौहत्या पर प्रतिबंध का समर्थन करना चाहिए। तीसरा, उन्हें यह स्वीकार करना चाहिए कि यह एक हिंदू राष्ट्र है।

केवल वही मुसलमान जो इन बातों को स्वीकार करने को तैयार हैं, उन्हें ही हिंदुस्तान में रहने का अधिकार है। मैं भारत राष्ट्र शब्द को स्वीकार नहीं करता। यह शब्द सबको खुश रखने और वोट पाने के लिए गढ़ा गया है। मेरे अनुसार, जो भी हिंदुस्तान में रहता है, वही हिंदू है। मैंने सभी हिंदू संगठनों को एकजुट करके एक हिंदू राष्ट्र फौज बनाने का फैसला किया है। यह फौज फरवरी में गठित होगी और इसके प्रचार-प्रसार के लिए हमारे पास 500 हिंदू प्रचारक होंगे। मैंने पतित पवन, आर्य समाज और हिंदू एकता जैसे संगठनों से इस बारे में बात की है। सभी हिंदू संगठनों को मुस्लिम कट्टरता को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए एक झंडे के नीचे एकजुट होना चाहिए।

महासंघ के गठन के आह्वान पर किसी भी प्रमुख हिंदू समूह की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली।
ठाकरे ने हिंदुत्व पर अपना दूसरा बयान उसी वर्ष अप्रैल में दिया, जब कश्मीर में उग्रवाद ने अपना पहला शिकार लिया था। इस बार न केवल उनकी बात सुनी गई, बल्कि उनके भाषण का विकृत संस्करण प्रसारित किया गया, जिसका परिणाम दंगा हुआ।
फरवरी की शुरुआत में, बर्मिंघम स्थित भारतीय उच्चायोग के सहायक आयुक्त रविंद्र म्हात्रे का कश्मीर लिबरेशन आर्मी (केएलए) नामक एक समूह द्वारा अपहरण कर गोली मार दी गई थी। आरोप है कि यह कश्मीर में चरमपंथी संगठनों पर

की गई कार्रवाई के प्रतिशोध में किया गया था। भारत में यह धारणा बनी कि इस पूरे मामले में पाकिस्तान एक निर्दोष मूकदर्शक नहीं था।
म्हात्रे की हत्या पर प्रतिक्रिया देते हुए ठाकरे ने 21 अप्रैल को गिरगाँव चौपाटी में एक रैली में कहा:

अगर इंदिरा गांधी खालिस्तान को आतंकवादियों के हवाले कर देंगी, तो हम उन्हें कभी माफ नहीं करेंगे। पंजाब में आतंकवादियों को पाकिस्तान और अमेरिका का समर्थन प्राप्त है। और जिस तरह भिंडरांवाले को इंदिरा गांधी का आशीर्वाद प्राप्त है, उसी तरह पंजाब में हिंदुओं का कोई हिमायती नहीं है… यहां सभी लोगों को हिंदू बनकर जीना चाहिए। आज भारत में मुसलमानों की संख्या 25 करोड़ से बढ़कर 14 करोड़ हो गई है। लेकिन इंदिरा गांधी अब भी मुसलमानों को इसलिए तरजीह दे रही हैं क्योंकि वे अल्पसंख्यक हैं। अगर अल्पसंख्यक होने के कारण भविष्य में भी उन्हें तरजीह दी जाती रही, तो हमारा हिंदू महासंघ इस कैंसर को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए आवश्यक कदम उठाएगा। सभी हिंदुओं को महासंघ के भगवा झंडे तले एकजुट होना चाहिए। साथ ही, मैं फिर से दोहराता हूं कि इस वर्ष भिवंडी में शिवाजी जयंती की शोभायात्रा हर हाल में निकलेगी।

1970 के दंगों के बाद भिवंडी में शिवाजी जयंती जुलूस पर प्रतिबंध लगा दिया गया था, जो ग्यारह वर्षों तक लागू रहा। राज्य ने 1982 में प्रतिबंध हटा दिया, और उसके बाद के वर्षों में जुलूस शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हुआ। लेकिन जल्द ही भिवंडी में सांप्रदायिक अशांति फिर भड़क उठी। हालांकि कई लोगों का मानना था कि चौपाटी में ठाकरे की भाषा अशांति फैलाने के लिए काफी भड़काऊ थी, लेकिन कुछ उर्दू अखबारों और पत्रिकाओं (जिनमें भिवंडी न्यूज और अखबार-ए-आलम शामिल हैं) ने खबर छापी कि उन्होंने पैगंबर मोहम्मद के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणी की थी, जबकि उन्होंने ऐसा नहीं किया था। मुसलमानों के बीच इस बात को फैलाने के लिए कुछ पर्चे भी बांटे गए।
मुंबई से 450 किलोमीटर दूर परभणी में मुसलमानों ने 11 मई को जिला परिषद कार्यालय तक मार्च निकाला और 'अपमान' के खिलाफ अपना विरोध दर्ज कराया। ऐसी अफवाह है कि इस मार्च में कांग्रेस विधायक ए.आर. खान ने सार्वजनिक रूप से बाल ठाकरे की तस्वीर पर चप्पलों की माला पहनाई।
गुस्से में आकर शिवसैनिकों ने 17 मई को मुंबई के परेल में बंद का आह्वान किया। शहर भर में सड़कों के कोनों और शिवसेना शाखाओं के बाहर बोर्ड लगाकर इस कृत्य की निंदा की गई। अगले दिन गिरगाँव में भी बंद का आह्वान किया गया। मुस्लिम समुदाय के कुछ स्वघोषित नेताओं ने स्थिति का फायदा उठाने की कोशिश की, और सांप्रदायिक रूप से संवेदनशील कस्बे भिवंडी में अच्छी बिक्री वाले अखबार भिवंडी न्यूज के संपादक ईसा आज़मी ने लिखा कि वह ठाकरे की टिप्पणियों का 'मुंहतोड़ जवाब' देने के लिए भारतीय मुस्लिम सेना का गठन कर रहे हैं और मुसलमानों से अपने पैगंबर के अपमान का बदला लेने का आह्वान किया।
17 मई को, भिवंडी के घूंघट नगर में मुसलमानों के एक समूह ने पास की शिवसेना शाखा के ऊपर लगे भगवा झंडे से ऊँचा हरा झंडा फहराने की कोशिश की, तो दोनों समुदायों के युवाओं के बीच झड़प हुई और हिंसा भड़क उठी।

दो एसआरपी जवानों समेत छह लोगों की चाकू मारकर हत्या कर दी गई, दो लोगों को गोली मारी गई और देर शाम तक 100 से अधिक लोग घायल हो गए। होटलों, दुकानों और स्टालों में आग लगा दी गई और लोगों के घरों पर पत्थर फेंके गए। मुख्यमंत्री वसंतदादा पाटिल ने देखते ही गोली मारने के आदेश जारी किए, लेकिन जब इससे कोई फायदा नहीं हुआ तो सेना को बुलाया गया।
अगले दिन सुबह 6 बजे भिवंडी में कर्फ्यू लगा दिया गया, लेकिन गोवंडी में एक मस्जिद से लौट रही भीड़ द्वारा शिवसेना कार्यालय को जलाए जाने के बाद हिंसा मुंबई तक फैल गई। गोवंडी में अराजकता को रोकने के लिए पुलिस को 8 राउंड गोलियां चलानी पड़ीं और शहर के कई अन्य इलाकों में हिंदू और मुसलमानों के बीच झड़पें हुईं। सायन और क्रॉफर्ड मार्केट के पास मुसाफिरखाना में पत्थरबाजी की घटनाओं के कारण पुलिस को भीड़ पर लाठीचार्ज करना पड़ा। दादर बाजार में 25 युवकों के एक समूह ने सब्जियां नष्ट कर दीं; वर्ली में एक पूजा स्थल पर पथराव किया गया; कर्णक बंदर स्थित लोहा भवन पर हमला किया गया और गणेशपुरी के पास दो झोपड़ियों को जला दिया गया।
कुल मिलाकर, मुंबई में 424 लोगों को और उसी दिन भिवंडी में 300 लोगों को गिरफ्तार किया गया।
19 मई को भिवंडी के बाहरी इलाके अनुरा फाटा में एक घर में आग लगा दी गई, जिसमें रहने वाले परिवार के सभी 20 सदस्य जिंदा जल गए, और एक समुदाय के सदस्यों ने दूसरे समुदाय के घरों को निशाना बनाया।
सैकड़ों लोग बेघर हो गए और हिंसा ठाणे और कल्याण तक फैल गई, जहां पांच लोगों की चाकू मारकर हत्या कर दी गई।
मुंबई के नागपाड़ा में भीड़ ने सब-इंस्पेक्टर एन. गोखले और कांस्टेबल गुलाम की हत्या कर दी; मौलाना शौकत अली रोड पर एक पुलिस चौकी को आग लगा दी गई और नल बाजार के पास भीड़ ने पुलिसकर्मियों पर पथराव किया। मुसाफिरखाना में एक पुलिस वैन पर हमला किया गया, जिसमें सात पुलिसकर्मी घायल हो गए। खेरवाड़ी में पुलिस ने दंगाइयों पर गोली चलाई: 4 मारे गए, 3 घायल हुए। देर शाम नागपाड़ा, डोंगरी, पायधोनी, वीपी रोड और क्रॉफर्ड मार्केट में कर्फ्यू लगा दिया गया।
मुख्यमंत्री ने कहा कि उन्हें शिकायतें मिली हैं कि ठाकरे ने सांप्रदायिक भावनाएं भड़काई हैं और वह इसकी जांच करेंगे, वहीं कांग्रेस अल्पसंख्यक मोर्चा के प्रमुख जावेद खान ने शिवसेना प्रमुख की गिरफ्तारी की मांग की। हालांकि, पुलिस आयुक्त जूलियो रिबेरो के 21 मई के बयान के बावजूद कि उर्दू अखबारों में ठाकरे के भाषण की खबरें 'पूरी तरह से झूठी' थीं, अगले पांच दिनों तक हिंसा में कोई कमी नहीं आई। इसके बजाय, गिरगाम और कुर्ला जैसे अब तक शांत रहे इलाकों में हिंसा भड़क उठी। बांद्रा का खेरवाड़ी सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ, जहां दुकानें, बसें और रिक्शा जला दिए गए और पुलिस को बार-बार गोली चलानी पड़ी। जेजे अस्पताल के आसपास के इलाके से एक ही दिन में चाकूबाजी की अठारह घटनाएं दर्ज की गईं।
सेना को बुलाना पड़ा और मुंबई के नौ इलाकों में कर्फ्यू लगाना पड़ा।
25 मई तक, जब भिवंडी और मुंबई दोनों में हालात धीरे-धीरे सामान्य होने लगे, तब तक मृतकों की संख्या 256 हो चुकी थी। क्षेत्रवार आंकड़े इस प्रकार हैं: भिवंडी-109, मुंबई-87, ठाणे और ठाणे ग्रामीण-52, और कल्याण-10।
प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने इस दंगे को 'भारत के इतिहास पर एक कलंक' बताया था।

चौपाटी में भड़काऊ भाषण देने के आरोप में ठाकरे के खिलाफ मामला भी दर्ज किया गया था, लेकिन पुलिस आयुक्त रिबेरो ने कहा कि पुलिस ने उस भाषण को रिकॉर्ड किया था और ठाकरे मानहानि के दोषी नहीं थे।
कुछ महीनों बाद, मुंबई स्थित तस्करों हाजी मस्तान, करीम लाला और 15 अन्य लोगों को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत गिरफ्तार किया गया, और रिबेरो ने कहा कि भिवंडी और मुंबई में दंगाइयों को मोलोटोव कॉकटेल, एसिड बल्ब और अन्य विस्फोटक सामग्री की आपूर्ति में उनकी भूमिका की पुष्टि हो गई थी। मस्तान और लाला को जल्द ही रिहा कर दिया गया। उनकी रिहाई और इस तथ्य से कि कई सैनिक अभी भी दंगा करने के आरोप में जेल में थे, ठाकरे नाराज हो गए। हिंदुस्तान समाचार को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा: 'पुलिस आयुक्त रिबेरो से पूछिए, जिन्होंने इन तस्करों को गिरफ्तार किया और उनके खिलाफ की जाने वाली कार्रवाई के बारे में बड़े-बड़े ऐलान किए, कि उन्हें कैसे रिहा किया गया। मुझे कुछ गड़बड़ लग रही है। उनकी रिहाई तभी संभव हो सकती थी जब करोड़ों रुपये का लेन-देन हुआ हो।'
शिवसेना की 'गुंडागर्दी और डराने-धमकाने की रणनीति' की आलोचना करते हुए रिबेरो ने पलटवार किया: 'मुंबई में किसका राज है? सरकार का या शिवसेना का?' ठाकरे ने जवाब दिया: 'अगर वह जानना ही चाहता है, तो मैं उसे दिखाऊंगा कि शिवसेना यहां कैसे शासन करती है। तब उसके पास अपनी नौकरी बचाने के लिए हमारे पास आने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा।'
जब भाजपा नेता जसवंत सिंह ने राज्यसभा में दंगों का मुद्दा उठाया, तो केंद्रीय गृह राज्य मंत्री पी. वेंकट सुब्बैया ने सदन को बताया कि हिंसा शिवसेना, हिंदू महासभा और उर्दू दैनिकों द्वारा की गई भ्रामक और भड़काऊ अपीलों का परिणाम थी।
दंगे वाकई भयावह थे, लेकिन इसने शिवसेना को, जो कुछ समय के लिए दिशाहीन हो गई थी, फिर से सुर्खियों में ला दिया।

इंदिरा गांधी को श्रद्धांजलि
31 अक्टूबर 1984 को प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या ने बाल ठाकरे को गहरा सदमा पहुँचाया और दुखी किया। उनके मन में इंदिरा गांधी के लिए सिर्फ़ दबी हुई प्रशंसा ही नहीं थी। उन्होंने आपातकाल का समर्थन किया था और अपने भाषणों में अक्सर उनकी दृढ़ता, निर्णय लेने की क्षमता और सबसे बढ़कर, उन्हें राज्यपाल पद की पेशकश का ज़िक्र किया था। उन्होंने दावा किया कि इंदिरा गांधी ने अपने सहयोगियों से उन्हें कई बार कहा था, 'बालासाहेब से कहना, उनको मैं ऊँचे से ऊँचा पद दे दूँगी।' उन्होंने कहा कि उन्होंने यह प्रस्ताव ठुकरा दिया था क्योंकि 'सेना प्रमुख का पद धरती पर सर्वोच्च पद था।'
1982 में शिवसेना द्वारा कांग्रेस से संबंध तोड़ने के बाद उन्होंने इंदिरा गांधी की आलोचना करना शुरू कर दिया, लेकिन उनकी मृत्यु ने एक बार फिर उनके प्रति श्रद्धा को उजागर कर दिया। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद मार्मिक में लिखा गया उनका संपादकीय उनके द्वारा की गई असाधारण प्रशंसा के लिए उल्लेखनीय है। 'रक्षक भक्षक बनले' शीर्षक वाले इस संपादकीय में कहा गया था:

इंदिराजी अब हमारे बीच नहीं रहीं! किसी ने हमें ये खबर सुनाई और ऐसा लगा जैसे अनगिनत चींटियों ने एक साथ हमारे दिमाग पर डंक मार दिया हो... पहले तो हमें यकीन ही नहीं हुआ। क्योंकि हमारा मानना था कि अगर शैतान भी भारत में आ जाए – जहाँ अनादिकाल से स्त्री को माँ के समान पूजा जाता रहा है – तो वो किसी स्त्री की हत्या जैसा घिनौना काम नहीं कर सकता। लेकिन ये विश्वास चकनाचूर हो गया। मानवता और इंसानियत, दोनों चकनाचूर हो गईं... मनुष्य के रूप में जन्मा एक राक्षस ने एक स्त्री पर बेरहमी से जानलेवा हमला किया। इंदिराजी इस हमले की शिकार हो गईं। उन्होंने खुद को इसके लिए तैयार कर लिया था, लेकिन देश की चेतना इस त्रासदी को सहने के लिए तैयार नहीं थी... इस घटना को समझना किसी के लिए भी नामुमकिन था, क्योंकि ये बर्बर हमला इंदिराजी के अपने अंगरक्षकों ने किया था। रक्षक ही विनाशक बन गया! जिस व्यक्ति को इंदिराजी ने अपनी सुरक्षा का जिम्मा सौंपा था, वही धोखेबाज निकला। जिस अंगरक्षक ने इंदिराजी के साथ 10-12 वर्षों के घनिष्ठ संबंध में रहकर उनकी महानता को करीब से देखा था, उसने उनकी हत्या कैसे की? उसके लिए महामाता की हत्या जैसा अमानवीय कृत्य करना कैसे संभव हुआ, जिनके समक्ष विश्व के प्रमुख राजनेता, रणनीतिकार और राजनयिक भी आदरपूर्वक नतमस्तक होते थे?

हम रोने में विश्वास नहीं करते। लेकिन कब तक हम अपने भावों को रोक सकते हैं? जीवन मृत्यु द्वारा मनुष्य को दिया गया लाइसेंस है। जब यह लाइसेंस समाप्त हो जाता है, तो सभी को जाना पड़ता है... हम अपने आँसू नहीं रोक सकते क्योंकि इंदिराजी उस अवधि के समाप्त होने से पहले ही चली गईं... वे अमर हो गईं!... उन्होंने मृत्यु का साहसपूर्वक सामना किया। उन्हें मृत्यु से भय नहीं था; मृत्यु उनसे भयभीत थी। अंत में, उसने कायरों की तरह उन पर आक्रमण किया। लेकिन इंदिराजी युधिष्ठिर के साहस के साथ स्वर्ग की सीढ़ियाँ चढ़ गईं। जो सम्मान युधिष्ठिर को नहीं मिला, वह इंदिराजी को प्राप्त हुआ। जब युधिष्ठिर स्वर्ग गए, तो महाभारत के 105 कौरवों और पांडवों ने युधिष्ठिर को विदाई दी। लेकिन जब इंदिराजी स्वर्ग गईं, तो महाभारत के साथ-साथ 105 देशों ने भी आँसुओं के साथ उन्हें विदाई दी। देवताओं को भी स्वर्ग जाते समय ऐसा सम्मान नहीं मिला होगा... लेकिन चाहे हम स्वर्ग से ईर्ष्या करें, हमें इंदिराजी वापस नहीं मिलेंगी। इंदिराजी जैसी दूसरी कोई नहीं होगी। ऐसा व्यक्तित्व युगों में एक बार ही जन्म लेता है। भविष्य में मार्गरेट थैचर और गोल्डा मीर जैसी महान हस्तियां होंगी, लेकिन इंदिरा जी जैसी कोई नहीं होगी, क्योंकि वे धरती का अनमोल रत्न और ईश्वर का वरदान थीं। उनका जन्म महान भारत में हुआ, लेकिन वे विश्व की थीं... धरती पर ऐसा कोई देश नहीं था जो उनके चरणों के स्पर्श से पवित्र न हुआ हो... उन्होंने विश्व को प्रभावित किया और उसे प्रकाश दिया। विश्व ने भी उन पर अपना प्रेम बरसाया। उनके लिए राजनीति एक यात्रा थी, लक्ष्य नहीं। उन्होंने भारत को अपनी इस यात्रा का वाहन चुना, और इस देश को जयद्रथ का महत्व प्राप्त हुआ। यह रथ चैतन्य रथ में परिवर्तित हो गया। इस देश को अनगिनत समस्याओं का सामना करना पड़ा, लेकिन इंदिरा जी ने कभी भी रथ के पहियों को मिट्टी में फंसने नहीं दिया। उन्होंने निडर होकर देश के मामलों का संचालन किया। उन्होंने इस देश के हर इंसान से प्रेम किया... इस देश का कोई भी कोना उनकी मानवता की भावना से अछूता नहीं रहा।

उनकी हत्या के बाद नई दिल्ली में फैली सिख विरोधी हिंसा मुंबई तक नहीं पहुंची। ठाकरे ने दावा किया है कि तत्कालीन राष्ट्रपति जैल सिंह ने शहर में शांति बनाए रखने के लिए उनकी प्रशंसा की थी।

सिख विरोधी दंगों के बाद जब ज़ैल सिंह मुंबई आए, तो उन्होंने मुझे राजभवन में आमंत्रित किया। दत्ताजी नलावडे मेरे साथ वहाँ गए थे। राष्ट्रपति ने मुझसे कहा: “मुंबई में सिख आपकी वजह से सुरक्षित रहे हैं। अगर आपने सिर्फ़ आह्वान किया होता, तो यहाँ भी ऐसे ही प्रदर्शन और उन्माद देखने को मिलता। आपने ऐसा कुछ नहीं किया।”¹⁰⁹

शिवसेना के आलोचकों ने कहा कि यह किसी और बात से ज्यादा शिवसेना की उपद्रव करने की क्षमता के बारे में एक बयान था, लेकिन ठाकरे ने इसे वास्तविक प्रशंसा के रूप में देखा, जो 'अस्पष्ट रूप से, आज तक किसी भी समाचार पत्र द्वारा प्रकाशित नहीं की गई है'।

20

भाजपा के साथ हाथ मिलाना

इंदिरा गांधी की हत्या के बाद हुए 1984 के लोकसभा चुनावों के लिए शिवसेना और भाजपा ने पहली बार गठबंधन किया था। 1971 में भी गठबंधन बनाने के प्रयास किए गए थे, लेकिन वे असफल रहे थे। इस बार भी भाजपा ने नामांकन दाखिल करने के दिन तक जनता पार्टी के साथ गठबंधन करने की कोशिश की, और बातचीत विफल होने के बाद ही शिवसेना के साथ बातचीत में तेजी आई।
इन प्रयासों का फल मुख्य रूप से भाजपा नेता प्रमोद महाजन के प्रयासों के कारण मिला। वे इस गठबंधन के मुख्य सूत्रधार थे, उनका तर्क था कि शिवसेना के साथ समझौते से भाजपा को लाभ होगा। उन्होंने अपनी पार्टी के भीतर विरोध के बावजूद अपने रुख पर अडिग रहे और सफल रहे।
यह तय किया गया कि शिवसेना मुंबई की दो सीटों - दक्षिण-मध्य और उत्तर-मध्य मुंबई - पर चुनाव लड़ेगी, जबकि शेष चार सीटों पर भाजपा चुनाव लड़ेगी। महाराष्ट्र के बाकी हिस्सों में शिवसेना कोई उम्मीदवार नहीं उतारेगी, बल्कि भाजपा के उम्मीदवारों का समर्थन करेगी।
सामना पत्रिका में एक लेख में, महाजन ने शुरुआती दिनों को याद किया, जब वे वार्ता के लिए ठाकरे के आवास के चक्कर लगाया करते थे:

मैं जनसंघ का पहला व्यक्ति नहीं था जिसने ठाकरे से दोस्ती का हाथ बढ़ाया। उन्होंने हिंदुत्व का मार्ग अपनाया था। मैंने उनसे कहा: एक हिंदू मराठा, माली, दलित, मारवाड़ी और ब्राह्मण के रूप में वोट देता है, लेकिन कभी भी हिंदू के रूप में नहीं। हमारी राजनीति कैसे सफल होगी? बिना किसी झिझक के उन्होंने उत्तर दिया: “जब मैंने शिवसेना शुरू की थी, तब भी लोग यही कहते थे
– कि मराठी मानुष मराठी के रूप में वोट नहीं देता। लेकिन मैंने इसे गलत साबित कर दिया। आप देखेंगे, मैं हिंदुओं को हिंदू के रूप में वोट दिलवाऊंगा।” मुझे उनकी बात पर विश्वास करने में हिचकिचाहट हुई। उन्होंने महज पांच वर्षों में अपनी बात साबित कर दी।¹¹⁰

ठाकरे ने चुनाव प्रचार के दौरान भाजपा की ओर से मोर्चा संभाला। उन्होंने टिप्पणी की कि राजीव गांधी के शपथ ग्रहण समारोह में वंशवादी उत्तराधिकार की बू आ रही थी, और आगे कहा: 'इंदिरा के बाद राजीव, और राजीव के बाद राहुल। क्या प्रधानमंत्री की कुर्सी कोई पान-बीड़ी की दुकान है, कि पिता की मृत्यु के बाद पुत्र पदभार संभाल लेता है?'
ए.बी. वाजपेयी के साथ ठाकरे ने मुंबई में कई बैठकें कीं और यह संकेत दिया कि भारत में हिंदुत्व की लहर आने वाली है। लेकिन मतदाता अभी तक हिंदुत्व के इस नारों को मानने को तैयार नहीं थे।
राजीव गांधी को स्वतंत्र भारत के इतिहास में अभूतपूर्व जनादेश मिला। कांग्रेस-आई को 400 से अधिक सीटें मिलीं, जबकि चारों राष्ट्रीय विपक्षी

दलों को मिलाकर केवल 19 सीटें मिलीं। इस एकतरफा संसद के निर्माण में महाराष्ट्र ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। राज्य की 48 सीटों में से कांग्रेस-आई ने 43 सीटें जीतीं।
भाजपा जिन 20 सीटों पर चुनाव लड़ी, उनमें से एक भी सीट नहीं जीत सकी, और शिवसेना अपनी दोनों सीटें कांग्रेस से हार गई।
महाराष्ट्र में गठबंधन से भाजपा की उम्मीदें जगी थीं, लेकिन वे पूरी नहीं हुईं। कई भाजपा नेताओं ने महाराष्ट्र में विफलता का कारण शिवसेना जैसी 'बदनाम' पार्टी के साथ गठबंधन को बताया। इनमें सबसे आगे वकील राम जेठमलानी थे।
राज्य में भाजपा की ताकत हमेशा से ही नगण्य रही है। विधानसभा चुनावों में उसकी उच्चतम संख्या 14 थी, और लोकसभा चुनावों में उसका उच्चतम आंकड़ा शून्य था।
फिर भी, पार्टी के 'चुनावोत्तर आत्मनिरीक्षण सत्र' में सारा दोष शिवसेना पर मढ़ा गया, और भाजपा ने मार्च 1985 में होने वाले विधानसभा चुनावों में शिवसेना से दूरी बनाए रखने का फैसला किया।
भाजपा अपने दम पर चुनाव नहीं लड़ सकी, इसलिए उसके नेता कांग्रेस-एस नेता शरद पवार के साथ बातचीत में जुट गए, जो कांग्रेस-आई के खिलाफ एक मोर्चा बनाने की कोशिश कर रहे थे। जनता पार्टी और वामपंथी दल इस मोर्चे में शामिल होने के लिए सहमत हो गए, जिसे पुरोगामी लोकशाही अघाड़ी (पुलोद) नाम दिया गया। भाजपा भी इसमें शामिल हो गई। शिवसेना को बातचीत की प्रक्रिया से भी दूर रखा गया।
मुंबई में जनता पार्टी के नेता मृणाल गोरे और पुलोद के वामपंथी समर्थक भगवा संगठन से घृणा करते थे।
यहां तक कि जब ठाकरे ने मोर्चे में शामिल होने की इच्छा व्यक्त की और कहा कि सीटों के बंटवारे का काम पवार पर छोड़ दिया जाना चाहिए, तब भी पवार ने ठाकरे के साथ अपनी मित्रता के बावजूद जवाब देने से इनकार कर दिया।
महाजन शिवसेना को गठबंधन से बाहर रखने के फैसले से असहमत थे और गोरे और वामपंथी दलों के विरोध के बावजूद, गठबंधन के घटक दलों के बीच सीटों का बंटवारा लगभग पूरा हो जाने के बाद भी उन्होंने पार्टी को गठबंधन में शामिल करने के अपने प्रयासों को नहीं छोड़ा।
उन्होंने पवार को एक रास्ता सुझाया: पुलोद शिवसेना के साथ उसी तरह समझौता कर सकता है जैसे अंतुले ने 1980 में किया था। शिवसेना किसी भी सीट पर चुनाव नहीं लड़ेगी, लेकिन मोर्चे का समर्थन करेगी। इसके बदले में मोर्चा विधानसभा में कुछ सीटें देगा।
पवार और महाजन इस विचार पर चर्चा करने के लिए ठाकरे के बांद्रा स्थित आवास की ओर रवाना हुए, लेकिन तब तक काफी देर हो चुकी थी। शिवसेना प्रमुख पहले ही कई शिवसेना उम्मीदवारों के नाम घोषित कर चुके थे और उन्होंने दोनों से कहा कि वे अपने फैसले से पीछे नहीं हट सकते।
विधानसभा चुनाव में शिवसेना को सिर्फ एक सीट मिली, जिसमें उसके एकमात्र विजयी उम्मीदवार छगन भुजबल थे। कांग्रेस-आई को 162 सीटें, कांग्रेस-एस को 54, जनता पार्टी को 20, भाजपा को 16 और पीडब्लूपी को तेरह सीटें मिलीं।

21

मुंबई चुनाव 1985:
जीवन का एक नया आरंभ

लोकसभा और विधानसभा चुनावों में मिली हार शिवसेना के लिए एक बड़ा झटका थी। फिर भी, इससे पार्टी पूरी तरह से कमजोर नहीं हुई, क्योंकि पार्टी मुंबई और ठाणे तक ही सीमित थी और संसद और विधानसभा में प्रतिनिधित्व की उसकी आकांक्षाएं भी सीमित थीं। शिवसेना ने अपना जनाधार बढ़ाने के लिए हिंदुत्व का नारा अपनाया था, लेकिन दस विधानसभा सीटें और अधिकतम पांच लोकसभा सीटें जीतना ही उसका सर्वोच्च लक्ष्य था। आखिरकार, मुंबई, ठाणे और कोंकण तटीय क्षेत्र के कुछ हिस्सों के बाहर पार्टी का अस्तित्व लगभग न के बराबर था। 1985 के अंत में महाराष्ट्र भर में पार्टी का विस्तार करने के लिए ठोस कार्रवाई शुरू की गई, लेकिन साल के पहले छमाही में, शिवसेना के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात आगामी बीएमसी चुनाव थे।
25 अप्रैल को होने वाले नगर निगम चुनावों में हार का उस संगठन पर बेहद बुरा असर पड़ेगा जो अभी-अभी बुरे दौर से बाहर निकला था।
लेकिन अगर शिवसेना को बीएमसी चुनावों में अपनी संभावनाओं को लेकर कोई संदेह था, तो उसके राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी, मुख्यमंत्री वसंतदादा पाटिल ने उसे दूर कर दिया।
कांग्रेस-आई में गुटबाजी चरम पर थी, और बीपीसीसी और एमपीसीसी के बीच की लड़ाई बेहद भयंकर थी। बीपीसीसी प्रमुख मुरली देवरा को मात देने के लिए, पाटिल ने यह अफवाह फैलाने में मदद की कि केंद्र सरकार मुंबई को केंद्रीय प्रशासन के अधीन करने की 'योजना' बना रही है क्योंकि यह भारत का सबसे धनी शहर है।
लेकिन ऐसा करके उन्होंने वस्तुतः बीएमसी को शिवसेना के हवाले कर दिया। केंद्रीय प्रशासन का ऐसा कोई भी सुझाव शिवसेना और साथ ही मराठी भाषी मतदाताओं के बहुमत के लिए अस्वीकार्य था, जिनके लिए मुंबई को महाराष्ट्र में शामिल करना एक भावनात्मक मुद्दा था।
मुख्यमंत्री पाटिल ने एक कदम आगे बढ़कर मराठी लोगों की भावनाओं को भड़काते हुए कहा कि 'मुंबई महाराष्ट्र में हो सकता है, लेकिन मुझे मुंबई में कहीं भी महाराष्ट्र नजर नहीं आता।'
शिवसेना को बीएमसी चुनावों के लिए अपना मुद्दा मिल गया था।
भाजपा के साथ कोई गठबंधन नहीं हुआ और शिवसेना के उम्मीदवार 'मराठी मुंबई' के नारे के साथ शहर के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में प्रचार करने निकल पड़े। मतदाताओं को याद दिलाया गया कि कांग्रेस ने ही इस तरह की साजिशों को अंजाम दिया था। अगर मतदाता कांग्रेस को वोट देते, तो वे मुंबई को महाराष्ट्र से अलग करने की सहमति दे देते; अगर वे शिवसेना को वोट देते, तो उन्हें बताया गया कि मुंबई कभी भी मराठी राज्य से अलग नहीं हो सकता। मुख्यमंत्री ने बाद में अपने बयान को वापस लेने की कोशिश की, लेकिन 'मुंबई के बिना महाराष्ट्र' का डर अन्य मुद्दों पर हावी हो चुका था।

शिवसेना को भारी समर्थन मिला: उसने चुनाव लड़ी 139 सीटों में से 74 सीटें जीतीं। दूसरे स्थान पर कांग्रेस-आई रही: उसने सभी 170 सीटों पर चुनाव लड़ा, लेकिन केवल 37 सीटें ही जीत पाई। पुलोद गठबंधन, जिसमें इस बार केवल कांग्रेस-एस और जनता पार्टी शामिल थीं, बुरी तरह विफल रहा। कांग्रेस-एस को चुनाव लड़ी 63 सीटों में से 9 सीटें मिलीं, और जनता पार्टी, जिसके पास पहले 38 सीटें थीं और अब उसने 102 उम्मीदवार उतारे थे, केवल 10 पार्षद ही जीत पाई। भाजपा, जिसने 136 सीटों पर चुनाव लड़ा था, केवल 13 सीटें ही जीत पाई। सेना पक्षी, जो धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था और उड़ान भरने से पहले की गति तक पहुँच गया था, आखिरकार उड़ान भर चुका था। और उसकी महत्वाकांक्षाओं को पंख लग गए थे।

शाह बानो विवाद
शिवसेना के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश करने से पहले, शाह बानो विवाद ने उसे अपने हिंदुत्व के एजेंडे को और मजबूत करने का मौका दिया।
जब मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (एमपीएलबी) ने शाह बानो¹¹¹ को भरण-पोषण देने वाले सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर आपत्ति जताई और केंद्र से संसद में विधेयक पेश करके फैसले को रद्द करने की मांग करते हुए पूरे भारत में रैलियां आयोजित की गईं, तो शिवसेना और भाजपा ने इस मांग की निंदा की और न्याय के लिए संघर्ष कर रही मुस्लिम महिलाओं को हर संभव मदद देने का संकल्प लिया। हालांकि, महाराष्ट्र में भी मुस्लिम विरोध प्रदर्शन जारी रहे। मालेगांव में लगभग 35,000 मुस्लिम महिलाओं ने एक सम्मेलन में भाग लिया और सर्वोच्च न्यायालय के फैसले की निंदा करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया। 30 सितंबर को भिवंडी मुस्लिम पर्सनल लॉ एक्शन कमेटी (महिला) द्वारा इस फैसले के विरोध में एक बैठक आयोजित की गई। 13 अक्टूबर को, मुस्लिम पर्सनल लॉ के समर्थन में अखिल भारतीय मुस्लिम विधि बोर्ड की महाराष्ट्र एक्शन कमेटी (महिला शाखा) द्वारा मुंबई में इसी तरह की एक बैठक आयोजित की गई।
अब तक, मुस्लिम समाज के प्रगतिशील वर्गों में आक्रोश की लहर दौड़ रही थी, लेकिन इसका प्रकोप कट्टरपंथी लहर के प्रकोप के मुकाबले आधा भी नहीं था। जैसे ही शरीयत को भारतीय संविधान और भारतीय कानूनों से श्रेष्ठ घोषित किया गया, शिवसेना ने हिंदुओं को चेतावनी के संकेत भेजे और भारत की अखंडता के लिए कथित खतरे को रेखांकित किया।
भारत के सिर पर मंडरा रहे 'इस्लामिक बम' की बात कहते हुए बाल ठाकरे ने मार्मिक में लिखा:

हर राष्ट्र का एक ही कानून होता है। लेकिन हमारे देश में कानून और पाबंदियां हिंदुओं के लिए हैं और सारी रियायतें मुसलमानों के लिए। हम इसे कब तक बर्दाश्त करेंगे? अल्पसंख्यकों को कुछ रियायतें दी जा सकती हैं, लेकिन अगर वे राष्ट्रीय हित और मानवाधिकारों में बाधा डालती हैं, तो उन्हें वापस ले लेना चाहिए...¹¹²

सैयद शहाबुद्दीन द्वारा यह घोषणा करने के बाद कि ‘मैं भारत सरकार, संसद और सर्वोच्च न्यायालय को इस्लाम के मूल सिद्धांतों को निर्धारित करने वाले

धर्मग्रंथों की व्याख्या करने में सक्षम नहीं मानता’¹¹³, शिवसेना प्रमुख की भाषा और भी कटु हो गई। अब उन्होंने केवल इस्लामी बम की ओर इशारा नहीं किया; उन्होंने संविधान को अस्वीकार करने वालों को फांसी देने की मांग की। सुप्रीम कोर्ट के फैसले के खिलाफ विरोध प्रदर्शन और भी उग्र होते जा रहे थे, ऐसे में ठाकरे ने अपना अभियान और भी तेज कर दिया। उन्होंने लिखा:

हमारे नेता चुप हैं क्योंकि उन्हें मुस्लिम वोट चाहिए। सिर्फ मुसलमान ही बोल रहे हैं... भारत में मुसलमान हर वाक्य में "मुसलमान" कह सकते हैं, लेकिन हिंदू "हिंदू" शब्द का उच्चारण भी नहीं कर सकते।
कल शायद हिंदुस्तान को सबसे बड़ा मुस्लिम देश घोषित कर दिया जाए... इस राष्ट्र में सर्वोच्च कौन है? न्यायालय, संसद, या भिंडी बाज़ार के मुसलमान?¹¹⁴

मराठी दैनिक लोकसत्ता को दिए एक साक्षात्कार में ठाकरे ने बेबाक और गैर-पारंपरिक रवैया अपनाया।

मुस्लिम प्रदर्शन भड़काऊ था। वे "हमें पाकिस्तान आसानी से मिल गया, अब हम हिंदुस्तान पर कब्जा करेंगे" जैसे नारे लगा रहे थे। ये नारे हमें विभाजन से पहले के दिनों की याद दिलाते हैं। हमने विभाजन का जहर पी लिया है, हम गृहयुद्ध नहीं चाहते। बड़ी संख्या में मुसलमान अपने देश के प्रति वफादार हैं, लेकिन मुट्ठी भर सांप्रदायिक मुसलमानों पर लगाम लगानी होगी... सभी सच्चे देशभक्त मुसलमानों को इसके लिए आगे आना चाहिए... देश में भले ही अनेक धर्म हों, लेकिन एक ही संविधान होना चाहिए और एक ही कानून सभी पर लागू होना चाहिए... क्या रूस या अमेरिका में मुसलमानों के लिए अलग-अलग कानून लागू होते हैं?

22

ग्रामीण क्षेत्रों की ओर जाने वाली सड़कें

जब तक शिवसेना का एजेंडा आक्रामक महाराष्ट्रीयनवाद तक सीमित था, तब तक मुंबई, ठाणे और शायद सीमित रूप से पुणे से आगे बढ़ना उसके लिए असंभव था, क्योंकि मूल निवासी बनाम प्रवासी का मुद्दा इन्हीं क्षेत्रों तक सीमित था। राज्य के अन्य हिस्सों में मराठी भाषी लोग बहुमत में थे, इसलिए वहां मराठी का मुद्दा कारगर नहीं होता।
मुंबई और ठाणे में अपनी पकड़ मजबूत कर लेने के बाद, शिवसेना को अपना आधार बढ़ाने की जरूरत महसूस होने लगी। यही कारण था कि उसने 1984-85 में हिंदुत्व का मार्ग अपनाया। 1985 के उत्तरार्ध में, यानी शाह बानो विवाद पर अपने रुख से मिली लोकप्रियता के मद्देनजर, शिवसेना ने पहली बार अपने महानगरीय क्षेत्रों से बाहर कदम रखा।
नवंबर 1985 में इसने अपना दूसरा राज्यव्यापी सम्मेलन महाड में आयोजित किया, जो शिवाजी की राजधानी रायगढ़ किले के पास स्थित है और कोंकण क्षेत्र का केंद्र है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रयोग के लिए कोंकण को प्राथमिकता दी गई थी क्योंकि इस क्षेत्र का मुंबई से गहरा सामाजिक-आर्थिक संबंध है और मुंबई के अधिकांश मिल मजदूर यहीं से आते हैं। इसलिए, पार्टी का तर्क था कि राज्य के इस हिस्से में, जहां मुंबई के मजदूरों के परिवार अन्य ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शिवसेना के बारे में अधिक जानते हैं, अन्य जगहों पर जाने से पहले इसका लाभ उठाया जाना चाहिए।
अधिवेशन के लिए नारा था "आता घोड़-दौड़ महाराष्ट्रत" (अब हम सरपट दौड़ते हुए महाराष्ट्र में प्रवेश करते हैं), और सम्मेलन से पहले के दिनों में ऐसा नाटकीय घटनाक्रम देखने को मिला कि ग्रामीण महाराष्ट्र को भी शिवसेना की ओर ध्यान देना पड़ा।
सारी घटना महाराष्ट्र-कर्नाटक सीमा विवाद के इर्द-गिर्द घूमती रही और इसका अधिकांश श्रेय मुंबई के नव नियुक्त महापौर छगन भुजबल को जाता है। शिवसेना ने महाड सम्मेलन से कुछ दिन पहले बेलगाम में सीमा मुद्दे पर सत्याग्रह आयोजित करने का फैसला किया, जिसके परिणामस्वरूप कर्नाटक पुलिस की ओर से उसे कड़ी प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ा। शिवसेना ने महाराष्ट्र भर के मराठी भाषी लोगों की सहानुभूति हासिल की।
सम्मेलन को संबोधित करते हुए ठाकरे ने शपथ ली कि जब तक पूरे महाराष्ट्र पर विजय प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक वे नहीं रुकेंगे, और ऐसी विजय की नींव रखने के लिए, शिवसेना ने राज्य के सभी जिलों में संपर्क प्रमुखों (संचार प्रमुखों) की नियुक्ति की।
संपर्क प्रमुखों ने भुजबल के साथ मिलकर तुरंत इस कार्य में खुद को जुट दिया।
1986 के मध्य में, जब शिवसेना ने अभी भीतरी इलाकों में अपनी पैठ बनानी ही शुरू की थी, तब पार्टी ने कांग्रेस-एस और जनता पार्टी के साथ मिलकर सीमा मुद्दे पर एक और आंदोलन आयोजित करने का फैसला किया। इस बार बेलगाम में

भुजबल का आक्रामक प्रदर्शन पार्टी के लिए एक प्रचार रणनीति के रूप में काम आया।
बेलगाम में प्रवेश पर लगे प्रतिबंध को दरकिनार करने के लिए, भुजबल ने भेष बदलकर सीमावर्ती कस्बे में घुसपैठ की, मानो कोई सैनिक नियमों की धज्जियां उड़ा रहा हो। मोहम्मद इकबाल शेख बनकर वह पणजी के लिए उड़ान भरी और वहां से बेलगाम के लिए गाड़ी चलाई, साथ ही यह भी सुनिश्चित किया कि उनके इस नाटकीय दृश्य को हमेशा के लिए रिकॉर्ड करने के लिए एक फोटोग्राफर भी मौजूद रहे। कर्नाटक के अधिकारियों को चुनौती देने वाले भेष बदले हुए भुजबल की तस्वीरें महाराष्ट्र के अखबारों में छाई रहीं और उनकी अनोखी फुर्ती लोगों के बीच जिज्ञासा का विषय बन गई।
शिवसेना के निचले स्तर के नेताओं का विश्वास हासिल करते हुए, भुजबल ने राज्य के चार प्रमुख क्षेत्रों में से तीन में प्रवेश किया: कोंकण, उत्तरी महाराष्ट्र और मराठवाड़ा (चौथा विदर्भ है)।
ये एक जमीनी राजनेता थे, जिनका जनता से गहरा जुड़ाव था और शिवसेना के आम कार्यकर्ताओं से उनके अच्छे संबंध थे। उनकी स्पष्टवादिता, जिसके माध्यम से उन्होंने शिवसेना की 'केवल शहरी' छवि को मिटाने की कोशिश की, ने उन्हें प्रभावित किया।

ग्रामीण क्षेत्रों के मेहनतकश किसानों को मुंबई को देखकर भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है। मुंबई पूरे महाराष्ट्र का हिस्सा है। मुंबईवासियों को महाराष्ट्र के आंतरिक क्षेत्रों से पानी मिलता है, ग्रामीण क्षेत्रों से सब्जियां मिलती हैं और मुंबई को मिलने वाली बिजली भी राज्य के अन्य हिस्सों से आती है। यदि शेष महाराष्ट्र मुंबई को ये सब आपूर्ति नहीं करेगा, तो शहर ध्वस्त हो जाएगा। क्या यह साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि मुंबई पूरे महाराष्ट्र का हिस्सा है?

उत्पात मचाना
जब 1986 में बाबरी मस्जिद-राम जन्मभूमि का मुद्दा फिर से चर्चा में आया, तो शिवसेना ने भाजपा के साथ मिलकर नासिक में रथ यात्रा आयोजित करने का निर्णय लिया, क्योंकि नासिक और पंचवटी का 'राम धरती' के रूप में 'विशेष महत्व' था (माना जाता है कि राम, सीता और लक्ष्मण पंचवटी में रहे थे)। उन्होंने मुस्लिम बहुल क्षेत्रों से जुलूस को गुजरने की अनुमति देने पर जोर दिया, लेकिन सांप्रदायिक अशांति की आशंका के चलते पुलिस उपाधीक्षक ने अनुमति देने से इनकार कर दिया।
इसके बावजूद, यह जुलूस गुड़ी पड़वा के दिन निकाला गया, जो महाराष्ट्रियन नव वर्ष का प्रतीक है, और भुजबल ने पुलिस प्रतिबंध का उल्लंघन करते हुए अपने गले में राम की छवि वाला एक फ्रेम पहना और यात्रा का नेतृत्व किया। शहर में अगला बड़ा आयोजन 10 मई 1986 को शिव जयंती की शोभायात्रा थी। शिव जयंती से दो दिन पहले, पुलिस अधिकारियों ने शांति समिति की बैठक बुलाई, जिसमें शिवसेना के स्थानीय प्रमुख राजेंद्र बागुल, आरएसएस, भाजपा, कांग्रेस-आई और हिंदू एकता आंदोलन के सदस्य, साथ ही कुछ प्रमुख मुस्लिम भी उपस्थित थे। तब यह तय किया गया कि शोभायात्रा मुस्लिम बहुल क्षेत्रों से होकर गुजरेगी और मुस्लिम शरबत और ठंडे पानी से उनका स्वागत करेंगे। अंततः,

महाराष्ट्र की लगभग सभी पार्टियों ने अपनी राजनीति इसी जाति पर केंद्रित की।
कांग्रेस के सत्ता में आने के दौरान, उसे मराठा समुदाय का व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ और उसने जातिगत संबंधों को और अधिक राजनीतिक रंग देने का प्रयास किया। कांग्रेस उभरते हुए विपक्षी नेताओं और कार्यकर्ताओं को अपने पाले में लाने में भी माहिर थी, जिससे वह समय-समय पर विपक्ष की ताकत को कमज़ोर करती रही। यही कांग्रेस की सफलता और विपक्षी दलों की विफलता का एक प्रमुख कारण था।
लेकिन मराठा-कुनबी समुदाय में भी धीरे-धीरे मोहभंग होने लगा था। उन्हें चारों ओर वंशवादी शासन दिखाई दे रहा था: सांगली के पाटिल, पुसाद के नायक, नासिक के हाइरे, लातूर के देशमुख, मालशिरा के मोहिते-पाटिल और नांदेड़ के चव्हाण। और वे जानते थे कि परिवार कैसे शासन करते हैं: पिता विधायक, पुत्र चीनी कारखाने का अध्यक्ष, भाई जिला परिषद अध्यक्ष और बहनें और पत्नियां जिला बैंकों की अध्यक्ष।
सत्ता जाति के हाथ में नहीं थी, बल्कि सामंती प्रभुओं के हाथ में थी। और जो लोग प्रभुओं के निहित स्वार्थों का हिस्सा नहीं थे, चाहे वे मराठा-कुनबी हों या बहुजन समाज के अन्य सदस्य, वे साधारण किसान थे।
जब तक कांग्रेस ने बहुजन समाज के हितों की रक्षा की, तब तक बहुजन समाज उसके प्रति वफादार रहा। लेकिन 1970 के बाद, जब सामंतवाद चरम पर पहुंच गया, तो बहुजन समाज ने एक विकल्प तलाशना शुरू कर दिया।
इसने 1978 में जनता पार्टी को आजमाया, लेकिन यह विकल्प अव्यवहार्य साबित हुआ। पहला व्यवहार्य विकल्प पवार द्वारा कांग्रेस छोड़ने और पुलोद का गठन करने के बाद प्रदान किया गया।
युवा, ऊर्जावान और महत्वाकांक्षी कार्यकर्ताओं के लिए, जिनके लिए कांग्रेस के दरवाजे पूरी तरह बंद हो चुके थे, उनकी कांग्रेस-एस और उससे जुड़े पुलोद संगठन के रूप में एक अवसर मिला। चीनी कारखानों, ऋण समितियों, बैंकों, बाज़ारों – लगभग हर जगह – स्थानीय कांग्रेसी नेताओं की मनमानी से परेशान लोगों को पवार में एक ऐसा नेता मिला जिससे वे जुड़ाव महसूस कर सकते थे। भाजपा और जनता पार्टी के नेताओं के विपरीत, उनकी छवि शहरी नहीं थी। वे पूरी तरह से ग्रामीण महाराष्ट्र के व्यक्ति थे। जब उन्होंने लोगों से कांग्रेस शासन को उखाड़ फेंकने की अपील की, तो ग्रामीण क्षेत्रों के मराठी लोगों ने उन्हें भरपूर समर्थन दिया। 1980 और 1985 के चुनाव परिणामों ने दिखाया कि कांग्रेस का एक विकल्प वास्तव में उभर कर सामने आ गया था।
पवार ने भी तब मराठा राजनीति खेली, फिर भी सभी जातियों के राजनीतिक कार्यकर्ता उनके आसपास इकट्ठा हो गए।
लेकिन फिर वे लंबे समय तक सत्ता से बाहर नहीं रह सके। विपक्ष के नेता बनने के डेढ़ साल बाद, पवार 1986 के अंतिम दौर में कांग्रेस-आई में वापस लौट आए। उनके द्वारा पोषित युवा कार्यकर्ता, जो उनसे आशा भरी नजरों से देख रहे थे, उन्हें अपने जीवन का सबसे बड़ा झटका लगा।
पवार उसी कांग्रेस में शामिल हो गए थे और उसी गांधी परिवार को लुभाने की कोशिश कर रहे थे, जिसकी उन्होंने निंदा की थी और जिसके खिलाफ उन्होंने राज्य भर के कई युवा कार्यकर्ताओं को लड़ने का आह्वान किया था। कांग्रेस-एस के कार्यकर्ता असमंजस में थे। ग्रामीण जनता भी असमंजस में थी, जिसने पवार के मोर्चे का समर्थन करना शुरू कर दिया था क्योंकि उन्हें लगता था कि यह कांग्रेस का एक वास्तविक विकल्प है।

क्या इस नुकसान की भरपाई के लिए कोई अन्य विपक्षी दल नहीं थे? जनता पार्टी और भाजपा की ग्रामीण क्षेत्रों में कोई मजबूत पकड़ नहीं थी, और पीडब्लूपी की रायगढ़ जिले में कुछ ही क्षेत्रों में पकड़ थी। इसके अलावा, भाजपा, जनता पार्टी और पीडब्लूपी का नेतृत्व ग्रामीण महाराष्ट्र में पवार की पार्टी के सहारे चल रहा था। पवार की अनुपस्थिति में, किसी के पास भी कांग्रेस के एकमात्र विकल्प के रूप में खुद को पेश करने का आत्मविश्वास या विश्वसनीयता नहीं थी। पवार के कांग्रेस में फिर से शामिल होने के फैसले ने इन पार्टियों को चकनाचूर कर दिया और राज्य की राजनीति में एक शून्य पैदा कर दिया।
इसी शून्य में शिवसेना ने कदम रखा।

पहला लक्ष्य: दुश्मन के गढ़ मराठवाड़ा पर कब्जा करना।
भुजबल के कारनामों और नांदेड़, नासिक और पनवेल में हुई हिंसा ने ग्रामीण जनता का ध्यान 'हिंदुओं की नई सेना' की ओर आकर्षित किया, ऐसे समय में जब पंजाब की स्थिति और शाह बानो मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को पलटने के कारण बहुसंख्यक समुदाय असहज महसूस कर रहा था। राजीव गांधी सरकार द्वारा मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) विधेयक को पेश करना, जिसे रूढ़िवादियों के सामने आत्मसमर्पण के रूप में देखा गया, ने पार्टी को विशेष रूप से मराठवाड़ा क्षेत्र में राजनीतिक लाभ दिलाने में और मदद की, जहां उसने कोंकण में अधिवेशन के तुरंत बाद ध्यान केंद्रित करने का निर्णय लिया था।
मराठवाड़ा, जिसमें सात जिले शामिल हैं - औरंगाबाद, उस्मानाबाद, बीड, परभणी, नांदेड़, जालना और लातूर - महाराष्ट्र का हृदय स्थल है। मध्यकाल में यह क्षेत्र मराठी भाषा का उद्गम स्थल था: संत-कवि ज्ञानेश्वर और एकनाथ पैठण से, समर्थ रामदास जंब से, और मुकुंदराज और दासोपंत अंबेजोगाई से थे।
इन संत-कवियों ने जाति-ग्रस्त हिंदू समाज में सामाजिक एकता स्थापित की थी, लेकिन यह धारणा थी कि निज़ाम के शासनकाल में उर्दू को आधिकारिक भाषा के रूप में थोपने और सार्वजनिक जीवन में मुस्लिम वर्चस्व ने यहाँ के मराठियों के सांस्कृतिक विकास को अवरुद्ध कर दिया था। 1948 में समाप्त हुए निज़ाम शासन की विरासत का मराठवाड़ा के राजनीतिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा और स्थानीय लोगों के मन में सामंती युग के प्रति गहरी नापसंदगी बनी रही।
शिवसेना के हिंदुत्ववादी अवतार का इस क्षेत्र के लोगों ने स्वागत किया। 1986 के मध्य से पहले, मराठवाड़ा में शिवसेना के मुश्किल से 50 समर्थक थे, जबकि पवार की कांग्रेस विरोधी ताकत का अधिकांश हिस्सा यहीं से आया था।
पवार के कांग्रेस-आई में शामिल होने से पूर्व कांग्रेस-एस समर्थकों और हमदर्दों ने शिवसेना की ओर आशा और उम्मीद से देखना शुरू कर दिया।
शिवसेना ने तुरंत एक ऐसा मुद्दा उठाया जिसमें मराठवाड़ा की धरती पर अपनी पकड़ मजबूत करने की संभावना थी और इसका भरपूर फायदा उठाया।
औरंगाबाद के ठीक बीचोंबीच एक बूचड़खाना था, जिसे निवासियों ने कहीं और स्थानांतरित करने की मांग की थी।
शिवसेना ने अपनी मांग को मनवाने के लिए रास्ता रोको प्रदर्शन करने का फैसला किया। और शिवसेना के अधिकांश आंदोलनों की तरह, यह भी हिंसक हो गया।
लगभग 6,000 लोगों ने इसमें भाग लिया, जिनमें से आधे पड़ोसी गांवों से आए

थे, और 2,000 लोगों को गिरफ्तार किया गया। गिरफ्तार किए गए कुछ युवकों ने किसी तरह औरंगाबाद पुलिस स्टेशन की छत पर भगवा झंडा फहरा दिया, जिसके बाद पुलिस को उन्हें काबू में करने के लिए बल प्रयोग करना पड़ा।
बूचड़खाने को तुरंत स्थानांतरित कर दिया गया और शिवसेना ने इसका श्रेय लिया।
पवार द्वारा दल-बदल किए जाने से दिशाहीन हो चुके ऊर्जावान और महत्वाकांक्षी कांग्रेस-एस कार्यकर्ता अब बड़ी संख्या में शिवसेना में शामिल हो गए। उन्हें एक ऐसी पार्टी में राजनीतिक कार्य करने का अवसर मिला जो कांग्रेस के विकल्प के रूप में खुद को पेश करते हुए पूरी गति से आगे बढ़ रही थी।
मराठवाड़ा में यह प्रवेश महत्वपूर्ण था क्योंकि मुख्यमंत्री एस.बी. चव्हाण, जो शिवसेना के कट्टर आलोचक थे, इसी क्षेत्र से आते थे, और यहां सेंध लगाना राज्य भर की सभी पार्टियों को चेतावनी देने के समान था। बूचड़खाने की घटना के बाद, क्षेत्र के लगभग हर गाँव में सेना की शाखाएँ बन गईं और हर गाँव के प्रवेश द्वार पर सेना के बोर्ड और झंडे दिखाई देने लगे। गाँवों में कई दुकानों और घरों पर सेना के झंडे लहराते थे और युवा लड़के गर्व से अपने गले में भगवा रुमाल बाँधे घूमते थे। इतना ही नहीं, सड़कों, पाइपलाइनों, चट्टानों और यहाँ तक कि पेड़ों पर भी बड़े अक्षरों में लिखे सेना के नारों की भरमार यात्रियों की नज़रों के सामने आ जाती थी। मराठवाड़ा में सेना की उपस्थिति स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी थी।
1986 के अंत में मराठवाड़ा के दौरे पर, मुख्यमंत्री एस.बी. चव्हाण शिवसेना के बढ़ते प्रभाव को देखकर स्तब्ध रह गए।
लगभग उसी समय आयोजित बॉम्बे क्षेत्रीय कांग्रेस कमेटी के एक प्रशिक्षण शिविर में, चव्हाण और तत्कालीन केंद्रीय गृह राज्य मंत्री गुलाम नबी आजाद ने शिवसेना के बढ़ते प्रभाव पर चिंता व्यक्त की थी।
लेकिन जहां एक ओर चव्हाण ने शिवसेना के बढ़ते प्रभाव को लेकर अपनी चिंता जाहिर की, वहीं दूसरी ओर ठाकरे की पार्टी ने मुख्यमंत्री के गढ़ में अपनी नई-नई मिली अहमियत पर गर्व जताया।
मराठवाड़ा की आर्थिक पिछड़ापन और व्यापक बेरोजगारी, इस क्षेत्र में शिवसेना को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण कारक थे।
आर्थिक संकेतकों से पता चलता था कि पश्चिमी महाराष्ट्र का सबसे कम विकसित क्षेत्र भी पूरे मराठवाड़ा के किसी भी स्थान से बेहतर था। सत्तर के दशक के आरंभ में, राज्य द्वारा दी गई प्रोत्साहन योजनाओं के फलस्वरूप उद्यमियों ने यहाँ औद्योगिक इकाइयाँ खोलना शुरू कर दिया। यह उम्मीद थी कि क्षेत्र का तेजी से विकास होगा, स्थानीय बेरोजगार युवाओं को रोजगार मिलेगा और तकनीकी रूप से योग्य युवा उद्यमी अपनी छोटी इकाइयाँ स्थापित कर सकेंगे।
लेकिन औद्योगिक इकाइयों ने शहरी क्षेत्रों में स्थित मुख्यालयों से कुशल श्रमिकों को लाया। बड़े उद्योगों ने सहायक उपकरण बनाने के इच्छुक छोटे उद्योगपतियों के लिए कठिन शर्तें खड़ी कर दीं, जिससे छोटे उद्यमियों की उम्मीदें भी खत्म हो गईं।
औरंगाबाद जिले के रोजगार एक्सचेंज में ही 1986 में 62,000 लोग प्रतीक्षा सूची में थे। मराठवाड़ा के छह अन्य जिलों में लगभग 3.5 लाख लोगों ने रोजगार के लिए अपना पंजीकरण कराया था।
इस आंकड़े में उन कृषि श्रमिकों को शामिल नहीं किया गया है, जिनकी आजीविका का एकमात्र साधन क्षेत्र में व्याप्त भीषण सूखे के कारण छिन गया है। अकेले

औरंगाबाद में ही लगभग 2 लाख कृषि श्रमिकों और छोटे किसानों ने रोजगार गारंटी योजना परियोजनाओं में काम की मांग करते हुए फॉर्म भरे थे। इनमें स्नातक और स्नातकोत्तर छात्र भी शामिल थे। अन्य जिलों में भी स्थिति कुछ अलग नहीं थी।
जब शिवसेना ने मराठवाड़ा में अपना प्रभाव फैलाया, तो एक ऐसी पार्टी के रूप में उसकी छवि, जिसने हजारों मराठा लोगों को रोजगार दिया था, ने शिक्षित बेरोजगारों में उम्मीद जगाई। और चूंकि बूचड़खाने के मामले और दंगों में व्यापक हिंदू मंच पर उसने अपने वादे पूरे किए थे, इसलिए ग्रामीण युवाओं को उस पर भरोसा करने का कारण मिला।

23

भगवा कालीन बिछाना

शिवसेना ने नवंबर 1986 में राज्य भर में अपने पक्ष में जनमत जुटाने के लिए भगवा सप्ताह का आयोजन किया। ठाकरे ने पार्टी नेताओं और पार्षदों से संगठन निर्माण अभियान के लिए जिलों का दौरा करने को कहा। उन्होंने मार्मिक में लिखा:

पिछले 20 वर्षों से पूरा महाराष्ट्र हमारा इंतजार कर रहा है, क्योंकि लोगों का अन्य सभी राजनीतिक दलों पर से विश्वास उठ चुका है... हिंदू स्वतंत्रता का ध्वज, जिसे संत रामदास (शिवाजी के गुरु) ने शिवाजी के कंधों पर रखा था, अब हमें कश्मीर से कन्याकुमारी तक विजययात्रा के दौरान अपने कंधों पर उठाना होगा।

Manohar Joshi toured Raigad district; Chhagan Bhujbal was sent to Nashik; Madhukar Sarpotdar went to Aurangabad; labour front chief Dattaji Salvi toured Ratnagiri; Sudhir Joshi went to Pune; Subhash Desai toured Jalgaon; Wamanrao Mahadik was despatched to Sindhudurg; and Pramod Navalkar visited Satara and Sangli districts.
मराठवाड़ा, कोंकण और उत्तरी महाराष्ट्र में सदस्यता अभियान चलाया गया और पार्टी ने दावा किया कि सप्ताह के कारण 20,000 से अधिक शाखाएं स्थापित हुईं। अधिकांश राजनीतिक विश्लेषकों ने इसे अतिशयोक्ति बताया, लेकिन यह स्वीकार किया कि शिवसेना प्रगति कर रही थी।
नवनियुक्त संचार प्रमुख भी बिना किसी पूर्व-निर्धारित योजना के निष्क्रिय नहीं थे। कांग्रेसियों ने शुरू में शिवसेना के इन पदाधिकारियों को अपने-अपने जिलों में आधारहीन और महत्वहीन समझा, लेकिन दृढ़ संकल्प एक ताकत बन सकता है, और शिवसेना के संपर्क प्रमुखों के मामले में, इसी दृढ़ संकल्प ने उन्हें आत्मविश्वास के साथ अपरिचित क्षेत्रों में आगे बढ़ने में मदद की।
Whether it was Diwakar Raote in Parbhani, Mo Da Joshi in Latur, Gajanan Kirtikar in Jalna, Suryakant Mahadik in Kolhapur, Gajanan Thakre in Buldhana, Ramakant Mayekar in Osmanabad, Sharad Acharya in Dhule, Rajeshwar Raginwar in Amravati, Shantaram Barde in Beed or Mahadeo Mote in Solapur, all the communications chiefs employed techniques learnt in the Sena school of operatives to establish a foothold in rural Marathi soil. शिवसेना ने गांवों में अपने किलेनुमा संगठन भव्य ढंग से स्थापित किए। भगवा वस्त्र और बंदना ओढ़े सैनिक चारों ओर गुलाल छिड़कते हुए, शंख बजाते हुए और चमड़े के ढोल, केतली और अन्य वाद्ययंत्रों की थाप पर 'जय भवानी, जय शिवाजी' के नारे लगाते थे। यदि प्रचार राजनीतिक शक्ति का स्रोत है, तो

शिवसेना ने इसका बखूबी उपयोग किया और प्रचार के लिए मराठा परंपरा के प्रतीकों का भरपूर इस्तेमाल किया। इसने मराठा लोगों के अतीत की यादों को ताजा करते हुए खुद को महाराष्ट्र धर्म का रक्षक घोषित किया। और इसने महाराष्ट्र के भीतरी इलाकों के लोगों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि वह धरती से जुड़ी हुई है।

विदर्भ में हिंसा
महज प्रतीकात्मकता से सेना को ज्यादा सफलता नहीं मिल सकती थी। महाराष्ट्रवाद को मजबूत करने के लिए कार्रवाई की जरूरत थी।
इस ‘कार्रवाई’ का बड़ा हिस्सा सांप्रदायिक प्रकृति का था। इससे पहले नांदेड़, नासिक और पनवेल में हिंसा भड़कने से पार्टी को फायदा हुआ था। विदर्भ में भी सांप्रदायिक दंगों के बाद शिवसेना ने अपनी गतिविधियां बढ़ा दीं, जिनके बारे में विरोधियों का आरोप था कि ये शिवसेना द्वारा ही भड़काए गए थे।
विदर्भ के पिछड़े क्षेत्र में स्थित अमरावती जिले में ऐसा सामाजिक-आर्थिक वातावरण था जिसके कारण सांप्रदायिक तनाव उत्पन्न हुआ। वहां गरीबी और बढ़ती बेरोजगारी थी, और शिक्षा के विकास के बावजूद, साक्षरता का अपेक्षाकृत उच्च प्रतिशत कृषि, उद्योग या व्यापार में रोजगार के अवसरों की उपलब्धता के अनुरूप नहीं था।
कृषि मुख्य रूप से कपास की खेती पर आधारित थी, और रोजगार के अभाव के कारण जिले में भारत में सबसे अधिक कृषि श्रमिक थे। इस श्रमशक्ति के लिए काम अपर्याप्त था। कोई नया उद्योग स्थापित नहीं हुआ था, कई पुराने उद्योग बंद हो गए थे, और जो बचे थे उनकी हालत भी खराब थी।
बेरोजगारी के कारण अपराध बढ़ गए और हिंदू एवं मुस्लिम समुदायों के बीच छोटे-मोटे कामों के लिए प्रतिस्पर्धा शुरू हो गई। उदाहरण के लिए, पहले कई कस्बों में मुस्लिम समुदाय पारंपरिक रूप से घोड़ागाड़ी चालक हुआ करता था और उन्हें हिंदू समुदाय का संरक्षण प्राप्त था। बेरोजगारी के कारण हिंदुओं को भी इस पेशे में उतरना पड़ा। इसके अलावा, ऑटो रिक्शा चलाने के लिए भी प्रतिस्पर्धा लगातार बढ़ती जा रही थी।
विधानसभा में शिवसेना पर सत्ताधारी दल और विपक्ष दोनों ने सांप्रदायिक भावनाएं भड़काने का आरोप लगाया। इसके विरोधियों ने कहा कि भुजबल के कथित भड़काऊ भाषणों के बाद विदर्भ में तनाव पैदा हुआ।
सबसे गंभीर आरोप यह था कि शिवसेना उन क्षेत्रों में सांप्रदायिक भावनाएं भड़काने की कोशिश कर रही थी जहां पहले ऐसी कोई भावना मौजूद नहीं थी। अमरावती दंगों पर ध्यानाकर्षण प्रस्ताव के दौरान जब विपक्ष ने देखा कि कांग्रेस विधायकों द्वारा भुजबल को कटघरे में खड़ा कर दिया गया, तब पार्टी का राजनीतिक अलगाव स्पष्ट हो गया।
इसी बहस के दौरान, भुजबल ने सदन में ऐसे इशारे किए जिन्हें अश्लील और अल्पसंख्यक समुदाय के लिए अपमानजनक बताया गया, और उन्हें निष्कासित करने का प्रस्ताव पेश किया गया जिसे विपक्ष ने समर्थन दिया।
इससे भुजबल शिवसेना के कार्यकर्ताओं के और करीब आ गए और उनकी गतिविधियां बढ़ गईं। अमरावती के दंगाग्रस्त गांवों में से एक, वारुद में प्रवेश पर प्रतिबंध लगने के बाद, भुजबल नाटकीय अंदाज में स्कूटर पर सवार होकर गांव

[illegible]
[illegible]
Bhujbal has since claimed that ‘every Sena shakha pramukh outside Mumbai is my creation.’
'[illegible] 1996 [illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[

जो कुछ मराठों के हाथों में सत्ता और आर्थिक विशेषाधिकार के केंद्रीकरण के खिलाफ था।
उस समय नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में सीटों का आरक्षण हिंदुओं और दलितों के बीच तनाव का एक और प्रमुख कारण बन गया था। शिवसेना ने आरक्षण का विरोध किया। उसका मानना था कि कोटा आर्थिक मानदंडों के आधार पर आवंटित किया जाना चाहिए।

सेना और कोंकण
क्या ग्रामीण क्षेत्रों में शिवसेना का प्रभाव केवल धार्मिक और जातिगत संघर्षों के कारण बढ़ा? इसमें कोई संदेह नहीं कि हिंदुत्व की ओर उन्मुख उसकी नीति ने उसकी पहुंच बढ़ाई, लेकिन केवल सांप्रदायिक मुद्दे ही इसके लिए पर्याप्त नहीं थे। कई स्थानों पर, शिवसेना ने 'दृढ़ संकल्प' दिखाया और अपनी पकड़ मजबूत की। उदाहरण के लिए, कोंकण क्षेत्र में, शिवसेना ने स्थानीय लोगों को परेशान करने वाली एक बड़ी समस्या का विश्लेषण किया और उससे निपटने के लिए एक रणनीति तैयार की।
कोंकण, एक लंबी तटीय पट्टी है, जिसमें कई नदियाँ हैं जो इसके गाँवों को पार करते हुए समुद्र में मिल जाती हैं। कुछ नदियाँ तो गाँव को दो भागों में बाँट देती हैं। पुलों के अभाव में, गाँव के दूसरे छोर तक या किसी अन्य गाँव में जाने के इच्छुक स्थानीय व्यक्ति को एक लंबा, घुमावदार रास्ता तय करना पड़ता है, जिसमें कभी-कभी घंटों लग जाते हैं।
निवासियों ने वर्षों से पुलों की मांग की थी, लेकिन उनकी अपीलों पर ध्यान नहीं दिया गया था।
सेना ने इस मुद्दे को उठाया और कोंकण में प्रवेश करते ही अपने निजी कोष से पुल निर्माण कार्य में जुट गई। ये पुल पक्के नहीं थे, बल्कि लकड़ी के तख्तों से बने थे, लेकिन ग्रामीणों के लिए वरदान साबित हुए। कोंकण के रेल और सड़क मार्गों के निकट स्थित क्षेत्रों को छोड़कर बाकी सभी क्षेत्र पिछड़े हुए हैं। ऐसे क्षेत्रों के निवासियों ने इन पुलों को प्रगति की शुरुआत के रूप में देखा। दक्षिण कोंकण में, जहां कई क्षेत्रों में किसान मुश्किल से साल के आठ महीने अपने परिवार का पेट भर पाते हैं और लकड़ी भी आसानी से नहीं मिलती, वहां लकड़ी के इन पुलों (जिन्हें सकव कहा जाता है) ने उन्हें उम्मीद की किरण दिखाई।
अगर पहले स्थानीय लोगों को जलमार्ग पार करने में तीन घंटे लगते थे, तो अब वही काम पांच मिनट में किया जा सकता है। कम्युनिस्ट पार्टी की रोजा देशपांडे ने मुझे बताया:

कांग्रेस ने बड़ी-बड़ी पंचवर्षीय योजनाएँ बनाईं जो असफल रहीं। समाजवादी नेता मधु दंडवते कोंकण से हैं, लेकिन उन्हें नदियों को पार करने की बुनियादी समस्या का एहसास नहीं था। शिवसेना ने बड़े मुद्दों को लेकर जनता के पास नहीं गई, बल्कि उसने अन्य पार्टियों द्वारा अनदेखी की गई छोटी-छोटी समस्याओं को उठाया और उनका समाधान किया।¹¹⁵

तटीय क्षेत्र के मुंबई से संबंधों ने भी शिवसेना को वहां अपना प्रभाव फैलाने में मदद की। ठाणे, रायगढ़, रत्नागिरी और सिंधुदुर्ग - इन चार जिलों से मिलकर बना यह क्षेत्र हमेशा से मुंबई से प्रभावित रहा है, क्योंकि मुंबई इसकी आबादी के एक बड़े हिस्से को रोजगार के अवसर प्रदान करता है। महाराष्ट्र के बाकी हिस्सों से मुंबई में आने वाले कुल प्रवासियों में से 45 प्रतिशत अकेले रत्नागिरी जिले से आते हैं, और कोंकण में अधिकांश लोग मनी ऑर्डर अर्थव्यवस्था पर निर्भर हैं, यानी मुंबई में काम करने वाले श्रमिकों द्वारा मनी ऑर्डर के माध्यम से भेजे गए धन पर।
प्रवासी कामगारों के ग्रामीण क्षेत्रों से जुड़े सांस्कृतिक संबंधों के कारण मुंबई के सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक विचार कोंकण के गांवों तक पहुंचते हैं। ये कामगार गणेश और दिवाली के त्योहारों के दौरान अपने गांवों में जाते हैं और मुंबई में अपने ही गांव के लोगों के समूह बनाकर अपनी पहचान बनाए रखते हैं। त्योहारों, नाटकों और भजन मंडलों के माध्यम से सांस्कृतिक संबंध और मजबूत होते हैं।
मुंबई में हो रहे घटनाक्रमों का असर कोंकण क्षेत्र पर भी पड़ता है। इसलिए जब मुंबई स्थित शिवसेना ने ग्रामीण क्षेत्रों में पैठ बनाने का फैसला किया, तो इस क्षेत्र के निवासियों ने इसे अपेक्षाकृत आसानी से स्वीकार कर लिया।
कोंकण की साक्षरता दर भी उच्च है, जिससे यहाँ के लोग राजनीतिक रूप से जागरूक हैं। शिवसेना के उदय से पहले, कोंकण के कुछ क्षेत्रों ने हमेशा विपक्ष का समर्थन किया था। सत्ताधारी दल के प्रति इस विरोध ने शिवसेना को और भी अधिक लाभ पहुँचाया।
पार्टी ने अकेले रायगढ़ जिले में ही 500 से अधिक शाखाएँ खोल लीं और रायगढ़, सिंधुदुर्ग और रत्नागिरी जैसे अपने पारंपरिक गढ़ों में किसान और मजदूर पार्टी (पीडब्ल्यूपी) को चुनौती दी। शिवसेना और पीडब्ल्यूपी कार्यकर्ताओं के बीच कई झड़पें हुईं, जिनमें सबसे उल्लेखनीय पाताल गंगा स्थित रिलायंस पॉलिएस्टर संयंत्र में हुई झड़प थी, और शिवसेना ने जल्द ही रायगढ़ में रिलायंस और भारत इलेक्ट्रॉनिक्स कंपनी सहित एक दर्जन ट्रेड यूनियनों पर कब्जा कर लिया।
पार्टी ने इलाके के स्थानीय लोगों के लिए 80 प्रतिशत आरक्षण की मांग उठाई ताकि उन युवाओं का समर्थन हासिल किया जा सके जो बड़ी कंपनियों की नई विनिर्माण इकाइयों में प्रतिस्पर्धा के कारण नौकरी पाने में असमर्थ थे। इसके परिणामस्वरूप कई युवाओं ने पीडब्ल्यूपी से अपना समर्थन वापस ले लिया।
आपसी कलह से ग्रस्त पीडब्लू पी समय के साथ आगे बढ़ने में असमर्थता का शिकार हो गई थी। पहले इसने किसानों को संगठित किया था और सीआईडीसीओ, नवी मुंबई और न्हावा शेवा जैसी सार्वजनिक परियोजनाओं के लिए अधिग्रहित भूमि के मुआवजे के लिए उनकी वकालत की थी, लेकिन समय के साथ इसकी लोकप्रियता कम हो गई। शिवसेना ने इस मुद्दे को उठाया और सरकार द्वारा अधिग्रहित किसानों की भूमि के मुआवजे के लिए आंदोलन शुरू किया।
पीडब्ल्यूपी का कभी कोई श्रमिक विंग भी नहीं था। इस कमी को भारतीय कामगार सेना ने पूरा किया, जिसने कई जगहों पर श्रमिक संघों पर कब्जा कर लिया, अक्सर बल प्रयोग करके।
कांग्रेस ने कृषि सेना के प्रसार को रोकने के लिए ठाणे और रायगढ़ जिलों में गुपचुप तरीके से कृषि सेना का समर्थन किया। गरीब और मध्यम वर्ग के

किसानों से मिलकर बने कृषि समुदाय की इन जिलों में अच्छी खासी संख्या है, लेकिन कांग्रेस के प्रयासों के बावजूद, कृषि सेना के युवाओं ने बड़ी संख्या में कृषि सेना का साथ छोड़कर ठाकरे के संगठन में शामिल हो गए। इसका कारण यह था कि, अन्य बातों के अलावा, सेना ने मंदिरों के लिए धन जुटाया, दूरदराज के स्थानों में बस स्टॉप के लिए आंदोलन किया और त्वरित समाधान प्रदान किए।
मुंबई-पुणे राजमार्ग से कुछ दूरी पर स्थित लगभग 10,000 की आबादी वाले एक छोटे से कस्बे चौक में, शिवसेना ने अपनी शाखा की स्थापना के कुछ ही दिनों के भीतर एक बालवाड़ी शुरू की, एक एम्बुलेंस इकाई प्रदान की और एक थिएटर बनाने की योजना का अनावरण किया।
इसकी एम्बुलेंस राज्य के दूर-दराज के इलाकों तक गईं; इसके बालवाड़ी केंद्रों ने ध्यान आकर्षित किया; और इसने कस्बों और गांवों में व्यायामशालाएं खोलीं। राज्य में जल संकट को देखते हुए, इसने कई क्षेत्रों, विशेष रूप से विदर्भ में, जहां जल की कमी सबसे गंभीर थी, पानी के टैंकर भेजे।
ये रणनीति कारगर साबित हुई, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं की हताशा का मूल कारण भी दूर हो गया: असंतुलित आर्थिक विकास और बेरोजगारी। महाराष्ट्र के आर्थिक विकास ने समृद्धि के कुछ द्वीप और बड़ी संख्या में गरीब लोगों को जन्म दिया था। शिक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में फैल गई थी, और शिक्षित युवाओं को यह एहसास हो गया था कि उन्हें सत्ता और धन में हिस्सेदारी का अवसर नहीं मिल रहा है।
तालुकों के युवा स्नातकों और तकनीशियनों के लिए अवसर बहुत कम थे। पॉलिटेक्निक और कॉलेज खुल गए थे और उन्होंने उम्मीदें जगाई थीं, लेकिन सरकार ने पर्याप्त नौकरियां पैदा नहीं की थीं। कॉलेजों और पॉलिटेक्निक ने इन युवाओं को खेती के पारंपरिक पेशे से दूर कर दिया था, जिससे उनमें निराशा घर कर गई थी।
राज्य सरकार के 1986-87 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, राज्य के रोजगार एक्सचेंज में 25 लाख बेरोजगार युवा पंजीकृत थे।
अन्य पार्टियों के कार्यक्रम इन युवाओं को आकर्षित नहीं कर पाए, क्योंकि वे त्वरित परिणामों की अपेक्षा रखते थे, जो शिवसेना ने प्रदान किए या प्रदान करने का वादा किया।
उदाहरण के लिए, यदि कोई युवक एक छोटी सी दुकान (तपारी) खोलना चाहता था, तो वह अक्सर लालफीताशाही और भ्रष्टाचार का शिकार हो जाता था। यही हाल तब भी होता था जब कोई युवक किसी व्यवसाय को शुरू करने के लिए बैंक या किसी अन्य वित्तीय संस्थान से ऋण लेना चाहता था। जब सेना से सहायता के लिए संपर्क किया जाता था, तो वह युवकों को अवैध रूप से दुकान बनाने के लिए कहती थी और सुरक्षा प्रदान करने का वादा करती थी, अक्सर शारीरिक बल प्रयोग करके। साथ ही, वह व्यवसायों के लिए वित्तीय संस्थानों से तुरंत ऋण की व्यवस्था भी कर देती थी।

भ्रष्टाचार और शिवसेना
1985 में बीएमसी पर जो नियंत्रण हासिल हुआ, उससे शिवसेना को ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार करने में मदद मिली। बीएमसी देश की सबसे धनी नगर निकाय है, जिसका बजट कई छोटे राज्यों के बजट से भी अधिक है।

लेकिन बीएमसी में शिवसेना की भूमिका दो बार संदेह के घेरे में आई। पहली बार तब जब उसने नगर आयुक्त एस.एस. तिनाइकर को निर्माण घोटाले में कथित भूमिका के लिए दो नागरिक इंजीनियरों (दोनों महाराष्ट्रीयन) पर मुकदमा चलाने की अनुमति देने से इनकार कर दिया। ठाकरे ने जोर देकर कहा कि घोटाले में शामिल मंत्री पर पहले मुकदमा चलाया जाना चाहिए और कहा कि शिवसेना मराठी भाषी लोगों के हितों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध है।
दूसरा प्रकरण और भी भयावह था। अक्टूबर 1988 में, विपक्ष के रुस्तम तिरंदाज़ ने एक टेप किया हुआ भाषण खोज निकाला, जो कथित तौर पर तत्कालीन स्थायी समिति के अध्यक्ष, शिवसेना के दिवाकर रावते द्वारा दादर के 77 व्यापारियों के एक समूह को संबोधित किया गया था।
रावटे को जबरन वसूली करने वाले के रूप में फंसाने की कोशिश करने वाला यह टेप पहले कांग्रेस कार्यालय में चलाया गया, फिर इसे महापौर के कक्ष में ले जाया गया। तत्कालीन महापौर चंद्रकांत पडवाल ने जाहिर तौर पर आवाज को अपने पार्टी सहयोगी की आवाज के रूप में पहचान लिया। पडवाल और भुजबल दोनों ने बाद में दावा किया कि कैसेट का नगर निकाय के मामलों से कोई लेना-देना नहीं था और यह 'कांग्रेस की साजिश' थी।¹¹⁶ लेकिन इसने हलचल मचा दी, और तिरंदाज़ ने कहा कि इसने 'सेना के दर्शन का प्रचार किया'।¹¹⁷
टेलीग्राफ द्वारा प्रकाशित रावटे के व्यापारियों को दिए गए विवादास्पद भाषण के टेप किए गए अंश का एक हिस्सा इस प्रकार था:

बीस साल से हमने आपसे एक पैसा भी नहीं माँगा है। आप सब ऐसे गुंडों के लायक हैं जो आपको तलवार और चाकू की नोक पर नचाएँगे। आप ऐसे लोगों के लायक हैं जो आपसे जबरन वसूली करते हैं। आप मुझे पैसे दें या न दें, इससे मेरे काम पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा। मैं जनता की सेवा के लिए यहाँ हूँ।

आप अब भी नहीं जानते... दिवाकर रावते? मैंने आप गुजरातियों को अपने कंधों पर उठाया है। ठाणे जाकर पूछिए, गुजराती समुदाय मुझे पहचानता है।

आप हमें याद रखेंगे... शिवसैनिकों को। क्या मेरी पत्नी या बच्चे नहीं हैं? मुझे ये सब क्यों करना चाहिए? मैं अवसादग्रस्त लोगों की देखभाल इसलिए करता हूँ क्योंकि मैं एक शिवसैनिक हूँ और जब बात शिवसेना की आती है, तो मैं सब कुछ भुला देता हूँ।

हमारे लड़के बर्बाद हो गए हैं। क्या उनकी माँ या बहनें नहीं हैं? क्या उनके पास अपना घर नहीं है? जब असली समय आएगा, तो आप हमें कम आंकेंगे। व्यापारियों को संगठन की मदद करनी चाहिए। मैंने अपने लड़कों को आपके दरवाजे पर भेजा था। आपने ऐसा व्यवहार किया मानो किसी हिजड़े को 10 पैसे का सिक्का फेंक रहे हों। क्या आप हमें इसी तरह महत्व देते हैं? ठीक है, मुझे खुशी है। जाओ।¹¹⁸

[illegible] [illegible], [illegible] [illegible] 1988 [illegible] [illegible].[illegible]. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

सामग्री क्यों प्रकाशित करते हैं जो हमारे पूजनीय देवताओं को बदनाम करती है?'
मुख्यमंत्री ने इस मुद्दे को सुलझाने के लिए 7 जनवरी 1988 को सर्वदलीय बैठक बुलाई, जिसमें शिवसेना ने रिडल्स अनुच्छेद को हटाने की पुरजोर मांग रखी। मनोहर जोशी ने बैठक में उपस्थित सभी लोगों को चेतावनी दी, ‘यदि दलितों और तथाकथित प्रगतिवादियों के दबाव में आकर सरकार इस विवादास्पद अनुच्छेद को बरकरार रखती है, तो शिवसेना पूरे महाराष्ट्र में आंदोलन शुरू करेगी।’ भाजपा, जो उस समय उच्च वर्गों में जड़ें जमाए अपनी छवि को बदलने का प्रयास कर रही थी, ने रिडल्स अनुच्छेद को बरकरार रखने का समर्थन किया (आरएसएस और पतित पवन ने भी)। इसका स्पष्ट कारण जातिगत तनाव पैदा होने की आशंका थी, लेकिन भाजपा स्पष्ट रूप से इसके राजनीतिक परिणामों को लेकर आशंकित थी। भाजपा के विपरीत, शिवसेना ने दलितों को अलग-थलग करने को राजनीतिक रणनीति के तौर पर गलत नहीं समझा। हालांकि मराठा महासंघ ने आंदोलन की शुरुआत की थी, लेकिन बाद के चरण में शिवसेना ने लगभग अकेले ही रिडल्स को लेकर लड़ाई जारी रखी।
शिवसेना ने तर्क दिया कि चूंकि दलितों के मोर्चे ने ही सरकार को पीछे हटने पर मजबूर किया था, इसलिए उसे अपनी मांग को आगे बढ़ाने के लिए खुद भी एक मोर्चा आयोजित करना होगा। अखबारों के पहले पन्ने पर विज्ञापन प्रकाशित किए गए जिनमें 'शुद्ध हिंदू' लोगों से इसमें शामिल होने का आग्रह किया गया था, और मुस्लिम विद्वान असगर अली इंजीनियर के अनुसार, 'यह आश्चर्यजनक है कि प्रमुख राष्ट्रीय दैनिकों ने इस तरह के खुले तौर पर सांप्रदायिक विज्ञापन को प्रमुखता से प्रकाशित किया।'¹²⁰
14 जनवरी 1988 को इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित विज्ञापन में लिखा था:

शिव सेना की सभी कट्टर हिंदुओं से अपील! शुक्रवार, 15 जनवरी, 1988, दोपहर 2 बजे आज़ाद मैदान से: चलो मंत्रालय! सावधान! हिंदू धर्म का अपमान करने वालों को सावधान रहना चाहिए!

ऐसा लगता है कि सरकार सरकारी प्रकाशन में डॉ. अंबेडकर की पुस्तक 'हिंदू धर्म की पहेलियाँ' को पुनः शामिल करने पर तुली हुई है। यदि इस अधार्मिक कृत्य का समय रहते विरोध नहीं किया गया, तो ये धर्मनिरपेक्ष शासक धर्मनिरपेक्षता के झूठे नाम पर देश में हिंदू धर्म को ही नष्ट करने से भी नहीं हिचकेंगे। इसलिए, अब समय आ गया है कि सभी हिंदू एकजुट हों और सरकार के इस कुटिल कृत्य को जड़ से उखाड़ फेंकें।
जी हाँ, अभी इसी वक्त!
इस मोर्चे में केवल वही हिंदू शामिल हों जिनका रक्त शुद्ध हो। महाराष्ट्र के कोने-कोने से आएं और भगवा झंडे लेकर इसमें शामिल हों।

यह मोर्चा बहुत विशाल था। महाराष्ट्र के हर जिले से स्वयंसेवक, स्थानीय शाखाओं के विशाल दल सहित, भगवा टोपी पहने, शिवसेना का झंडा लहराते हुए और सरकार विरोधी नारे लगाते हुए आज़ाद मैदान से काला घोड़ा तक मार्च किया।

काला घोड़ा और हुतात्मा चौक के बीच एमजी रोड पर धरना दे रहे लगभग दो लाख पार्टी कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए बाल ठाकरे ने दावा किया कि भारी जनसमूह की उपस्थिति के कारण इस मुद्दे पर निर्णय 15 जनवरी की सरकारी समय सीमा से आगे बढ़ गया है, जिससे आधी लड़ाई जीत ली गई है। उन्होंने चेतावनी दी कि अगर सरकार रिडल्स को पद पर बनाए रखने की चाह रखने वाली पार्टियों के दबाव में झुकती है तो गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे। अंत में उन्होंने कहा, 'हमारी लड़ाई दलितों से नहीं है, और यह मोर्चा किसी जाति या समुदाय के खिलाफ नहीं है। यह उस सरकार के खिलाफ है जिसने लगातार हिंदुओं का अपमान किया है।'
एक बार फिर, राजनीतिक दलों की सीमाओं को तोड़ते हुए, दलित एकजुट हुए और 5 फरवरी को शिवसेना के प्रदर्शन से भी बड़ा जवाबी प्रदर्शन किया। लगभग पांच लाख लोग इकट्ठा हुए थे। जब भीड़ हुतात्मा चौक पहुंची, तो वह बेकाबू हो गई और शिवसेना के इशारे पर बीएमसी द्वारा निर्मित शहीद स्मारक को क्षतिग्रस्त कर दिया। स्थानीय शिवसेना पार्षद ज्ञानेश्वर गावड़े के अनुसार, 22 बल्ब निकाल दिए गए, संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन के दौरान पुलिस फायरिंग में मारे गए 105 हुतात्माओं के नाम उखाड़ दिए गए और लैंपपोस्ट और संगमरमर की पटियाएं तोड़ दी गईं।
ठाकरे उसी रात घटनास्थल पर जाकर खुद नुकसान का जायजा लेने गए। उन्होंने गरजते हुए कहा, 'हम हुतात्माओं के बलिदान का कोई अपमान बर्दाश्त नहीं करेंगे।'
तनाव, जो पहले से ही काफी बढ़ चुका था, अगले दिन तब और बढ़ गया जब भुजबल ने स्मारक पर गंगाजल से धार्मिक अनुष्ठान किया और इसे 'शुद्धिकरण अभियान' बताया। अन्य दलों ने इसकी कड़ी आलोचना की, लेकिन भुजबल ने स्पष्ट किया कि यह शुद्धिकरण दलितों के प्रति आक्रोश व्यक्त करने के इरादे से नहीं किया गया था। उन्होंने कहा, 'शिवसेना और बाल ठाकरे छुआछी में विश्वास नहीं करते। यह शुद्धिकरण अभियान केवल असामाजिक तत्वों द्वारा स्मारक को नुकसान पहुंचाने और उसे विकृत करने के मद्देनजर किया गया था।' उन्होंने आगे कहा कि वे यह नहीं भूल सकते कि स्मारक की स्थापना के समय उनके साथ दलित नेता भी मौजूद थे। उन्होंने पूछा, 'अगर आप मुझसे नाराज हैं, तो मुझ पर हमला कीजिए। आप हुतात्मा स्मारक को अपवित्र क्यों करते हैं?'
प्रकाश अंबेडकर और आर.एस. गवई समेत दलित नेताओं ने शांति की प्रार्थना करते हुए स्मारक पर पूजा की। अंबेडकर और गवई ने कहा कि डॉ. अंबेडकर और आरपीआई ने महाराष्ट्र के गठन में अग्रणी भूमिका निभाई थी और यह स्मारक किसी एक पार्टी या संगठन की संपत्ति नहीं है।¹²² उन्होंने आग्रह किया: “इसका राजनीतिक लाभ नहीं उठाना चाहिए। स्मारक पर जिन शहीदों के नाम अंकित हैं, उनमें दलित भी शामिल थे। लेकिन चूंकि यह (क्षति) हमारे मोर्चे के दौरान हुई, इसलिए हम नैतिक रूप से इसके लिए जिम्मेदार हैं। हम शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।”
इसके बाद चार दिनों में एक समझौता सूत्र तैयार किया गया। मुख्यमंत्री एस.बी. चव्हाण द्वारा 9 फरवरी को बुलाई गई बैठक में, जिसमें दलित नेता और शिवसेना प्रमुख भी उपस्थित थे, एक अभूतपूर्व समाधान प्रस्तावित किया गया और दोनों पक्षों द्वारा अनुमोदित किया गया: परिशिष्ट को बरकरार रखा जाएगा, लेकिन इसमें एक फुटनोट जोड़ा जाएगा जिसमें कहा जाएगा कि सरकार इसमें व्यक्त विचारों से सहमत नहीं है।
अंततः यह पहेली उतनी जटिल साबित नहीं हुई, और इस तरह विवाद का अंत हो गया।

24

केंद्र मंच पर

दिसंबर 1987 में विले पार्ले विधानसभा क्षेत्र के उपचुनाव ने शिवसेना के खुले तौर पर आक्रामक हिंदुत्व अभियान के कारण काफी ध्यान आकर्षित किया, और इसके परिणाम ने दिखाया कि महाराष्ट्र की राजनीति का पलड़ा किसके पक्ष में झुक रहा था।
पिछले चार चुनावों में, शिवसेना ने पार्ले से कोई उम्मीदवार खड़ा नहीं किया था, क्योंकि उस क्षेत्र में गैर-मराठी भाषी लोगों का दबदबा था। लेकिन अपने हिंदू प्रभाव को परखने के लिए, उसने 1987 में डॉ. रमेश प्रभु को अपना उम्मीदवार बनाया। प्रभु के खिलाफ जनता दल के प्राणलाल वोरा और कांग्रेस के प्रभाकर कुंटे मैदान में थे। उस समय भाजपा गांधीवादी समाजवाद का नारा लगा रही थी, और शिवसेना की हार सुनिश्चित करने के लिए, उसने कोई उम्मीदवार खड़ा न करने का फैसला किया और जनता दल के वोरा को समर्थन दिया।
हिंदू भावनाओं को भड़काने के लिए, शिवसेना ने मिथुन चक्रवर्ती और नाना पाटेकर जैसे फिल्म सितारों को भी अपने साथ जोड़ा और लोगों से अपनी हिंदू पहचान को मुखर करने का आह्वान किया। 'गर्व से कहो हम हिंदू हैं' का नारा इस चुनाव प्रचार में पहली बार लोकप्रिय हुआ और हिंदू पुनरुत्थान के नारे वाले बैनर न केवल पार्ले में बल्कि पूरे मुंबई में लगाए गए। प्रमुख स्थानों पर 'धार्मिक तेठे मार्मिक' के होर्डिंग लगाए गए।
ठाकरे ने खुलेआम सांप्रदायिक रुख अपनाया। उन्होंने मतदाताओं से कहा: ‘खालिस्तानी आप पर हमला करेंगे। मुसलमान आप पर हमला करेंगे। आप हिंदू होने के नाते क्या करेंगे? न तो पुलिस और न ही सरकार आपकी रक्षा करेगी।’¹²³ और उन्होंने यहाँ तक कह दिया: ‘राष्ट्रवादी मुसलमान भी होते हैं और राष्ट्र-विरोधी मुसलमान भी। लेकिन सच कहूँ तो, मुझे दोनों में अंतर करना नहीं आता।’ रिडल्स विवाद के बाद दलितों को चेतावनी भी दी गई: ‘अगर दलित नेताओं ने कोई विवाद खड़ा किया और चुनौती दी, तो दलित गांवों में आगजनी होगी।’
शिवसेना के चुनाव प्रचार की दिशा को देखते हुए, मुख्यमंत्री चव्हाण ने भी उपचुनाव को प्रतिष्ठा का मुद्दा बना लिया और कांग्रेस उम्मीदवार प्रभाकर कुंटे के लिए व्यापक प्रचार किया, जिससे मुकाबले का महत्व और बढ़ गया। कुंटे, जो पूर्व आवास मंत्री रह चुके हैं और अपने मंत्री कार्यकाल के दौरान झुग्गीवासियों को 'फोटो पास' जारी करने के लिए जाने जाते हैं, ने झुग्गी सुधार और शहरी विकास को अपने चुनाव प्रचार का मुख्य मुद्दा बनाया। जनता दल के प्राणलाल वोरा के पास जॉर्ज फर्नांडीस और डॉ. दत्ता सामंत जैसे नेता थे जो उनके लिए झुग्गीवासियों को लुभाने का काम करते थे; उन्होंने सांप्रदायिकता को समाप्त करने की अपील के साथ निर्वाचन क्षेत्र में मध्यम वर्ग और 50,000 की मजबूत गुजराती समुदाय को भी लुभाने का प्रयास किया। शिवसेना ने गुजरातियों को लुभाने के लिए गुजरात के प्रमुख धार्मिक प्रवक्ता शंभू महाराज को अपने उम्मीदवार के लिए प्रचार करने को कहा और 'महाराष्ट्रियों की सरस्वती और गुजरातियों की लक्ष्मी' के संयोजन पर जोर देने का पूरा ध्यान रखा।

भाजपा और आरएसएस के कार्यकर्ताओं ने शुरू में जनता दल के उम्मीदवार वोरा का समर्थन किया, लेकिन सैयद शहाबुद्दीन के उनके लिए प्रचार करने आने के बाद उनकी धर्मनिरपेक्ष साख पर सवाल उठने लगे। आरएसएस कार्यकर्ताओं का एक बड़ा हिस्सा शिवसेना के पक्ष में चला गया और डॉ. प्रभु के लिए सक्रिय रूप से वोट मांगने लगा। आखिर, शिवसेना तो सिर्फ एक ही मुद्दे पर चुनाव लड़ रही थी: हिंदू धर्म। उसका एकमात्र नारा था: 'हिंदू धर्म की रक्षा के लिए शिवसेना को वोट दें'।
यह परिणाम कांग्रेस और चव्हाण के लिए एक बड़ा झटका था: शिवसेना के उम्मीदवार को 29,574 वोट मिले और उन्होंने कांग्रेस के उम्मीदवार पर 10,791 वोटों के अंतर से जीत हासिल की। जनता दल के वोरा को मात्र 13,928 वोट मिले।
शिवसेना की जीत महत्वपूर्ण थी, क्योंकि अब से कोई भी पार्टी हिंदुत्व के नारे को कम नहीं आंक सकती थी और शिवसेना के खिलाफ चुनाव लड़ते समय कोई भी पार्टी लापरवाह नहीं हो सकती थी। शिवसेना ने ऐसे क्षेत्र में जीत हासिल की थी जहां महाराष्ट्रियों की संख्या बहुमत में नहीं थी और जहां उसने पिछले चार बार विधानसभा चुनाव नहीं लड़ा था। अन्य पार्टियों के लिए, शिवसेना का खतरा अब स्थायी हो गया था।

सिखों का ‘बहिष्कार’
विले पार्ले के बाद, मराठवाड़ा क्षेत्र के औरंगाबाद की बारी थी कि वह खुद को भगवा रंग में रंग ले। लेकिन इस बीच एक ऐसी घटना घटी जिसमें शिवसेना को काफी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा।
पंजाब में आतंकवादी गतिविधियों में तेजी आने के साथ ही, ठाकरे ने सिखों के 'आर्थिक बहिष्कार' का आह्वान किया, यदि समुदाय के उच्च पुरोहितों ने भारत में सभी खालिस्तानियों को बहिष्कृत करने वाला हुकुमनामा जारी नहीं किया। उन्होंने घोषणा की, ‘हम सभी सिखों का अहिंसक बहिष्कार चाहते हैं। किसी सिख के स्वामित्व वाले ट्रक या व्यापारिक प्रतिष्ठान, या यहाँ तक कि सिख द्वारा चलाई जाने वाली टैक्सी का भी उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।’¹²⁴ उन्होंने तर्क दिया कि एक बार बहिष्कृत हो जाने पर, आतंकवादी सिख नहीं रह जाएँगे और अलग मातृभूमि की माँग नहीं कर सकते। जब उनसे पूछा गया कि क्या बहिष्कार से हिंदू-सिख विभाजन और बढ़ेगा, तो उन्होंने कहा: ‘मैंने ऐसा कुछ नहीं सोचा है। मैं अभी अलग मनोदशा में हूँ। लेकिन इस बकवास को रोकना होगा। इसे कब तक बर्दाश्त किया जा सकता है?’¹²⁵
उनके अनुसार, यह बेतुका दावा था कि मुंबई के सिखों से पंजाब के आतंकवादियों को धन पहुंचाया जा रहा था। उन्होंने दावा किया कि उनके पास ऐसी जानकारी है कि मुंबई के सिख व्यापारियों ने एक दिन में 40 लाख रुपये एकत्र किए और शहर में आए सिख अलगाववादियों को सौंप दिए।
जब परेशान सिखों का एक प्रतिनिधिमंडल उनसे मिला, तो उन्होंने उनसे कहा कि वे शिवाजी पार्क में एक सार्वजनिक सभा में कुछ सिख नेताओं को आमंत्रित करेंगे, जहाँ उन्हें लोगों को यह बताना होगा कि वे पंजाब में उपद्रवियों से अपना संबंध तोड़ते हैं। उन्होंने आगे कहा कि बहिष्कार का निर्णय तब सभा में उपस्थित लोगों पर निर्भर करेगा।

कुछ सिख नेताओं ने इस बात पर सहमति जताई, लेकिन अन्य ने इस सुझाव का विरोध करते हुए कहा कि ठाकरे के सामने गवाही देने की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं है।
सभी पार्टियों ने बहिष्कार के आह्वान की निंदा की।
इसके बाद शिवसेना प्रमुख ने कहा कि वे आम सिखों के खिलाफ नहीं हैं, बल्कि उन सिख व्यापारियों के खिलाफ हैं जो आतंकवादियों की तिजोरी भरते हैं। हालांकि, विरोध की आवाजें अभी भी उठती रहीं।
मुख्यमंत्री चव्हाण ने कहा कि ठाकरे के खिलाफ सांप्रदायिक सद्भाव बिगाड़ने के आरोप में मामला दर्ज किया गया है और शिवसेना प्रमुख को मुंबई में खतरनाक स्थिति पैदा करने के प्रयास रोकने को कहा। हालांकि, सिख समुदाय में, जैसा कि एक सिख नेता ने व्यक्त किया, यह भावना थी: 'यह सारा तमाशा और शर्मिंदगी सरकार की अक्षमता के कारण हुई है।'¹²⁶
इन सब के बाद, ठाकरे ने एक दिन अचानक बहिष्कार का आह्वान वापस लेने की घोषणा की और शपथ ली कि मुंबई और महाराष्ट्र में सिखों की रक्षा उनका संगठन 'हर कीमत पर' करेगा। उन्होंने कहा कि उन्होंने अपना निर्णय इसलिए बदला क्योंकि कुछ लोगों को लगा था कि इससे खालिस्तान समर्थक तत्वों को मदद मिलेगी और हिंदू-सिख एकता प्रभावित होगी।
इस अचानक वापसी पर सवाल उठने लगे और आरोप लगने लगे कि शिवसेना ने सिख व्यापारियों से जबरन वसूली करके अच्छा खासा मुनाफा कमाया है। कुल मिलाकर, इस घटना ने शिवसेना के विरोधियों को आलोचना करने का भरपूर मौका दे दिया।

औरंगाबाद में महत्वपूर्ण जीत
औरंगाबाद नगर निगम (जिसका गठन 1982 में हुआ था) के पहले चुनाव अप्रैल 1988 में बेहद सांप्रदायिक माहौल में हुए थे। हिंदू और मुसलमानों के बीच व्याप्त अविश्वास की भावना को राजनीतिक दलों ने चुनाव जीतने के लिए हवा दी थी।
औरंगाबाद में मुस्लिम वोट बैंक (जहां मुस्लिम आबादी 27 प्रतिशत थी) को ध्यान में रखते हुए, कांग्रेस ने पिछले सभी चुनावों में केवल मुस्लिम उम्मीदवारों को ही मैदान में उतारा था। नगर निगम के गठन से पहले, नगर परिषद के अध्यक्ष ज्यादातर मुस्लिम ही होते थे। औरंगाबाद से कांग्रेस टिकट पर चुने गए विधायकों की सूची में भी ज्यादातर मुस्लिम नाम ही दिखाई देते हैं। 1988 में, कांग्रेस ने 20 मुस्लिम उम्मीदवारों को मैदान में उतारा, जिनमें से एक राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत बंदी जावेद खान थे। इसने यह भी घोषणा की कि यदि वह चुनाव जीतती है, तो औरंगाबाद के पहले महापौर एक मुस्लिम होंगे।
इससे शिवसेना को हिंदू असंतोष का फायदा उठाने का मौका मिल गया। "गर्व से कहो हम हिंदू हैं" के नारे हवा में गूंजने लगे और ठाकरे ने न केवल धार्मिक भावनाओं को भड़काया बल्कि यह घोषणा भी कर दी कि उनकी पार्टी शिवाजी के पुत्र के नाम पर औरंगाबाद का नाम बदलकर संभाजीनगर कर देगी।
मराठवाड़ा में 'इस्लाम खतरे में है' के नारे के साथ मुस्लिम कट्टरपंथी लहर को पुनर्जीवित करने के प्रयासों ने उनके काम को आसान बना दिया। हमेशा की तरह कट्टरपंथी बयान देने के अलावा, इतह-उद-दीन मुस्लिमीन - एक संगठन जिसे दिवंगत निज़ाम ने अपने अत्याचारों के खिलाफ जन संघर्ष को रोकने के लिए बनाया था - ने 32 मुस्लिम उम्मीदवारों की एक सूची जारी की और 'विश्वासियों'

से आग्रह किया कि वे अपनी राजनीतिक संबद्धताओं की परवाह किए बिना केवल इन्हीं मुसलमानों को वोट दें। संगठन ने चेतावनी दी: 'अतीत की मुस्लिम श्रेष्ठता को भुलाया नहीं जाना चाहिए।'¹²⁷
हालात इतने तनावपूर्ण हो गए कि मतदान के समय हिंसा भड़क उठी, जिसमें 27 लोग चाकू से घायल हो गए और एक व्यक्ति की मौत हो गई।
इतने तनावपूर्ण माहौल के बीच घोषित चुनाव परिणामों ने कांग्रेस और अन्य पार्टियों को चौंका दिया: शिवसेना सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी, जिसने कुल 60 सीटों में से 27 सीटें जीतीं।
कांग्रेस ने सभी सीटों पर चुनाव लड़ा था लेकिन उसे केवल 18 सीटें ही मिलीं। वहीं दूसरी ओर, शिवसेना ने 40 सीटों पर चुनाव लड़ा था।
तथाकथित राष्ट्रीय दलों, भाजपा और जनता पार्टी की करारी हार हुई। उन्हें न केवल एक भी सीट नहीं मिली, बल्कि नाममात्र के वोट भी प्राप्त हुए। भाजपा के 40 उम्मीदवारों में से दस को 100 से भी कम वोट मिले।
ठाकरे ने कहा, ‘शिव सेना का शेर दहाड़ रहा है। अब मंत्रालय के शीर्ष पर हमारा भगवा झंडा फहराने का रास्ता साफ हो गया है।’¹²⁸
लेकिन शिवसेना के लिए महापौर पद हासिल करने का रास्ता अभी भी साफ नहीं था। अपने उम्मीदवार को चुनाव जितवाने के लिए उसे आरपीआई, दलित पैंथर्स, मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बागी पार्षदों में से तीन लोगों को अपने पक्ष में करना था। 6 मई, यानी मतदान के दिन, शिवसेना और कांग्रेस, जो 17 सीटों से पीछे चल रही थी, दोनों अपनी-अपनी रणनीतियों के साथ तैयार थीं।
प्रकाश अंबेडकर के नेतृत्व वाली आरपीआई ने पहले तटस्थ रहने की घोषणा की थी, लेकिन अंतिम क्षण में उसने कांग्रेस का साथ देते हुए कहा कि 'यह दो बुराइयों में से कम बुरी है'।¹²⁹
इससे शिवसेना घबरा गई, क्योंकि अब उसे जीत की कोई निश्चितता नहीं रही। शिवसेना पार्षदों ने हंगामा किया और अंग्रेजी में छपी मतदान प्रक्रिया पुस्तिका को मराठी में उपलब्ध कराने की मांग करके चुनाव प्रक्रिया को बाधित करने का प्रयास किया। बाद में, वे शोर मचाते हुए बैठक से बाहर चले गए।
नगरपालिका आयुक्त नारायण फड़तारे ने घोषणा की कि वे बैठक को दिन भर के लिए स्थगित कर रहे हैं।
कांग्रेस ने इस मौके का फायदा उठाते हुए अपना उम्मीदवार चुनाव जितवा दिया। कांग्रेस नेतृत्व द्वारा शिवसेना उम्मीदवार की हार सुनिश्चित करने के लिए नियुक्त राज्य राजस्व मंत्री विलासराव देशमुख ने बैठक स्थगित करने के लिए नगर निगम प्रमुख की जमकर आलोचना की और उन्हें बैठक दोबारा बुलाने के लिए मजबूर किया। जब शिवसेना सदस्यों की अनुपस्थिति में पार्षदों की दोबारा बैठक हुई, तो कांग्रेस ने पांच मुस्लिम लीग पार्षदों और तीन आरपीआई पार्षदों के समर्थन से आसानी से 'जीत' हासिल कर ली। मुस्लिम लीग को उप महापौर का पद मिला; आरपीआई को स्थायी समिति की अध्यक्षता प्राप्त हुई। शिवसेना ने बॉम्बे हाई कोर्ट की औरंगाबाद बेंच में याचिका दायर कर महापौर चुनाव के नतीजों को चुनौती दी। याचिका की सुनवाई के दौरान करीब 3,000 शिवसेनाकर्मी अदालत परिसर में जमा हो गए। जब अदालत ने सुनवाई स्थगित कर दी, तो उन्होंने हिंसक होकर व्यावसायिक प्रतिष्ठानों पर हमला कर दिया। हिंसा जब शहर के संवेदनशील इलाकों में फैली, तो इसने सांप्रदायिक रंग ले लिया और पुलिस की अपर्याप्त मौजूदगी के कारण स्थिति बेकाबू हो गई।

जब दंगे शुरू हुए तब छगन भुजबल औरंगाबाद में थे। उन्होंने कहा, 'अगर अन्याय हुआ तो मैं अपने आदमियों को काबू में नहीं रख पाऊंगा।' शिवसेना और मुस्लिम संगठनों के अलावा, स्थानीय कांग्रेस विधायक अमानुल्लाह ने भी दंगों में भूमिका निभाई थी।
अगले दिन, औरंगाबाद से लगभग 30 किलोमीटर दूर बिडकिन में हिंसा भड़क उठी, और 19 मई को, औरंगाबाद से 60 किलोमीटर दूर पैठन में हिंदू-मुस्लिम झड़पें शुरू हो गईं।
लेकिन सच्चाई यह थी कि औरंगाबाद नगर निगम चुनाव में जीत के साथ शिवसेना महाराष्ट्र की राजनीति के केंद्र में आ गई थी और अन्य पार्टियों के लिए चिंता का विषय बन गई थी। फ्री प्रेस जर्नल ने लिखा:

एक बेहद निराशाजनक राजनीतिक माहौल में, जहाँ स्थापित राजनीतिक दल न केवल वादे पूरे करने में विफल रहे हैं, बल्कि जनता की भावनाओं को व्यक्त करना भी बंद कर चुके हैं, लोग किसी भी ऐसे दल या समूह की ओर रुख कर रहे हैं जो उनकी भावनाओं और संवेदनाओं को आकर्षित करता हो। शिवसेना इस भूमिका में ठीक उसी तरह फिट बैठती है जैसे आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम ने निभाई थी। शिवसेना का एक अतिरिक्त लाभ यह है कि यह खुले तौर पर आक्रामक हिंदू अपील करती है, ऐसे समय में जब भाजपा की इसी तरह की अपील कमजोर पड़ रही है और स्थापित दलों
- विशेष रूप से कांग्रेस-आई - की धर्मनिरपेक्ष साख धूमिल हो रही है।¹³⁰

शिवसेना के बढ़ते प्रभाव को लेकर कांग्रेस कितनी चिंतित थी, यह जुलाई 1988 में मुख्यमंत्री शरद पवार के नेतृत्व में हुई कांग्रेस विधायक दल की पहली बैठक में स्पष्ट हो गया। जून में एस.बी. चव्हाण के उत्तराधिकारी बने पवार पर कांग्रेस विधायकों ने शिवसेना के बढ़ते प्रभाव को रोकने की पुरजोर मांग रखी। विधायकों ने सरकार से शिवसेना के साथ सख्ती से निपटने का आग्रह किया।¹³¹
मुख्यमंत्री ने शिवसेना को कुचलने का अपना संकल्प घोषित किया, और जब प्रेस के एक वर्ग में पवार की शिवसेना पर नियंत्रण करने में 'सफलता' की खबरें आईं, तो ठाकरे ने इसका कड़ा विरोध किया। उन्होंने पवार पर पुलिस तंत्र का इस्तेमाल करके शिवसेना कार्यकर्ताओं को डराने का आरोप लगाया और कहा कि सरकार उनके संगठन को कभी खत्म नहीं कर पाएगी।¹³² उन्होंने कहा, 'पवार यह अच्छी तरह जानते हैं, लेकिन अगर कांग्रेसी टकराव चाहते हैं, तो शिवसेना हर स्तर पर लड़ने के लिए तैयार है।'¹³³
ये बयान, और इनके बाद आए बयान, इस बात का प्रमाण थे कि शिवसेना की रणनीति भविष्य में और अधिक आक्रामक होगी। पार्टी को इस बात का एहसास हो गया था कि वह कांग्रेस के लिए एक चुनौती बन गई है। और उसे पता था कि उसका आक्रामक हिंदुत्व उसे और अधिक प्रमुख बना देगा।

पुणे सम्मेलन
शिवसेना का तीसरा राज्य स्तरीय सम्मेलन, जो 30 और 31 दिसंबर 1988 को पुणे में आयोजित हुआ और जिसमें 40,000 से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया, उसी उद्देश्य से आयोजित किया गया था। आयोजन स्थल का चयन सोच-समझकर किया गया

था। 1984 में मुंबई में हुए पहले सम्मेलन के बाद, शिवसेना ने मुंबई और ठाणे पर अपनी पकड़ मजबूत कर ली थी; महाड में हुए दूसरे सम्मेलन के बाद, इसने कोंकण और मराठवाड़ा में भी अपनी पैठ बना ली थी; पुणे में हुए इस तीसरे सम्मेलन के साथ, इसने राज्य के पश्चिमी और दक्षिणी हिस्सों को लक्षित करने के अपने संकल्प की घोषणा की।
'हम सत्ता के पीछे नहीं भाग रहे हैं, सत्ता हमारे पीछे भाग रही है, और हम उसे हासिल करके रहेंगे,' ठाकरे ने पुणे के एसपी कॉलेज के मैदान में एक विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए कहा।
उन्होंने कांग्रेस को नालायक (निकम्मा) कहा और कांग्रेस सरकारों की नाकामियों को बखूबी उजागर करने के बाद मुख्य मुद्दे पर आए: ‘हिंदू धर्म का झंडा बुलंद रखो। अगर तुम ऐसा करने में नाकाम रहे, तो खालिस्तानी और पाकिस्तानी तुम पर टूट पड़ेंगे और भारत को बांट देंगे। हिंदू धर्म को परिभाषित करने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे हिंदू कहलाने पर गर्व है। यही मेरी परिभाषा है। भारत का विभाजन धार्मिक आधार पर हुआ था – हिंदुओं के लिए हिंदुस्तान और मुसलमानों के लिए पाकिस्तान। मेरे शिवसैनिक महाराष्ट्र में महाराष्ट्रीयन हैं और हिंदुस्तान में हिंदू। कांग्रेस को मुझे रोकना नहीं चाहिए, वरना पूरा देश आग की लपटों में घिर जाएगा।’
शिवसेना ने यह साबित करने के लिए सुधारवादी हथकंडा भी अपनाया कि वह दलितों के खिलाफ नहीं है। ब्राह्मणवाद के गढ़ में ब्राह्मणवाद-विरोधी भावनाएँ ज़ोरों पर थीं: आरएसएस ब्राह्मणों की शाकाहारी आदतों पर हमले किए गए और आरएसएस शाखाओं में चाय-कॉफी न पीने की प्रथा का उपहास उड़ाया गया। ठाकरे ने कहा, 'शिवसेना दलितों के खिलाफ नहीं है। हिंदुओं ने कभी बुद्ध के धर्म की आलोचना नहीं की। वे बुद्ध को अपना मानते हैं।'
इसी बीच, पुणे के रूढ़िवादी ब्राह्मणों को सुलह का संदेश भेजा गया। पुणे स्थित शिवसेना नेता शशिकांत सुतार ने अपने स्वागत भाषण में, उनके लिए तैयार किए गए भाषण को पढ़ते हुए कहा, 'हमारे नेता डॉ. हेडगेवार के हिंदू राष्ट्र के सपने को साकार करेंगे।'
ठाकरे की जनसभा में, जिसे टाइम्स ऑफ इंडिया ने 'पुणे में अब तक की सबसे बड़ी रैलियों में से एक' बताया था,¹³⁴ 10 प्रस्ताव पारित किए गए। इनमें सबसे महत्वपूर्ण था: 'भारत का नाम बदलकर हिंदुस्तान कर दिया जाए'। अन्य प्रस्ताव ग्रामीण मतदाताओं को ध्यान में रखकर बनाए गए थे: कृषि उत्पादों के लिए उच्च मूल्य, पांच आवश्यक वस्तुओं की कीमतों पर सीमा, सभी पवित्र हिंदू स्थलों का सरकारी अधिग्रहण और राज्य के खर्च पर उनका रखरखाव, औद्योगिक श्रमिकों के लिए पेंशन योजना, राज्य के सभी मामलों में मराठी भाषा का उपयोग, और महाराष्ट्र-कर्नाटक सीमा विवाद को सुलझाने के लिए केंद्र पर दबाव डालने हेतु राज्य सरकार से अपील।

कागज़ी शेर: सामना का जन्म
23 जनवरी 1989 को बाल ठाकरे ने दैनिक समाचार पत्र सामना को एक कागज़ी शेर का उपहार दिया। शिवसेना के विस्तार के साथ ही एक समाचार पत्र की आवश्यकता स्पष्ट रूप से महसूस होने लगी थी, क्योंकि साप्ताहिक होने के कारण मार्मिक दैनिक समाचार पत्र की तरह घटनाओं और आलोचनाओं पर तुरंत और प्रभावी ढंग से प्रतिक्रिया नहीं दे पाता था। सामना का जन्म पार्टी की लोकप्रियता को एक

ऐसी ताकत में बदलने के उद्देश्य से हुआ था जो कांग्रेस सरकार को उखाड़ फेंकने में सक्षम हो।
शिवसेना कार्यकर्ताओं ने अखबार के आगमन के लिए महीनों पहले से ही माहौल तैयार करना शुरू कर दिया था। मुंबई की दीवारों को बैनरों और रंगीन हाथ से बनाए गए विज्ञापनों से सजाया गया था, जिन पर नारा लिखा था, "दैनिक नव्हे, सैनिक" (दैनिक नहीं, बल्कि एक सैनिक)।
ठाकरे स्वयं दादर स्थित सावरकर स्मारक में आयोजित शुभारंभ समारोह में अपने सबसे आक्रामक रूप में थे: 'हमने अखबार रूपी हथियार से खुद को लैस करके लड़ाई (सामना का अर्थ है टकराव) शुरू कर दी है। लेकिन अगर परिस्थितियाँ ऐसी मांग करती हैं, तो हम असली हथियारों से लड़ेंगे।'
अखबार ने अपने मुखपृष्ठ पर अपनी हिंदुत्व नीति का खुलकर प्रदर्शन किया, जिसमें इसे 'एकमात्र मराठी दैनिक बताया गया जो उग्र, जुझारू हिंदुत्व के उद्देश्य की वकालत करता है', और ठाकरे ने जोर देकर कहा कि इसका मुख्य उद्देश्य 'हिंदू पहचान को मजबूत करना' होगा।
सामना के पहले अंक से ही पता चलता है कि शिवसेना के बढ़ते प्रभाव के साथ, पार्टी के कुछ कट्टर विरोधी भी उसमें अच्छाई देखने लगे थे। ब्लिट्ज के संपादक रुसी करंजिया, जो शिवसेना के शुरुआती दिनों में उसके तीखे आलोचक थे, ने अपने अतिथि लेख का शीर्षक दिया: 'सत्ता की बागडोर बालासाहेब के हाथों में सौंप दी जाए।' शिवसेना को 'मुंबई को सुंदर बनाने' का श्रेय देते हुए और यह दावा करते हुए कि 'सत्ता में आने पर शिवसेना शहर को असामाजिक तत्वों से मुक्त कर देगी', करंजिया ने भविष्यवाणी की, 'एक बार शिवसेना सत्ता में आ जाए, तो वह लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों की रक्षा करेगी!' जॉर्ज फर्नांडीस ने लिखा: 'मुझे पूरा विश्वास है कि एक दिन मेरे घनिष्ठ मित्र (ठाकरे) सभी भारतीयों की एकता के प्रतीक साबित होंगे।'

25

क्रॉस-वोटिंग और मतदान पर प्रतिबंध

पार्टी के लिए आशाजनक समय के बीच ही एक ऐसा विवाद खड़ा हो गया जिससे सारी प्रगति धूमिल होने का खतरा पैदा हो गया।
मार्च 1989 में ठाणे में महापौर चुनाव होने थे, और 30 सीटों के बहुमत के साथ शिवसेना को लगा कि जनता दल के एक और भाजपा के दो पार्षदों के समर्थन से वह आसानी से जीत जाएगी।
जो कुछ हुआ उससे शिवसेना की स्थिति अनिश्चित हो गई। महापौर पद के लिए उसके उम्मीदवार प्रकाश परंजपे कांग्रेस के मनोहर साल्वी से एक वोट से हार गए, और उप महापौर पद के लिए उसके उम्मीदवार दो वोटों से हार गए।
शिवसेना के दो पार्षदों ने पार्टी के फरमान के खिलाफ मतदान किया था। शिवसेना की मजबूत छवि में पहली दरारें दिखाई देने लगीं और ठाणे के शिवसेनावासी 'गद्दारों' के खिलाफ तेजी से आक्रोशित हो गए।
ठाकरे का आक्रोश तीखा था: ‘सभी पार्षदों ने पिछली शाम शपथ ली और फिर राजद्रोह की गतिविधियों में लिप्त हुए। उन्होंने पार्टी के साथ विश्वासघात किया है। मैं उन्हें माफ नहीं कर सकता। शिवसेना के इतिहास में ऐसा नीच कृत्य कभी नहीं हुआ। इस घिनौने कृत्य को अंजाम देने वालों को देवी माँ कभी क्षमा नहीं करेंगी।’
अनुशासनहीनता के पहले निशान मिटाने के लिए, ठाकरे ने सभी 30 शिवसेना पार्षदों के इस्तीफे का आदेश दिया, और जब 21 मार्च को वे सभी नगर आयुक्त के पास इस्तीफा देने गए, तो नाराज सैनिकों ने निगम मुख्यालय को घेर लिया। शिवसेना के ठाणे जिला प्रमुख आनंद दिघे और क्षेत्र के पार्टी पर्यवेक्षक लीलाधर डाके ने जल्द ही पार्टी प्रमुख को एक रिपोर्ट सौंपी, जिसमें दलबदलुओं के नाम शामिल होने थे। सैनिकों को बताया गया कि ठाकरे उनकी संलिप्तता की पुष्टि होने के बाद उनके नाम घोषित करेंगे। तब तक उन्हें धैर्य रखने को कहा गया।
अंततः नामों की घोषणा करना आवश्यक नहीं पड़ा।
22 अप्रैल को शिवसेना पार्षद श्रीधर खोपकर की उनके लुई वाडी स्थित आवास के पास अज्ञात हमलावरों ने चाकू मारकर हत्या कर दी। उन्हें जान से मारने की धमकियां मिल रही थीं और महापौर चुनाव के बाद उनके कार्यालय पर बदमाशों ने हमला किया था। तब तो वे बच गए थे, लेकिन दूसरे हमले में उनकी जान चली गई। घाटकोपर से घर लौटते समय उन पर तलवारों और अन्य हथियारों से हमला किया गया और उनके पूरे शरीर पर वार किए गए।
कुछ शिवसेना नेताओं ने कथित तौर पर 'देशद्रोहियों को मौत की सजा' देने की बात कही थी, और यह बात फैल गई कि खोपकर को शिवसेना ने इसलिए मार डाला क्योंकि वह दो 'विद्रोहियों' में से एक थे।
दिघे को गिरफ्तार भी किया गया और उन पर आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम की धारा 3 और 4 के तहत हत्या, साजिश और दंगा करने का आरोप लगाया गया। बाद में सबूतों के अभाव में उन्हें बरी कर दिया गया।

खोपकर के अंतिम संस्कार में महापौर मनोहर साल्वी, उप महापौर रामचंद्र ठाकुर और पूर्व महापौर वसंत दावखारे सहित कांग्रेस के नेता उपस्थित थे, लेकिन शिवसेना का एक भी कार्यकर्ता या नेता उपस्थित नहीं हुआ।
जब विधानसभा में यह मामला उठा, तो गृह राज्य मंत्री विलास सावंत ने सदन को बताया: 'ठाकरे की इस धमकी के बाद कि देशद्रोहियों को सबक सिखाया जाएगा, सतीश प्रधान, बी. तंगड़ी, भास्कर पुसालकर और श्रीधर खोपकर को सुरक्षा प्रदान की गई थी। उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया।'
खोपकर की हत्या ने शिवसेना के विरोधियों को पार्टी पर हमला करने का मौका दिया। तब यह अनुमान लगाया गया था कि शिवसेना राजनीतिक मुख्यधारा से अलग-थलग पड़ जाएगी और 'अछूत' बन जाएगी, और कोई भी उससे संबंध रखने को तैयार नहीं होगा। लेकिन राजनीतिक अलगाव की ये भविष्यवाणियां गलत साबित हुईं। शिवसेना प्रमुख को पता था कि हिंदुत्व पर उनके आक्रामक रवैये से उनकी पार्टी को ठोस लाभ मिले हैं, और उन्होंने इस विश्वास के साथ अपनी कटु भाषा जारी रखी कि ऐसा रवैया हिंदू राष्ट्रवाद की हवा को आंधी में बदल देगा। प्रभाकर कुंटे ने रमेश प्रभु के चुनाव को उच्च न्यायालय में चुनौती दी थी, उन पर चुनावी धांधली और धर्म के नाम पर लोगों को भड़काने का आरोप लगाया था। इसके बावजूद ठाकरे ने स्पष्ट कर दिया था कि फैसले की परवाह किए बिना वे अपना हिंदुत्व अभियान जारी रखेंगे। यह मामला लंबे समय तक चलता रहा, लेकिन इससे ठाकरे का हौसला नहीं टूटा। उन्होंने कहा कि कोई अदालत, कोई कानून और कोई संविधान उन्हें हिंदू धर्म की रक्षा और प्रचार करने से नहीं रोक सकता। अप्रैल 1989 में, न्यायमूर्ति एस.पी. भरूचा ने शिवसेना विधायक प्रभु के चुनाव को रद्द कर दिया, यह कहते हुए कि उन्होंने मतदाताओं को लुभाने के लिए धर्म का इस्तेमाल किया था। न्यायाधीश ने फैसला सुनाया कि ठाकरे भ्रष्टाचार में सहयोगी थे और उन्होंने शिवसेना प्रमुख के भाषणों के उन अंशों की ओर इशारा किया जिन्हें उन्होंने आपत्तिजनक माना। ठाकरे के कुछ कथन जिन पर उन्होंने आपत्ति जताई, वे इस प्रकार थे:

अगर शिवसेना सत्ता में आती है, तो सभी को हिंदू धर्म में परिवर्तित होना पड़ेगा और ईसाई और मुसलमानों को परिवार नियोजन लागू करना होगा।"

हमें मुस्लिम वोटों की इच्छा नहीं है।

"मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि समुदाय में एक राष्ट्रवादी मुस्लिम की पहचान कैसे की जाए।"

हमें हर मस्जिद को खोदकर निकालना होगा, और उसके नीचे हमारा मंदिर अवश्य ही मिलेगा।

1999 में, चुनाव आयोग ने पार्ले उपचुनाव के संबंध में प्राप्त शिकायतों और उस पर अदालत के फैसले के आधार पर यह फैसला सुनाया कि ठाकरे को छह साल की अवधि के लिए मतदान करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

26

भाजपा के साथ फिर से गठबंधन

शिवसेना का बढ़ता जनाधार और उसका उग्र हिंदुत्व प्रचार न केवल धर्मनिरपेक्ष दलों को असहज कर रहा था, बल्कि भाजपा को भी डरा रहा था। आरएसएस, विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) और बजरंग दल जैसे संघ परिवार के कई घटक दलों के सदस्यों को ठाकरे के भाषण भाजपा के 'गांधीवादी समाजवाद' से कहीं अधिक आकर्षक लग रहे थे। भाजपा को एक अजीब सी बेचैनी महसूस होने लगी थी: जो काम उसका अपना होना चाहिए था, वह बाल ठाकरे कर रहे थे।
राम जन्मभूमि का मुद्दा राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा में आने के बाद, भाजपा ने यह कहकर इस मामले से पल्ला झाड़ने की कोशिश की कि यह विश्व हिंदू परिषद का मामला है, लेकिन उसके अपने कार्यकर्ताओं की राय अलग थी। वे चाहते थे कि भाजपा गांधीवादी समाजवाद का चोला उतार फेंके, जिससे उसे कोई खास लाभ नहीं मिला था, और अयोध्या और उसके माध्यम से हिंदू हितों की रक्षा करे।
शाह बानो कांड के बाद से अधिकांश भाजपा नेताओं ने मुस्लिम कट्टरपंथ के खिलाफ आवाज उठाई थी, लेकिन जनता दल के साथ मेलजोल के कारण इसकी कभी सक्रिय, कभी निष्क्रिय और अनिश्चित हिंदुत्ववादी विचारधारा को नुकसान पहुंचा। पार्ले उपचुनाव में जनता दल के उम्मीदवार प्राणलाल वोरा के लिए प्रचार करना, उस समय जब शहाबुद्दीन उनके लिए वोट मांग रहे थे, और उसी चुनाव में ठाकरे के हिंदुत्व का विरोध करना, भाजपा के अपने कार्यकर्ताओं के अनुसार, हिंदुत्व के दावों को खोखला साबित करता है।
औरंगाबाद नगर निगम चुनावों में जब पार्टी को एक भी सीट नहीं मिली, तो कस्बे से उसके विधायक हरिभाऊ बागडे ने भाजपा नेतृत्व को चेतावनी दी थी। उन्होंने कहा था: ‘भाजपा का हिंदू धर्म का ब्रांड बहुत नरम हो गया है। लोगों को यकीन हो गया है कि केवल शिवसेना ही मुस्लिम अहंकार को बढ़ने से रोक सकती है।’¹³⁵
इसके अलावा, महाराष्ट्र में भाजपा की स्थिति बेहद नाजुक हो गई थी। 1986 तक उसने शरद पवार की कांग्रेस-एस के साथ अपना सहारा लिया था, लेकिन पवार के कांग्रेस-आई में वापस लौटने के बाद भाजपा के पास कोई ऐसा साथी नहीं बचा था जिस पर वह निर्भर रह सके। राज्य में अपने दम पर चुनाव लड़ने की ताकत उसके पास नहीं थी, हालांकि वह अपना नेटवर्क फैलाने पर ध्यान केंद्रित कर रही थी, और आगे बढ़ने के लिए उसे एक राजनीतिक सहयोगी की सख्त जरूरत थी। जनता दल से उसे केवल और अधिक नुकसान ही हो सकता था।
इन सब बातों ने भाजपा में पुनर्विचार को जन्म दिया: ठाकरे फॉर्म में थे, और यहां तक कि संघ परिवार को भी उनके भाषण पसंद आ रहे थे।
देशभर में हिंदुत्व का जोश बढ़ता जा रहा था। राम जन्मभूमि मुद्दे ने देशव्यापी बहस छेड़ दी थी और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) 'मंदिर की मुक्ति' के लिए अभियान चला रही थी। भाजपा के लिए हिंदुत्व से दूरी बनाए रखना नामुमकिन हो गया था। अप्रैल 1988 में आगरा में हुए पार्टी के सम्मेलन में राजनीतिक प्रस्ताव पर बोलते हुए प्रमोद महाजन ने एल.के. आडवाणी और ए.बी.

वाजपेयी की सहमति से भाजपा को अयोध्या अभियान का समर्थन करने का सुझाव दिया। इस सुझाव का प्रतिनिधियों ने ज़बरदस्त स्वागत किया।
शिवसेना भी इसी मुद्दे को लेकर जनता के पास गई थी, इसलिए भाजपा में यह सोच विकसित हुई कि शिवसेना के साथ गठबंधन से पार्टी की संभावनाएं बढ़ेंगी। ठाकरे ने भी सार्वजनिक रूप से कहा था कि अगर किसी एक पार्टी के साथ वे हाथ मिला सकते हैं, तो वह भाजपा ही है। गठबंधन के प्रबल समर्थक और महाराष्ट्र भाजपा के प्रभारी प्रमोद महाजन ने भाजपा कार्यकर्ताओं का मिजाज जानने के लिए राज्य भर में बैठकें कीं। उन्होंने पाया कि अधिकांश लोग शिवसेना- भाजपा गठबंधन के पक्ष में थे।
शिवसेना के प्रति भाजपा की धारणा में आया बदलाव, चाहे वह अवसरवादिता से उपजा हो या वास्तव में नए सिरे से पैदा हुए स्नेह से, भाजपा नेता के.आर. मलकानि द्वारा मई 1989 में इंडियन पोस्ट में लिखे गए "शिवसेना के बचाव में" नामक लेख में परिलक्षित हुआ।¹³⁶
भाजपा ने जून 1989 में हिमाचल प्रदेश के पालमपुर में अपनी राष्ट्रीय कार्यकारिणी में दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किए: उसने मांग की कि राम जन्मभूमि स्थल को या तो बातचीत के माध्यम से समझौते या कानून बनाकर हिंदुओं को सौंप दिया जाए, और उसने शिवसेना के साथ सीट समायोजन करने के लिए अपनी महाराष्ट्र इकाई के प्रयासों को मंजूरी दी।
उत्तर राज्यों में भाजपा के साथ समझौता करने वाली जनता दल ने तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। महाराष्ट्र इकाई की प्रमुख मृणाल गोरे ने कहा कि अगर भाजपा शिवसेना के साथ समझौता करती है तो पार्टी भाजपा से कोई संबंध नहीं रखेगी। महाराष्ट्र में दल की स्थिति नाजुक थी और भाजपा के साथ समझौता न करने का भारी खामियाजा भुगतना पड़ सकता था। लेकिन गोरे अपने इस रुख पर अड़ी रहीं कि शिवसेना से संबंधों के कारण जनता दल भाजपा से बातचीत नहीं करेगी और दल अध्यक्ष वी.पी. सिंह ने भी उनका समर्थन किया।
गोर ने मुझसे कहा:

मुझे पता था कि उस समय महाराष्ट्र में दल का अस्तित्व खतरे में था, लेकिन मैंने भाजपा नेतृत्व को स्पष्ट कर दिया था कि हम उस पार्टी के साथ हाथ नहीं मिला सकते जिससे हमारी कोई समानता नहीं है। शिवसेना और दल राजनीतिक रूप से एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत ध्रुव थे, और उनका मिलन कभी संभव नहीं था। मैंने भाजपा नेतृत्व को यह भी बताया था कि वे शिवसेना के साथ अच्छे संबंध नहीं रख पाएंगे, लेकिन राम काप्से के अलावा किसी ने मेरी बात नहीं सुनी।¹³⁷

पंजाब में दल अकाली दल को लुभाने की कोशिश कर रहा था। केरल में उसने वाम मोर्चा के साथ गठबंधन किया था, और तमिलनाडु में वह न केवल डीएमके पर निर्भर था, बल्कि सीपीआई (एम) और मुस्लिम लीग के साथ भी गठबंधन में था। आंध्र प्रदेश में वह तेलुगु देशम के साथ समझौता करने की कोशिश कर रहा था। लेकिन महाराष्ट्र में वह शिवसेना का विरोध करने पर अडिग था। शिवसेना के प्रति दल के रुख पर टिप्पणी करते हुए के.आर. मलकानि ने कहा:

राजनीतिक विश्लेषक दल के नेतृत्व से यह जानना चाहते हैं कि वे मुस्लिम लीग से बातचीत करने को तैयार क्यों हैं, शिवसेना से क्यों नहीं?... जनता दल सांप्रदायिक अकाली दल और संकीर्ण सोच वाली डीएमके से बातचीत करने को तैयार क्यों है, शिवसेना से क्यों नहीं?... क्योंकि इससे कुछ मुसलमान नाराज़ हो सकते हैं। जनता दल को भाजपा को लेकर भी ऐसी ही आशंकाएं हैं; लेकिन चूंकि कांग्रेस के समर्थन के बिना उसे हराना संभव नहीं है, इसलिए उसे अपनी चिंताओं को दबाना पड़ रहा है। हालांकि, शिवसेना के मामले में दल के नेतृत्व का मानना है कि उसे अलग रखा जा सकता है क्योंकि वह पार्टी एक ही राज्य तक सीमित है और इसलिए दल की अखिल भारतीय रणनीति को प्रभावित नहीं कर सकती।¹³⁸

दल के रुख को देखते हुए, शिवसेना प्रमुख ने भी इसके खिलाफ कड़ा रुख अपनाया। उन्होंने कहा कि उनकी पार्टी नवंबर 1989 में होने वाले लोकसभा चुनावों और 1990 की शुरुआत में होने वाले विधानसभा चुनावों के लिए 'जनता दल को छोड़कर' सभी विपक्षी दलों के साथ सहयोग करने को तैयार होगी।
इन वर्षों में शिवसेना विधानसभा में दो से अधिक सीटें नहीं जीत पाई थी, लेकिन अब वह अडिग रुख अपना सकती थी क्योंकि उसे पता था कि कांग्रेस सरकार के लिए उसकी चुनौती को महज कोरी धमकियों के रूप में खारिज नहीं किया जा सकता। अकेले दम पर सत्ता के करीब पहुंचना उसके लिए अभी भी मुश्किल होता, लेकिन भाजपा के साथ गठबंधन, जो राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में अपना आधार मजबूत करने के लिए काम कर रही थी, ने उसे अतिरिक्त आत्मविश्वास दिया। जनता दल खुद को अलग-थलग पा रही थी, क्योंकि कुछ छोटे-मोटे इलाकों को छोड़कर उसका कोई अस्तित्व नहीं था। कभी कांग्रेस के बाद जमीनी समर्थन के मामले में दूसरे नंबर पर रहने वाली पीडब्लू पी का प्रभाव काफी कम हो गया था। और दोनों कम्युनिस्ट पार्टियों का प्रभाव क्षेत्र भी बहुत छोटा रह गया था। ऐसे में, भाजपा, वीएचपी और आरएसएस कार्यकर्ताओं के समर्थन से शिवसेना ने एक बड़ी चुनौती पेश की।
शिवसेना और भाजपा के बीच समझौता यह हुआ था कि लोकसभा चुनाव में शिवसेना कनिष्ठ सहयोगी रहेगी और विधानसभा चुनाव में भाजपा शिवसेना के अधीन रहेगी। इसी के अनुरूप, शिवसेना ने अधिकांश संसदीय सीटें भाजपा को दे दीं। लेकिन चुनाव प्रचार में ठाकरे ने ही प्रमुख भूमिका निभाई और उन्हें 'हिंदू हृदय सम्राट' का नाम मिल गया। विदर्भ के नागपुर, अमरावती और अकोला से लेकर पश्चिमी महाराष्ट्र के सोलापुर और कोंकण के सिंधुदुर्ग तक, पूरे महाराष्ट्र में उनका दबदबा रहा।
महाजन के साथ, उन्होंने भारी भीड़ को आकर्षित किया और बेझिझक हिंदू कार्ड खेला। दोनों नेताओं ने मतदाताओं से कहा कि शिवसेना-भाजपा गठबंधन न केवल चुनावी है, बल्कि 'दिलों, दिमागों, कार्यक्रमों की एकता और हिंदू हित की सेवा के लिए एक एकता' है।
ठाकरे का हिंदुत्व, महाजन और अन्य भाजपा नेताओं के दावों से कहीं अधिक मुखर था। उन्होंने कहा, ‘भारत में चुनाव शाही इमाम और सैयद शहाबुद्दीन के वोटों पर क्यों निर्भर होने चाहिए? उनकी भावनाओं का सम्मान करने के लिए 6 करोड़ हिंदुओं की भावनाओं को क्यों कुचला जा रहा है? तुम्हारी धर्मनिरपेक्षता भाड़ में जाए। इस देश में हिंदुत्व और हिंदुओं का सम्मान सर्वोपरि होना चाहिए। यह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, और यदि सरकार इसे

हमसे छीनती है, तो हम जानते हैं कि इसे कैसे प्राप्त करना है।’ उन्होंने ‘हिंदू विरोधी ताकतों’ से तीखे शब्दों में कहा। युवाओं से अपील करते हुए उन्होंने कहा, ‘हिंदुत्व कोई लहर नहीं है। यह हमारे जीवन की सांस है। यदि किसी मुसलमान को किसी देश से निकाल दिया जाता है, तो अन्य मुस्लिम राष्ट्र हैं जहां वह शरण ले सकता है। हिंदू कहां जाएंगे? इसलिए हमें अपनी हिंदू भूमि की रक्षा करनी होगी, और यदि आवश्यक हो, तो हिंदुत्व को बचाने के लिए अपने प्राणों का बलिदान देना होगा। उन ताकतों का नाश करो जिन्होंने लोकसभा को भोग सभा में बदल दिया है।’
मुसलमानों पर हमले से पहले अक्सर मुस्लिम क्रिकेटरों की तारीफ की जाती थी। ‘हमें किरमानी, अजहर और (अरशद) अयूब जैसे राष्ट्रवादी मुसलमानों की ज़रूरत है, जो देश के लिए खेलते हैं और उसे जीत दिलाने में मदद करते हैं। इस्लाम का पहला सिद्धांत है कि व्यक्ति को अपने देश के प्रति वफादार रहना चाहिए। लेकिन आप लोग (पाकिस्तान समर्थक मुसलमान) क्या कर रहे हैं?’ और जब उन्होंने पाकिस्तानी नेताओं की मौत के बाद बाज़ारों को बंद किए जाने को बर्दाश्त न करने की बात कही और क्रिकेट मैच में भारत पर पाकिस्तान की जीत के बाद पटाखे फोड़ने वालों की निंदा की, तो उनकी बातें अक्सर लोगों को प्रभावित करती थीं।
लोकसभा चुनाव के नतीजे जनता की प्रतिक्रिया की व्यापकता का संकेत देते हैं: शिवसेना ने 4 सीटें जीतीं, जबकि भाजपा ने 10 सीटों पर शानदार जीत हासिल की। शिवसेना द्वारा जीती गई 4 सीटों में से 2 मुंबई की थीं, जबकि अन्य दो मराठवाड़ा के औरंगाबाद और परभनी की थीं।
कांग्रेस की 28 सीटों के मुकाबले चौदह सीटें जीतना वाकई अच्छा प्रदर्शन था।
ठाकरे ने शिवाजी पार्क में शिवसेना-भाजपा की विजय रैली में उपस्थित लोगों को संबोधित करते हुए जोश से कहा, 'मैं नए प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह से हाथ जोड़कर अपील करता हूं कि वे मुसलमानों को खुश करने की कोशिश न करें। अगर वे नहीं मानते हैं, तो हम हिंदुओं को जगाएंगे और केंद्र में शिवसेना-भाजपा की सरकार लाएंगे।'
लेकिन केंद्र सरकार से सत्ता में आने में भले ही काफी समय लग रहा हो, शिवसेना प्रमुख को विधानसभा चुनावों में अपनी पार्टी की संभावनाओं पर कोई संदेह नहीं था। उन्होंने दावा किया, 'महाराष्ट्र पर भगवा ध्वज फहराने का रास्ता अब हमारे लिए साफ है।'
विधानसभा चुनाव मार्च 1990 में होने की घोषणा की गई और आत्मविश्वास से भरी शिवसेना-भाजपा गठबंधन ने तुरंत चुनाव प्रचार का आयोजन शुरू कर दिया। इतने बड़े पैमाने पर चुनाव लड़ने और ठाकरे की लोकप्रियता का लाभ उठाने के लिए शिवसेना को एक सुव्यवस्थित चुनाव तंत्र की आवश्यकता थी। सुधीर जोशी की स्थानीय लोकाधिकार समिति (एसएलएस) ने इसे उपलब्ध कराया। इसने लगभग 1,000 कार्यकर्ताओं की एक टीम बनाई, उन्हें चुनाव अभियान चलाने का प्रशिक्षण देने के लिए सत्र आयोजित किए और शिवसेना का संदेश फैलाने के लिए उन्हें पूरे राज्य में भेजा।
ठाकरे पूरे जोश में थे और महाराष्ट्र को लोकशाही नहीं बल्कि शिवशाही यानी शिवाजी का उदार शासन देने का वादा कर रहे थे।
उन्होंने जिस शिवशाही का वादा किया था, वह ऐसी योजना थी जिसमें लोगों को भोजन, वस्त्र और आश्रय जैसी आवश्यक चीजें उपलब्ध कराई जाएंगी, 40 लाख झुग्गीवासियों का पुनर्वास किया जाएगा, पुलिसकर्मियों और सरकारी

कर्मचारियों को सेवानिवृत्ति के बाद स्थायी घर दिए जाएंगे और 40,000 गांवों को पानी उपलब्ध कराया जाएगा।
उस समय राजनीतिक विश्लेषकों ने शिवसेना प्रमुख की आर्थिक कार्यक्रम न होने के लिए आलोचना की, लेकिन ठाकरे ने जवाब दिया: 'कांग्रेस के आर्थिक कार्यक्रम ने जनता को क्या दिया है? सभी पंचवर्षीय योजनाओं ने आम आदमी को क्या दिया है? उनके पास तो बुनियादी ज़रूरतें भी नहीं हैं। हमारा एकमात्र कार्यक्रम बुनियादी ज़रूरतों की पूर्ति सुनिश्चित करना होगा।'
इसके बाद, वे कांग्रेस और अन्य धर्मनिरपेक्षवादियों पर हमला करते और अपनी वाक्पटुता और विरोधियों पर प्रहार करने के अपने तीखे अंदाज से सबका ध्यान आकर्षित करते। 11 फरवरी 1990 को सावंतवाड़ी विधानसभा क्षेत्र में ठाकरे द्वारा दिया गया भाषण, चुनाव अभियान के दौरान उनके इस लहजे का एक उदाहरण है, जिसे उन्होंने विशिष्ट भाषा में व्यक्त किया था:

दस साल में उन्होंने (कांग्रेस ने) छह मुख्यमंत्री बदल दिए हैं। जब पार्टी एक स्थिर मुख्यमंत्री नहीं दे सकती, तो वह आपको स्थिर सरकार कैसे दे सकती है? मैं कांग्रेस-ई हथवालों की बात कर रहा हूँ। अगर उनके पास हाथ है, तो हमारे पास टांग है और हम उन्हें बाहर निकाल देंगे।

"टांग" एक असभ्य शब्द है। यह शरीर का एक अंग है। लोग मुझ पर अपशब्दों का प्रयोग करने का आरोप लगा रहे हैं, लेकिन उनमें अपशब्द क्या हैं? मैं एक कार्टूनिस्ट हूँ और इसलिए मैं व्यंग्य करता हूँ।

हमने लोकसभा चुनाव लड़ा है। हमारा मकसद महाराष्ट्र से कुछ प्रतिनिधित्व हासिल करना था। महाराष्ट्र से कांग्रेस-आई के सांसद चुप रहते हैं, और अगर बोलते भी हैं तो जम्हाई लेते हैं या तंबाकू चबाते हैं। हमारी समस्याएं तब तक हल नहीं होतीं जब तक हमारा कोई अपना वहां (लोकसभा) नहीं जाता। इसीलिए हमने भाजपा के साथ गठबंधन किया है। इस गठबंधन का उद्देश्य सत्ता नहीं है। ऐसा नहीं है कि बाल ठाकरे निराश होकर मुख्यमंत्री बनना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अपनी पत्नी से अपनी इच्छाओं, भूखंडों की सूची बनाने को कहा, और यह भी कि उनके रिश्तेदार कहां भूखंड चाहते हैं। मैं ऐसा सपना नहीं देखता, क्योंकि मैं खुद चुनाव नहीं लड़ता।

इस देश को, जिसे हम हिंदुस्तान कहते हैं, एक और नाम से भी पुकारा जाता है, भारत, जिसे हम स्वीकार करते हैं। हम भारत को स्वीकार नहीं करते, यह अंग्रेजों द्वारा दिया गया था जिन्हें हमने खदेड़ दिया। अगर सत्ता मेरे हाथ में आती है, अगर मैं प्रधानमंत्री बनता हूँ, जो कि मैं नहीं बनूँगा क्योंकि मैं चुनाव नहीं लड़ता, तो मैं अपने देश का नाम बदलकर हिंदुस्तान कर दूँगा और इसे विश्व मानचित्र पर अंकित करवा दूँगा।

मुंबई के मुसलमानों के विपरीत, कोंकण के मुसलमान हमारे अपने हैं। वे ए.आर. अंतुले की तरह अच्छी मराठी बोलते हैं। हमने उन्हें अपना मुख्यमंत्री स्वीकार किया। अगर आप उन्हें देखें, तो वे चितपावन ब्राह्मण जैसे दिखते हैं। एक बार इंदिरा गांधी अंतुले को चुनाव प्रचार के लिए उत्तर प्रदेश ले गईं। अंतुले ने मुझे यह किस्सा सुनाया, जिसके बाद उन्होंने मुझसे कहा कि मैं किसी को न बताऊं (जो वे हमेशा करते हैं)। भीड़ के सामने उनका परिचय महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री अंतुले के रूप में कराया गया। श्रीमती गांधी ने उनका परिचय कराने वाले व्यक्ति की नेहरू शर्ट का पिछला हिस्सा खींचते हुए कहा: “सिर्फ ‘अंतुले’ मत कहिए, ‘अब्दुल रहमान अंतुले’ कहिए, ताकि श्रोताओं में मौजूद मुसलमान समझ सकें कि वे मुसलमान हैं। क्या यह सांप्रदायिकता नहीं है? लेकिन इस देश में हिंदू शब्द बोलना भी अपराध है।”

कश्मीर में उन्होंने (मुसलमानों ने) तिरंगा जलाया, पाकिस्तानी झंडा फहराया और पाकिस्तान जिंदाबाद के नारे लगाए। मैं पाकिस्तान समर्थक मुसलमानों की बात कर रहा हूँ। ये गद्दार कहाँ हैं? आपको इन्हें ढूंढना चाहिए।

हमने मुंबई से अलीम खान को उम्मीदवार बनाया है। वे जन्म से मुसलमान हैं और व्यवहार में भी मुसलमान हैं। हमने मुंबई के नागपाड़ा से अंजुम अहमद को भी उम्मीदवार बनाया है, जो एक मुस्लिम महिला हैं। हमने उनसे नागरिक संहिता के बारे में उनकी राय पूछी और उन्होंने कहा कि इसे लागू किया जाना चाहिए। राष्ट्रवादी विचारों वाली ऐसी महिला को उम्मीदवार बनाने में क्या बुराई है? इससे साबित होता है कि हम मुस्लिम विरोधी नहीं हैं।

भारत में रहने वाले और पाकिस्तान का साथ देने वाले मुसलमानों का यहाँ कोई काम नहीं है। उन्हें देश छोड़ देना चाहिए। हम उनके यात्रा खर्च का भुगतान करने को तैयार हैं। नतीजा क्या होगा? हमें उनके वोट नहीं मिलेंगे। कोई बात नहीं। यहाँ हमारा युवा हिंदू भाई है जो चुनाव जीतेगा और हर हाल में विधानसभा में प्रवेश करेगा।

मराठवाड़ा में बाढ़ से घर बह गए थे, और कलेक्टर ने उन्हें दोबारा बनाने के लिए न तो अनुमति दी और न ही ज़मीन। लेकिन जब मुसलमानों के एक समूह ने कब्रिस्तान के लिए ज़मीन मांगने के लिए मुख्यमंत्री शरद पवार से मुलाकात की, तो उन्होंने ज़मीन दे दी और अंतिम संस्कार का खर्च उठाने की पेशकश की। मृतकों के लिए ज़मीन तो है, लेकिन जीवितों के लिए नहीं।

इस मुख्यमंत्री को देखिए। इनके हाथ 555 भूखंडों (प्लॉटों) के श्रीखंड से सने हुए हैं। और उसे चाटने के बाद ये कहते हैं कि इनके हाथ साफ हो गए हैं, लेकिन अब इन्हें बताने का समय आ गया है कि श्रीखंड की गंध अभी भी बाकी है।

नए प्रधानमंत्री गणपति दर्शन नहीं करते। वे इमाम के पास जाकर उनके सामने घुटने टेकते हैं। मुफ्ती मोहम्मद सईद गृह मंत्री हैं, लेकिन वे कश्मीर या पंजाब नहीं गए, बल्कि मुस्लिम वोट पाने के लिए मालेगांव गए।

आपने इन लोगों को 42 साल तक बर्दाश्त किया है। हमें भी 5 साल तक बर्दाश्त कीजिए। आपका कुछ भी नुकसान नहीं होगा।

लोकसभा चुनाव के लिए 65 सभाओं को संबोधित करने के बाद, शिवसेना प्रमुख ने विधानसभा चुनाव के लिए राज्य भर में 144 सभाएँ कीं। और यद्यपि मंत्रालय पर भगवा झंडा लहराने की उनकी भविष्यवाणी सच नहीं हुई, लेकिन नतीजों ने दिखाया कि शिवसेना-भाजपा ने हिंदुत्व के घोड़े पर सवार होकर महाराष्ट्र में अपनी पैठ मजबूत कर ली है।
विधानसभा में शिवसेना का प्रतिनिधित्व पिछली विधानसभा के एक सीट से बढ़कर 52 हो गया, और उसके सहयोगी भाजपा का प्रतिनिधित्व 16 से बढ़कर बयालीस हो गया।
शिवसेना-भाजपा गठबंधन के 94 विधायकों के मुकाबले, सत्ताधारी कांग्रेस को बहुमत से तीन कम यानी 141 सीटें मिलीं। शिवसेना कांग्रेस के लिए एक बड़ी चुनौती बनकर उभरी थी और उसकी इस सफलता का श्रेय ठाकरे और एसएलएस को जाता है।
1990 के नतीजों के अध्ययन से पता चला कि शिवसेना द्वारा हिंदू दलितों को लुभाने की रणनीति कारगर साबित हुई। राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति के लोग 13 प्रतिशत थे, जिनमें से नव-बौद्ध 8 प्रतिशत थे। मुख्य रूप से मातंग, चार्माकर, धनगर और धोर जाति से संबंधित हिंदू दलित महाराष्ट्र की जनसंख्या का 5 प्रतिशत थे। यह समझते हुए कि उन्हें अलग-थलग करना संभव नहीं है, शिवसेना ने अपने दलित-विरोधी तेवर को मिटाने का फैसला किया और 'हिंदू होने पर गर्व करने वाले' दलितों से अपने साथ जुड़ने की अपील की। उसने नव-बौद्धों के प्रति हिंदू दलितों की पारंपरिक शत्रुता और आरक्षण से नव-बौद्धों की तुलना में कम लाभ मिलने का फायदा उठाया।
1990 के चुनावों में विजयी शिवसेना उम्मीदवारों का जातिवार विश्लेषण दर्शाता है कि उनमें से अधिकांश निचली जातियों से थे। चुने गए 52 उम्मीदवारों में से 6 तथाकथित उच्च जातियों (ब्राह्मण, प्रभु और सारस्वत) से, 27 मराठा-कुनबी, 13 अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी), एक अनुसूचित जाति, एक अनुसूचित जनजाति और 3 अन्य श्रेणियों से थे।

27

भुजबल नाराज होकर सेना से इस्तीफा देते हैं।

जब मनोहर जोशी सदन में सबसे बड़े विपक्षी समूह, 52 सदस्यीय शिवसेना विधायक दल के नेता चुने गए, तो छगन भुजबल, जिनका 1985 से एकमात्र शिवसेना विधायक के रूप में प्रदर्शन आक्रामक रहा था, ने खुद को ठगा हुआ और दरकिनार महसूस किया।
भुजबल खेमे का मानना था कि चुनाव में पार्टी के अच्छे प्रदर्शन का एक कारण ओबीसी वोटों पर कब्जा जमाना था, जिसका श्रेय प्रमुख ओबीसी नेता भुजबल को जाता है। लेकिन भुजबल को नगर निगम में महापौर के रूप में वापस भेज दिया गया, जबकि जोशी ने विधानसभा समूह का नेतृत्व किया।
भुजबल की रूठन से पैदा हुआ आंतरिक तनाव मंडल आयोग की सिफारिशों के मुद्दे पर खुलकर सामने आ गया।
भाजपा ने आरक्षण नीति का समर्थन किया, लेकिन ठाकरे ने इसका विरोध किया। उन्होंने ऐसा करके शिवसेना के लगभग 70 प्रतिशत समर्थकों को नाराज़ करने का जोखिम उठाया, जो ओबीसी थे। उन्होंने भाजपा को यह चेतावनी भी दी कि मंडल मुद्दे पर 'अलगाव की कार्यवाही' शुरू करने में उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी।¹³⁹
लेकिन ठाकरे के अपने विचार व्यक्त करने से पहले ही, भुजबल ने सार्वजनिक रूप से राष्ट्रीय मोर्चा सरकार के फैसले के प्रति अपना समर्थन व्यक्त कर दिया था। ठाकरे ने उनके इस बयान के लिए उन्हें कड़ी फटकार लगाई।
शिवसेना के अधिकांश अन्य निचले स्तर के नेता भी आरक्षण का समर्थन करने के पक्ष में थे, क्योंकि उनका मानना था कि कोटा नीति का विरोध करना पार्टी के लिए राजनीतिक रूप से आत्मघाती होगा। लेकिन शिवसेना प्रमुख को समझाने के सभी प्रयास विफल रहे।
लगभग उसी समय, वी.पी. सिंह ने महाराष्ट्र का दौरा किया और भुजबल को जनता दल में शामिल होने के लिए खुला निमंत्रण दिया।
मंडल मुद्दे पर शिवसेना के रुख को स्वीकार करना भुजबल के लिए दिन-प्रतिदिन कठिन होता जा रहा था, लेकिन उस समय पार्टी छोड़ने का उनका कोई इरादा नहीं था। अपनी निराशा व्यक्त करने के लिए, जब भाजपा की सोमनाथ-अयोध्या राम रथ यात्रा मुंबई पहुंची, तो शिवसेना और भाजपा द्वारा आयोजित उसके स्वागत रैली में वे शामिल नहीं हुए।
जल्द ही, दरकिनार किए जाने से उत्पन्न उनकी निराशा ने अधिक प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति प्राप्त की। मार्च 1991 में, उन्होंने मनोहर जोशी पर हमला करते हुए कहा, 'जोशी विपक्ष के नेता के रूप में विफल रहे हैं और उन्हें प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है।'¹⁴⁰ भुजबल ने आगे कहा कि उन्हें महापौर के रूप में एक और कार्यकाल में कोई दिलचस्पी नहीं है और वे केवल विपक्ष के नेता बनाए जाने का स्वागत करेंगे।
यह 'खुला विद्रोह' शिवसेना की उस छवि को ठेस पहुँचा रहा था जिसमें उसे एक व्यक्ति के नियंत्रण वाली एक अखंड पार्टी माना जाता था, और ठाकरे ने मामले को सुलझाने के लिए भुजबल और जोशी दोनों को तलब किया। ऐसा लगता है कि वे

मतभेदों को सुलझाने में सफल भी हुए, और बताया जाता है कि भुजबल ने विवाद को सार्वजनिक करने के लिए दिल से माफी मांगी।
लेकिन जोशी और भुजबल के बीच मतभेद जारी रहे, और अंततः भुजबल ने दिसंबर 1991 में पद छोड़ने का फैसला किया।
दिसंबर की शुरुआत होते ही यह स्पष्ट हो गया कि शिवसेना में फूट पड़ने वाली है। भुजबल काफी समय से रूठ गए थे और उनकी दबी आवाजें पूरे शहर में चर्चा का विषय बन गई थीं।
5 दिसंबर को शिवसेना के 18 विधायकों के एक समूह ने विधानसभा अध्यक्ष मधुकरराव चौधरी को पत्र लिखकर उनसे एक अलग समूह – शिवसेना (बी) – बनाने की अनुमति देने का अनुरोध किया। समूह के नेता छगन भुजबल हैं।
स्पीकर ने 11 दिसंबर को अलग हुए गुट को मान्यता देकर शिवसेना में हुए विभाजन को औपचारिक रूप दिया और 20 तारीख को भुजबल के नेतृत्व में दलबदलुओं में से 12 कांग्रेस-आई में शामिल हो गए।
शिवसेना को करारा झटका लगा था। जनसमर्थन रखने वाले उसके शीर्ष नेताओं में से एक ने पार्टी छोड़ दी थी। भुजबल ने शिवसेना को अलविदा कहने के अपने फैसले को इस प्रकार उचित ठहराया: ‘मैंने मनोहर जोशी से सीखा है कि किसी को पीठ में छुरा घोंपने का तरीका विनम्रता से कैसे इस्तेमाल किया जाता है!’¹⁴¹ इसके बाद भाजपा ने विधानसभा में विपक्ष के नेता का पद हासिल करके शिवसेना के घावों पर नमक छिड़का। शिवसेना अभी विभाजन के सदमे से उबर ही रही थी कि भाजपा ने कैबिनेट मंत्री के समकक्ष इस पद पर अपना दावा ठोक दिया। विधानसभा में पहले 52 सदस्यों वाली शिवसेना अब घटकर 34 रह गई थी, और 41 सदस्यों वाली भाजपा सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी बन गई थी। गठबंधन सहयोगी के लिए संकट के इस दौर में यह रुख अपनाते हुए भाजपा ने अपने विधायक गोपीनाथ मुंडे को विपक्ष का नेता चुनवाया।
इन दो झटकों से शिवसेना हिल गई, और हालांकि पार्टी नेताओं ने यह कहकर साहस दिखाया कि विभाजन से शिवसेना पर बिल्कुल भी असर नहीं पड़ेगा, लेकिन अचानक सामने आई कमजोरियों का मनोबल पर गहरा प्रभाव पड़ा।
शिवसेना को एक बार फिर एक राजनीतिक शक्ति के रूप में खारिज कर दिया गया, और इस बार, कयामत की भविष्यवाणी करने वालों का दावा पहले से कहीं अधिक मुखर था।
फरवरी 1992 में हुए बीएमसी चुनावों ने ऐसी आवाजों को और भी बल दिया।
सीटों के बंटवारे को लेकर शिवसेना और भाजपा के बीच बातचीत विफल रही और दोनों ने अलग होने का फैसला किया। इसका फायदा कांग्रेस को मिला: 14 साल के अंतराल के बाद उसे नगर निगम पर नियंत्रण हासिल करने में सफलता मिली।
शिवसेना ने 70 सीटें जीतीं, जबकि भाजपा ने 14 सीटें बरकरार रखीं।
टाइगर ने अपना गढ़ खो दिया था। घरेलू मैदान पर मिली हार अपमानजनक थी, और ऐसा लग रहा था मानो शिवसेना की प्रगति पूरी तरह से रुक गई हो।
अब जो सवाल उठ रहे थे, वे थे: क्या शेर को काबू में कर लिया गया था? क्या उसके दांत टूट गए थे? और सबसे बढ़कर, क्या शिवसेना फिर से उठ खड़ी हो पाएगी?

गांधी के हत्यारे: नायक या खलनायक?
हालांकि, कुछ समय के लिए भुजबल और जोशी के बीच मतभेद अस्थायी रूप से दो मुद्दों पर शिवसेना द्वारा उत्पन्न किए गए ड्रामे के कारण दब गए: पहला,

महात्मा गांधी की हत्या, और दूसरा, पाकिस्तान का भारत का प्रस्तावित क्रिकेट दौरा।
ठाकरे ने जून 1991 के लोकसभा चुनावों के प्रचार के दौरान महात्मा गांधी के हत्यारे नाथूराम गोडसे की प्रशंसा करके विवाद खड़ा कर दिया था। 17 मई को पुणे के अलका टॉकीज स्क्वायर में एक रैली को संबोधित करते हुए शिवसेना प्रमुख ने कहा:

नथुराम भाड़े का हत्यारा नहीं था। वह महात्मा गांधी द्वारा राष्ट्र के साथ किए गए विश्वासघात से क्रोधित था। किसी भी व्यक्ति की हत्या एक जघन्य अपराध है और इसकी निंदा की जानी चाहिए। लेकिन हमें ऐसी घटनाओं के पीछे के कारणों का पता लगाना होगा। महात्मा गांधी ने राष्ट्र के साथ विश्वासघात किया था। उन्होंने कहा था कि वे देश के विभाजन को रोकने के लिए अपनी जान दे देंगे। लेकिन अंततः उन्होंने विभाजन को रोकने के लिए कुछ नहीं किया। इसके अलावा, जब देश विभाजन के आघात से जूझ रहा था, तब उन्होंने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने पर जोर दिया। इसी क्रोध ने नथुराम को ऐसा करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने देश के और अधिक विभाजन को रोका। उनकी प्रेरणा राष्ट्रवादी गौरव थी। इसमें कोई स्वार्थ नहीं था।

इस मुद्दे को कांग्रेस नेता विठ्ठलराव गाडगिल ने उठाया था, जिन्होंने कहा था: ‘वे (शिवसेना-भाजपा) राम की बात तो करते हैं, लेकिन नाथूराम को अपने वश में रखते हैं।’ ठाकरे ने उनकी बातों में आकर उन्हें इसका खामियाजा भुगतना पड़ा। नाथूराम का मुद्दा, साथ ही राजीव गांधी की हत्या के बाद फैली सहानुभूति की लहर, राज्य में शिवसेना-भाजपा की लोकसभा सीटों की संख्या को घटाकर नौ कर दिया।
अक्टूबर 1991 में, ठाकरे भारत और पाकिस्तान के क्रिकेट संबंधों के मध्यस्थ बन गए। उन्होंने घोषणा की कि पाकिस्तान टीम, जिसे 28 अक्टूबर को वानखेड़े स्टेडियम में भारत के साथ एक दिवसीय मैच खेलना था, को मुंबई में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी जाएगी, और यदि मुंबई क्रिकेट एसोसिएशन मैच को आगे बढ़ाता है, तो 'वानखेड़े स्टेडियम को जला दिया जाएगा।'
शिवसेना प्रमुख ने कहा, ‘भारत ऐसे समय में पाकिस्तान के साथ क्रिकेट खेल रहा है जब वे देश में अशांति फैला रहे हैं और आतंकवाद को बढ़ावा दे रहे हैं। इस समय पाकिस्तान के साथ क्रिकेट मैच खेलना उतना ही हास्यास्पद है जितना कि रोम के जलते समय रोमन सम्राट नीरो का वायलिन बजाना।’¹⁴²
ठाकरे पर मीडिया ने खेल को राजनीति से मिलाने का आरोप लगाया। उनका जवाब था: ‘ये मूर्ख मुझे खेल को राजनीति से ऊपर रखने की सलाह देते हैं, लेकिन वे नहीं जानते कि राष्ट्र क्या होता है और क्या चीज़ किससे ऊपर होनी चाहिए। यह आपके खेलों से भी ऊपर होना चाहिए। अगर आप खेल और कला को राजनीति से ऊपर रखने वाले हैं, तो मैं कहता हूं कि राष्ट्र सर्वोपरि है। मुझे कोई खेल भावना न सिखाए। यह राष्ट्र की कीमत पर नहीं होना चाहिए। हमें कहीं न कहीं एक राष्ट्र के रूप में खड़ा होना होगा। हमारे शत्रु को यह पता होना चाहिए कि यह एक ऐसा हिंदुस्तान है, जहां के लोग राष्ट्रीय भावना और गौरव के मामले में जागरूक और भावुक हैं।’

मैच शुरू होने से काफी पहले ही, शिवसैनिकों ने खेल में बाधा डालने के लिए प्रमुख के आदेश को अंजाम दिया। 22 अक्टूबर को, शिशिर शिंदे के नेतृत्व में शिवसेना कार्यकर्ताओं के एक समूह ने वानखेड़े स्टेडियम की पिच को नुकसान पहुंचाया। उन्होंने स्टेडियम के अंदर पहरा दे रहे 60 पुलिसकर्मियों को निर्माण मजदूर होने का भ्रम दिलाया, विकेट पर चढ़ गए, हंसिया और पुराने स्टंप से पिच खोदी और उस पर तेल डाल दिया।

शिवसेना और मीडिया
एक घटना के बाद दूसरी घटना घटी। इस तोड़फोड़ की घटना के तुरंत बाद, मराठी शाम के समाचार पत्र महानगर के संपादक निखिल वागले ने - जिस पर ठाकरे ने पार्टी में असंतोष की आवाजें मुखपृष्ठों पर आने के बाद शिवसेना में फूट डालने की कोशिश करने का आरोप लगाया था - एक संपादकीय लिखकर शिवसेना की मनमानी की निंदा की। कई महीनों से महानगर और ठाकरे एक-दूसरे पर जमकर हमला बोल रहे थे, लेकिन स्थिति तब चरम पर पहुंच गई जब वागले ने भारत-पाकिस्तान क्रिकेट पर ठाकरे के रुख के लिए उन्हें 'वेदा मोहम्मद' कह दिया। ठाकरे की आलोचना करने वाले इस संपादकीय का शीर्षक था 'बालबुद्धिचे प्रताप' (बाल के दिमाग की करतूतें)।
अपने नेता की आलोचना से आहत होकर, सैनिकों ने 25 अक्टूबर को महांगर के माहिम स्थित कार्यालय पर धावा बोल दिया, उसके कर्मचारियों पर हमला किया और टेलेक्स मशीन को तोड़ दिया।
मीडिया, जिसके शिवसेना के साथ संबंध हमेशा से ही तनावपूर्ण रहे थे, इस घटना से स्तब्ध रह गया। मुंबई यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स, गुजराती पत्रकार संघ और उर्दू जर्नलिस्ट्स एसोसिएशन द्वारा विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया और डॉ. दत्ता सामंत, शरद यादव और रुस्तम तिरंदाज़ जैसे राजनेताओं और विजय तेंदुलकर जैसे लेखकों सहित लगभग 300 प्रदर्शनकारियों ने महानगर कार्यालय से शिवसेना भवन तक मार्च किया। उन्होंने 'बाल ठाकरे मुर्दाबाद' के नारे लगाए और 'शिवसेना फासीवाद मुर्दाबाद' लिखे पोस्टर दिखाए। सीपीआई और सीपीआई(एम) के नेताओं के अलावा अन्य वामपंथी समूहों के सदस्यों ने भी मार्च में भाग लिया।
जुलूस के दौरान कोई अप्रिय घटना नहीं हुई, लेकिन विरोध प्रदर्शन के बाद जब प्रतिभागी पत्रकार महानगर कार्यालय के पास लौटे, तो सैनिकों ने उन पर लाठियों, पत्थरों और छड़ों से हमला कर दिया, जिसमें चार पत्रकारों को गंभीर चोटें आईं, जिनमें दो महिलाएं थीं। नवभारत टाइम्स की मणिमाला को सिर में फ्रैक्चर हुआ, जिसके लिए ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ी; दोपहाड़ के मिलिंद खांडेकर को मस्तिष्क में चोट आई; गुजराती फेमिना की शीला रावल को पीठ में चोटें आईं, और एकमत के राजेश चौहान के बाएं कनपटी पर गहरा घाव हो गया। शिवसेना की आतंक फैलाने वाली रणनीति की पूरे देश में निंदा हुई, और हालांकि गोविंद तलवलकर (उस समय महाराष्ट्र टाइम्स के संपादक) जैसे कुछ पत्रकारों ने इस बात पर जोर दिया कि यह कितना अजीब था कि कम्युनिस्ट, जिन्होंने सभी कम्युनिस्ट-शासित देशों और राज्यों में प्रेस पर प्रतिबंध लगाने को उचित ठहराया था, एक स्वतंत्र प्रेस के लिए आवाज उठा रहे थे, फिर भी इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि शिवसेना के हमले बेहद घृणित थे।

Raj and Uddhav
1992 के बीएमसी चुनावों में हार के बाद, यह अनिश्चित था कि शिवसेना फिर से उभर पाएगी या नहीं। लेकिन यह निश्चित था कि बाल ठाकरे के भतीजे राज और बेटे उद्धव पिछले कुछ वर्षों में पार्टी में काफी आगे बढ़ चुके थे।
राज 1988 में पार्टी की युवा शाखा, भारतीय विद्यार्थी सेना (बीवीएस) के अध्यक्ष चुने गए थे और तब से राजनीतिक मामलों में उनका काफी दबदबा हो गया था। बताया जाता है कि बीएमसी मामले में सेना की हार के बाद नए विभाग प्रमुखों और शाखा प्रमुखों की नियुक्ति की देखरेख राज ने की थी, जिन्होंने सभी उम्मीदवारों के साक्षात्कार लिए थे।
दूसरी ओर, कम चर्चित स्वभाव के उद्धव ने सामना की प्रशासनिक और प्रबंधकीय जिम्मेदारियों को स्वयं पर ले लिया था।
लेकिन शीर्ष स्तर के शिवसेना नेताओं के बीच राज और उद्धव दोनों के खिलाफ असंतोष बढ़ रहा था, जो कनिष्ठ ठाकरे परिवार के नेताओं की स्थिति से ईर्ष्या करते थे।
इस असंतोष को माधव देशपांडे नामक एक ऐसे व्यक्ति ने आवाज़ दी, जिन्हें पार्टी में पूरी तरह से दरकिनार कर दिया गया था। देशपांडे को शिवसेना द्वारा 1968 के बीएमसी चुनावों के लिए पर्यवेक्षक नियुक्त किया गया था, लेकिन समय बीतने के साथ पार्टी में उनकी स्थिति बदल गई: 1992 में, शिवसेना की राजनीतिक व्यवस्था में उनका कोई स्थान नहीं था।
चाहे हताशा के कारण हो या शिवसेना में किसी के उकसावे पर, 'पूर्व शिवसैनिक' ने जुलाई 1992 में मुंबई में एक प्रेस कॉन्फ्रेंस आयोजित की - एक ऐसा समय जब 'शिवसेना में वंशवादी शासन को लेकर असंतोष' की खबरें प्रेस में आने लगी थीं - और सैनिकों से 'पार्टी को वंशवादी शासन से मुक्त करने' का आग्रह किया। देशपांडे ने शिवसेना प्रमुख पर पार्टी को निजी जागीर बनाने का आरोप लगाया और सामूहिक नेतृत्व तथा पार्टी के भीतर लोकतंत्र की मांग की। उन्होंने ठाकरे के पक्षपातपूर्ण व्यवहार के विशिष्ट उदाहरणों का उल्लेख करते हुए एक पुस्तिका भी लिखी है। उन्होंने आरोप लगाया, 'अपने बेटे और भतीजे की मनमानी पूरी करके ठाकरे शिवसैनिकों द्वारा निष्ठापूर्वक स्थापित संगठन को नष्ट करने पर तुले हुए हैं।'
इसमें कोई शक नहीं था कि ठाकरे इन आरोपों से नाराज होंगे, लेकिन उन्हें इससे भी ज्यादा गुस्सा इस बात पर आया कि देशपांडे के बयानों को मराठी अखबारों के पहले पन्ने पर छापे जाने के बावजूद शिवसेना के शीर्ष नेता चुप्पी साधे रहे।
सेनापति इस बात से बेहद नाराज थे कि संकट की इस घड़ी में उनकी ब्रिगेड ने उन्हें निराश किया है, इसलिए उन्होंने अपने आलोचकों को चुप कराने, अन्य शिवसेना नेताओं को उनकी औकात दिखाने और पार्टी पर अपनी पकड़ फिर से मजबूत करने के लिए 1978 में इस्तेमाल की गई रणनीति के समान एक चाल चली।
18 जुलाई 1992 के सामना अखबार ने शिवसेना को चौंका दिया। अखबार के पहले पन्ने पर दो पंक्तियों की एक रहस्यमयी घोषणा छपी थी, जिसका शीर्षक था 'अखेरचा जय महाराष्ट्र!'। बॉक्स में छपी इस खबर में ठाकरे की अपने प्रशंसकों को विदाई नमस्कार करते हुए हाथ जोड़े हुए एक तस्वीर भी थी। खबर में लिखा था: 'बालासाहेब ठाकरे अपने परिवार के साथ शिवसेना को अंतिम जय महाराष्ट्र कहते हैं!'
ठाकरे के पार्टी से संबंध तोड़ने के फैसले से शिवसेना के नेता और शिवसैनिक स्तब्ध रह गए, और सैकड़ों शिवसैनिक मातोश्री पहुंचे और 'बालासाहेब

जिंदाबाद, आवाज कुनाचा, शिव सेनाचा' के नारे लगाने के लिए एक सुनियोजित सभा में शामिल हो गए। लेकिन उन्हें बताया गया कि उनके नेता अपने फैसले पर अडिग हैं।
अगले दिन, ठाकरे ने सामना में उसी शीर्षक से एक संपादकीय लिखा – अखेरचा जय महाराष्ट्र – और देशपांडे तथा उन सभी समाचार पत्रों की कड़ी आलोचना की जिन्होंने राज और उद्धव के बढ़ते प्रभाव से शिवसेना में छिड़े झगड़ों पर खबरें प्रकाशित की थीं। सैनिकों की भावनाओं को भड़काते हुए ठाकरे ने लिखा:

अगर एक भी शिवसैनिक मेरे और मेरे परिवार के खिलाफ खड़ा होकर कहे कि “मैंने आपकी वजह से शिवसेना छोड़ी”, या “आपने हमें दुख पहुंचाया”, तो मैं एक पल के लिए भी शिवसेना प्रमुख बने रहने को तैयार नहीं हूँ। लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ। मैंने कभी किसी को दुख नहीं पहुंचाया। जिन्होंने हमें छोड़ा, उन्होंने स्थानीय स्तर पर आपसी कलह या सत्ता के लालच में ऐसा किया। बेशक, उन सभी को पछतावा हुआ! इन सबमें वंशवाद की क्या भूमिका है? जो लोग कहते हैं कि हमारी वंशवादी शासन व्यवस्था के कारण शिवसेना को नुकसान हुआ है, उनसे मैं बस इतना कहना चाहता हूँ कि शिवसेना का जन्म मराठियों के सम्मान के लिए लड़ने के लिए हुआ था। महाराष्ट्र के लिए अच्छे दिन लाने के लिए हमने अपने घर और स्वास्थ्य की परवाह नहीं की। हमने कोई इच्छा नहीं पाली। महाराष्ट्र में मराठियों का सम्मान सुनिश्चित करके, हमने आज हिंदुस्तान में हिंदुत्व का प्रसार किया है… शिवसेना के जन्म से ही हम इस रुख पर अडिग रहे। प्रगति के अपने मार्ग में हमने वंशवादी शासन को शिवसेना को छूने तक नहीं दिया। हमने अपने लिए संपत्ति नहीं खरीदी। हमने अपने बच्चों के लिए धन इकट्ठा नहीं किया। उन्होंने बैंकों से कर्ज लेकर अपनी धाक जमाई। हमने उन्हें शिवसेना प्रमुख के रूप में अपने पद का दुरुपयोग करने की कभी अनुमति नहीं दी। लेकिन अगर एक पिता के रूप में हमने उन्हें प्रोत्साहित किया है, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। लेकिन "राज-उद्धव के बढ़ते प्रभाव को लेकर शिवसेना नेताओं में असंतोष" और "विधायकों को राज का नेतृत्व अस्वीकार्य" जैसे नारे आखिर क्यों और कैसे सामने आए? क्या इन दोनों ने अपना नेतृत्व स्थापित करने के लिए कुछ किया या कोई प्रयास किया?

शिव सेना हमारी या हमारे परिवार की निजी संपत्ति नहीं है... फिर भी, विदाई के समय ऐसा लगता है मानो अनगिनत चींटियों ने सिर को काट लिया हो। आँखों में आँसू भरे हैं, फिर भी मन ने फैसला कर लिया है। यह अपरिहार्य है। हमने अपने सभी शिवसैनिकों को वैसे ही प्यार किया जैसे एक माँ अपने बच्चों को प्यार करती है। आज बच्चे नाराज़ हैं। हम किसी से नाराज़ नहीं हैं। क्या कोई माँ कभी अपने बच्चों से नाराज़ होती है? बच्चे ही नाराज़ होते हैं... अब तक हम लाखों शिवसैनिकों के लिए जिए। उनके स्नेह के बल पर हम गर्व से आगे बढ़े। हमने कभी किसी से दुश्मनी नहीं पाली। हमने कभी छल का सहारा नहीं लिया। इसीलिए विदाई के इस क्षण में हमारे मन की स्थिति को शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है। ऐसा लगता है मानो कोई बच्चा जो अब तक अपनी माँ का हाथ पकड़कर विशाल भीड़ में चल रहा था, अचानक उसका हाथ छोड़ दे।

इस तरह की भाषा का प्रयोग करके और उन्माद भड़काकर, ठाकरे अगले ही दिन फिर से सुर्खियों में आ गए।
इस्तीफे का नाटक सेना भवन के बाहर एक जनसभा में नाटकीय प्रदर्शन के साथ समाप्त हुआ, जिसने लगभग एक लाख शिवसैनिकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। अपने विशिष्ट अंदाज में सभा को लुभाते हुए, सेना प्रमुख अपने पार्टी कार्यकर्ताओं के कहने पर रुक गए, लेकिन इससे पहले उन्होंने वफादारों से पार्टी के लिए पसीना और खून बहाने का आह्वान किया। उन्होंने कहा, 'अगर आप जलते अंगारों की तरह जीने वाले हैं, तो सिर्फ आपके प्रेम के लिए ही मैं मर्द शिवसैनिकों का नेतृत्व करूंगा। जो मर्द नहीं हैं, उन्हें शिवसेना छोड़ देनी चाहिए।'
ठाकरे के नाटकीय अभिनय ने वहां मौजूद सैनिकों को इस कदर उत्तेजित कर दिया कि कुछ ने तो यह धमकी भी दी कि अगर उन्होंने इस्तीफा देने का अपना फैसला वापस नहीं लिया तो वे खुद को आग लगा लेंगे।
ठाकरे के जल्दबाजी में बनाए गए मंच पर पहुंचते ही 'एकच नेता, बालासाहेब' का नारा चरम पर पहुंच गया था। इससे शिवसेना के उन नेताओं को करारा सबक मिला, जिन पर इस संकट को भड़काने का संदेह था। भीड़ ने उन्हें खूब खरी-खोटी सुनाई और गालियां दीं, और ठाकरे के मंच पर आने से भी उत्तेजित शिवसेना के नेता शांत नहीं हुए। वे मंच पर मौजूद अन्य पार्टी नेताओं पर लगातार हूटिंग करते रहे और उन्हें गुस्से में मंच छोड़ने का इशारा करते रहे।
शिवसेना प्रमुख को एक और नाटकीय अंदाज़ में उन्हें शांत करना पड़ा। जब उनकी शांति की अपील अनसुनी रह गई, तो ठाकरे ने नाटकीय ढंग से रुख बदला और सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे। पल भर में सन्नाटा छा गया।
अपना भाषण फिर से शुरू करते हुए ठाकरे ने पार्टी नेताओं का अपमान करने के लिए सैनिकों को फटकार लगाई। उन्होंने भीड़ से कहा कि वे नेताओं के इस अपमान को बर्दाश्त नहीं करेंगे, क्योंकि आखिरकार उन्होंने ही शिवसेना को खड़ा करने में मदद की थी। लेकिन तब तक, अन्य नेता सैनिकों के गुस्से का शिकार हो चुके थे। उनमें से कुछ पर भीड़ ने हमला भी कर दिया था।
एक अभिनेता की सहजता के साथ, ठाकरे ने साबित कर दिया था कि बॉस कौन है; सैनिकों ने उनके प्रति अपनी वफादारी की फिर से शपथ ली थी; और अन्य नेताओं को उनकी औकात दिखा दी गई थी।
इस घटनाक्रम के अंत में शिवसेना प्रमुख और शिवसेना कार्यकर्ता के बीच का रिश्ता और भी मजबूत हो गया था। जब तक यह रिश्ता कायम रहेगा, शिवसेना को एक क्षीण शक्ति मानकर खारिज करना आसान नहीं होगा।

28

1992-93 के दंगे

बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद मुंबई में दो चरणों में हुए दंगों (दिसंबर 1992 और जनवरी 1993) के दौरान शिवसेना ने हिंदुओं के 'रक्षक' के रूप में अपनी स्थिति को और मजबूत किया। एल.के. आडवाणी की रथ यात्रा के दौरान, शिवसेना ने टोयोटा रथों के इस भव्य आयोजन से खुद को दूर रखा था। ठाकरे ने कहा था कि राम मंदिर निर्माण में बाधा आने पर भारी कीमत चुकानी पड़ेगी, और शिवसेना की सभाओं में 'मंदिर वहीं बनाएंगे' का नारा लगाया गया, लेकिन सैनिक इस यात्रा को लेकर बहुत उत्साहित नहीं थे। आखिरकार, उनके लिए राम और आडवाणी दोनों को एक और देवता - स्वयं ठाकरे - से प्रतिस्पर्धा करनी थी। लेकिन जैसे-जैसे अयोध्या का मुद्दा विस्फोटक होता गया, ठाकरे का रुख भी उग्र होता गया, और जब मामला चरम पर पहुंचा तो उन्होंने दूसरों से आगे निकलने का रास्ता चुना।
जब भगवा खेमे ने 6 दिसंबर 1992 को विवादित स्थल पर निर्णायक कार सेवा की योजना बनाई, तो ठाकरे ने आदेश दिया कि उनके लोग हिंदुत्ववादी भीड़ का नेतृत्व करें। 1 दिसंबर से ही अयोध्या में बड़ी संख्या में कार सेवक इकट्ठा होने लगे थे, लेकिन मुंबई से शिवसेना की टुकड़ी तय दिन से ठीक 24 घंटे पहले ही पहुंची। शिवसेना सांसद मोरेश्वर सावे दिल्ली और उत्तर प्रदेश के कुछ सैनिकों के साथ 4 दिसंबर को अयोध्या के लिए रवाना हो गए थे, लेकिन मनोहर जोशी के नेतृत्व में मुंबई से आए 100 सैनिकों का दल 5 दिसंबर को रवाना हुआ। इसका मतलब था कि वे अयोध्या में बिल्कुल आखिरी क्षण में पहुंचेंगे, और अगर हिंदुत्ववादी दलों की चलती तो कार सेवा तब तक शुरू हो चुकी होती। फिर भी ठाकरे चाहते थे कि उनकी टीम कार सेवकों का नेतृत्व करे। सामना (6 दिसंबर) पत्रिका के पहले पृष्ठ पर ‘अयोध्याकदे’ (अयोध्या की ओर) शीर्षक से एक संपादकीय में उन्होंने लिखा:

अयोध्या में राम भक्तों का विशाल जनसमूह उमड़ पड़ा है, और अब हमारे वीर शिवसैनिक भी इसमें शामिल हो रहे हैं... अब यह तय करने का समय आ गया है कि इस देश की पहचान मर्यादा पुरुषोत्तम राम से हो या फिर आक्रमणकारी बाबर से... इस कलंक (बाबरी) को अब मिटाना ही होगा। राम जन्मभूमि संघर्ष में विजयी होकर लौटें। यह मेरी अपने कट्टर हिंदू शिवसैनिकों से अपील है।
जब शिवसैनिकों की लहर अयोध्या के युद्धक्षेत्र में पहुंचेगी, तो मंदिर के विरोधियों के दिल में डर बैठ जाएगा। शिवसैनिक असल युद्ध में एक योद्धा की तरह काम करेंगे। उनका जन्म ढोल बजाने और भजन-कीर्तन गाने के लिए नहीं हुआ है। विश्व हिंदू परिषद के अध्यक्ष अशोक सिंघल से मेरी बस यही उम्मीद है कि शिवसैनिकों के साहस की सराहना की जाएगी... आपने पिछले सभी युद्ध शिवसैनिकों के बिना लड़े। अब उन्हें हथियार दीजिए और देखिए। युद्धक्षेत्र में संघर्ष करने का उनका अनुभव अयोध्या में धर्मयुद्ध को सफल बनाने में मददगार साबित होगा।

साथ ही एक चेतावनी भी दी गई थी: 'यदि कार सेवकों पर गोली चलाई गई, तो हिंदुस्तान आग की लपटों में घिर जाएगा।'
6 दिसंबर को बाबरी मस्जिद को ध्वस्त कर दिया गया। कार सेवकों ने दोपहर 12:15 बजे मस्जिद पर धावा बोला और उसे गिराना शुरू कर दिया। शाम 5 बजे तक काम पूरा हो गया।
कल्याण सिंह ने तुरंत उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया; राज्य विधानसभा भंग कर दी गई और राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया। असंवैधानिक आचरण के आरोपों से बचने के प्रयास में, भाजपा ने विध्वंस अधिनियम से खुद को अलग करने की कोशिश की। आडवाणी और मुरली मनोहर जोशी ने इस बात से इनकार किया कि भाजपा का इससे कोई संबंध है।
ठाकरे ने गर्व से अपनी जिम्मेदारी स्वीकार की। उन्होंने कहा, 'अगर बाबरी मस्जिद को मेरे शिवसैनिकों ने ध्वस्त किया है, तो मुझे उन पर गर्व है।' दरअसल, जोशी के नेतृत्व में शिवसेना का दल अयोध्या तब पहुंचा जब ढांचा गिरा दिया गया था, लेकिन शिवसेना ने तुरंत इसका श्रेय लेने की होड़ लगा दी। उसने कहा कि उत्तर प्रदेश के सैनिकों ने कार सेवकों का नेतृत्व करते हुए ढांचे के ऊपर चढ़ाई की थी और दावा किया कि गुंबदों पर पहला हमला विदर्भ के एक सैनिक ने किया था।
ठाकरे की प्रतिक्रिया ऐसे समय में आई जब अन्य सभी हिंदू नेता इस बात से पल्ला झाड़ने की कोशिश कर रहे थे कि कहीं उन्हें बर्बरतापूर्ण कृत्य करने वाले उपद्रवी गिरोहों का मुखिया करार न दे दिया जाए।
भाजपा नेता सुंदर सिंह भंडारी द्वारा 'गैर-भाजपा-आरएसएस संगठन' पर जिम्मेदारी डालने के प्रयास के बाद, ठाकरे ने कहा, 'अयोध्या में सभी लोग हिंदू के रूप में एकत्रित हुए थे, इसलिए इस तरह का (दलीय) भेद करना अनुचित है। लेकिन अगर भंडारी और अन्य नेताओं को लगता है कि इसमें सैनिकों की भूमिका थी, तो मुझे अपने सैनिकों पर गर्व है। बाबरी मस्जिद के पतन के समय भाजपा असमंजस में पड़ गई थी। कार सेवकों ने अपनी मनमानी की। मुंबई से हमारे सैनिक वहां नहीं पहुंचे, लेकिन भारत के अन्य हिस्सों, विशेषकर उत्तर प्रदेश से आए सैनिक वहां मौजूद थे।'
6 दिसंबर, रविवार को बीबीसी के हर घंटे प्रसारित होने वाले समाचारों में बाबरी मस्जिद पर हुए हमले की तस्वीरें दिखाई जाने के साथ ही मुंबई में स्थिति तनावपूर्ण हो गई। देश के कई हिस्सों में हिंसा भड़क उठी थी, जहां मुसलमानों ने कानून लागू करने वाले अधिकारियों द्वारा किए गए 'विश्वासघात' के विरोध में अपना गुस्सा जाहिर किया। मुंबई में भी हजारों मुसलमान शहर के मुस्लिम बहुल इलाकों की गलियों और मोहल्लों में इकट्ठा होकर इस घटना पर चर्चा करने लगे और जल्द ही, आक्रोशित मुस्लिम भीड़ ने हिंसक रूप धारण कर लिया, जिसमें सरकारी संपत्ति और पुलिस को निशाना बनाया गया। सड़कों पर चाकू, तलवारें, तेजाब और सोडा की बोतलें दिखाई देने लगीं और पुलिस को पायधोनी, नागपाड़ा, भिंडी बाजार, डोंगरी और उमरखाड़ी जैसे इलाकों में भीड़ को तितर-बितर करने के लिए गोली चलानी पड़ी। ये सभी इलाके शहर के भीतरी मुस्लिम बहुल क्षेत्र हैं, जिनसे होकर विशाल मोहम्मद अली रोड गुजरती है।
सबसे पहले मीनारा मस्जिद के पास खड़ी पुलिस की वायरलेस वैन पर हमला हुआ। 6 दिसंबर की रात 11:30 बजे पत्थरों से हमला करके उसे चकनाचूर कर दिया गया।

उसी रात, एक पुलिसकर्मी दंगों का पहला शिकार बना। कांस्टेबल विलास कदम की पायधोनी में चाकू मारकर हत्या कर दी गई। उसी इलाके में एक अन्य पुलिसकर्मी पर गोली चलाई गई, लेकिन गोली उसके हेलमेट से टकराकर वापस उछल गई और वह बच गया।
7 दिसंबर की सुबह तक मुंबई में हिंसा इतनी भड़क उठी थी कि हर मिनट एक शव सरकारी अस्पताल जेजे अस्पताल में लाया जा रहा था। हथियारों का इस्तेमाल बढ़ गया था और जहां गोलियां नहीं चल रही थीं, वहां पुलिस और हिंदुओं पर बल्ब, पत्थर और ट्यूबलाइट बरसाए जा रहे थे।
बस स्टॉप फुटपाथ से उखाड़कर सड़कों पर फेंक दिए गए, ट्रैफिक सिग्नल तोड़ दिए गए, वाहनों में आग लगा दी गई, दुकानों को लूटा और जला दिया गया और पुलिस चौकियों पर हमले किए गए। डोंगरी स्थित लक्ष्मीनारायण मंदिर को जला दिया गया। पायधोनी में, जैन मंदिर को और अधिक नुकसान से बचाने के लिए पुलिस को गोली चलानी पड़ी, और क्रॉफर्ड मार्केट में, भीड़ द्वारा दो मंदिरों पर हमला करने के दौरान हुई गोलीबारी में एक व्यक्ति की मौत हो गई। कालबादेवी में कई हिंदू मंदिरों को नुकसान पहुंचाया गया।
देवनार के बैंगनवाड़ी में दत्ता मंदिर की सुरक्षा कर रहे दो कांस्टेबलों की भीड़ ने हत्या कर दी। मूर्तियों को तोड़ दिया गया, मंदिर के अंदर और आसपास पेट्रोल और केरोसिन डाला गया और मंदिर में आग लगा दी गई। नागपाड़ा में काशी-विश्वेश्वर मंदिर को क्षतिग्रस्त कर आग लगा दी गई।
उपनगरों से भी दंगे की खबरें आईं और उत्तरी मुंबई में मनोरी खाड़ी के किनारे स्थित मालवानी में पुलिस को जुम्मा मस्जिद में 5,000 लोगों की भीड़ से निपटना पड़ा, जो पत्थर और सोडा की बोतलें फेंक रहे थे। दंगाइयों को शांत करने के लिए पुलिस ने गोलीबारी की, जिसमें कई लोग घायल हुए, लेकिन अराजकता फैलती चली गई। शाम को सेना को बुलाया गया। चौथी गोरखा राइफल्स ने शाम 7 बजे तक डोंगरी और बायकुला की सड़कों पर गश्त शुरू कर दी, देवलाली के तोपखाना केंद्र से भी अतिरिक्त बल मुंबई की ओर रवाना हो गए। मध्य और उत्तरी मुंबई के आठ इलाकों में कर्फ्यू घोषित कर दिया गया।
दिन के अंत तक 43 लोग मारे गए और 94 लोग घायल हो गए।
सामना पत्रिका के 8 दिसंबर के अंक में बाल ठाकरे का एक संपादकीय लेख पहले पृष्ठ पर छपा था। 'देशद्रोह्यण चिरदा' शीर्षक वाले इस संपादकीय में कहा गया था:

बाबर विजेता नहीं था, बल्कि वे हिंदू जिन्होंने 450 वर्षों के बाद अयोध्या में राम जन्मभूमि के लिए संघर्ष किया और उसे पुनः प्राप्त किया, उन्होंने स्वयं को विजेता सिद्ध किया है। मुसलमानों को इससे सबक लेना चाहिए और उस विषैली हिंसा को रोकना चाहिए जिसका सहारा उन्होंने एक बार फिर लिया है, अन्यथा उनका भी वही हश्र होगा जो बाबरी मस्जिद के गुंबदों का हुआ था... गुंबदों के गिरने के क्षण ही राष्ट्र-विरोधी मुसलमानों ने पूरे देश में हिंसा का तांडव मचा दिया। हम उन्हें एक बार फिर, और अंतिम बार, चेतावनी देते हैं कि उन्हें हिंदुओं की भावनाओं को समझना चाहिए और राष्ट्रीय मुख्यधारा में शामिल होना चाहिए। यदि आप स्वार्थी नेताओं का अनुसरण करते हैं जो आपको नरक में धकेलने और हिंदुओं पर आक्रमण करने पर तुले हुए हैं, तो सावधान रहें!

बाबरी मस्जिद विध्वंस के विरोध में वामपंथी दलों और कांग्रेस द्वारा 8 दिसंबर को बंद का आह्वान किए जाने के बावजूद, मुंबई में अशांति जारी रही। मुंबई की चहल-पहल और चहल-पहल कहीं नजर नहीं आ रही थी। चारों ओर जलते हुए वाहन, ध्वस्त मंदिर, टूटी-फूटी दुकानें, रंग-बिरंगे कांच के टुकड़ों से सजी सड़कें और सेना के जवान झंडा मार्च करते हुए दिखाई दे रहे थे।
अकेले BEST को ही 1 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ, और पुलिसकर्मियों के साथ-साथ सरकारी संपत्ति पर भी हमले हुए। धारावी पुलिस स्टेशन के बाहर 13 गाड़ियां जलाकर राख कर दी गईं, और सड़कों पर खड़ी 50 अन्य गाड़ियों के शीशे और बत्तियां तोड़ दी गईं। पुलिस बल को पहुंचने से रोकने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में बैरिकेड लगा दिए गए, और रिहायशी कॉलोनियों और दुकानों पर ट्यूबलाइट, सोडा की बोतलें और पत्थर बरसाए जाते रहे। जोगेश्वरी में पंडित की हत्या की खबर फैलने के बाद, एक मुस्लिम जनाज़े के जुलूस पर हमला किया गया। पुलिस की गोलीबारी में सात लोग मारे गए। कुर्ला में, हिंदुओं ने एक मंदिर पर हुए हमले के जवाब में एक मस्जिद और एक मदरसे को निशाना बनाया।
उस दिन पुलिस को 18 जगहों पर गोली चलानी पड़ी और पुलिस आयुक्त ने कहा कि हिंसा पूर्वी उपनगरों की ओर बढ़ रही है। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, दो दिनों के दंगों में मरने वालों की संख्या 94 तक पहुंच गई थी, लेकिन अनौपचारिक आंकड़ों के अनुसार यह संख्या 150 से अधिक थी।
चेंबूर, कुर्ला, नेहरू नगर, खेरवाड़ी और निर्मल नगर सहित पांच और क्षेत्रों में कर्फ्यू लगा दिया गया और यह स्पष्ट था कि सेना को बुलाने से कोई मदद नहीं मिली, क्योंकि कहीं भी जैतून-हरे रंग की वर्दी वाले जवानों को स्थिति पर नियंत्रण नहीं दिया गया था।
शाम होते-होते भाजपा नेताओं एल.के. आडवाणी, एम.एम. जोशी और उमा भारती तथा विश्व हिंदू परिषद के महासचिव अशोक सिंघल की गिरफ्तारी की खबर आने लगी और इसके विरोध में भाजपा और शिवसेना ने अगले दिन बंद का आह्वान किया।
9 दिसंबर को साकी नाका और असल्फा गांवों में भीड़ ने झोपड़ियों के पूरे समूह को आग लगा दी, जिससे 1,000 से अधिक परिवार बेघर हो गए। धारावी में 15 लोग मारे गए, 25 गंभीर रूप से घायल हुए और 15 दुकानें जला दी गईं। वीपी रोड पर, एक मस्जिद के बगल में स्थित शिवनेरी इमारत पर मस्जिद के अंदर से 'मस्जिद वहीं बनाएंगे' के नारों के बीच गोलियां चलाई गईं। शिवसेना के नेतृत्व में भीड़ ने ज्यादातर मुसलमानों के स्वामित्व वाले लकड़ी के गोदामों और कबाड़खानों को जला दिया।
मृतकों की आधिकारिक संख्या बढ़कर 136 हो गई, और मुख्यमंत्री सुधाकरराव नाइक, जो विधानसभा के शीतकालीन सत्र को स्थगित करने के बाद नागपुर से मुंबई पहुंचे थे, सवालों की बौछार का जवाब देने के लिए काफी दबाव में थे। मुंबई पहुंचते ही मुख्यमंत्री ने शिवसेना प्रमुख से मुलाकात की। दंगों के तीन दिनों के दौरान सामना में छपे लेखों ने पूरे देश का ध्यान आकर्षित किया था। अखबार की आक्रामक शैली और ठाकरे के साथ हुई बातचीत के बारे में पूछे जाने पर नाइक ने कहा: ‘सरकार सामना में छपे आक्रामक लेखों पर विचार कर रही है। बाकी बातों के लिए मैंने ठाकरे से बात की और उन्हें बताया कि क्या जरूरी है।’¹⁴³

यदि कोई ‘आवश्यक’ चेतावनी दी भी गई थी, तो उसका कोई असर नहीं हुआ। क्योंकि, सामना के 10 दिसंबर के अंक में अपने संपादकीय में ठाकरे ने लिखा था:

सरकार सेना की मदद से जन आंदोलन को रोकने की कोशिश कर रही है। लेकिन उसे सबसे पहले धार्मिक कट्टरपंथियों को रोकना चाहिए। उन्हें हथियारों का विशाल भंडार जब्त करना चाहिए... उन्हें पता लगाना चाहिए कि ये अवैध हथियार, जिनका निशाना सरकार पर साधा गया है, कहाँ से आए हैं... हम बस इतना ही कहते हैं कि हिंदू शक्ति के सागर को कोई बाधा नहीं रोक सकती। यह प्रज्वलित अग्नि राष्ट्र के लिए आवश्यक है। यह उन गद्दारों को भस्म किए बिना नहीं बुझेगी जिन्होंने धरती को मातृभूमि के रक्त से लथपथ किया है... हिंदू अब खुद पर हमला नहीं होने देंगे... हिंदू विजय गाथा के शब्द पूरे ब्रह्मांड में गूंजने लगे हैं।

यह प्रतिशोधात्मक युद्ध के युग की शुरुआत है। इस युग में न केवल इस देश का, बल्कि विश्व का इतिहास और भूगोल बदलने वाला है। अखंड हिंदू राष्ट्र का सपना साकार होने वाला है। हमारे देश की धरती से कट्टरपंथी पापियों का साया भी मिट जाएगा। अब हम सुख से जिएंगे और सुख से मरेंगे... 85 करोड़ हिंदू क्रांति का आह्वान कर रहे हैं, और कट्टरपंथी पूरे हिंदुस्तान में खून बहा रहे हैं। आँसू बहाने से क्रांति संभव नहीं है। क्रांति के लिए केवल एक ही आहुति चाहिए, और वह है भक्तों का रक्त! पिछले दो दिनों में हिंदुओं ने क्रांति की देवी को अपने रक्त की आहुति दी है। आगे क्या होगा?

हालांकि, उस सुबह मुंबई में अपेक्षाकृत शांति का माहौल था। पंद्रह इलाकों में अभी भी कर्फ्यू लगा हुआ था, लेकिन बीईएसटी के आधे वाहन सड़कों पर वापस आ चुके थे और ट्रेनें कार्यालय जाने वाले लोगों से भरी हुई थीं।
शांति ज्यादा देर तक नहीं टिकी। दोपहर तक, सभी दुकानें बंद हो गईं और सभी गतिविधियां ठप्प हो गईं क्योंकि शिवसेना प्रमुख की गिरफ्तारी की अफवाह फैल गई थी। पुलिस ने अफवाहों को दबाने के लिए लाउडस्पीकर से लैस वैन भेजीं, लेकिन लोग जोखिम न लेने की आशंका में जल्दी से अपने घरों की ओर चल पड़े। शहर में फिर से जनजीवन ठप्प हो गया।
उस दिन माहिम की मछुआरा बस्ती में लगभग 500 झुग्गियों को जला दिया गया, जिससे हजारों लोग बेघर हो गए। धारावी में स्थित एक मरियम्मा मंदिर क्षतिग्रस्त हो गया और जल गया, तथा माहिम किले के पास स्थित एक लकड़ी के बाजार में आग लगा दी गई।
अधिकारियों के अनुसार, मृतकों की संख्या 160 से अधिक और कुल नुकसान 100 करोड़ रुपये है। उत्पादन के लिहाज से नुकसान का अनुमान 300 करोड़ रुपये के आसपास है।
जब 11 दिसंबर की सुबह हुई, तो अपने साथ अनिश्चितता की एक गहरी भावना लेकर आई, क्योंकि सुबह की अपेक्षाकृत शांति अल्पकालिक साबित हुई थी।
सौभाग्य से, दिन बिना किसी बड़ी घटना के बीत गया। लेकिन शाम एक बड़े दाग के साथ आई। शाम 5:20 बजे, दो लोगों ने आज़ाद मैदान में क्रिकेट खेल रहे कुछ युवकों पर अंधाधुंध फायरिंग की। हमलावर स्कूटर पर आए, फायरिंग की और भाग

गए। गिरगाँव के मंगलवाड़ी निवासी नाथुराम मोहिते की गोलीबारी में मौत हो गई और तीन अन्य गंभीर रूप से घायल हो गए।
शुक्रवार का वह दिन राजनीतिक रूप से इसलिए अधिक महत्वपूर्ण था क्योंकि इसी दिन से शिवसेना की महाआरती का शुभारंभ हुआ था, जिसका उद्देश्य सड़कों पर हो रही मुस्लिम नमाज के प्रति 'हिंदू जवाब' देना था।
मुंबई में मुसलमानों ने शहर के विभिन्न हिस्सों में लगे कर्फ्यू और सभाओं पर लगे प्रतिबंध को हटाने की मांग की थी ताकि वे अपनी साप्ताहिक नमाज अदा कर सकें। पुलिस ने नमाज के लिए आवश्यक कुछ घंटों के लिए कर्फ्यू में ढील दी और शुक्रवार की नमाज शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हुई।
शिवसेना, जो शुक्रवार की नमाज़ों के कारण होने वाले 'ट्रैफिक जाम' की नियमित रूप से आलोचना करती रही थी, ने दंगों के बीच अल्पसंख्यक समुदाय को दी गई इस छूट पर आपत्ति जताई और एक प्रकार का प्रति-अनुष्ठान आयोजित करके अपना विरोध दर्ज कराने का निर्णय लिया।
शिवसेना नेतृत्व ने पूछा, 'अगर नमाज़ के लिए कर्फ्यू हटाया जा सकता है, तो हमारे लिए क्यों नहीं?' और दक्षिण मुंबई के मध्य में स्थित गोल देउल में आयोजित होने वाली महाआरती के लिए कर्फ्यू में ढील देने की मांग की। गोल देउल को सोच-समझकर इसलिए चुना गया था क्योंकि यह मुस्लिम बहुल इलाकों और शिवसेना के हिंदू बहुल गढ़ों दोनों के करीब था।
अधिकारियों ने महा-आरती की अनुमति दी और भारी सैन्य उपस्थिति के बीच, शिवसेना विधायक प्रमोद नवलकर के नेतृत्व में एक हजार से अधिक हिंदुओं ने सड़कों पर प्रार्थना की।
उसी रात, मलाड के दिंडोशी में एक पुलिस चौकी पर 1,200 मुसलमानों की भीड़ ने हमला कर दिया, और हथियारबंद गिरोहों ने चिंचोलीफाटा स्थित शंकर मंदिर पर हमला कर उसे आग लगा दी। मंदिर के पुजारी को सड़क पर घसीटकर चाकू से गोद दिया गया। पास ही की एक चॉल में, 19 वर्षीय प्रल्हाद शिंदे, जो घर पर टीवी देख रहा था, की चाकू मारकर हत्या कर दी गई।
अगले दिन, 12 अक्टूबर, अपेक्षाकृत शांत रहा। असल्फा गांव में हुई एक घटना को छोड़कर, जिसमें चार लोग जलकर मर गए, पागलपन के कोई बड़े संकेत नहीं मिले।
13 तारीख को दिन के समय कर्फ्यू हटा लिया गया, और ऐसा लगा मानो मुंबई में खून-खराबा काफी हद तक थम चुका हो। अगले पांच दिनों में तनाव धीरे-धीरे कम हुआ और शहर धीरे-धीरे सामान्य स्थिति में लौट आया।
उस महीने के अंत में दो बार पागलपन की घटनाएं हुईं, जब कांदिवली और चिंचपोकली में स्थानीय ट्रेनों में बम विस्फोट हुए (18 दिसंबर) और डोंगरी में एक मथाड़ी कामगार की चाकू मारकर हत्या कर दी गई (27 दिसंबर)। फिर भी, ऐसा लग रहा था कि सबसे बुरा दौर बीत चुका है।
हिंसा में मरने वालों की अंतिम संख्या 227 बताई गई। दंगे से संबंधित लगभग 1,800 मामले दर्ज किए गए; 79 पूजा स्थलों पर हमले हुए; और आगजनी की 161 घटनाएं सामने आईं।
हालांकि, शिवसेना को यह एहसास हो गया था कि गोल देओल में उसकी महाआरती सफल रही थी। इसे उन हिंदुओं का भी समर्थन मिला था जो अब तक पार्टी से पूरी तरह दूर रहे थे; और इसने जनता को एकजुट करने का एक मंच प्रदान किया था।
पार्टी ने अब शहर भर के सभी महत्वपूर्ण मंदिरों में महाआरती आयोजित करने का निर्णय लिया। इनमें से पहली महाआरती 26 दिसंबर को आयोजित की गई थी, और 6

जनवरी तक, जब हिंसा फिर से भड़क उठी, तब तक कुल 33 ऐसी आरतियों को हिंदू समुदाय से व्यापक समर्थन प्राप्त हो चुका था।
इन महा-आरतियों पर प्रतिबंध लगाने की मांग उठी, लेकिन राज्य सरकार अल्पसंख्यक तुष्टीकरण के आरोपों को आमंत्रित करने के जोखिम पर ही ऐसा कदम उठा सकती थी। अपनी छवि को पहले ही झटका लगने के कारण, वह कोई जोखिम लेने को तैयार नहीं थी।
उसे इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि उसकी बची-खुची छवि भी जल्द ही दंगों के एक और, कहीं अधिक खूनी, चरण से चकनाचूर हो जाएगी।
दो भयावह घटनाओं ने दंगों के दूसरे दौर के लिए परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दीं।
पहली घटना डोंगरी में घटी। 6 जनवरी की सुबह, मथाड़ी के बंदरगाहों में काम करने वाले विष्णु कदम, विजय ट्रांसपोर्ट कंपनी के गोदाम से बाहर निकले, जहाँ उनके भाई और दो दोस्त सो रहे थे। जैसे ही वे गोदाम से बाहर निकले, 10 लोगों की भीड़ ने उन पर हमला कर दिया और मौके पर ही उनकी हत्या कर दी। हमलावर गोदाम में घुस गए और विष्णु के भाई राजाराम कदम पर तलवारों और चाकुओं से वार किए। राजाराम की चीखों से उनके दूसरे भाई तुकाराम और दो अन्य दोस्त जाग गए; जब वे उनकी मदद के लिए दौड़े, तो उन पर भी चाकू से हमला किया गया।
मुंबई में चाकूबाजी की घटना की खबर तेजी से फैल गई और इस हमले को मुस्लिम बहुल इलाके में हिंदुओं पर हुए हमले के रूप में देखा गया।
इन हत्याओं को यूनियनों के बीच आपसी प्रतिद्वंद्विता का परिणाम बताने के प्रयास किए गए, लेकिन इस सिद्धांत को किसी ने स्वीकार नहीं किया।
अगले दिन, महाराष्ट्र राज्य मथाड़ी परिवहन और सामान्य कामगार यूनियन ने डोंगरी क्षेत्र में बंद की घोषणा की, और मथाड़ी कामगार बड़ी संख्या में विरोध प्रदर्शन करने के लिए सड़कों पर उतर आए। तब तक तनाव काफी बढ़ चुका था, और कई क्षेत्रों से चाकूबाजी और आगजनी की खबरें आने लगी थीं। देखते ही देखते हिंसा की आग ने धारावी जैसे संवेदनशील इलाकों को अपनी चपेट में ले लिया।
8 जनवरी की सुबह एक और खबर लेकर आई।
उस सुबह तड़के, जोगेश्वरी के मुस्लिम बहुल राधाबाई चॉल में एक हिंदू परिवार के घर में आग लगा दी गई। पांच लोगों की मौके पर ही मौत हो गई: राजाराम और सुलोचना बाने, जो लगभग 30 वर्षों से वहां रह रहे थे, कमलाबाई बटलू, उनकी 16 वर्षीय बेटी लक्ष्मी और 20 वर्षीय दिव्यांग लड़की मीनाक्षी नारकर। वंदना कोंडलकर ने दो दिन बाद दम तोड़ दिया, लेकिन उनके दो बच्चे, जिनकी उम्र 5 और 11 वर्ष थी, बच निकलने में कामयाब रहे।
पेंट फैक्ट्री में काम करने वाले बने शिवसेना के समर्थक थे, हालांकि वे पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ता नहीं थे। जब 1973 में जोगेश्वरी में पहली बार सांप्रदायिक हिंसा हुई, तो बने परिवार को मुस्लिम बहुल चॉलों से बाहर चले जाने की सलाह दी गई थी। पास में रहने वाले अन्य हिंदुओं के विपरीत, जिन्होंने शिवसेना के प्रस्ताव का लाभ उठाकर हिंदू बहुल क्षेत्रों में पलायन किया, बने परिवार ने ऐसा नहीं किया। दिसंबर 1990 और जनवरी 1991 में जोगेश्वरी में दूसरी बार दंगे भड़के, लेकिन बने परिवार ने तब भी वहां से हटने से इनकार कर दिया क्योंकि वे इससे प्रभावित नहीं हुए थे।
तीसरी बार उनकी किस्मत इतनी अच्छी नहीं रही। जब वे अपने एक कमरे के मकान में सो रहे थे, तभी बदमाशों ने उसके चारों ओर केरोसिन छिड़ककर आग लगा दी।

दोपहर होते-होते पूरे शहर को इस घटना की खबर लग गई और सेना ने इस भयावह घटना की घोषणा करने के लिए गली-नुक्कड़ों पर ब्लैकबोर्ड लगा दिए।
जैसे ही खबरें आईं कि मुस्लिम युवकों ने इमामवाड़ा में हिंदू चॉलों के आसपास के मदरसों में एक चौकी स्थापित कर ली है और चॉल निवासियों पर पेट्रोल बम फेंक रहे हैं, वैसे ही आक्रोश और बढ़ गया, और यह अफवाह फैल गई कि बुर्का पहने महिलाओं की आड़ में सशस्त्र लोग विभिन्न क्षेत्रों में हिंदुओं पर हमले कर रहे हैं।
मुंबई भर में स्थित 221 शाखाओं में बेचैन शिवसेना कार्यकर्ता इकट्ठा होने लगे थे, मानो वे अपने नेता के इशारे का इंतज़ार कर रहे हों ताकि पलटवार कर सकें। इसी बीच, लूटपाट और आगजनी दक्षिण और दक्षिण-मध्य मुंबई से लेकर मध्य मुंबई तक फैल गई, और अग्रिपाड़ा, वीपी रोड, कालाचौकी, भोईवाड़ा, दादर और माहिम में दंगाइयों ने बड़े पैमाने पर तबाही मचाई।
सामना पत्रिका के 9 जनवरी के अंक के पहले पृष्ठ पर ‘राष्ट्र जीवंत थेवा’ शीर्षक से एक संपादकीय प्रकाशित हुआ था। इसमें ठाकरे ने ‘राष्ट्रविरोधी’ मुसलमानों के खिलाफ अपना पक्ष रखा और अपने ‘लड़कों’ को जवाबी कार्रवाई करने का स्पष्ट संकेत दिया।

चौदह निर्दोष नागरिकों को देशद्रोही कट्टरपंथियों ने जिंदा जला दिया। छोटे बच्चों को भी आग में झोंक दिया गया। कई जिंदगियां तबाह हो गईं। इन सबके बावजूद सरकार, पुलिस और गृह राज्य मंत्री (बाबनराव पचपुते) जैसे बेशर्म लोग कट्टरपंथियों के इलाकों में हरे रुमाल लेकर घूम रहे हैं। हम पुलिस को दोष नहीं देते। वे भी इस आग में बुरी तरह झुलस रहे हैं। वे भी कट्टरपंथियों की गोलियों का शिकार हो चुके हैं। सुधाकरराव, आपकी शांति समितियां कुछ नहीं कर रही हैं। आपके कांग्रेस नेता, जो शांतिदूत बनकर घूम रहे हैं, सबने अपना खतना करवा लिया है। बहुसंख्यक हिंदू कैसे जिएंगे? जब अहंकारी जानवर हर गली में खून बहा रहे हैं, तो हम चुपचाप क्यों देखते रहें? जब हिंसा की आग शहर की आत्मा को झुलसा रही है, तब सरकार वर्षा में चिकनी सुपारी चबाने में व्यस्त है... कट्टरपंथियों की गोलियों की आवाज से लोग दर्द से तड़प रहे हैं। शांति स्थापित करना किसका काम है?

जब हमारे हिंदू भाई-बहनों पर अत्याचार और अत्याचार हो रहा है, तब हम शांति के दूत नहीं बन सकते। सरकार भले ही राष्ट्रीय मुख्यधारा से अलग हुए मुसलमानों और देश को गिरवी रखने वालों के सामने घुटने टेक दे, लेकिन हम शांति का संदेश नहीं देना चाहते... कोई भी उठकर हिंदुओं को फटकार लगाता है। मानो हमने दंगे भड़काए हों। हमें क्या भड़काना है?... पाकिस्तान और बांग्लादेश से लाए गए हथियार भिंडी बाजार, डोंगरी और बहरामपाड़ा में तबाही मचा रहे हैं। इन हथियारों ने शिशुओं से लेकर बूढ़ों तक, सभी को बेरहमी से निशाना बनाकर मार डाला है। मुंडकुर और खान, जिन्होंने धारावी और कुर्ला में निहत्थे हिंदुओं पर हमला करके अपना धर्म दिखाया, उन्हें भिंडी बाजार में अपने ही भाइयों के साथ यह गंदा खेल बंद करना चाहिए। आपके असली रंग और आपकी वफादारी उजागर हो गई है। हमारी भविष्यवाणी भी सच हो गई है। एक मुसलमान, चाहे वह किसी भी देश में रहता हो और किसी भी पद पर हो, सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, एक मुसलमान है। उनके लिए राष्ट्र उनके धर्म और उनके

मुस्लिम भाइयों के अधीन है। पिछले दो दिनों में राष्ट्रवादी नागरिकों पर हुए हमले राष्ट्र पर हमले हैं... जोगेश्वरी की आग में झुलसे और भिंडी बाजार की गलियों में चाकू से मारे गए लोग सभी राष्ट्रवादियों की पीड़ा को दर्शाते हैं। यहां तक कि पुलिस भी अब खुलेआम कह रही है, "यह सरकार अक्षम है"। उनकी कमर पर सर्विस रिवॉल्वर तो हैं, लेकिन सरकार ने पुलिस को सिर्फ एक ही जिम्मेदारी सौंपी है - राष्ट्र-विरोधी तत्वों द्वारा मारे गए और सड़कों पर फेंके गए लोगों के शवों की गिनती करना। पुलिस भी व्यथित है। सब कुछ सहनशीलता की सीमा से बाहर हो गया है। जब हिंदुस्तान पर खतरे के काले बादल मंडरा रहे हैं, सरकार हमें खतरे से लड़ने से मना कर रही है। हमने कर्फ्यू लगा दिया है। घर में बैठो। अगर गद्दार तुम्हारे घर जला भी दें, तो पलटवार मत करो। कपूर की तरह जलकर मर जाओ, हमें यही कहा जा रहा है। हम ऐसी नपुंसक सरकार पर थूकते हैं! हिंदुस्तान और महाराष्ट्र की जनता खुलेआम शासकों के मुंह पर थूक रही है! भले ही सरकार हरे रंग का बुर्का पहनकर भिंडी बाजार के किसी कोने पर चूड़ियाँ लिए खड़ी हो, लाखों हिंदू युवक इस राष्ट्र को जीवित रखेंगे। भले ही सूर्य और चंद्रमा अपनी सारी ऊर्जा खो दें, मनुष्य अब क्रोध की आग में जल उठेंगे! यह उकसावा नहीं, बल्कि सुलगता हुआ क्रोध है। शरीर पर घाव न हो तो विजय का कोई अर्थ नहीं! अगले कुछ दिन हमारे होंगे!

अगले तीन दिनों में मुंबई में अभूतपूर्व हिंसा देखने को मिली। रक्षा मंत्री शरद पवार 8 जनवरी को मुंबई पहुंचे, लेकिन उनके आगमन ने मुख्यमंत्री नाइक और उनके बीच राजनीतिक दांव-पेच की होड़ छेड़ दी। जब वे दोनों राजनीतिक दांव-पेच में उलझे थे, तब ठाकरे के समर्थकों ने जमकर हिंसा की। मुंबई में भीषण हिंसा हुई।
9 से 12 जनवरी के बीच मुस्लिम प्रतिष्ठानों पर हमले हुए। शिवसेना के युवकों की भीड़ ने मुस्लिम घरों, दफ्तरों और दुकानों पर धावा बोला। मुस्लिम व्यवसायों के ठिकाने पता लगाने के लिए नगर निगम के रिकॉर्ड खंगाले गए। दुकानों से सामान निकालकर सड़कों पर ढेर कर दिया गया और आग लगा दी गई। भीड़ के गुस्से से बचने के लिए कोई भी चीज़ छोटी नहीं थी – यहाँ तक कि साइकिल की दुकानें, चाय की दुकानें, पान की दुकानें या मोचियों के लकड़ी के तख्ते भी नहीं। जूतों की दुकानें, जिनमें से अधिकतर मुसलमानों की थीं, लूट ली गईं और जनवरी के अंत तक, दंगों के दौरान लूटे गए जूते और चप्पलें पूरे मुंबई में गुपचुप तरीके से आधी कीमत पर बेची जा रही थीं।
इन दंगों में आपराधिक तत्वों को एक सुनहरा मौका नज़र आया और उन्होंने इसका भरपूर फायदा उठाया। (12 जनवरी को जब ठाकरे ने अपने आदमियों से हिंसा रोकने की अपील की, तो उन्होंने स्वीकार किया कि अपराधियों ने मैदान पर कब्ज़ा कर लिया था)।
मुंबई के रे रोड स्थित सबसे बड़े लकड़ी बाजार को आग लगा दी गई, और सड़कों पर घूम रही भीड़ ने मनमाने ढंग से वाहनों को रोककर 'अन्य' धार्मिक आस्था वाले यात्रियों को आग लगा दी।
नफरत का माहौल गरमाते ही, मुसलमानों ने पुलिस पर पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाने और न केवल हिंदू हमलावरों की मदद करने बल्कि अल्पसंख्यक समुदाय पर हमला करने का भी आरोप लगाया। इस आरोप में कुछ हद तक सच्चाई थी, क्योंकि अधिकांश क्षेत्रों में पुलिस हिंदू भीड़ की गतिविधियों की मूक गवाह बनी रही।

दूसरी ओर, पुलिस का आरोप था: अपर्याप्त और पुराने हथियारों से लैस पुलिस बल मुस्लिम इलाकों में घिर गया था और उस पर हमले किए जा रहे थे, और यहां तक कि पुलिस आयुक्त श्रीकांत बापट भी एक मुस्लिम भीड़ को शांत करने की कोशिश करते समय बम हमले से बाल-बाल बच गए थे।
शहर के 30 से अधिक इलाकों में सेना के जवानों ने फ्लैग मार्च निकाला, लेकिन उन्हें अपने बॉस पवार से कोई स्पष्ट आदेश नहीं मिला था। पवार को जलते शहर में शांति बहाल करने की बजाय मुख्यमंत्री नाइक की प्रतिष्ठा को धूमिल करने में अधिक दिलचस्पी दिखाई दी। जब दंगाइयों को यह एहसास हुआ कि हरे रंग की वर्दी पहने जवान अपने वाहनों से नहीं उतरेंगे, तो उन्होंने स्थिति का फायदा उठाना शुरू कर दिया। ऐसा लग रहा था मानो दंगाइयों को खुली छूट दे दी गई हो।

राज्य का अस्तित्व क्षीण हो गया था।
10 जनवरी के सामना में ठाकरे ने लिखा:

मुंबई जल रहा है। यह एक स्वतःस्फूर्त विस्फोट है। देशद्रोही कट्टरपंथियों का यह घमंड कि वे विजयी हैं, इस आग में राख हो जाएगा। देशद्रोही अपने कारनामों को याद कर रहे हैं। लेकिन हिंदुओं ने उन्हें कई युद्धक्षेत्रों में धूल चटा दी है। हिंदुओं ने मुसलमानों द्वारा पाली जा रही अलगाववादी प्रवृत्तियों को जलाना शुरू कर दिया है। अतीत की गलतियों को वर्तमान में सुधारने पर ही भविष्य उज्ज्वल होता है। हिंदुओं का गौरवशाली इतिहास उसी हिंदू रक्त से लिखा जाएगा जो कल भिंडी बाजार में बहा था। अब हम कुचलकर नहीं मरेंगे। समर्थ रामदास ने कहा है, 'मारता मारता मरवे' (लड़ते-लड़ते मरना चाहिए)। जब हिंदू आक्रामक हो जाते हैं, तो छोटे-छोटे पाकिस्तान भी जलने लगते हैं। मुल्लों और मौलवियों की दाढ़ी सहलाने वालों को यह बात याद रखनी चाहिए। हिंदुओं ने अपनी तीसरी आंख खोल दी है।

हिंसा का प्रकोप जारी रहने के साथ ही, डर का साया सड़कों पर छा गया, जिससे अफवाहें फैलने लगीं और दहशत का माहौल छा गया। इस्लामी देशों से अत्याधुनिक हथियारों से लैस कमांडो दस्ते मुंबई की ओर बढ़ रहे थे, ऐसी अफवाहें फैल रही थीं कि 'दूसरे' समुदाय के गिरोह रात में रिहायशी कॉलोनियों पर हमला कर सकते हैं। विभिन्न इलाकों में युवकों के दस्ते तैनात किए गए थे ताकि किसी भी संभावित खतरे पर नजर रखी जा सके। मध्यमवर्गीय हिंदू बस्तियों में हमलों से बचाव के लिए सोडा की बोतलें, लोहे की छड़ें, ट्यूबलाइट, पत्थर और बड़े-बड़े पत्थर जैसे 'हथियार' जमा किए गए थे, और युवक रात भर जागकर किसी भी अप्रिय घटना की आशंका में सतर्क रहते थे। केबल टीवी ऑपरेटरों ने भी शरारत करते हुए स्क्रीन पर संदेश दिखाए कि भीड़ ने उनके नेटवर्क से जुड़े भवनों पर हमले शुरू कर दिए हैं और हमलावर तेजी से आगे बढ़ रहे हैं।
जेजे अस्पताल के इलाके में राहगीरों को रोककर उनके नाम पूछे गए। इतने से भी संतुष्ट न होकर, भीड़ ने उन्हें सबूत इकट्ठा करने के लिए अपने पतलून उतारने पर मजबूर किया और फिर उनके साथ 'यौन दुर्व्यवहार' किया।

11 जनवरी को गश्त कर रहे सेनाकर्मियों ने शिवसेना विधायक मधुकर सरपोतदार को बांद्रा के निर्मल नगर से गुजरते समय रोका। उनकी कार की तलाशी में दो रिवॉल्वर, दो चाकू, दो हॉकी स्टिक और दो स्टंप बरामद हुए। जब सेना ने सरपोतदार को पुलिस के हवाले किया, तो पर्याप्त सबूतों के अभाव में उन्हें छोड़ दिया गया (उन्हें फरवरी में राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत हिरासत में लिया गया था)। सरपोतदार ने बाद में दावा किया कि वह हथियार केवल 'आत्मरक्षा' के लिए ले जा रहे थे और मदद के लिए आई किसी पुकार का जवाब देने जा रहे थे।
उसी दिन ठाकरे ने सामना अखबार में घोषणा की: 'बहुत हो गया। कट्टरपंथियों को सबक सिखा दिया गया है। अब इस हिंसा को रोकें।'
शहर भर में शिव सेना के बोर्ड लगे हुए थे जिन पर यही संदेश लिखा था, और मुस्लिम संपत्तियों पर हमले 12 जनवरी को समाप्त हो गए। लेकिन मुंबई में तीन-चार दिन और हिंसा की घटनाएं होती रहीं, क्योंकि असामाजिक तत्व, खासकर उत्तर-पूर्वी उपनगरों में, हिंसा का फायदा उठा रहे थे। हिंसा में आपराधिक गिरोहों की संलिप्तता का संकेत 'निजी फायरिंग' की असामान्य रूप से अधिक घटनाओं से मिला। जनवरी में आम नागरिकों द्वारा फायरिंग के लगभग 67 मामले दर्ज किए गए, जो दिसंबर की तुलना में लगभग दोगुने थे। छोटे-मोटे अपराधियों ने गैंगस्टरों से भी ज्यादा फायदा उठाया, पुराने हिसाब-किताब निपटाए और पुलिस को व्यस्त रखा।
दंगों के दूसरे चरण का आखिरी विस्फोट बहरामपाड़ा में हुआ। रेलवे ट्रैक के किनारे बसी ज़मीन पर कब्ज़ा किए मुस्लिम झुग्गीवासियों ने आरोप लगाया कि सड़क के दूसरी ओर हाउसिंग बोर्ड की इमारतों में रहने वाले हिंदू निवासियों ने उन पर पेट्रोल बम फेंके और कई झोपड़ियों में आग लगा दी। दूसरी ओर, हाउसिंग बोर्ड के निवासियों ने खिड़कियों में गोलियों के निशान दिखाते हुए दावा किया कि पहले झुग्गीवासियों की ओर से उन पर गोलियां चलाई गईं थीं।
दिसंबर और जनवरी में हुए दंगों के दौरान हिंदुओं और मुसलमानों के बीच संचार के सभी माध्यम टूट गए थे। विभाजन पूर्ण रूप से हो चुका था।
जब अराजकता का स्तर कम हुआ और आग पर आखिरकार काबू पा लिया गया, तो मृतकों की संख्या 557 आंकी गई। जनवरी में प्रभावित लोगों में से अधिकांश मुस्लिम थे।
अर्थशास्त्रियों का अनुमान था कि हिंसा के इस तांडव से प्रतिदिन लगभग 125 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। इंडियन मर्चेंट्स चैंबर के एक पैनल ने कहा कि उत्पादन, बिक्री, निर्यात और व्यापार में 750 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। श्रम प्रधान लघु उद्योग बुरी तरह प्रभावित हुए, और मुंबई स्टॉक एक्सचेंज को बंद रहने के प्रत्येक दिन 35 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ।
राज्य सरकार ने 5 जनवरी को घोषणा की कि बॉम्बे उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति बी.एन. श्रीकृष्णा दिसंबर और जनवरी में हुए दंगों से संबंधित परिस्थितियों की जांच करेंगे।
हिंसा में शिवसेना की भूमिका के कारण ठाकरे की गिरफ्तारी की मांग उठी, लेकिन मुख्यमंत्री ने शिवसेना को सीधे तौर पर जिम्मेदार ठहराने से इनकार कर दिया। मीडिया द्वारा पूछे गए सवालों पर नाइक ने केवल इतना कहा, 'मैं ठाकरे के साथ नियमित रूप से फोन पर संपर्क में हूं।'¹⁴⁴
अयोध्या घटना के बाद आडवाणी और जोशी जैसे भाजपा नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, लेकिन कानून का नामोनिशान भी शिवसेना प्रमुख तक नहीं पहुंचा,

जिन्होंने न केवल बाबरी मस्जिद विध्वंस की जिम्मेदारी ली, बल्कि जनवरी में हुए हिंदू विरोध की भी जिम्मेदारी ली (बाद में, वर्ष 2000 में, विद्रोही सैनिक छगन भुजबल ने ठाकरे को 1993 में भड़काऊ लेखों के लिए गिरफ्तार करवाया, लेकिन अदालत ने समय सीमा समाप्त होने का हवाला देते हुए मामले को खारिज कर दिया)।
दंगों के दौरान ठाकरे वैश्विक मीडिया का केंद्र बन गए, और अधिकारियों की ओर से उन्हें छूने की अनिच्छा ने सैनिकों के बीच उनकी असाधारण छवि को और भी अधिक मजबूत कर दिया। ध्रुवीकृत राजनीति में, शिवसेना ने हिंदुओं के स्वघोषित रक्षक के रूप में काफी राजनीतिक लाभ उठाया – एक ऐसी स्थिति जिसने 1995 के विधानसभा चुनावों से पहले उसे बेहद मदद की।

29

सत्ता का मार्ग

शिवसेना ने 1993 और 1994 के दौरान अपनी राजनीतिक बढ़त जारी रखी, जिसमें ठाकरे ने कांग्रेस शासन के कथित कुकर्मों को आसानी से उजागर किया। दंगों के दौरान सरकार की कमज़ोरी उजागर हो गई थी, और जब 12 मार्च 1993 को मुंबई में सिलसिलेवार बम धमाके हुए, तो सरकार की कमज़ोरी की बात नहीं हुई, बल्कि उसकी पूर्ण विफलता की चर्चा होने लगी। आम नागरिकों के साहस ने शहर को 24 घंटों के भीतर सामान्य स्थिति में वापस ला दिया, लेकिन कांग्रेस के नए मुख्यमंत्री शरद पवार द्वारा सामान्य जीवन की बहाली का श्रेय लेने के प्रयास सफल नहीं हुए। सरकार आतंकवाद से उत्पन्न खतरे से निपटने में असमर्थ मानी गई।
दंगों के बाद कांग्रेस की गिरती किस्मत को फिर से संवारने के लिए प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने पवार को महाराष्ट्र वापस भेजा था। लेकिन समय बीतने के साथ, पवार खुद को कांग्रेस सरकार के भ्रष्ट तौर-तरीकों के केंद्र में पाते गए, जिन्हें जनता भ्रष्टाचार कांड मानती थी। कई संकटों
– बम विस्फोट, जलगांव यौन कांड, लातूर भूकंप, गोवारी हत्याकांड – और उन पर लगे आरोपों की बौछार के कारण मराठा नेता के लिए यह साबित करना मुश्किल होता चला गया कि कांग्रेस ही एकमात्र ऐसी पार्टी है जो सुशासन प्रदान कर सकती है।
पवार का दूसरा कार्यकाल विवादों से घिरा रहा, जिसके कारण थे: क) विकास योजना से 285 शहरी भूखंडों को हटाना, ख) वसई-विरार क्षेत्र को विकास के लिए खोल देना, ग) तस्कर भाई ठाकुर के साथ कथित संबंध और पप्पू कलानी और हितेंद्र ठाकुर जैसे टाडा बंदियों को संरक्षण देना, और घ) मालाबार हिल में आईएएस और अन्य सरकारी अधिकारियों द्वारा गठित एक हाउसिंग सोसाइटी को एक भूखंड दान करना। तीसरा कार्यकाल और भी अधिक विवादों से भरा रहा, जिसमें उन पर और उनकी पार्टी पर भ्रष्टाचार और अपराधियों के साथ सांठगांठ के और भी आरोप लगे।
ठाकरे ने राज्य की सभी समस्याओं का दोष नए मुख्यमंत्री पर मढ़ दिया। जब शिवसेना प्रमुख ने फरवरी 1995 में होने वाले विधानसभा चुनावों के लिए अपना प्रचार अभियान शुरू किया, तब तक उनके पास पवार के खिलाफ एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार थी। महाराष्ट्र के कोने-कोने का दौरा करते हुए, उन्होंने हर जनसभा में पवार पर लगे आरोपों की सूची बनाई:

वह (पवार) शकुनी मामा है, बुराई का दूत। देखिए मुख्यमंत्री बनने के बाद क्या हुआ। 12 मार्च को धमाके; फिर मराठवाड़ा में भूकंप; फिर महामारी; नागपुर में भगदड़ जिसमें 128 गोवारी आदिवासियों की मौत; और बेमौसम बारिश जिसने खड़ी फसलों को बर्बाद कर दिया।

उन्होंने कसम खाई थी कि अगर उन्हें कभी कांग्रेस में दोबारा शामिल होना पड़ा तो वे राजनीति छोड़कर हिमालय चले जाएंगे। हुआ क्या? आज वे एक अलग ही तरह के हिमालय के शिखर पर हैं, नोटों के हिमालय के। वे भारत के सबसे अमीर राजनेता हैं।

रक्षा मंत्री नियुक्त होने पर पवार का पहला निर्णय रक्षा क्षेत्र की जमीनों को बेचना था, विशेष रूप से पुणे के दो बिल्डरों को। सेना, नौसेना, वायु सेना और कई सांसदों ने इसका कड़ा विरोध किया। अंततः यह निर्णय रद्द करना पड़ा।

फिर वनस्पति तेल की बात आई: रक्षा अनुबंध उनके भतीजे अजीत पवार के स्वामित्व वाली बारामती ऑयल मिल को दिया गया था। तेल में मिलावट थी, और सेना ने आपूर्ति को अस्वीकार कर दिया।

थैलेसीमिया फाउंडेशन की ओर से पप्पू कलानी ने पवार के ट्रस्ट विद्या प्रतिष्ठान को 30 लाख रुपये दान दिए। इस प्रकार पवार और कलानी का संबंध स्पष्ट है।

कुछ मंत्रियों ने दुबई में फोन किए थे। एजेंसियों ने उन्हें रिकॉर्ड कर लिया है, लेकिन कोई जांच नहीं हुई है। और INTUC पर अरुण गावली गिरोह का कब्जा हो चुका है।

जेजे अस्पताल गोलीबारी में शामिल शर्मा बंधुओं ने रक्षा मंत्री के साथ रक्षा विमान में यात्रा की! इतना ही नहीं, दाऊद के भाई नूरा ने टेलीग्राफ को दिए एक साक्षात्कार में कहा कि उनके परिवार के पवार के साथ अच्छे संबंध थे!

उनका उग्र हिंदुत्व का प्रचार भी जारी रहा। 1994 में जब एक टेलीविजन कार्यक्रम में उनसे पूछा गया कि वे भारतीय युवाओं को क्या संदेश देना चाहेंगे, तो उन्होंने जवाब दिया: 'उग्र बनो। हिंदुओं को इस देश में उग्रवाद लाना होगा।' इस प्रकार शिवसेना ने भाजपा और आरएसएस की तुलना में विचार और कर्म में अधिक उग्रता का दावा किया, जिनका हिंदुत्व कम आक्रामक माना जाता था।
ठाकरे के भगवा वस्त्र, उनके हाथों में रुद्राक्ष की माला और रैलियों में तलवारें निकालने के उनके कृत्य ने 1995 के चुनावों की तैयारियों के दौरान शिवसेना के संदेश के प्रतीकात्मक महत्व को और भी स्पष्ट कर दिया।
इसके साथ ही मुस्लिम विरोधी बयानबाजी भी शुरू हो गई। 12 मार्च 1994 को, सिलसिलेवार बम धमाकों की पहली बरसी पर, ठाकरे ने चेतावनी दी: 'यदि चुनाव आयोग आगामी चुनावों में अल्पसंख्यक समुदाय की बुर्का पहनी महिलाओं को

मताधिकार का प्रयोग करने की अनुमति देता है, तो शिवसेना न केवल महाराष्ट्र में बल्कि पूरे हिंदुस्तान में चुनाव नहीं होने देगी।'
राष्ट्रविरोधी मुसलमानों को बदनाम करना शिवसेना के हिंदुत्व का एक अहम हिस्सा था। शिवसेना प्रमुख ने कहा, 'अगर उनका दिल पाकिस्तान में है और शरीर यहां है, तो हम मुसलमानों को यहां नहीं चाहते। इस मुद्दे पर कोई समझौता नहीं होगा। मैं किसी भी जाति या धर्म के गद्दार को बर्दाश्त नहीं करूंगा। लेकिन मुसलमानों को अपनी विश्वसनीयता साबित करनी होगी।'
‘पाकिस्तान समर्थक झुकाव’ का मुद्दा चरमपंथियों की घुसपैठ और पाकिस्तानी एवं बांग्लादेशी नागरिकों के अवैध अप्रवासन की समस्या से जुड़ा हुआ था। ठाकरे ने कहा, ‘मान लीजिए कि उनके (मुसलमानों के) पड़ोस में पाकिस्तानी चरमपंथी रहते हैं, तो मैं चाहता हूं कि मुसलमान पुलिस को बताएं। मैं नहीं चाहता कि इन इलाकों को मिनी-पाकिस्तान के नाम से जाना जाए। यह उन मुसलमानों का कर्तव्य है कि वे साबित करें कि वे पाकिस्तानी नहीं हैं। बांग्लादेशी मुसलमानों को ही ले लीजिए। मैं उन्हें बाहर निकाल दूंगा। उन्हें बाहर निकालना ही होगा। मैं एक बात नहीं भूल सकता, कि इस देश का विभाजन सांप्रदायिक आधार पर हुआ था। मुसलमानों ने अपना अलग राष्ट्र मांगा था। तो हमें अकेला छोड़ दीजिए।’
फिल्म जगत की हस्तियां भी निशाने पर आ गईं। शिवसेना ने 1993 में मुंबई में पाकिस्तान दिवस समारोह में भाग लेने के बाद ए.के. हंगल की फिल्मों का बहिष्कार करने की घोषणा की। विडंबना यह थी कि हंगल ने 1950 के दशक में मुंबई को महाराष्ट्र का हिस्सा बनाने के आंदोलन में भाग लिया था। 1993 के दंगों के बाद शबाना आज़मी की टिप्पणियों की भी आलोचना हुई।
हालांकि, हिंदुत्व परिवार के कई अन्य घटकों के विपरीत, शिवसेना ने उदारीकरण कार्यक्रम के बाद बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रवेश को लेकर ज्यादा हंगामा नहीं किया, यह कहते हुए कि यदि यह 'द्विपक्षीय आवागमन' है, तो प्रवेश उचित है। द्विपक्षीय आवागमन से शिवसेना का तात्पर्य था कि भारत को उतना ही लाभ होना चाहिए जितना कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भारत में प्रवेश करने से होगा।
एनरॉन प्रकरण के दौरान, शिवसेना का विरोध तीन बातों पर केंद्रित था: क) कोंकण के पारिस्थितिक संतुलन पर परियोजना के बुरे प्रभाव; ख) अत्यधिक मूल्य निर्धारण; और ग) खुली बोली के बिना अनुबंध देने की गलत प्रक्रिया। ठाकरे ने कहा, ‘हम परियोजना को रोकना नहीं चाहते, लेकिन हमें उन सभी मुद्दों पर गौर करना होगा जो सामने आए हैं। एनरॉन मामले के दो पहलू हैं। एक तो स्थानीय है। कोंकण क्षेत्र प्राकृतिक सुंदरता से भरपूर है – पहाड़, खूबसूरत पेड़, तरह-तरह के फल, काजू और नारियल। यहां के स्थानीय लोग भी दृढ़ निश्चयी हैं और उनके विरोध को दबाया नहीं जा सकता। उन्हें सौदे से कोई खास मतलब नहीं है; उन्हें अपने पर्यावरण के बिगड़ने की चिंता है और मैं इस मामले में उनसे सहमत हूं। दूसरी ओर, हमें यह भी देखना होगा कि जमीन किस तरह आवंटित की गई और निविदाएं क्यों नहीं मंगाई गईं।’
शिवसेना का हिंदुत्व उग्रवाद, धार्मिक प्रतीकों और 'पाकिस्तान समर्थक' मुसलमानों पर तीखे हमलों का मिश्रण था। और इसे आर्थिक सुधार कार्यक्रम के समर्थन की आड़ में नरम रूप दिया गया था।
दंगों और बम धमाकों के बाद की स्थिति में, मुंबई और महाराष्ट्र में हिंदू समुदाय आसानी से इसके आकर्षण के प्रति संवेदनशील हो गया था।

मीडिया पर और हमले, और अधिक लोकलुभावनवाद
शिवसेना की संगठनात्मक मशीनरी का एक हिस्सा पार्टी का मुखपत्र सामना था, जिसका 1993-94 में प्रसार 1,50,000 से 3,00,000 के बीच था। अपने मजबूत वितरण नेटवर्क के बदौलत, सामना, जिसका 1993 में हिंदी संस्करण भी शुरू किया गया था, ने पार्टी को जनसंचार के एक महत्वपूर्ण माध्यम पर नियंत्रण प्रदान किया।
अगस्त 1993 में, महानगर के संपादक निखिल वागले ने कहा कि वे सामना को अखबार नहीं मानते। 18 अगस्त को, हिंदी पत्रकार संघ द्वारा आयोजित धार्मिक कट्टरवाद पर एक संगोष्ठी में, तीन शाखा प्रमुखों सहित शिवसेना कार्यकर्ताओं के एक समूह ने उन पर हमला किया। उसी दिन, भारतीय कामगार सेना के कार्यकर्ताओं ने एक अन्य मराठी शाम के अखबार आज दिनांक के कार्यालय में तोड़फोड़ की और उसके रिपोर्टर की पिटाई की। अखबार ने एक दिन पहले ही बीकेएस अध्यक्ष दत्ताजी साल्वी को उनके पद से हटाए जाने की खबर प्रकाशित की थी।
देश भर से 500 से अधिक पत्रकारों ने 11 सितंबर 1993 को मीडिया पर हुए हमलों के विरोध में शिवसेना भवन के बाहर धरना दिया। उपस्थित पत्रकारों में फ्रंटलाइन के संपादक एन. राम, मेनस्ट्रीम के संपादक निखिल चक्रवर्ती, जनसत्ता के प्रभाष जोशी, टाइम्स ऑफ इंडिया के दिलीप पडगांवकर, इंडियन एक्सप्रेस के प्रभु चावला और प्रख्यात हिंदी पत्रकार मृणाल पांडे शामिल थे। मेधा पाटकर और शबाना आज़मी ने भी अपनी उपस्थिति से इस धरने को अपना समर्थन दिया।
इसके बाद भी, शिवसेना ने 1994 की शुरुआत में औरंगाबाद में पत्रकारों पर एक और हमला किया।
वहीं, शिवसेना के मुखपत्र सामना को उस समय बढ़ावा मिला जब बॉम्बे हाई कोर्ट ने सितंबर 1994 में जे.बी. डिसूजा और दिलीप ठाकुर द्वारा दायर एक जनहित याचिका को खारिज कर दिया, जिसमें महाराष्ट्र सरकार को बाल ठाकरे और अखबार के कार्यकारी संपादक संजय राउत पर मुकदमा चलाने का अदालती निर्देश देने की मांग की गई थी।
जनवरी 1995 में, सर्वोच्च न्यायालय ने भी उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया, और सामना लगातार मजबूत होता चला गया, जिसकी भाषा राज्य संस्थाओं या अदालतों द्वारा बाधित नहीं थी। शिवसेना का लोकलुभावन कार्यक्रम भी जारी रहा, और अपने शुरुआती वर्षों की तरह, इसे व्यवस्था की नाकामियों का फायदा मिला।
जब मुंबई में सिलसिलेवार बम धमाके हुए, तो शिवसेना कार्यकर्ता प्रभावित क्षेत्रों में सबसे पहले पहुंचे और पीड़ितों की मदद की। शिवसेना की एम्बुलेंस ने घायलों को अस्पतालों तक पहुंचाया और उन अस्पतालों में भी मदद की जहां आपातकालीन विभाग में सहायक कर्मचारियों की कमी थी।
इसी प्रकार, सितंबर 1993 में आए भूकंप के बाद, डॉ. दीपक सामंत के नेतृत्व में सेना की एक टीम लातूर पहुंची, मुफ्त दवाएं वितरित कीं और पुनर्वास कार्य के लिए लिंबाला नामक एक गांव को गोद लिया।
शिवसेना पर चंदा जुटाने के लिए कथित तौर पर दबाव डालने और शाखा नेटवर्क में आपराधिक तत्वों की मौजूदगी के आरोप लगे, जिस पर राजनीतिक हलकों में हर

तरफ से हमले हुए। फिर भी, उसके लोकलुभावन उपायों ने उसके पक्ष में काम किया और उसे सत्ताधारी कांग्रेस की तुलना में कम भ्रष्ट माना गया।
पार्टी ने खोपोली में वृद्धों के लिए रामधाम नामक एक आश्रम का निर्माण किया। इसने पूरे महाराष्ट्र में रक्तदान शिविर और चिकित्सा शिविर आयोजित किए, 1994 में नासिक जिले के कुछ गांवों में साक्षरता कार्यक्रम शुरू किया और ग्रामीणों के लिए सहकारी ऋण समितियां शुरू कीं। इसने राज्य भर में सैकड़ों छात्रों को 'गोद' लिया और उन्हें शैक्षिक सुविधाएं प्रदान कीं, साथ ही जरूरतमंद स्कूली बच्चों को मुफ्त नोटबुक और अन्य स्टेशनरी वितरित कीं। इसने स्थानीय मुद्दों पर आंदोलन भी चलाए और कई गांवों में बिजली और पानी के कनेक्शन प्राप्त करने में सफलता हासिल की।
किसी भी प्रकार की मूल्य वृद्धि या आवश्यक वस्तुओं की कृत्रिम कमी की स्थिति में, शिवसेना कार्यकर्ता व्यापारियों के गोदामों पर छापा मारते, छिपी हुई वस्तुओं को जब्त करते और उन्हें शाखाओं में कम दरों पर बेचते, इस प्रकार मुद्रास्फीति के दुष्चक्र से प्रभावित लोगों की सराहना प्राप्त करते।
हमेशा की तरह, ध्यान राष्ट्रीय मुद्दों पर नहीं बल्कि स्थानीय मुद्दों पर केंद्रित था, और 1995 के चुनावों में पार्टी को इसका भरपूर लाभ मिला। चुनाव प्रचार से पता चला कि मतदाताओं के मन में रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े मुद्दे सबसे अहम थे। उदाहरण के लिए, अखबारों की रिपोर्टों में मुंबई के वर्ली में शिवसेना और कांग्रेस के बीच इस बात को लेकर तीखी बहस छिड़ी थी कि आवास, सौंदर्यीकरण और मिल की जमीन की बिक्री का विरोध करने के मामले में किसने इलाके के लिए ज्यादा काम किया है।
रोजगार उपलब्ध कराने के मामले में शिवसेना की प्रतिष्ठा भी महत्वपूर्ण थी, क्योंकि राज्य के अर्थशास्त्र और सांख्यिकी निदेशालय ने दर्ज किया था कि रोजगार एक्सचेंज में पंजीकृत नौकरी चाहने वालों की संख्या 1985-86 में 2,50,000 से बढ़कर अप्रैल 1994 में 3,30,000 हो गई थी। इसके अलावा, महाराष्ट्र में शिक्षित बेरोजगारों का अनुपात भारत के अधिकांश अन्य शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक था।
भगवा पार्टी के सामने कांग्रेस पार्टी थी जो भ्रष्टाचार और कुप्रशासन के आरोपों से घिरी हुई थी और बुरी तरह बिखरी हुई थी। यहां तक कि उसका वोट बैंक का खाली चेक भी बाउंस होने के कगार पर था: बाबरी मस्जिद विध्वंस, दंगों और कथित तौर पर टाडा के कठोर इस्तेमाल के कारण मुसलमान कांग्रेस से अलग हो गए थे, और नागपुर में गोवारी हत्याकांड के बाद महाराष्ट्र में पिछड़े समुदाय कांग्रेस से दूर हो गए थे।
1995 के विधानसभा चुनावों से पहले राज्य भर में तूफानी दौरा करते हुए, शिवसेना प्रमुख ने भगवा गठबंधन के पक्ष में एक लहर पैदा कर दी।
'मैं तुम्हें लोकशाही नहीं दूंगा, मैं तुम्हें शिवशाही दूंगा,' उन्होंने महाराष्ट्र की जनता से वादा किया, और शिवाजी द्वारा स्थापित राज्य के समान एक राज्य का सपना बेचा।
बढ़ती कीमतों, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार से मतदाता नाराज थे। इसलिए उन्होंने वादों की झड़ी लगा दी: 40 लाख झुग्गीवासियों को मुफ्त घर दिए जाएंगे, ज्वार, चावल, दाल, चीनी और मूंगफली के तेल जैसी पांच आवश्यक वस्तुओं की मूल्य सीमा पांच साल के लिए तय की जाएगी और बेरोजगारों को 27 लाख नौकरियां दी जाएंगी।

शिवसेना सरकार में जो मंत्री भ्रष्ट और गैर-जिम्मेदार पाए जाएंगे, उन्हें बर्खास्त कर दिया जाएगा। उन्होंने अपनी हर सभा में तालियों की गड़गड़ाहट के बीच कहा, ‘मुख्यमंत्री कौन होगा, इसका फैसला मैं करूंगा और सारी शक्ति मेरे हाथ में होगी। अगर मेरे मुख्यमंत्री पर भ्रष्टाचार का एक भी आरोप साबित होता है, तो उन्हें अपनी कुर्सी छोड़नी पड़ेगी। और अगर कोई मंत्री या विधायक के पास शिकायत लेकर जाता है और जवाब मिलता है, “ठीक है, मैं बाद में देख लूंगा, अभी मैं व्यस्त हूं,” तो मैं उन्हें बाहर निकाल दूंगा। चाहे वह मुख्यमंत्री ही क्यों न हो, मैं उसे भी बाहर निकाल दूंगा।’
सत्ता के गलियारों में धक्के खाकर परेशान हो चुकी जनता के लिए कुछ राहत भरे शब्द भी थे: ‘मैं मंत्रालय में फाइलों का ढेर बर्दाश्त नहीं करूँगा। अगर मुझे पता चला कि लोगों की शिकायतें और मदद की गुहारें लालफीताशाही में फंसी फाइलों में दबा दी गई हैं और फाइलों का ढेर लग गया है, तो मैं मंत्रालय जाकर पेट्रोल डालकर आग लगा दूँगा। उस मंत्रालय का क्या फायदा जो लोगों की समस्याओं का समाधान ही नहीं करता?’
सरकारी खर्च में भारी कटौती की जाएगी ताकि धनराशि का उपयोग विकास कार्यों के लिए किया जा सके, और शराबबंदी विभाग और कुछ सरकारी प्रकाशनों जैसे बेकार विभागों को बंद करना होगा। ठाकरे ने पूछा, 'जब मंत्री समेत हर कोई शराब पीता है, और स्विमिंग पूल शराब से भरे पड़े हैं, तो शराबबंदी विभाग की क्या आवश्यकता है?'
इस पैकेज में चौंकाने वाली बात यह थी कि TADA कानून वापस लेने का प्रस्ताव था, जो लगभग राज्य आतंक का प्रतीक बन चुका था। शिवसेना के विरोधियों ने आरोप लगाया कि यह वादा अभिनेता संजय दत्त को बचाने के लिए किया जा रहा है, जिन्हें बम धमाकों के मामले में दो आरोपियों से हथियार खरीदने के आरोप में गिरफ्तार किया गया था। चुनाव प्रचार के दौरान, शिवसेना प्रमुख ने अपना रुख स्पष्ट किया। जब उनसे पूछा गया कि वह संजय दत्त का समर्थन क्यों कर रहे हैं, तो ठाकरे ने कहा: 'क्योंकि मुझे यकीन है कि उनका धमाकों से कोई लेना-देना नहीं है। साथ ही, मुझे संजय दत्त से सहानुभूति नहीं है, बल्कि पूरे फिल्म उद्योग से है। मुझे फिल्म उद्योग और उसमें काम करने वाले हजारों श्रमिकों की चिंता है। संजय की गिरफ्तारी के कारण उद्योग मंदी में है, और उनकी 20 फिल्मों का काम ठप हो गया है। हजारों श्रमिक बेरोजगार हैं! मैं यह नहीं कह रहा हूं कि संजय के खिलाफ मामला वापस लिया जाए। मैं बस इतना कह रहा हूं कि उन्हें जमानत पर रिहा किया जाए!' उन्होंने कहा कि शिवसेना सरकार टाडा अत्याचारों के मुद्दे का अध्ययन करेगी और यदि यह पाया जाता है कि निर्दोष लोग पीड़ित हुए हैं, तो उन्हें रिहा कर दिया जाएगा।
फिर महिलाओं के लिए अलग पुलिस स्टेशन होंगे, जिनमें महिला पुलिस आयुक्त, महिला सहायक पुलिस अधिकारी, महिला उप पुलिस अधिकारी और महिला निरीक्षक होंगी। इससे चोरी रुक जाएगी और चुंगी में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त हो जाएगा।
आर्थिक कार्यक्रम के बारे में क्या? ठाकरे ने समझाया, 'मेरा आर्थिक कार्यक्रम भोजन, वस्त्र और आवास उपलब्ध कराना है।' उन्होंने कहा कि कांग्रेस 35 वर्षों में पानी तक उपलब्ध नहीं करा पाई, लेकिन शिवसेना सरकार पांच वर्षों में महाराष्ट्र को टैंकर-मुक्त कर देगी। साथ ही, मुंबई में 55 फ्लाईओवर और छह स्तरीय मुंबई-पुणे एक्सप्रेसवे का निर्माण करेगी, जिससे दोनों शहरों के बीच की दूरी दो घंटे कम हो जाएगी।

ठाकरे की चुनावी सभाओं में भारी भीड़ उमड़ी और इससे शिवसेना की लोकप्रियता में जबरदस्त उछाल आया। पवार और कांग्रेस शिवसेना को रोकने के लिए कुछ खास नहीं कर सके।
महाराष्ट्र में फरवरी में हुए विधानसभा चुनावों में अब तक का सबसे अधिक 71.87 प्रतिशत मतदान हुआ और जब 11 मार्च को मतपेटियां खोली गईं, तो यह स्पष्ट हो गया कि ठाकरे जीत गए हैं।

विजय रैली
14 मार्च 1995 की शाम को, शिवसेना के मनोहर जोशी को मुख्यमंत्री के रूप में शपथ लेते देखने के लिए मुंबई के शिवाजी पार्क में भारी जनसमूह उमड़ पड़ा।
यह शपथ ग्रहण समारोह परंपरा से हटकर था। 1960 से सभी मुख्यमंत्रियों ने राजभवन में शपथ ली थी, जो राज्य के संवैधानिक प्रमुख, राज्यपाल का निवास स्थान है। यह पहली बार था जब कोई मुख्यमंत्री लाखों लोगों की उपस्थिति में शपथ ले रहा था।
ठाकरे यही चाहते थे। उन्होंने पहले ही घोषणा कर दी थी, ‘अगर हम सत्ता में आते हैं, तो शिवसेना के मुख्यमंत्री का शपथ ग्रहण समारोह राजभवन में नहीं होगा। यह शिवाजी पार्क में छत्रपति शिवाजी महाराज की प्रतिमा के नीचे होगा और पूरे शहर को आमंत्रित किया जाएगा।’¹⁴⁵ आखिरकार, शिवाजी पार्क दादर में था, जो शिवसेना के समर्थन का गढ़ था, और पार्टी ने मुंबई की 34 विधानसभा सीटों में से 30 पर जीत का दावा किया था।
मतदाताओं का फैसला स्पष्ट था: शिवसेना-भाजपा गठबंधन ने 138 सीटें जीतीं (शिवसेना-73, भाजपा-65); कांग्रेस को सिर्फ 80 सीटें ही मिल पाईं। राज्य के सभी क्षेत्रों में भगवा गठबंधन का प्रदर्शन शानदार रहा। मुंबई में तो उसने कांग्रेस का लगभग सफाया कर दिया; शिवसेना के गढ़ माने जाने वाले कोंकण क्षेत्र की 65 सीटों में से गठबंधन ने 51 सीटें जीतीं, जबकि कांग्रेस को चार सीटों से ही संतोष करना पड़ा; और उत्तरी महाराष्ट्र, विदर्भ और मराठवाड़ा - इन तीन क्षेत्रों में 1990 के मुकाबले काफी सुधार करते हुए गठबंधन ने इस बार अपनी सीटों की संख्या में 50 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की। तीनों क्षेत्रों में मिलाकर गठबंधन ने कुल 24 सीटें अधिक जीतीं; वहीं दूसरी ओर कांग्रेस को 30 सीटें कम मिलीं।
महाराष्ट्र भर के समाचार पत्रों ने शिवसेना के प्रदर्शन को प्रमुखता से छापा और दैनिक समाचार पत्रों के पहले पृष्ठ के संपादकीयों में, कांग्रेस के अभेद्य गढ़ माने जाने वाले इस राज्य में सत्ता हस्तांतरण पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए, ठाकरे के करिश्मा और नेतृत्व गुणों की जमकर प्रशंसा की गई, जिनके कारण उनकी पार्टी को जीत मिली। मतदाताओं की इच्छाओं की अवहेलना करने के बजाय, शरद पवार के नेतृत्व वाली 80 सदस्यीय कांग्रेस विधायक दल, जो सबसे बड़ी एकल पार्टी बनकर उभरी थी, ने सत्ता के लिए दावेदारी न करने का फैसला किया।
13 मार्च की सुबह, शिवाजी पार्क के सामने स्थित शिवसेना के मुख्यालय, शिवसेना भवन में शिवसेना-भाजपा की संयुक्त विधायक दल की बैठक हुई। शिवसेना प्रमुख और भाजपा नेता एल.के. आडवाणी की अध्यक्षता में हुई इस बैठक में मनोहर जोशी को नेता और गोपीनाथ मुंडे को शिवसेना-भाजपा के 138 सदस्यीय विधायक दल का उपनेता चुना गया। इसके बाद, ठाकरे और आडवाणी ने

राज्यपाल पी.सी. अलेक्जेंडर से मुलाकात कर सरकार बनाने का दावा पेश करते हुए औपचारिक पत्र सौंपा। उन्होंने राज्यपाल को यह भी बताया कि 10 निर्दलीय विधायकों ने गठबंधन को समर्थन देने की पेशकश की है, जिससे गठबंधन की कुल संख्या 147 हो गई है, जो बहुमत के लिए आवश्यक संख्या से दो अधिक है। आकर्षक व्यक्तित्व वाले सुधीर जोशी को पहले मुख्यमंत्री पद के लिए संभावित उम्मीदवार माना जा रहा था, लेकिन शिवसेना प्रमुख ने मनोहर जोशी को उनकी कुशल प्रबंधकीय क्षमता और प्रशासनिक कौशल के कारण इस पद पर नियुक्त करके सबको चौंका दिया। सुधीर जोशी को दोनों में अधिक आकर्षक और शिवसैनिकों के चहेते माना जाता था, लेकिन पार्टी प्रमुख का मानना था कि उनके मामा मनोहर जोशी नौकरशाही और राजनीतिक विरोधियों से बेहतर ढंग से निपटेंगे।
शिवाजी पार्क में लगभग तीन लाख लोगों की भीड़ द्वारा मुख्यमंत्री और उपमुख्यमंत्री के शपथ ग्रहण समारोह को देखने के बाद, ठाकरे ने अपने भाषण की शुरुआत में ही विजयी लोगों से पूछा: 'क्या यह एक सपना है?'
उन्होंने कहा कि जब उन्होंने सत्ता में आने की बात कही थी तब किसी ने उन पर विश्वास नहीं किया था, लेकिन असंभव सा लगने वाला काम हो गया है, और अब शिवसेना-भाजपा गठबंधन की जिम्मेदारी है कि वह राज्य की जनता को एक अच्छी सरकार दे। उन्होंने बताया कि लोगों को पानी उपलब्ध कराना उनकी प्राथमिकता होगी, स्कूली बच्चों के थैलों का वजन कम करना जरूरी है, नए उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए एक कार्यक्रम शुरू किया जाएगा, और भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए पूर्व सेना अधिकारियों को चुंगी वसूली केंद्रों पर तैनात किया जाएगा। उन्होंने एनरॉन परियोजना की समीक्षा करने और 40 लाख झुग्गीवासियों को मुफ्त घर देने के अपने वादे को दोहराया और अवैध बांग्लादेशी और पाकिस्तानी प्रवासियों से कहा कि वे 'हमें उन्हें यहां से बाहर निकालने से पहले' यहां से चले जाएं।
और उन्होंने शासन करने के अपने ‘रिमोट कंट्रोल’ सिद्धांत को समझाया। उन्होंने कहा, ‘मैं हिटलरवाद का समर्थक नहीं हूं, लेकिन शिवसेना-भाजपा द्वारा किए गए वादे सिर्फ कागजों तक सीमित नहीं रहने चाहिए। इसलिए मैं जनता की इच्छाओं की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए सरकार को ‘रिमोट कंट्रोल’ से चलाऊंगा।’
ठाकरे वास्तव में सत्ता के नियंत्रण में थे। उनकी शिवसेना, जिसे अक्सर राजनीतिक विश्लेषक महाराष्ट्र की राजनीति में एक गैर-गंभीर कारक के रूप में खारिज कर देते थे, ने सत्ता पर कब्जा कर लिया था।

30

सेना सरकार

शिवसेना का सत्ता में कार्यकाल (1995 से 1999) निराशाजनक रहा। इसी दौरान महाराष्ट्र आर्थिक दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर पर पहले स्थान से फिसलने लगा (कांग्रेस-एनसीपी शासन के दौरान यह गिरावट जारी रही)। भगवा पार्टी अधिकांश वादों पर खरी नहीं उतरी: 40 लाख झुग्गीवासियों के लिए मुफ्त आवास योजना विफल रही, किफायती दरों पर (महाराष्ट्रीयन) भोजन उपलब्ध कराने वाली दुकानें खोलने की झुंझलाहट भरी योजना भी नाकाम रही, और विकास के मोर्चे पर मुंबई में 55 फ्लाईओवर और छह लेन वाले मुंबई-पुणे एक्सप्रेसवे के अलावा कुछ खास नहीं दिखा। इन परियोजनाओं को शिवसेना की उपलब्धि से ज्यादा भाजपा नेता और तत्कालीन पीडब्ल्यूडी मंत्री नितिन गडकरी की उपलब्धि माना गया। शिवसेना के अधिकांश मतदाता बीईएसटी बसों से यात्रा करते थे, जिन्हें फ्लाईओवरों पर चलने की अनुमति नहीं थी, इसलिए उन्हें भीड़भाड़ वाली सड़कों से होकर गुजरना पड़ता था।
पार्टी के मतदाता आधार में अप्रत्याशित परिवर्तन देखने को मिला। 'स्थानीय लोगों को तरजीह' और 'भूमिपुत्रों के लिए रोजगार सृजन' की नीति कागजों पर ही सिमट गई। 27 लाख नई नौकरियों का वादा किया गया था, लेकिन शिवसेना नेतृत्व ने खुद शिकायत की कि सरकार ने इस संबंध में नाममात्र का ही काम किया है। मिलों की जमीन पर ऊंची-ऊंची इमारतें बन गईं और मिल मजदूरों के परिवार, जिनमें ज्यादातर महाराष्ट्रीयन थे, मध्य मुंबई के परेल, लोअर परेल और लालबाग से दूर उपनगरों में जाने को मजबूर हो गए, क्योंकि बिल्डरों का दबदबा शहर पर बढ़ने लगा था। दादर और गिरगाँव, दो अन्य शिवसेना-प्रभावित क्षेत्रों में रहने वाले मराठी भाषी लोगों ने भी रियल एस्टेट में ऐसी वृद्धि देखी जिसमें उनकी भूमिका न के बराबर थी और जिसने इन क्षेत्रों के महाराष्ट्रीयन चरित्र को हमेशा के लिए बदल दिया; और मराठी संस्कृति के किसी भी पहलू - भाषा, भोजन, रंगमंच, फिल्में, संगीत - को राज्य सरकार से कोई प्रोत्साहन मिलता नजर नहीं आया।
शिवसेना ने मराठी भाषा को बढ़ावा देने की जितनी भी बातें कीं, मराठी स्कूलों की संख्या में कमी आई और आरोप लगने लगे कि शिवसेना सरकार इन स्कूलों की जमीन को मूल मालिकों को सौंपने में जल्दबाजी कर रही है ताकि वे वहां टावर बना सकें।
शिवसेना के विधायकों और मंत्रियों की जीवनशैली रातोंरात साधारण से भव्य और दिखावटी हो जाने पर भ्रष्टाचार के आरोप लगे। उतना ही महत्वपूर्ण यह तथ्य था कि शहर में अब केवल गुजराती, मारवाड़ी और जैन ही रियल एस्टेट डेवलपर नहीं रह गए थे; शिवसेना के प्रमुख नेता अपनी उद्यमशीलता की सूझबूझ से इस क्षेत्र में उतर आए थे, और साधारण मराठी मानुष विस्थापित हो गए थे। सबसे पहले, एनरॉन घोटाला, जिसके लिए शिवसेना ने शरद पवार सरकार की कड़ी आलोचना की थी, और भी बिगड़ गया। शिवसेना-भाजपा सरकार ने पहले समझौते को रद्द किया और फिर उस पर पुनर्विचार किया। इन वार्ताओं के बीच एक ऐसा

नाटकीय घटनाक्रम सामने आया, जिसमें शिवसेना के मुख्यमंत्री मनोहर जोशी और उनके पार्टी प्रमुख के बीच कई टकरावों में से पहला टकराव देखने को मिला। एनरॉन की कार्यकारी रेबेका मार्क, जिन्हें बिजली परियोजना को बचाने के लिए मुख्यमंत्री से मिलना था, पहले बाल ठाकरे के मातोश्री आवास पर शिवसेना प्रमुख से मिलने गईं। इस वजह से वे जोशी से अपनी मुलाकात नहीं कर पाईं। दक्षिण मुंबई के नरीमन पॉइंट स्थित राज्य मुख्यालय में उनका इंतजार कर रहे मुख्यमंत्री भड़क उठे और मुलाकात रद्द कर दी।
ठाकरे को जब पता चला कि रेबेका मार्क ने पहले जोशी से मिलने का फैसला किया था, तो वे बेहद क्रोधित हो गए। मुख्यमंत्री द्वारा यह स्पष्ट किए जाने के बाद ही मामला शांत हुआ कि ऐसा नहीं था। जोशी ने ठाकरे को बताया कि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं थी कि मार्क मातोश्री में मौजूद हैं, और कहा कि वे केवल इसलिए नाराज थे क्योंकि वह समय पर नहीं पहुंची थीं।
फिर, झुनखा भाकर योजना पूरी तरह विफल हो गई। शिवसेना सरकार ने झुनखा भाकर के स्टॉल स्थापित करने में मदद की, जिनमें से कई राज्य के स्वामित्व वाली प्रमुख संपत्तियों पर थे, लेकिन यह योजना भ्रष्टाचार का जरिया बन गई और स्टॉल इस कदर अव्यवस्थित हो गए कि झुनखा भाकर केंद्र कहना ही गलत साबित हुआ: इनमें से अधिकांश फास्ट फूड जॉइंट में बदल गए। अंततः, सरकार ने अधिकांश स्टॉलों को बंद करने का आदेश दिया, यह निर्णय लिया कि कोई नया स्टॉल नहीं खोला जाएगा और घोषणा की कि वह इस बात का 'विश्लेषण' करेगी कि क्या यह योजना वास्तव में गरीबों के लिए लाभदायक थी या इसका दुरुपयोग हुआ था।
40 लाख झुग्गीवासियों को मुफ्त आवास प्रदान करने की परियोजना भी शुरू से ही विफल रही। शिवसेना की सहयोगी भाजपा ने इसे अव्यावहारिक बताकर इसकी आलोचना की। परियोजना के विफल होते देख शिवसेना सरकार ने न केवल आवास मंत्री को बदला, बल्कि मध्यस्थ की भूमिका छोड़कर स्वयं सक्रिय भूमिका निभाते हुए झुग्गीवासियों के पुनर्वास के लिए सरकारी स्वामित्व वाली कंपनी शिवशाही पुनर्वास प्रकल्प लिमिटेड (एसपीपीएल) का गठन किया। हालांकि, इससे भी कोई खास फायदा नहीं हुआ, क्योंकि केवल कुछ हजार झुग्गीवासियों को ही मुफ्त घर मिल पाए।
सरकार द्वारा रोजगार उपलब्ध कराने में विफलता पर ठाकरे परिवार के एक सदस्य, शिवसेना प्रमुख के भतीजे राज ने सरकार की कड़ी आलोचना की। उन्होंने कहा, ‘जब से गठबंधन सत्ता में आया है, मैं उनसे रोजगार सृजन और स्वरोजगार कार्यक्रमों के संबंध में उठाए गए कदमों की जानकारी मांग रहा हूं, लेकिन प्रतिक्रिया निराशाजनक रही है।’¹⁴⁶
राज ने बताया कि मनोहर जोशी ने शुरुआत में शिवसेना सरकार द्वारा विशेष रूप से गठित रोजगार विभाग का डेढ़ साल तक नेतृत्व किया था। बाद में प्रमोद नवलकर ने इसका कार्यभार संभाला और फिर दिवाकर रावटे ने उनसे यह पदभार ग्रहण किया। राज ने कहा, 'मैंने कई बार जोशी और नवलकर दोनों से जानकारी मांगी, लेकिन कोई जवाब नहीं मिला। रावटे के पदभार संभालने के बाद ही मुझे स्थिति रिपोर्ट मिल सकी।' राज ने 1998 में युवाओं को रोजगार प्रदान करने के लिए शिव उद्योग सेना की स्थापना की थी।
राज, अपनी ओर से, उस विवाद के केंद्र में थे जिसने शिवसेना के शासनकाल के दौरान पहले गंभीर संकट को जन्म दिया।
1996 के उत्तरार्ध में, पूर्व सैनिक और अब विधान परिषद में विपक्ष के नेता छगन भुजबल ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस बुलाई और शीला किनी को पेश किया,

जिन्होंने आरोप लगाया कि उनके पति रमेश को राज के आदमियों द्वारा अक्सर सामना कार्यालय में बुलाया जाता था और उन्हें अपना माटुंगा फ्लैट खाली करने के लिए कहा जाता था। उन्होंने बताया कि उनके पति 23 जुलाई को सामना कार्यालय जाने का बहाना बनाकर घर से निकले थे। अगले दिन, वे पुणे के एक थिएटर में मृत पाए गए। कांग्रेस ने कहा कि शिवसेना और राज इसमें शामिल थे और सीबीआई जांच की मांग की।
जब राज्य ने अपने अपराध जांच विभाग को मामले की जांच करने का आदेश दिया, तो राज ने किनी से अपनी मुलाकात से इनकार किया, लेकिन इस बात की पुष्टि की कि वह लक्ष्मीचंद शाह को जानता था, वही व्यक्ति जो किनी का फ्लैट खाली करवाना चाहता था। उसने आरोपों को पवार और 'लखोबा' भुजबल द्वारा रची गई 'साजिश' बताया।
बाल ठाकरे ने पूछा कि क्या किनी महात्मा गांधी थीं, और सामना ने किनी की विधवा को मौत के लिए दोषी ठहराने में कोई कसर नहीं छोड़ी। जब सीआईडी ने अपनी रिपोर्ट बॉम्बे हाई कोर्ट को भेजी, जहां से इसे आगे की जांच के लिए सीबीआई को सौंपा जाना था, तो अखबार ने कहा कि रिपोर्ट में वास्तव में शीला किनी की इस मामले में संलिप्तता साबित हुई है।
बाद में सीबीआई ने राज को आरोपों से बरी कर दिया, लेकिन इस घटना ने शिवसेना सरकार पर विपक्ष के पहले बड़े हमले को चिह्नित किया।
नवंबर 1996 में, सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हजारे ने दो मंत्रियों - शिवसेना के कृषि मंत्री शशिकांत सुतार और भाजपा के वित्त मंत्री महादेव शिवंकर - पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया। सरकार ने मामले की जांच के लिए न्यायमूर्ति एच.डब्ल्यू. पुराणिक की अध्यक्षता में एक सदस्यीय जांच समिति का गठन किया। समिति ने शिवंकर को दोषमुक्त कर दिया, लेकिन सुतार को दोषी पाया।¹⁴⁷ हालांकि, पुराणिक ने कहा कि सुतार के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए उन्हें अपना पक्ष रखने का मौका देना आवश्यक था। इसलिए आरोपों की जांच के लिए एक और समिति का गठन किया गया, और उसकी रिपोर्ट ने सुतार को क्लीन चिट दे दी।¹⁴⁸ लेकिन इससे पहले, इस घटना से सरकार को हुई शर्मिंदगी के कारण सुतार को इस्तीफा देना पड़ा।
इसके बाद हजारे ने शिवसेना के सामाजिक कल्याण मंत्री बबनराव घोलप पर भी आरोप लगाया और घोलप ने उन पर मानहानि का मुकदमा कर दिया। अदालत ने सबूतों के अभाव में मंत्री को बरी कर दिया और हजारे को मानहानि के आरोप में जेल भेज दिया। गठबंधन सरकार ने चतुराई से अपनी विशेष शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए सामाजिक कार्यकर्ता को रिहा कर दिया, जिससे उनके पक्ष में बढ़ते समर्थन को रोका जा सका।
किनी प्रकरण की यादें अभी ताजा थीं और हजारे का भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन जारी था, तभी शिवसेना चुनावी मैदान में उतर आई। बीएमसी चुनाव फरवरी 1997 में होने थे। बाल ठाकरे ने चुनाव प्रचार इस तरह किया मानो चुनाव जीतना उनके लिए प्रतिष्ठा का सवाल हो। मुझे याद है कि इस दौरान उन्होंने नुक्कड़ सभाएं भी कीं, शिवसेना सरकार का बचाव किया, हजारे पर हमले किए और कुल मिलाकर चुनावों को शिवसेना प्रमुख के रूप में अपने कार्यकाल पर जनमत संग्रह के रूप में पेश किया, न कि शिवसेना सरकार पर जनमत संग्रह के रूप में। उनके प्रयास सफल रहे और शिवसेना ने बीएमसी में 103 सीटें जीतकर कब्जा कर लिया। धन्यवाद के रूप में, ठाकरे ने विजय रैली में शिवाजी पार्क में भीड़ के सामने साष्टांग नमस्कार किया।

इस जीत का जश्न अभी शुरू ही हुआ था कि शिवसेना के जवानों ने अपनी सरकार को मुश्किल में डाल दिया। जुलाई 1997 में, मुंबई के उत्तर-पूर्वी इलाके घाटकोपर के रमाबाई नगर में बाबासाहेब अंबेडकर की प्रतिमा के अपमान के विरोध में प्रदर्शन कर रही भीड़ पर मनोहर कदम ने अपने जवानों को गोली चलाने का आदेश दिया, जिसमें दस दलित मारे गए और 26 घायल हो गए। भुजबल ने एक बार फिर आक्रामक रुख अपनाते हुए शिवसेना सरकार को 'दलितों का हत्यारा' करार दिया। शिवसेना ने आरोप लगाया कि भुजबल ने खुद प्रतिमा के अपमान की साजिश रची थी, लेकिन शिवसेना के जवान यहीं नहीं रुके: उन्होंने उच्च सुरक्षा वाले इलाके में स्थित नरीमन प्वाइंट पर उनके सरकारी बंगले पर धावा बोल दिया और उन्हें 'ढूंढने' की कोशिश की। जब वे उन्हें नहीं ढूंढ पाए, तो उन्होंने फर्नीचर तोड़ दिया और चले गए। भुजबल बाल-बाल बच गए और किसी तरह घर में छिपने में कामयाब रहे।
हिंसा की इस घटना ने शिवसेना सरकार को लगभग गिरा ही दिया था। विपक्ष की अनुच्छेद 356 लागू करने की मांग अंततः खारिज कर दी गई, लेकिन शिवसेना सरकार के पास बचाव का कोई बहाना नहीं था, खासकर तब जब पार्टी ने इस हमले की जिम्मेदारी गर्व से स्वीकार की।
धीरे-धीरे यह स्पष्ट होता गया कि ठाकरे स्वयं सरकार से, और विशेष रूप से अपने द्वारा नियुक्त मुख्यमंत्री से बिल्कुल भी खुश नहीं थे।
रेबेका मार्क की यात्रा को लेकर उनके और जोशी के बीच पहले ही विवाद हो चुका था। एक और असहमति तब हुई जब अमेरिका यात्रा के दौरान जोशी ने राज्य सरकार को हिंदुजा समूह के साथ हवाई अड्डा निर्माण के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने का सुझाव दिया। शिवसेना प्रमुख ने अपने मुख्यमंत्री से कहा कि जनता के लिए इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य किए जाने हैं: हवाई अड्डा सबसे मूलभूत आवश्यकता नहीं है, भोजन, वस्त्र और आवास तो और भी अधिक आवश्यक हैं।
1995-97 के पूरे समय के दौरान, शिवसेना के मुखपत्र सामना का लहजा ऐसा था मानो ठाकरे अपने आदेशों का 'दूर से नियंत्रण' करके पालन करवाने की कोशिश कर रहे हों। अपने मुखपत्र के माध्यम से उन्होंने सरकार, और विशेष रूप से जोशी की, नौकरशाही की 'अड़ियलता' और कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने में उसकी अक्षमता के लिए जमकर आलोचना की। उन्होंने इस बात पर नाराजगी जताई कि 'पवार समर्थक' नौकरशाहों पर लगाम नहीं लगाई जा रही थी, जबकि उन्हें ऐसा करने के निर्देश दिए गए थे। लेकिन सरकार पर हमला बोलते हुए भी, ठाकरे ने कम से कम पहले ढाई वर्षों में यह सुनिश्चित किया कि उनका धैर्य एक सीमा से अधिक न हो।
मार्च 1998 के लोकसभा चुनावों में शिवसेना की करारी हार के बाद वह सीमा पार हो गई। कांग्रेस ने महाराष्ट्र में 40 सीटें जीतीं, जबकि शिवसेना- भाजपा गठबंधन, जिसके पास पहले 33 सीटें थीं, को केवल 8 सीटें ही मिलीं। ठाकरे ने कहा कि उनके कुछ लोगों, यानी सरकार में बैठे लोगों के 'अहंकार' के कारण हार हुई, और सामना¹⁴⁹ को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने मुख्यमंत्री के खिलाफ जमकर हमला बोला।
जिस बात ने उन्हें विशेष रूप से नाराज किया, वह यह थी कि शरद पवार के नेतृत्व वाली कांग्रेस से राज्य में चुनाव हारने के तुरंत बाद, जोशी ने पवार की प्रशंसा करते हुए कहा था कि वे कांग्रेस संसदीय दल के नेता बनने के योग्य हैं। इसके अलावा, जोशी ने अपनी पीठ थपथपाते हुए कहा था कि उन पर भ्रष्टाचार का कोई आरोप नहीं है।

इस समय तक, ठाकरे को शिकायतें मिल चुकी थीं कि जोशी बिल्डरों की लॉबी को बढ़ावा दे रहे हैं, और उन्होंने एक 'मिनी-मुख्यमंत्री' के अस्तित्व के बारे में भी सुना था, जो कथित तौर पर एक बिल्डर के साथ मिलकर मुंबई में जबरन वसूली कर रहा था। जोशी के उस बयान का जिक्र करते हुए कि पवार उन पर कभी हमला नहीं करेंगे, ठाकरे ने कहा:

आप ये गारंटी कैसे दे सकते हैं? किस आधार पर?… क्या ऐसे लोगों के करीब रहना चाहिए? उसे (जोशी को) खुद से पूछना चाहिए: क्या ये उचित है? इसका मतलब है कि मुझे दुश्मनी स्वीकार करनी चाहिए। आप अपने दोस्तों को बरकरार रखेंगे। दोस्त अभी भी कायम हैं। मुझे पता है। मैं अंधेरे में नहीं रहता।

जोशी के इस दावे के बावजूद कि उनके खिलाफ भ्रष्टाचार के कोई आरोप नहीं लगाए गए थे, सच्चाई यह थी कि उन पर और उनके बेटे पर आरोप लगाए गए थे। इस पर ठाकरे ने कहा:

इन आरोपों का जवाब मुख्यमंत्री को देना चाहिए। मैं इसमें क्यों दखल दूं? जब मुझ पर और मेरे परिवार पर आरोप लगाए जा रहे थे, तब कोई भी हमारी रक्षा के लिए आगे नहीं आया। मैं इस मामले में हस्तक्षेप नहीं करूंगा, क्योंकि इन आरोपों का जवाब सिर्फ उन्हीं के पास होगा।

इतना ही नहीं, ठाकरे ने खुद भी भ्रष्टाचार के आरोप लगाए:

मुझे पक्का पता है कि राज दादरकर नाम का एक व्यक्ति मुख्यमंत्री के नाम पर हंगामा मचा रहा है। मुझे नहीं पता कि जोशी उसे जानता है या नहीं, लेकिन वह तो बिल्कुल ही बेकाबू हो गया है। यह आदमी मुख्यमंत्री के लिए बहुत महंगा साबित हो सकता है। मुझे अनगिनत किस्से सुनने को मिले हैं। कुछ मामलों में, इस आदमी ने पैसे तो ले लिए, लेकिन काम नहीं किया। कुछ मामलों में तो उसने 40 लाख रुपये तक ले लिए हैं। जिन लोगों ने उसे पैसे दिए थे, उनमें से कुछ मुझसे मिले और शिकायत की... मुख्यमंत्री को खुद देखना चाहिए कि वह किन लोगों के करीब हैं।

पवार के साथ जोशी की कथित निकटता के बारे में उन्होंने कहा:

अगर मेरे मुख्यमंत्री पवार समर्थक हैं, तो उन्हें इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी। मैं ये बात साफ-साफ कह रहा हूँ। अगर मेरे मुख्यमंत्री पवार समर्थक हैं, तो मुझे उनके बारे में दोबारा सोचना पड़ेगा। मैं किसी को नहीं छोडूंगा। आखिर, आप उन लोगों से दोस्ती रखते हैं जो हमें खत्म करना चाहते

हैं। ये कैसे मुमकिन है? मैं यहाँ दिन-रात काम करता हूँ, और आप इतराते हुए दुश्मनों के करीब जाते हैं।

ठाकरे ने शिवसेना के एजेंडे को आगे बढ़ाने में सरकार की अक्षमता की आलोचना की और घोषणा की कि उन्होंने कुछ समय के लिए सक्रिय राजनीति से संन्यास लेने का फैसला किया है। उन्होंने चिढ़कर कहा कि इस दौरान सरकार में बैठे लोग जो चाहें कर सकते हैं।
सैनिक तुरंत बड़ी संख्या में मातोश्री की ओर दौड़ पड़े और 'साहब हावेत, सरकार नाको' के नारे लगाने लगे। उन्होंने ठाकरे के आवास पर शिवसेना प्रमुख से अपना फैसला वापस लेने का अनुरोध करने आए शिवसेना मंत्रियों और विधायकों को धमकाया, गाली दी और यहां तक कि उनके साथ मारपीट भी की।
1998 के मध्य में, 1992-93 के मुंबई दंगों पर श्रीकृष्णा आयोग की रिपोर्ट विधानसभा में पेश की गई। जनवरी 1993 में गठित इस आयोग को शिवसेना-भाजपा गठबंधन के सत्ता में आने के तुरंत बाद भंग कर दिया गया था, लेकिन प्रधानमंत्री ए.बी. वाजपेयी के 1996 के 13 दिवसीय शासनकाल के दौरान उनके हस्तक्षेप के बाद इसे पुनर्जीवित किया गया था।
अपनी 700 पन्नों की रिपोर्ट में, न्यायमूर्ति श्रीकृष्ण ने 31 पुलिसकर्मियों और बाल ठाकरे सहित कई शीर्ष नेताओं को दोषी ठहराया था। रिपोर्ट में कहा गया था, 'ठाकरे ने एक अनुभवी जनरल की तरह काम किया, जो अपने वफादार शिवसैनिकों को मुसलमानों के खिलाफ संगठित हमलों के जरिए जवाबी कार्रवाई करने का आदेश दे रहा था।'
जोशी ने रिपोर्ट को 'पक्षपातपूर्ण और हिंदू विरोधी' बताया और अपने राजनीतिक गुरु तथा शिवसेना का बचाव किया (भाजपा ने असहमति जताते हुए कहा कि पार्टी को रिपोर्ट में पक्षपात की कोई आशंका नहीं है)। हालांकि, इससे ठाकरे और जोशी के बीच शांति कुछ ही समय के लिए कायम रह पाई।
सितंबर 1998 में, ठाकरे ने अपनी सरकार पर फिर से आरोप लगाते हुए कहा कि राज्य में निवेश कम हो गया है और नया निवेश आंध्र प्रदेश की ओर जा रहा है। उन्होंने जोशी पर यह कहकर भी तीखा प्रहार किया कि आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू 'तूफान की तरह आगे बढ़ रहे हैं'। जोशी ने स्पष्ट करने की कोशिश की कि किसी ने ठाकरे को गलत जानकारी दी होगी और कहा कि वे शिवसेना प्रमुख से मिलकर सही स्थिति स्पष्ट करेंगे, लेकिन तब तक उनके और उनके गुरु के बीच मतभेद बहुत गहरा चुका था।
जब बॉम्बे हाई कोर्ट में एक मामला दायर किया गया जिसमें आरोप लगाया गया कि पुणे में एक स्कूल के लिए आरक्षित भूखंड को मुख्यमंत्री के दामाद गिरीश व्यास के मल्टीप्लेक्स को जगह देने के लिए अवैध रूप से अनारक्षित कर दिया गया था, तो ठाकरे ने स्पष्ट कर दिया कि मुख्यमंत्री के खिलाफ अदालत द्वारा किसी भी प्रकार की कड़ी टिप्पणी से उन्हें पद से हटा दिया जाएगा।
जोशी को अंततः 1999 की शुरुआत में शिवसेना के अंदाज में हटा दिया गया: ठाकरे ने मुख्यमंत्री के आधिकारिक आवास, वर्षा में एक दूत के साथ दो पंक्तियों का पत्र भेजा, जिसमें उनसे राज्यपाल को अपना इस्तीफा सौंपने के लिए कहा गया था।
ठाकरे-जोशी विवाद के अलावा, 1998 में शिवसेना सरकार में अन्य तनाव भी पनप रहे थे, और लगातार शर्मिंदगी बढ़ती जा रही थी।

उसी साल मई में मंत्रिमंडल में फेरबदल से कुछ दिन पहले, जोशी ने शिवसेना के पर्यावरण और वन मंत्री गणेश नाइक से इस्तीफा देने को कहा। नाइक ने जो किया वह शिवसेना में अक्षम्य था: उन्होंने इस निर्देश पर सवाल उठाया। तीन दिन बाद, उन्हें बर्खास्त कर दिया गया।
नाइक ने जल्द ही शिवसेना के 24 पार्षदों की मदद से नवी मुंबई नगरी विकास अघाड़ी का गठन किया, जिन्होंने नाइक का समर्थन करने के लिए पार्टी से संबंध तोड़ लिए थे। जब अघाड़ी ने महापौर चुनाव में अपना उम्मीदवार खड़ा किया और नवी मुंबई नगर निगम पर नियंत्रण हासिल कर लिया, तो ठाकरे ने नाइक को कमजोर करने के लिए नवी मुंबई में पत्थर खनन पर रोक लगा दी। शिवसेना नेतृत्व का तर्क था कि नवी मुंबई क्षेत्र में पत्थर खनन पर नाइक की पकड़ तोड़कर, उनकी ताकत के स्रोत को चोट पहुंचाई जा सकती है। लेकिन पत्थर खनन पर प्रतिबंध लगाने के कुछ ही दिनों के भीतर, जोशी को यह निर्णय वापस लेना पड़ा। इस प्रतिबंध के कारण हजारों युवाओं की नौकरियां चली गईं, जिनमें से अधिकांश शिवसेना के सदस्य थे।
बाद में नाइक पवार की राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी में शामिल हो गए। इसके तुरंत बाद, राज्यसभा चुनावों के दौरान दो निर्दलीय उम्मीदवारों के पक्ष में शिवसेना विधायकों द्वारा क्रॉस वोटिंग करने से शिवसेना सरकार को शर्मिंदगी का सामना करना पड़ा। जल्द ही यह बात सामने आई कि शिवसेना के ही सदस्य मुकेश पटेल ने कुछ शिवसेना विधायकों को पार्टी के आदेश का उल्लंघन करने के लिए उकसाने में अहम भूमिका निभाई थी। पटेल को सिर्फ 'चेतावनी' देकर छोड़ दिया गया। शिवसेना ने उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की।¹⁵⁰
हालात और भी बदतर हो गए जब शिवसेना के दो मंत्रियों, सुरेश नवले और गुलाबराव गावंडे ने आरोप लगाया कि उन्हें उन सैनिकों से धमकियां मिली हैं जिन्हें लगता था कि वे पार्टी छोड़ने वाले हैं। बाद में नवले और गावंडे दोनों गणेश नायक के खेमे में शामिल हो गए।
जुलाई 1998 में, शिवसेना सरकार को बांग्लादेश से कथित तौर पर अवैध रूप से आए 28 प्रवासियों को निर्वासित करने के अपने फैसले के बाद शर्मिंदगी उठानी पड़ी। मुंबई पुलिस की एक टीम इन प्रवासियों को लेकर बांग्लादेश सीमा की ओर जा रही थी, तभी एक भीड़ ने उस ट्रेन पर धावा बोल दिया जिसमें वे यात्रा कर रहे थे और निर्वासित किए जा रहे लोगों को बचा लिया। पश्चिम बंगाल की कम्युनिस्ट सरकार ने महाराष्ट्र सरकार को सूचित किया कि 'प्रथम दृष्टया यह पता चला है कि महाराष्ट्र पुलिस द्वारा लाए गए कुछ निर्वासित पश्चिम बंगाल के कुछ जिलों के भारतीय नागरिक थे',¹⁵¹ और गृह मंत्री एल.के. आडवाणी ने संसद को बताया कि ज्योति बसु सरकार ने 'महाराष्ट्र सरकार को प्रवासियों को निर्वासित करते समय पश्चिम बंगाल पुलिस के साथ उचित समन्वय सुनिश्चित करने की सलाह दी थी'।¹⁵² मुख्यमंत्री जोशी ने विरोध किया, लेकिन कलकत्ता उच्च न्यायालय ने कुछ निर्वासितों द्वारा दायर एक याचिका पर कार्रवाई करते हुए केंद्र को उन्हें निर्वासित करने से रोक दिया।
सरकार की एकमात्र सफलता गैंगस्टरों के खिलाफ लड़ाई में दिखी। 1998 में मुंबई में अंडरवर्ल्ड की गतिविधियां चरम पर पहुंच गईं। जबरन वसूली के लिए हत्याएं, गिरोहों के बीच आपसी दुश्मनी और गोलियों से निपटाए गए विवादों के कारण गोलीबारी की घटनाएं रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच गईं। सरकार ने कुछ समय तक यह दावा किया कि कानून-व्यवस्था ठीक है और आम आदमी सुरक्षित है, और बाद में संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम लागू किया। इसके साथ ही, उसने पुलिस मुठभेड़ों की नीति को भी मंजूरी दे दी। शिवसेना के शासनकाल में सबसे

ज्यादा मुठभेड़ें हुईं, और मुठभेड़ विशेषज्ञों को कुछ समय के लिए हीरो माना गया (हालांकि बाद में जब यह खुलासा हुआ कि कई मुठभेड़ें फर्जी थीं और आरोप लगे कि विभिन्न पुलिसकर्मी अलग-अलग गिरोहों की ओर से काम कर रहे थे और प्रतिद्वंद्वी गिरोहों के सदस्यों को मार रहे थे, तो उनमें से ज्यादातर की विश्वसनीयता धूमिल हो गई)।
इस बीच, सरकार से बाहर के सैनिकों ने मार्च 1998 में ठाकरे द्वारा राजनीतिक संन्यास लेने की इच्छा व्यक्त करने के बाद से ही अपनी पार्टी की सरकार के लिए परेशानी खड़ी करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी।
उसी साल अप्रैल में, उन्होंने मुंबई के होटल सेंटॉर में पाकिस्तानी ग़ज़ल गायक गुलाम अली के संगीत कार्यक्रम में बाधा डाली थी। इस हमले के लिए शिवसेना सरकार की कड़ी आलोचना हुई, लेकिन ठाकरे के बेटे उद्धव ने सैनिकों का बचाव करते हुए कहा, 'भारतीय सैनिक प्रतिकूल परिस्थितियों में हमारी सीमाओं की रक्षा कर रहे हैं। पाकिस्तानी सैनिक गोलीबारी कर रहे हैं। और कुछ लोग पाकिस्तानी कलाकार के साथ ग़ज़लों की शाम का आनंद लेना चाहते हैं।'¹⁵³
दिसंबर 1998 में, दो प्रमुख 'आंदोलन' हुए: एक, दीपा मेहता की समलैंगिकता पर बनी फिल्म 'फायर' के खिलाफ, और दूसरा, पाकिस्तान के भारत के प्रस्तावित क्रिकेट दौरे के खिलाफ।
दिलीप कुमार के घर के बाहर 'फायर' और 'सैनिक हाफ-मोंटी' फिल्मों की स्क्रीनिंग कर रहे सिनेमाघरों पर हमले हुए। ये हमले फिल्म के समर्थन और फिल्म की स्क्रीनिंग के लिए सुप्रीम कोर्ट में दायर याचिका में उनकी भूमिका के कारण हुए थे। इन हमलों के चलते शिवसेना पर आरोप लगे कि वह समाज की सांस्कृतिक स्वीकृति को निर्धारित करने के लिए अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर रही है। सरकार को पार्टी के इस रुख को समझाना मुश्किल लगा, खासकर शो में बाधा डालने और संपत्ति को नष्ट करने के मामले में।
शिवसेना की बर्बरता की सबसे भीषण घटनाओं में से एक मुंबई में भारतीय क्रिकेट बोर्ड के मुख्यालय पर हमला था। सैनिकों ने बीसीसीआई कार्यालय में घुसकर फर्नीचर तोड़ दिया और प्रूडेंशियल विश्व कप ट्रॉफी को भी नुकसान पहुंचाया, जिसे भारत ने 1983 में पहली बार जीता था। उद्धव ने हमले में शिवसेना की संलिप्तता से इनकार किया, लेकिन गठबंधन सरकार ने इस घटना के लिए 14 सैनिकों को गिरफ्तार कर लिया।
जनवरी 1999 की शुरुआत में, दिल्ली में शिवसैनिकों ने फिरोजशाह कोटला स्टेडियम की पिच खोद दी।
इसी समय शिवसेना और भाजपा के बीच मतभेद भी चरम पर पहुँच रहे थे। भाजपा के एक पदाधिकारी ने ठाकरे की पसंदीदा परियोजना, मुफ्त आवास योजना की वित्तीय व्यवहार्यता पर सवाल उठाया था; शिवसेना ने गांधी के हत्यारे का बचाव करने वाले मराठी नाटक 'मी नाथुराम गोडसे बोलतोय' पर प्रतिबंध का विरोध किया था, जबकि भाजपा का मानना था कि यह उचित था; भाजपा के वित्त मंत्री ने शिवसेना के मुख्यमंत्री को पत्र लिखकर राज्य की खतरनाक वित्तीय स्थिति के बारे में चेतावनी दी थी, लेकिन मुख्यमंत्री ने दावा किया था कि राज्य संकट के कगार पर नहीं है; मुख्यमंत्री और उपमुख्यमंत्री ने संयुक्त प्रेस कॉन्फ्रेंस करना बंद कर दिया था। शिवसेना सांसद संजय निरुपम ने टाटा एयरवेज परियोजना के ठप होने के लिए भाजपा नेता प्रमोद महाजन को दोषी ठहराते हुए आरोप लगाया था कि महाजन ने जेट एयरवेज के हितों की रक्षा के लिए नागरिक उड्डयन नीति को तोड़-मरोड़ कर पेश किया। इस पर आक्रोशित महाजन ने

जवाब देते हुए कहा था, ‘उकसावे के बावजूद मैं खुद को संयमित रखने की कोशिश कर रहा था, लेकिन मुझे यह स्वीकार करना होगा कि किसी न किसी कारण से गठबंधन सहयोगियों के बीच संबंध खराब हो गए हैं।’¹⁵⁴ इसके बाद किसानों को मुफ्त बिजली देने को लेकर विवाद खड़ा हुआ: ठाकरे ने मुख्यमंत्री को राज्य के 24 लाख किसानों को ‘किसी भी कीमत पर’ मुफ्त बिजली देने का ‘निर्देश’ दिया था, लेकिन ऊर्जा मंत्रालय का प्रभार संभाल रहे मुंडे ने इसका विरोध करते हुए कहा था कि इससे पहले से ही गिरती अर्थव्यवस्था पर 2,380 करोड़ रुपये का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा। तब ठाकरे ने राज्य बिजली बोर्ड पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाया था।
पाकिस्तान के प्रस्तावित क्रिकेट दौरे को लेकर सबसे खराब राजनीतिक दांव-पेच खेले गए। ठाकरे ने कहा कि वे पाकिस्तान को भारत में खेलने नहीं देंगे, वहीं उपमुख्यमंत्री मुंडे और प्रधानमंत्री ए.बी. वाजपेयी ने पाकिस्तानी टीम को सुरक्षा का आश्वासन दिया। वाजपेयी ने तो यहाँ तक कह दिया कि 'किसी भी व्यक्ति या संगठन को पाकिस्तानी टीम के रास्ते में बाधा डालने की अनुमति नहीं दी जाएगी'। उपप्रधानमंत्री और केंद्रीय गृह मंत्री आडवाणी द्वारा मुंबई में मुलाकात और समझाने-बुझाने के बाद ठाकरे ने अंततः अपना 'आंदोलन' वापस ले लिया।
12 मार्च 1999 को बॉम्बे उच्च न्यायालय ने 'गिरीश व्यास भूमि घोटाला' मामले में मनोहर जोशी के खिलाफ कड़ी टिप्पणियां कीं।¹⁵⁵ जोशी को मुख्यमंत्री और शहरी विकास मंत्री के रूप में अपनी कार्यकारी शक्तियों का दुरुपयोग करते हुए पुणे में अपने दामाद के मल्टीप्लेक्स के लिए एक स्कूल की ज़मीन को अवैध रूप से आरक्षित करने और सुनवाई के दौरान अदालत को 'गुमराह' करने का दोषी पाया गया। यह फैसला शिवसेना-भाजपा सरकार के लिए एक बड़ा झटका था, लेकिन अगर जोशी तब भी मुख्यमंत्री होते तो यह झटका और भी बड़ा होता।
अंततः देखा जाए तो, हालांकि ठाकरे ने कहा था कि उन्हें गति सरकार चाहिए, न कि केवल युति सरकार, लेकिन सरकार ने बॉम्बे का नाम बदलकर मुंबई या सहार हवाई अड्डे का नाम बदलकर छत्रपति शिवाजी हवाई अड्डा करने जैसे कार्यों को उतनी तेजी से नहीं किया। शहर का नामकरण तो सरकार ने सत्ता में आने के पहले ही वर्ष में कर दिया, लेकिन कुल मिलाकर, विभिन्न मोर्चों पर सरकार की प्रगति धीमी रही, जबकि सरकार और उसके 'दूरस्थ नियंत्रण' के बीच संघर्ष बढ़ता ही गया और शिवसेना ने कानून के दायरे से बाहर जाकर सरकार को लगातार शर्मिंदा किया। पहली बार महाराष्ट्र राजस्व घाटे वाला राज्य बनने के खतरे में दिखाई दिया, कृष्णा घाटी विकास निगम की विशाल सिंचाई योजना वित्तीय कुप्रबंधन के लिए जांच के दायरे में आ गई, 'टैंकर-मुक्त महाराष्ट्र' की घोषणा अन्य कई घोषणाओं की तरह कागजों पर ही रह गई, और इसका परिणाम यह हुआ कि 1999 के विधानसभा चुनावों में शिवसेना सत्ता से बाहर हो गई, जबकि कांग्रेस और शरद पवार द्वारा उसी वर्ष गठित राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी ने विधानसभा चुनाव अलग-अलग लड़े थे।¹⁵⁶
शिवसेना को 2004 और 2009 में हुए दो विधानसभा चुनावों में भी हार का सामना करना पड़ा, हालांकि कांग्रेस-एनसीपी की सरकार का प्रदर्शन संतोषजनक नहीं था। 2009 में, शिवसेना ने मुख्य विपक्षी दल का दर्जा और विपक्ष के नेता का पद भी भाजपा के हाथों खो दिया, जिसे अधिक सीटें मिली थीं।

31

RAJ VERSUS UDDHAV

थे। वहीं दूसरी ओर, उद्धव, जिनकी उस समय राजनीति में कोई खास रुचि नहीं थी, शर्मीले और अंतर्मुखी स्वभाव के थे। उन्हें अपनी संगति और अपने कैमरे से लगाव था।
राज ने यह सुनिश्चित किया कि बीवीएस को एक आक्रामक संगठन के रूप में देखा जाए, और यह मुंबई के कॉलेजों में प्रतिद्वंद्वी छात्र समूहों के बीच होने वाली झड़पों का एक हिस्सा बन गया। यह वह दौर भी था जब शिवसेना, हिंदुत्व को अपनाकर, तेजी से बढ़ रही थी, इसलिए बहुत से युवा इसके युवा विंग और राज द्वारा प्रतिनिधित्व और समर्थित जोश की ओर आकर्षित हुए।
राज द्वारा बीवीएस का नियंत्रण संभालने के एक साल बाद, ठाकरे ने अपना अखबार सामना शुरू किया। राज ने अखबार के लिए कार्टून और रेखाचित्र बनाना शुरू किया और साथ ही मध्य मुंबई के प्रभादेवी स्थित अखबार के कार्यालयों की पहली मंजिल पर एक कोना भी किराए पर ले लिया।
राज ने 1990 के राज्य चुनावों में अपने चाचा के प्रचार अभियान में भाग लिया, और 1995 में उनकी भागीदारी और भी अधिक बढ़ गई, जब ठाकरे के कांग्रेस पर लगातार हमलों ने शिवसेना को सत्ता में ला खड़ा किया। उद्धव 1991 में सार्वजनिक रूप से कम ही दिखाई देते थे, क्योंकि वे फोटोग्राफी में व्यस्त थे। 1995 के चुनाव अभियान से पहले के वर्षों में - विशेष रूप से 1993 के बाद - उन्होंने इस शौक को राजनीतिक क्षेत्र में भी जारी रखा: वे अपने पिता के साथ रैलियों में जाने लगे ताकि वे सुविधाजनक स्थानों पर बैठकर तस्वीरें ले सकें। इस दौरान वे मंच पर लगभग कभी नहीं बैठे, बल्कि मंच पर होने वाली हर गतिविधि की तस्वीरें खींचने में ही आनंदित रहे।
1995 के चुनाव प्रचार के दौरान राजनीति में उनकी रुचि जागृत होती दिखी, लेकिन तब भी उन्होंने ज्यादातर पर्दे के पीछे रहना ही बेहतर समझा। हालांकि, शिवसेना के सत्ता में आने के बाद उन्होंने पर्दे के पीछे सक्रिय भूमिका निभाना शुरू कर दिया। सितंबर 1995 में उनकी माता मीना-ताई के निधन और 1996 के पहले छमाही में एक सड़क दुर्घटना में उनके बड़े भाई बिंदुमाधव (फिल्म निर्माता, जिन्होंने मनीषा कोइराला और नाना पाटेकर अभिनीत बॉलीवुड फिल्म अग्निपरीक्षा का निर्माण किया था) के निधन के बाद उद्धव अपने पिता के और भी करीब आ गए। अब उनसे कई मामलों पर सलाह ली जाती थी और वे स्वेच्छा से सुझाव देते थे।
शिवसेना के सत्ता में आने के एक साल के भीतर ही राज रमेश किनी की मृत्यु को लेकर विवाद में फंस गए (पृष्ठ 219 देखें)। शिवसेना के शासनकाल में परिषद में विपक्ष के नेता रहे पूर्व सैनिक छगन भुजबल ने इस मुद्दे को उठाया और ठाकरे परिवार को बचाव की मुद्रा में लाने की कोशिश की।
ठाकरे सीनियर ने आक्रामक ढंग से जवाब देते हुए कहा कि राज को फंसाया जा रहा है, और विवाद के बीच कुर्ला में उपचुनाव प्रचार के दौरान (शिवसेना वह सीट हार गई), उन्होंने गुस्से में पूछा, 'यह किनी कौन है? क्या वह महात्मा थे?' बाद में सीबीआई जांच में राज को दोषमुक्त कर दिया गया, लेकिन इस विवाद का उनके राजनीतिक करियर पर असर पड़ा।
इसके तुरंत बाद एक और विवाद सामने आया जिसने मामले को और भी जटिल बना दिया। राज ने महाराष्ट्र के युवाओं को रोजगार प्रदान करने के उद्देश्य से शिवसेना के सत्ता में आने के बाद गठित संगठन शिव उद्योग सेना के लिए धन जुटाने के लिए इवेंट आयोजक विज़क्राफ्ट के सहयोग से मुंबई में माइकल जैक्सन के संगीत कार्यक्रम का आयोजन करने का फैसला किया।

शिवसेना को कड़ी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। बाल ठाकरे ने खुलेआम पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित भारतीय युवाओं का उपहास किया था और यहां तक कि जन्मदिन पर केक काटने की प्रथा का भी मजाक उड़ाया था। शिवसेना के आलोचकों का कहना था कि उनकी पार्टी एक पॉप स्टार, पश्चिमी संस्कृति के प्रतीक का स्वागत कर रही है, जो उन सभी चीजों का प्रतिनिधित्व करता है जिनका शिवसेना विरोध करती है।
शिवसेना प्रमुख का रवैया अड़ियल था – यहाँ तक कि उन्होंने जैक्सन के शौचालय के इस्तेमाल पर मज़ाकिया अंदाज़ में गर्व भी जताया। उस बयान को आज भी अक्सर उद्धृत किया जाता है, लेकिन उन्होंने उस समय एक और बात कही थी जो अब भुला दी गई है। मीडिया द्वारा पूछे जाने पर कि जैक्सन पुरुष है या महिला, ठाकरे ने कहा, 'वह कहीं बीच में है।'
कॉन्सर्ट से पहले एक पुराना पारिवारिक विवाद भी परेशानी का सबब बन गया। कार्यक्रम स्थल, अंधेरी स्पोर्ट्स कॉम्प्लेक्स, पहले ठाकरे के अलग रह रहे भाई रमेश को एक कार्यक्रम के लिए दिया गया था। जब जैक्सन के कॉन्सर्ट को मंजूरी मिल गई, तो रमेश ने खुद को आग लगाने की धमकी दी, लेकिन उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद करीबी पारिवारिक मित्रों ने बीच-बचाव करने की कोशिश की।
पुलिस ने बताया कि 1 नवंबर 1996 को आयोजित संगीत कार्यक्रम में 70,000 लोग शामिल हुए थे, लेकिन आयोजक विज़क्राफ्ट ने कहा कि उन्होंने केवल 16,000 टिकट बेचे थे। शिव उद्योग सेना को इस कार्यक्रम से 4 करोड़ रुपये जुटाने थे, लेकिन राज ने कहा कि उन्हें आलोचना के अलावा कुछ नहीं मिला। राज ने चंदा इकट्ठा करने के लिए 1997 में उसी स्थान पर लता मंगेशकर का एक संगीत कार्यक्रम आयोजित किया। यह सफल रहा, लेकिन इन बड़े आयोजनों ने असल में राज और उद्धव के बीच शीत युद्ध की शुरुआत कर दी। 1995 से ही पार्टी की राजनीति में सक्रिय रहने के कारण उद्धव का अपना एक गुट बन चुका था; और राज, जो पहले से ही पार्टी में वस्तुतः दूसरे नंबर पर थे, उनके अपने समर्थकों का एक समूह था। उद्धव के गुट को इन बड़े आयोजनों से आपत्ति थी, क्योंकि उनका मानना था कि इनसे शिव उद्योग सेना को रोजगार के वादे को पूरा करने में कोई सफलता नहीं मिली; और राज के गुट को यह बात पसंद नहीं आई कि बेटे के उदय से पार्टी में उनके नेता की स्थिति को चुनौती मिल रही है।
वे जल्द ही एक-दूसरे से अलग हो गए, और जब तक शिवसेना ने 1999 में सत्ता खोई, तब तक पार्टी में दो खुले तौर पर प्रतिस्पर्धी धाराएं थीं - एक जो बालासाहेब के उत्तराधिकारी के रूप में राज के पक्ष में थी, और दूसरी जो उद्धव का समर्थन करती थी।
ये दोनों नेता सिर्फ अलग-अलग समूहों का प्रतिनिधित्व ही नहीं करते थे; बल्कि उनके काम करने का तरीका भी बिलकुल भिन्न था। राज अपनी वाक्पटुता, करिश्मा और जनमानस को अपने वश में रखने की क्षमता पर बहुत अधिक निर्भर थे; वहीं उद्धव को एक शांत प्रशासक और कम चर्चित आयोजक के रूप में जाना जाता था। शिवसेना के कुछ अंदरूनी सूत्रों का कहना था कि ये दोनों तरीके परस्पर विरोधी नहीं थे। उनका तर्क था कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हो सकते थे – एक जनता से निपट सकता था तो दूसरा संगठनात्मक नेटवर्क को मजबूत कर सकता था; लेकिन उनकी महत्वाकांक्षाएं आपस में टकरा गईं।
एक तीसरी धारा भी थी, जिसका प्रतिनिधित्व ठाकरे के सबसे बड़े बेटे जयदेव की अलग रह रही पत्नी स्मिता ठाकरे कर रही थीं। शिवसेना के सत्ता में रहने के दौरान स्मिता मातोश्री में रहती थीं और खुद भी एक प्रभावशाली

व्यक्तित्व बन गई थीं। उन्होंने हिंदी फिल्मों के निर्माण में सफलता हासिल की और कुछ समय के लिए पार्टी मामलों में भी अपना दबदबा बनाए रखा। लेकिन उद्धव ठाकरे के सदन और पार्टी दोनों में लगातार मजबूत होते जाने के कारण, पार्टी मंचों पर उनकी भूमिका कुछ समय के लिए ही गंभीर चुनौती बनी रही। 2009-10 के आसपास उन्होंने कांग्रेस में शामिल होने की इच्छा जताई थी और कहा था कि उन्हें सोनिया गांधी के नेतृत्व पर भरोसा है, लेकिन कांग्रेस की ओर से उनके प्रस्तावों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं आई है।
राज 1998-99 से अपने चाचा और करीबी दोस्तों से निजी तौर पर शिकायत करते रहे थे कि पार्टी के मामलों में उनकी कोई खास भूमिका नहीं रह गई है। वर्ष 2000 में, उन्हें और भी अधिक हाशिए पर धकेल दिया गया, और अगले दो वर्षों में, उन्हें लगा कि उन्हें जानबूझकर अलग-थलग रखा जा रहा है और, उनके लिए इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह थी कि उन्हें अपने वफादारों को पार्टी पदाधिकारी नियुक्त करने की अनुमति नहीं दी जा रही थी। उन्हें लगा कि उनके अनुयायियों को उनके प्रभाव को कम करने के लिए दरकिनार किया जा रहा है। उन्होंने नासिक में अधिकाधिक समय बिताना शुरू कर दिया, जिसे वे अपना गढ़ बनाना चाहते थे, क्योंकि उन्हें यह आभास हो गया था कि जिस तरह से हालात चल रहे हैं, अगर उन्होंने खुद इस क्षेत्र को विकसित करने के लिए काम नहीं किया तो जल्द ही उनके पास कोई निर्वाचन क्षेत्र नहीं बचेगा।
2002 में, उन्होंने पहली बार सार्वजनिक रूप से अपनी शिकायत दर्ज कराई और कहा कि उस वर्ष फरवरी में होने वाले मुंबई नगर निगम चुनावों के लिए पार्टी टिकट देने में उनकी कोई भूमिका नहीं थी। यह पहला चुनाव था जिसमें उद्धव ने अपनी मनमानी की और लगभग हर उम्मीदवार का चयन उन्हीं के हाथ में था। उम्रदराज ठाकरे ने चुपचाप उन्हें सत्ता सौंपने का फैसला कर लिया था। राज के किसी भी समर्थक को शायद ही कोई सीट मिली। शिवसेना ने चुनावों में शानदार जीत हासिल की और उद्धव को भारत की वित्तीय राजधानी पर शासन करने वाले नए नेता के रूप में सराहा गया।
सच तो यह है कि शिवसेना की जीत, जिसका जन आधार राज्य में सत्ता खोने के बाद से और ठाकरे की बढ़ती उम्र के कारण सार्वजनिक जीवन में सीमित भागीदारी के बाद से लगातार घटता जा रहा था, मुंबई नगर निगम चुनाव के सरल तर्क पर आधारित थी। मुंबई में 227 चुनावी वार्ड हैं, जिनमें से प्रत्येक में लगभग 40,000 मतदाता हैं। इनमें से 20,000 मतदाता कभी वोट नहीं देते। इसलिए, जो पार्टी अपने 5,000 वफादार मतदाताओं को मतदान केंद्र तक ले जाने में सक्षम होती है, वही अक्सर जीत जाती है। शिवसेना का संगठनात्मक नेटवर्क और समर्पित कार्यकर्ता ऐसा करने में सक्षम थे। वास्तव में, पार्टी तीन दशकों से इस तर्क का सफलतापूर्वक उपयोग कर रही थी, और यह 2002 में भी कारगर साबित हुआ। लेकिन जीत का श्रेय उद्धव को दिया गया, जिन्होंने एक सफल चुनाव अभियान चलाया और अपने उम्मीदवारों का चयन किया, जिनमें से कई नए थे।
नगर निगम चुनावों के बाद शिवसेना ने ठाकरे परिवार के चचेरे भाइयों के बीच की प्रतिद्वंद्विता को कम करने की कोशिश की, लेकिन 2003 की शुरुआत में उसने एक चर्चित अभियान चलाया जिसमें उद्धव को आधिकारिक तौर पर बाल ठाकरे का उत्तराधिकारी घोषित किया गया। मुंबई से 200 किलोमीटर से अधिक दूर स्थित पहाड़ी शहर महाबलेश्वर में आयोजित शिवसेना सम्मेलन में, राज ठाकरे ने स्वयं शिवसेना समर्थकों और पदाधिकारियों की भीड़ के सामने उद्धव का नाम पार्टी के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में प्रस्तावित किया, और भीड़ ने भी इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए जोरदार समर्थन दिया।

ठाकरे सीनियर आज तक इस बात पर कायम हैं कि यह घटना सुनियोजित नहीं थी। उन्होंने बताया, ‘जब मैं शाम को मंच पर गया [यानी, जब भीड़ ने राज के प्रस्ताव का समर्थन कर दिया था], तो मैंने अपने साथियों से पूछा कि वहां रखी इतनी सारी मालाएं किसके लिए हैं। उन्होंने मुझे बताया कि राज ने उद्धव को कार्यकारी अध्यक्ष नियुक्त करने का अनुरोध किया था, और वहां जमा हुए सैनिकों ने इसे मंजूरी दे दी थी। मैंने कहा, “आपने मुझे बिना बताए ऐसा कैसे किया?” और फिर सीधे भीड़ को संबोधित किया। मैंने पूछा, “क्या इस नियुक्ति को आपकी मंजूरी है? क्या आपने दबाव में हां कहा है? अगर हां, तो मैं नियुक्ति तुरंत रद्द कर दूंगा।” भीड़ ने कहा, “नहीं, नहीं, किसी ने हम पर दबाव नहीं डाला, हमने अपनी मर्जी से हां कहा है; बेशक, हम इसे मंजूरी देते हैं।” तभी मैंने हां कहा।’
राज ने बाद में भीड़ से की गई अपनी अपील को अपने राजनीतिक करियर की सबसे बड़ी गलती बताया और इसकी तुलना अपने ही पैरों पर पत्थर फेंकने से की। इस घटना के बाद उनके और उनके चचेरे भाई के बीच दूरियां और बढ़ गईं, और राज को यह महसूस होने लगा कि वह धीरे-धीरे और अधिक पराया होता जा रहा है।
इसी बीच, उद्धव के नेतृत्व पर भी विवाद शुरू होने लगे थे। 2002-03 में, उन्होंने 'मी मुंबईकर' (मैं मुंबईकर हूँ) नाम से एक अभियान चलाया, जिसका उद्देश्य मुंबई में एक बड़ा वोट बैंक बन चुके उत्तर भारतीयों को शिवसेना में लाना था। इससे शिवसेना का पारंपरिक जनसमर्थन उनसे दूर हो गया और इसे उन लोगों ने भी गलत बताया जो मानते थे कि भारत में राजनीति करने का एकमात्र तरीका बहुलवादी दृष्टिकोण ही है। राज के नेतृत्व वाली पार्टी की युवा शाखा ने इस अभियान को कमजोर करने में अपना योगदान दिया: विद्यार्थी सेना के कार्यकर्ताओं ने कल्याण रेलवे स्टेशन पर उत्तर भारतीय युवाओं के एक समूह पर हमला किया, जो रेलवे भर्ती परीक्षा देने के लिए इकट्ठा हुए थे। राज ने मांग की कि मराठी युवाओं को नौकरियों में प्राथमिकता मिलनी चाहिए और रेलवे पर राज्य में भर्ती अभियान के विज्ञापन प्रकाशित न करने का आरोप लगाया।
महाबलेश्वर सम्मेलन के बाद शिवसेना हलकों में उद्धव की अनुपलब्धता की शिकायतें व्यापक रूप से फैलने लगीं। लोग दबी आवाज़ में कहते थे कि वरिष्ठ शिवसेना नेताओं को भी मातोश्री में घंटों इंतज़ार करना पड़ता था, अक्सर व्यर्थ ही, और उद्धव के निजी सचिव का मामलों पर अनुचित नियंत्रण प्रतीत होता था: शिकायतकर्ताओं ने बताया कि वे निर्धारित समय पर मुलाकातें रद्द कर देते थे, मनमाने ढंग से बैठकें रद्द कर देते थे और कुछ मामलों में तो शिवसेना पदाधिकारियों की नियुक्तियों का निर्णय भी वही लेते थे। मातोश्री में बनी नई व्यवस्था के उदाहरण के रूप में 2004 में घटी एक घटना का भी ज़िक्र होने लगा।
मराठी मीडिया में खबर आई है कि महाराष्ट्र के एक सुदूर इलाके से वरिष्ठ शिवसैनिकों का एक प्रतिनिधिमंडल उद्धव से मिलने गया था। उन्हें पहले तो काफी देर तक इंतजार कराया गया और बाद में बताया गया कि उद्धव उनसे मिल नहीं सकते। प्रतिनिधिमंडल को कथित तौर पर बताया गया, 'साहब की पसंदीदा मछली, जिसे उन्होंने मंगवाया था, मर गई है और वे इससे दुखी हैं, इसलिए वे आपसे मिल नहीं सकते।'
2004 के विधानसभा चुनाव में शिवसेना की हार के बाद आलोचना और भी तीव्र हो गई, जिसका अभियान उद्धव ठाकरे के नेतृत्व में चलाया गया था, क्योंकि ठाकरे सीनियर पार्टी के दैनिक कामकाज से और भी अधिक अलग हो गए थे।

शिवसेना में अब दिशाहीनता का भाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था, और इसका पहला गंभीर परिणाम 2005 के मध्य में वरिष्ठ नेता नारायण राणे का पार्टी छोड़ना था।
राज ठाकरे के करीबी रहे राणे ने पहले कहा कि विधानसभा में विपक्ष के नेता और शिवसेना विधायक दल के नेता होने के बावजूद उन्हें पार्टी नेताओं की बैठकों में आमंत्रित नहीं किया जा रहा है। इसके लगभग तुरंत बाद, बांद्रा के रंगशारदा सभागार में आयोजित एक पार्टी सम्मेलन में, राणे ने सनसनीखेज दावा किया कि पार्टी के टिकट बेचे जा रहे हैं। वह अप्रत्यक्ष रूप से उद्धव ठाकरे पर उंगली उठा रहे थे। जब ठाकरे सीनियर ने उन्हें तुरंत पार्टी से निकाल दिया, तो उन्होंने कहा, 'मैंने सम्मेलन में अपनी बात रखी और उद्धव ने मुझे निशाना बनाया। मैं उन कार्यकर्ताओं को पेश करूंगा जिन्होंने पिछले चुनाव में टिकट के लिए पैसे दिए थे। उद्धव के सहायक ने सौदे करवाए थे। आज की शिवसेना बालासाहेब के सपनों की पार्टी नहीं है।'
स्पष्टतः, ऐसा नहीं था। जो भी पहले शिवसेना छोड़ चुका था, उसे पुलिस की शरण लेनी पड़ी थी। इस बार, दो शिवसेना नेताओं (जिनमें से एक राणे थे) के वफादारों के बीच मुंबई के उत्तर-पूर्वी इलाके चेंबूर में राणे के गढ़ में हाथापाई हुई और उन्होंने एक-दूसरे के दफ्तरों में तोड़फोड़ की। उन्होंने बालासाहेब से उनके 'पुत्र प्रेम' पर सवाल भी उठाया और 'धन-आधारित राजनीति' के अपने आरोप को दोहराया।
पार्टी में व्याप्त अव्यवस्था को देखते हुए, राणे ने जोखिम उठाने का फैसला किया। मनोहर जोशी, सुभाष देसाई, प्रमोद नवलकर और दत्ताजी नलवाडे जैसे कुछ शिवसेना नेताओं के विपरीत, कोंकण में अपने मजबूत जन आधार को देखते हुए, उन्होंने यह संदेश दिया कि वे बालासाहेब की छत्रछाया से उद्धव की छत्रछाया में जाने मात्र से संतुष्ट नहीं थे।
इस प्रकार, छगन भुजबल और गणेश नाइक के बाद, राणे जनसमर्थन और पार्टी कार्यकर्ताओं के बीच अच्छी पकड़ रखने वाले तीसरे नेता बन गए जिन्होंने शिवसेना छोड़ी।
राणे के इस्तीफे के कारण मालवन में हुए उपचुनाव में शिवसेना को शर्मनाक हार का सामना करना पड़ा। पार्टी के उम्मीदवार परशुराम उपार्कर बागी सैनिक के खिलाफ अपनी जमानत राशि खो बैठे।
उपचुनाव में हार के कुछ दिनों बाद, परिवार के मुखिया ने भी अलग होने का संकेत दिया। रविवार, 27 नवंबर 2005 को, राज ठाकरे ने शिवाजी पार्क स्थित कृष्णा कुंज बिल्डिंग में अपने आवास के बाहर अपने समर्थकों की एक अनौपचारिक सभा को संबोधित किया और कहा कि वे शिवसेना के सभी पदों (सेना नेता और युवा विंग के अध्यक्ष) से इस्तीफा दे रहे हैं। उन्होंने कहा कि वे अब भी अपने विठ्ठल (अपने आदर्श ठाकरे) के प्रति समर्पित हैं, लेकिन बड़वे (पुजारी) उन्हें देवता से दूर रखने की पूरी कोशिश कर रहे हैं। राज ठाकरे ने दावा किया कि बालासाहेब के करीबी लोगों ने उनके और उनके समर्थकों के खिलाफ शिवसेना प्रमुख के कान भरने की कोशिश की थी और आरोप लगाया कि चार करकून (क्लर्क) शिवसेना चला रहे हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि वे शिवसेना के पतन में भागीदार नहीं बनना चाहते और न ही किसी को शर्मिंदा करना चाहते हैं। अगले दिन सामना में ठाकरे ने स्तब्ध होकर जवाब दिया कि शिवसेना किसी की निजी संपत्ति नहीं है। उन्होंने कहा कि हिमालय की छाया में रहने वालों को यह नहीं सोचना चाहिए कि वे पर्वत से बड़े हैं। उन्होंने कहा कि जो भी शिवसेना को पीठ में छुरा घोंपता है, उसे सोचना चाहिए कि अगर शिवसेना न होती

तो उसकी क्या स्थिति होती। उन्होंने भतीजे और उसके अनुयायियों को याद दिलाया कि शिवाजी भी परिवार के भीतर के संघर्षों से परेशान थे और उन्होंने सोचा था कि ऐसे संघर्षों के सामने उनका राज्य कैसे टिकेगा।
राज के उग्र व्यवहार के बाद उनके नाराज समर्थकों ने शिवाजी पार्क में सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाया और यहां तक कि सामना के कार्यकारी संपादक संजय राउत की कार भी तोड़ दी, जो राज को शांत करने के लिए उनके घर गए थे। इस घटना का जिक्र करते हुए ठाकरे सीनियर ने कहा, 'जब भी शिवसेना संकट में होती है या विरोधी पार्टी पर हमला करते हैं, तो यह जोश गायब हो जाता है। अगर मालवन उपचुनाव में राणे के खिलाफ यही जोश दिखाया गया होता तो हमें अधिक खुशी होती।'
राज चुनाव प्रचार के लिए कोंकण की अपनी यात्रा से आधे रास्ते से ही लौट आए थे। बाद में उन्होंने दावा किया कि वे इसलिए लौटे क्योंकि उन्हें 'उन्हें खत्म करने' की साजिश की जानकारी मिली थी। यह आरोप भी राणे के खिलाफ नहीं बल्कि शिवसेना के अन्य सदस्यों के खिलाफ था।
राज के घर के बाहर हुए तमाम हंगामे के बावजूद, अधिकांश राजनीतिक पर्यवेक्षकों ने राज के शिवसेना छोड़ने की संभावना को खारिज कर दिया, खासकर सामना वाली टिप्पणी के एक दिन बाद ठाकरे के उस बयान के मद्देनजर जिसमें उन्होंने कहा था कि 'राज केवल मेरी बात सुनेगा'।
यहां मुझे यह कहना होगा कि मेरी भविष्यवाणी बिल्कुल सही निकली – और मैं यह इसलिए कह रहा हूं क्योंकि यह उन बहुत कम मौकों में से एक था जब मेरी बातें सही साबित हुईं। सभी राजनीतिक विश्लेषकों और पर्यवेक्षकों की तरह, मुझे भी भविष्यवाणियां करना पसंद है, और वे लगभग हमेशा गलत साबित होती हैं। आम तौर पर, विभिन्न संभावनाओं पर विचार करना पड़ता है, लेकिन इस बार मुझे पूरा यकीन था कि राज शिवसेना छोड़ देंगे। कई राजनीतिक विश्लेषकों का तर्क था कि जब तक बाल ठाकरे सत्ता में हैं, राज के शिवसेना छोड़ने की कोई संभावना नहीं है। आखिर वह परिवार का हिस्सा थे, और उनका मामला भुजबल या राणे से बिल्कुल अलग था।
मेरी थ्योरी कुछ इस तरह थी। बात 2005 की है। शिवसेना न सिर्फ सत्ता खो चुकी थी, बल्कि अपने समर्थकों के बीच भी उसकी लोकप्रियता काफी कम हो गई थी। मुंबई, ठाणे और कोंकण जैसे अपने गढ़ों में भी वह तेजी से कमजोर पड़ रही थी। 2004 के विधानसभा चुनाव में उसे हार मिली थी, राणे सीट भी हाथ से निकल गई थी, और बाल ठाकरे, जिनके इर्द-गिर्द पार्टी घूमती है, ने मालवन उपचुनाव के प्रचार के बीच में ही अर्ध-सेवानिवृत्ति की घोषणा कर दी थी और कहा था कि वे सिर्फ पार्टी के सलाहकार मंडल में काम करेंगे। ऐसे में पार्टी का सबसे प्रभावशाली नेता अब उतना सक्रिय नहीं रह गया था। अगर कोई शिवसेना को पुनर्जीवित कर सकता था, तो वह ठाकरे ही थे। दरअसल, उन्होंने अपनी पार्टी को इसी तरह खड़ा किया था। उद्धव ठाकरे की एक शांत आयोजक और कम चर्चित प्रशासक की छवि को काफी नुकसान पहुंचा था, और अब सवाल यह था कि क्या पार्टी अपने समर्थकों को एकजुट रख पाएगी।
मुझे नहीं लगा था कि राज पार्टी के आधार के और कमजोर होने और शिवसेना के और अधिक समर्थकों के अन्य पार्टियों में जाने का इंतजार करेंगे। अगर वे तुरंत पार्टी छोड़ देते, तो वे शिवसेना के एक बड़े मतदाता वर्ग को अपने साथ ले जा सकते थे। तीन-चार साल बाद शायद इतना बड़ा मतदाता वर्ग उनके लिए नहीं बचता; पार्टी कार्यकर्ता और मतदाता, दोनों ही तब तक दूसरे राजनीतिक विकल्प तलाश कर चुन चुके होते। तब शायद शिवसेना में उनके नेतृत्व की याद दिलाना

भी थोड़ा देर हो जाती, क्योंकि पार्टी में उनकी स्थिति और कमजोर हो चुकी होती।
इसमें कोई शक नहीं था कि शिवसेना का निर्वाचन क्षेत्र खाली था; और अगर राज के लिए कोई कदम उठाने का समय था, तो वह 2005 था।
अपने इस बयान के तीन सप्ताह बाद, राज ने शिवसेना छोड़ दी और अपनी खुद की पार्टी बनाई। उन्होंने इसे महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना (एमएनएस) नाम दिया और शिवसेना समर्थकों को अपनी ओर आकर्षित करने की उम्मीद में इसे व्यापक आधार वाला बनाने का प्रयास किया। उन्होंने कहा कि वे सभी समुदायों का पार्टी में स्वागत करेंगे और इस बात पर जोर दिया कि वे महाराष्ट्र को एक प्रगतिशील, भविष्योन्मुखी राज्य के रूप में देखते हैं। 2006 की शुरुआत में पार्टी की उद्घाटन रैली में उन्होंने कहा, 'मैं इस राज्य के किसानों को जींस पहने देखना चाहता हूं।'
राज की पार्टी ने 2007 के मुंबई नगर निगम चुनावों में सात सीटें जीतीं, जिन्हें शिवसेना ने फिर से जीता – एक बार फिर पहले बताए गए चुनावी तर्क और शरद पवार के कांग्रेस के साथ गठबंधन न करने के अंतिम समय के फैसले के कारण। हालांकि, एमएनएस के पास ऐसा कोई विशिष्ट आधार नहीं था जो उसे राज्य की अन्य पार्टियों से अलग कर सके। भले ही उसने समावेशी होने का दावा किया, लेकिन वह सभी समुदायों का समर्थन हासिल नहीं कर पाई, और वह अभी भी इतनी कट्टर महाराष्ट्रीयन नहीं थी कि शिवसेना के समर्थकों को अपनी ओर खींच सके। अगर वह एक ऐसा संगठन बनना चाहती थी जो सभी पृष्ठभूमियों के लोगों को आकर्षित करे, तो भारत की सबसे पुरानी पार्टी कांग्रेस एक कड़ी प्रतिद्वंद्वी बनने वाली थी। वामपंथी, मध्यमार्गी और दक्षिणपंथी विचारधाराओं वाले सभी लोग कांग्रेस के साये में इकट्ठा होते थे; एनसीपी स्वयं कांग्रेस का साया थी; और फिर भाजपा थी, जिसने महाराष्ट्र में विभिन्न जातियों के लोगों को आकर्षित करने के लिए पर्याप्त सामाजिक इंजीनियरिंग की थी।
इसलिए 2008 की शुरुआत में, राज ने अपनी रणनीति में बदलाव किया ताकि सबसे कमज़ोर मतदाता वर्ग, यानी शिवसेना के मतदाता वर्ग को अपने पक्ष में कर सके। शिवसेना वह पार्टी थी जो बड़ी संख्या में पहली बार मतदान करने वाले मतदाताओं को आकर्षित करती थी, इसलिए एमएनएस का मानना था कि अगर शिवसेना शिवसेना के लिए एक विकल्प बन जाती है, तो वह मराठी युवाओं के एक महत्वपूर्ण प्रतिशत को अपने पक्ष में कर लेगी।
उत्तर भारतीयों के खिलाफ अभियान चलाते हुए, राज ने सबसे पहले अभिनेता अमिताभ बच्चन पर हमला किया और कहा कि मुंबई आने के बाद सफल होने के बावजूद वे महाराष्ट्र से ज्यादा उत्तर प्रदेश को प्यार करते हैं। उन्होंने कहा कि अमिताभ ने उत्तर प्रदेश के बाराबंकी में लड़कियों का स्कूल खोला, लेकिन मुंबई में कोई स्कूल नहीं खोला। अमिताभ की पत्नी, अभिनेत्री जया बच्चन ने जवाब देते हुए कहा कि अगर राज उन्हें जमीन दे दें तो वे मुंबई में जरूर स्कूल शुरू करेंगी। उन्होंने कहा, 'मैंने सुना है कि मुंबई में कोहिनूर मिल्स में उनकी काफी जमीन है।' राज ने शिवसेना नेता मनोहर जोशी के बेटे उन्मेश के साथ मिलकर 2004 में दादर स्थित मिल की संपत्ति 421 करोड़ रुपये में खरीदी थी (जिसे उन्होंने बाद में बेच दिया)।
फरवरी 2008 में, एमएनएस कार्यकर्ताओं ने पहले समाजवादी पार्टी के कार्यकर्ताओं के साथ झड़प की और फिर दादर और मुंबई के अन्य हिस्सों में उत्तर भारत के टैक्सी चालकों पर हमला किया। पश्चिमी रेलवे पर, मुख्य रूप से बोरीवली से आगे के उपनगरों में, यात्रियों पर हमले किए गए और राज ने

उत्तर भारतीयों पर मुंबई में छठ पूजा आयोजित करके राजनीतिक शक्ति प्रदर्शन करने का आरोप लगाया।
राज को जल्द ही सार्वजनिक अशांति फैलाने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया। इस गिरफ्तारी के साथ ही उन्होंने खुद को 'अगला ठाकरे' घोषित कर दिया और आधिकारिक तौर पर घोषित उत्तराधिकारी के लिए पहचान का संकट खड़ा कर दिया। बाल ठाकरे को पहली बार 1969 में गिरफ्तार किया गया था, जब महाराष्ट्र-कर्नाटक सीमा विवाद को लेकर मुंबई में शिवसेना के सैनिकों ने हिंसक प्रदर्शन किया था। यह शिवसेना के गठन के तीन साल बाद की बात है। राज को उनकी पार्टी की स्थापना के दो साल बाद गिरफ्तार किया गया था, और उसी धारा के तहत उन पर कई बार मामला दर्ज किया गया था।
अपने चाचा की पहचान से उनका जुड़ाव लगभग पूर्ण था – आक्रामक महाराष्ट्रीयनवाद, प्रवासी विरोधी निंदा, हिंसा की संस्कृति। उनमें ठाकरे सीनियर की शक्ल, तौर-तरीके और आवाज़ थी; अब उनके पास भी वैसा ही इतिहास रचने की ठोस शुरुआत थी। यही तो वे चाहते थे।
जिस समय राज ने उत्तर भारतीयों के खिलाफ अभियान शुरू किया, उसी समय उद्धव उत्तर भारतीय सम्मेलन आयोजित करके उत्तर भारतीयों को लुभाने की कोशिश कर शिवसेना के लिए बहु-सामुदायिक पहचान बनाने में जुटे थे। आखिरकार, 2009 में होने वाले लोकसभा और विधानसभा चुनावों में मुंबई और ठाणे के एक-चौथाई मतदाता उत्तर भारतीय ही थे। राज ने 2009 के विधानसभा चुनावों के लिए बिजली और किसानों के मुद्दों पर रैलियां भी लगाईं। राज ने उद्धव द्वारा उठाए जा रहे सभी मुद्दों को अस्पष्ट कर दिया और पूरे महाराष्ट्र में बहस का विषय बदल दिया। शिवसेना-भाजपा के लिए सत्ता-विरोधी बयानबाजी को फिर से शुरू करना और उसी गति को हासिल करना, सीमित समय को देखते हुए आसान नहीं होगा। उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया कि जो उत्तर भारतीय धीरे-धीरे शिवसेना के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने लगे थे, वे अब उससे दूर रहें
– क्योंकि उन्होंने उन्हें शिवसेना के अतीत की याद दिला दी थी। महाराष्ट्रवाद के मुद्दे पर शिवसेना का रुख अस्पष्ट हो गया था और उसने इस मुद्दे पर तेजी से अपनी पकड़ खो दी थी; राज ने उस खाली जगह को भरने के लिए कदम बढ़ाया। शिवसेना के मतदाताओं को विकल्प देते हुए, उन्होंने उत्तर भारतीय मतदाताओं को कांग्रेस और एनसीपी की ओर मोड़ दिया।
राज ने उत्तर भारतीयों पर मौखिक हमले जारी रखे और महाराष्ट्रियों के लिए तरजीही व्यवहार की मांग की, जो मई 2009 के लोकसभा चुनावों से पहले भी जारी रही। नतीजा यह हुआ कि महाराष्ट्र की 48 सीटों में से केवल 12 सीटों पर ही एमएनएस ने उम्मीदवार उतारे – मुंबई-ठाणे में 9 और पुणे, नासिक और औरंगाबाद में तीन-तीन सीटें – और एक सीट को छोड़कर बाकी सभी सीटों पर उसे एक लाख से अधिक वोट मिले। दक्षिण मुंबई में, जहां 26/11 की घटना हुई थी, एमएनएस दूसरे स्थान पर रही, और अधिकांश अन्य सीटों पर तीसरे स्थान पर रही। अकेले मुंबई में उसे कुल 8,68,000 वोट मिले, जबकि कांग्रेस-एनसीपी को 15,72,000 और शिवसेना-भाजपा को 11,48,000 वोट मिले। मुंबई और ठाणे में मिलाकर एमएनएस को कुल वोटों का 21 प्रतिशत मिला, जबकि शिवसेना-भाजपा को 29 प्रतिशत वोट मिले। यह राज्य की सभी प्रमुख पार्टियों के लिए चिंता का विषय था। अक्टूबर 2009 के विधानसभा चुनावों में शिवसेना को परिवार के भीतर की इस लड़ाई का खामियाजा भुगतना पड़ा। जहां एमएनएस ने पहली ही बार में 13 सीटें जीतीं, वहीं शिवसेना दो दशकों में पहली बार राज्य में चौथे स्थान पर सिमट गई और यहां तक कि विपक्ष के नेता का पद भी भाजपा के हाथों गंवा बैठी, जो

राज्य में हमेशा से उसकी कनिष्ठ सहयोगी रही थी। यह हार उल्लेखनीय थी क्योंकि पिछले एक दशक में कांग्रेस-एनसीपी गठबंधन सरकार का प्रदर्शन निराशाजनक रहा था, लेकिन मतदाताओं ने प्रमुख विपक्षी दल - शिवसेना - को स्पष्ट रूप से नकार दिया था।
राज ने बच्चन को इसलिए निशाना बनाया क्योंकि वह भली-भांति जानता था कि अभिनेता शिवसेना और बाल ठाकरे के करीबी थे और उन्होंने उद्धव ठाकरे के पुत्र आदित्य ठाकरे द्वारा लिखित कविताओं की एक पुस्तक प्रकाशित की थी। (2012 में 21 वर्ष के आदित्य तब से ठाकरे परिवार के सबसे नए सदस्य के रूप में उभरे हैं। उन्हें 2010 में युवा सेना का प्रमुख नियुक्त किया गया था, और उनका पहला राजनीतिक कार्य मुंबई विश्वविद्यालय को रोहिंटन मिस्त्री के उपन्यास 'सच अ लॉन्ग जर्नी' को कला पाठ्यक्रम से हटाने के लिए मजबूर करना था क्योंकि इसमें शिवसेना के प्रति अपमानजनक टिप्पणियां थीं। मार्च 2012 में, विश्वविद्यालय की कई गलतियों के बाद, उन्होंने विश्वविद्यालय के कुलपति राजन वेलुकर को हटाने के लिए एक जोरदार लेकिन असफल अभियान चलाया। आदित्य के नेतृत्व में युवा सेना के सदस्यों ने इस मुद्दे पर विश्वविद्यालय सीनेट में हंगामा किया और उन्हें निलंबित कर दिया गया।) विधानसभा चुनावों में अपनी हार के बाद, पुरानी शिवसेना ने क्रिकेटर सचिन तेंदुलकर को अपना निशाना बनाया, यह जानते हुए कि उनके और राज के अच्छे संबंध थे।
एमएनएस हिंसा के बाद उठे 'मराठी-गैर-मराठी' विवाद के बीच, तेंदुलकर से एक पत्रकार ने पूछा कि क्या वह खुद को पहले भारतीय मानते हैं या महाराष्ट्रीयन। तेंदुलकर ने कहा, 'मैं एक महाराष्ट्रीयन हूं और मुझे महाराष्ट्रीयन होने पर गर्व है, लेकिन मैं पहले एक भारतीय हूं।'
बाल ठाकरे ने उनकी कड़ी आलोचना करते हुए कहा कि उन्हें क्रिकेट के मैदान तक ही सीमित रहना चाहिए और राजनीति में कदम नहीं रखना चाहिए। यह आलोचना शिवसेना के समर्थकों को भी रास नहीं आई, क्योंकि उनका मानना था कि तेंदुलकर पर हमला अनुचित था।
तब से दोनों पक्ष एक-दूसरे पर और दूसरे खेमे के करीबी माने जाने वाले लोगों पर लगातार निशाना साधते रहे हैं, चाहे ऐसी निकटता वास्तविक हो या न हो या केवल सामाजिक जान-पहचान हो।
2011 के अंत में, राज ने पेडर रोड फ्लाईओवर के निर्माण का विरोध करने वालों की आलोचना की। इनमें मंगेशकर बहनें भी शामिल थीं, जिन्होंने एक समय फ्लाईओवर बनने पर मुंबई छोड़ने की धमकी दी थी (मंगेशकर परिवार पेडर रोड स्थित प्रभु कुंज में रहता है)। लता मंगेशकर और आशा भोसले दोनों के राज के साथ अच्छे संबंध रहे हैं, लेकिन उनके भाई, संगीतकार हृदयनाथ, 2009 में शिवसेना में शामिल हो गए थे। शिवसेना ने जवाब में कहा कि जिन लोगों ने सचिन तेंदुलकर की बांद्रा स्थित नए घर के लिए अतिरिक्त एफएसआई की मांग का समर्थन किया था (राज ने ही किया था), उन्हें मंगेशकर परिवार की आलोचना करने का कोई अधिकार नहीं है, जो कि कई प्रतिष्ठित हस्तियों से भरा हुआ है।
जब मैं राज-उद्धव संघर्ष पर यह अध्याय समाप्त कर रहा था, तभी शिवसेना ने सभी उम्मीदों के विपरीत फरवरी 2012 में मुंबई नगर निगम चुनाव जीत लिया। ये चुनाव शिवसेना के भविष्य के लिए बेहद महत्वपूर्ण थे। पिछले दशक में उसका प्रदर्शन खराब रहा था, उसने एक विधानसभा सीट गंवा दी थी और राज्य में चौथे नंबर पर आ गई थी। अगर वह मुंबई नगर निगम (जिसका बजट भारत के कई

राज्यों से भी बड़ा है) हार जाती, तो उसके भविष्य पर गंभीर सवालिया निशान लग जाता।
जब कांग्रेस और एनसीपी ने चुनाव के लिए गठबंधन किया, तब हार निश्चित लग रही थी; महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री पृथ्वीराज चव्हाण ने तो यहाँ तक कह दिया था कि चुनाव परिणाम आने पर ठाकरे और उनकी शिवसेना का कोई महत्व नहीं रह जाएगा। लेकिन शिवसेना ने 75 सीटें जीतीं, उसके सहयोगी भाजपा को 32 सीटें मिलीं और शिवसेना ने बीएमसी में आसानी से सत्ता वापस हासिल कर ली।
इस जीत ने शिवसेना को नई ऊर्जा दी है, जिससे 2014 के विधानसभा चुनावों के लिए उसकी उम्मीदें बढ़ गई हैं, लेकिन ये परिणाम राज ठाकरे की पार्टी के लिए भी उतने ही उत्साहजनक थे।
एमएनएस ने 28 सीटें हासिल कीं, जो पिछले चुनावों में उसकी 7 सीटों की तुलना में एक बड़ा सुधार है, और शिवसेना के लिए चिंता की बात यह है कि एमएनएस 56 निर्वाचन क्षेत्रों में दूसरे नंबर पर रही।
हिंदुस्तान टाइम्स (19 फरवरी 2012) में लिखे अपने एक लेख में मैंने दोनों पार्टियों के लिए इन नतीजों के मायने बताए थे। मैंने यह बताया था कि मुंबई नगर निगम चुनावों में शिवसेना की जीत का श्रेय न केवल उसकी नई और अगली पीढ़ी के उम्मीदवारों और प्रचार अभियानों की कुशल रणनीति को जाता है, बल्कि बाल ठाकरे द्वारा पिछले चार दशकों में बनाए गए पार्टी के संगठनात्मक नेटवर्क को भी जाता है। साथ ही, शहर में उसके मजबूत नागरिक और स्थानीय संपर्कों ने मतदाताओं को अपने पक्ष में करने का काम आसान बना दिया था।
मुंबई चुनावों में दोनों शिवसेनाओं के शानदार प्रदर्शन के बाद जल्द ही यह अटकलें शुरू हो गईं कि क्या वे भविष्य में कांग्रेस-एनसीपी को सत्ता से बाहर रखने के लिए गठबंधन करेंगी। यहां तक कि विलय की चर्चा भी तब उठी जब राज ठाकरे ने अपने आवास पर आए तीन स्थानीय शिवसेना पदाधिकारियों के अनुरोध पर ठाणे महापौर चुनाव में शिवसेना की जीत सुनिश्चित की। ऐसी उम्मीद थी कि इसके बदले में शिवसेना नासिक में एमएनएस को अपना महापौर चुनने के प्रयास में समर्थन देगी, जहां एमएनएस को आवश्यक संख्या नहीं मिल रही थी और शिवसेना के समर्थन से वह जीत जाती। हालांकि, उद्धव ने यह समर्थन देने से इनकार कर दिया। शिवसेना की सहयोगी भाजपा ने फिर भी नासिक महापौर चुनाव में एमएनएस का समर्थन किया, जिससे महाराष्ट्र में भविष्य में एक नए गठबंधन के गठन की अटकलें तेज हो गईं, चाहे शिवसेना इसमें शामिल हो या न हो। तब से, शिवसेना-एमएनएस विलय, या कम से कम दोनों पार्टियों के बीच गठबंधन की चर्चा और भी तेज हो गई है। इसका मुख्य कारण ठाकरे परिवार में जुलाई 2012 में उद्धव ठाकरे के अस्पताल में भर्ती होने के बाद बनी शांति है। राज, अलीबाग में एक पार्टी सभा के लिए जा रहे थे, लेकिन जब उन्हें पता चला कि उद्धव को सांस लेने में तकलीफ के बाद बांद्रा के लीलावती अस्पताल में भर्ती कराया गया है, तो वे तुरंत मुंबई आ गए। उद्धव की एंजियोग्राफी के दौरान राज उनके साथ थे, और अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद, वे उन्हें मातोश्री अस्पताल ले गए और बाल ठाकरे और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ एक घंटे से अधिक समय बिताया। जब बालासाहेब को कुछ समय बाद पेट की समस्याओं के कारण लीलावती अस्पताल में भर्ती कराया गया, तो राज उनसे मिलने अस्पताल गए, उनका हालचाल पूछा और उनके साथ काफी समय बिताया, क्योंकि उद्धव उस समय घर पर स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद, बाल ठाकरे ने सामना को दिए एक साक्षात्कार में संकेत दिया कि राज और उद्धव में कई

समानताएं हैं और उन्होंने राज द्वारा 11 अगस्त 2012 को रजा अकादमी की बैठक के बाद आज़ाद मैदान में हुई हिंसा के विरोध में मोर्चा आयोजित करने के कार्य का समर्थन किया। उन्होंने यह भी कहा कि मीडिया को अफवाहें नहीं फैलानी चाहिए और सुलह प्रक्रिया में बाधा नहीं डालनी चाहिए। फिर, अक्टूबर 2012 में पार्टी की दशहरा रैली में शिवसेना कार्यकर्ताओं को दिखाए गए अपने वीडियो-रिकॉर्डेड भाषण में, बीमार ठाकरे ने अपने सैनिकों से अपने बेटे और पोते का समर्थन करने का आग्रह किया। उसी भाषण में, उन्होंने दादर में, जहां शिवसेना का जन्म हुआ था, अब दो शिवसेनाओं के होने पर चिंता व्यक्त की। 'यह आत्मनिरीक्षण का समय है। मराठियों को एकजुट होकर कांग्रेस को सत्ता से बाहर करना चाहिए।' तो क्या चचेरे भाई एक साथ आएंगे? 2014 के विधानसभा और संसदीय चुनावों को देखते हुए यह उनके लिए राजनीतिक रूप से फायदेमंद होगा। लेकिन एक सवाल जिसका अभी तक कोई जवाब नहीं है, वह है नेतृत्व का सवाल। एक नेता दूसरे के अधीन नहीं रहना चाहता। ऐसी स्थिति में, क्या गठबंधन होगा, और यदि होता है, तो क्या यह टिकेगा? कम से कम हम इतना तो कर ही सकते हैं कि किसी भी संभावना को खारिज न करें। आखिरकार, राजनीति ही तो संभावनाओं की कला है।

32

बाल ठाकरे = शिवसेना

अल ठाकरे ने एक पार्टी-संगठन बनाया जिसने लगभग मराठी मानुष की बस्ती का रूप ले लिया, और उन्होंने मानुष के सामने शिवसेना को शिवाजी की आधुनिक सेना के रूप में पेश किया जो सभी मराठी भाषी लोगों को अपने दायरे में इकट्ठा करके उनके साथ हुए अन्याय को दूर करेगी।
उन्होंने तुरंत ही दक्षिण भारतीयों को अपना शत्रु घोषित कर दिया, जिन्हें उन्होंने 'यंदुगुंडू' कहा और अधिकांश अन्याय के लिए उन्हें ही जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने कहा कि इन अन्यायों को करने वालों का विरोध किया जाना चाहिए और युवा महाराष्ट्रियों को अन्याय करने वालों के खिलाफ जोरदार हमला करने का आह्वान किया। ठाकरे ने महाराष्ट्र के युवाओं से कहा, 'तुम्हें अपना हक मांगना होगा। और अगर कोई तुम्हें वह देने से इनकार करता है, तो तुम्हें उसे छीन लेना होगा।'
उन्होंने महाराष्ट्रियों से कहा, "अहिंसा मत अपनाइए, हम योद्धा परंपरा के उत्तराधिकारी हैं।" कई महाराष्ट्रियों ने उनके गुस्से में अपना समर्थन दिया और दक्षिण भारतीयों, 'अंतर्राष्ट्रीय' कम्युनिस्टों और उन सभी संस्थाओं की जमकर पिटाई की, जो कथित तौर पर देशवासियों के साथ भेदभाव कर रही थीं। बाद में, उन्होंने हिंदू समुदाय से कहा कि वे अपने ही देश में दूसरे दर्जे के नागरिक हैं, और इससे 'पाकिस्तान समर्थक मुसलमानों' के खिलाफ भी लगभग उतना ही गुस्सा और तीखी प्रतिक्रिया देखने को मिली। अपने अनुयायियों को हमेशा 'थोकशाही' यानी बलपूर्वक शासन और 'रचनात्मक हिंसा' के मार्ग का अनुसरण करने के लिए प्रेरित करते हुए, उन्होंने अपने सैनिकों द्वारा किए गए हर कृत्य पर गर्व किया है, चाहे उनके कुछ हिंसक कृत्य समाज के बाकी हिस्सों के लिए कितने भी निंदनीय क्यों न प्रतीत हुए हों।
पिछले चार दशकों में, सैनिकों ने कई बार अलग-अलग कारणों से पूरे मुंबई को जबरन बंद कराया है। कभी यह बंद किसी आतंकवादी कृत्य के विरोध में होता है, तो कभी बढ़ती कीमतों के खिलाफ आंदोलन का हिस्सा होता है, या समाज के किसी पीड़ित वर्ग के साथ एकजुटता दिखाने का जरिया होता है, जैसे कि वे कारखाना मजदूर जिन्हें उनका बकाया नहीं मिला है या शहर के वे मिल मजदूर जिन्हें उनके वादे के मुताबिक घर नहीं मिले हैं। ये सभी बंद जबरन किए गए थे, हालांकि शिवसेना ने इन्हें हमेशा 'स्वतःस्फूर्त' करार दिया है, और इनमें सैनिकों द्वारा अंधाधुंध हिंसा और संपत्ति का विनाश देखा गया है, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था को करोड़ों रुपये का नुकसान हुआ है। लेकिन हर बार जब सैनिकों ने मुंबई को पंगु बनाया है, ठाकरे ने इसे अपनी पार्टी के लिए गौरव का प्रतीक और भारत के वित्तीय केंद्र पर अपनी निरंतर पकड़ का प्रमाण बताया है। उन्होंने सैनिकों को शिवसेना के रास्ते में आने वालों से शारीरिक रूप से निपटने के लिए प्रोत्साहित किया है और सार्वजनिक रूप से उन पार्टी सदस्यों का समर्थन किया है जिन्होंने उनके शब्दों का अक्षरशः पालन किया है।

1967 ■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■; 1991 ■■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ - ■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■■, ■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■ - ■■ ■■■■■■■■ ■■, ■■■■■■■■■■■ ■■■■■-■■■■■■■■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■ ■■; 1992 ■■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■, ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■ ■■■■■ ■■; ■■ 1999 ■■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■■■■■■■ ■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■

■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■ ■■■■-■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■, ■■ ■■ ■■ '■■■■■ ■■■■ ■■■■■■', ■■■■■■■ '■■■■■' ■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■-■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■:

‘■■■■■ ■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■■■’
■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■, ■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ '■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■, ■■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■'
■■■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■

■■ ■■■■■■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■■ ■■, ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■, ■■■■■■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■; ■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■■ ■■■■■
■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■■■■, ■■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■, ■■ ■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■■ ■■, ■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■, ■■■■■■ ■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■ ■ ■■■■■■ ■■■■■■, ■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■ ■■ ■■■■ 1960 ■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■ ■■■■■■ ■■■■■ ■■, ■■ ■■■■■ ■■■■■-■■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■ ■■■■ ■■■■■ ■■■■■ 1966 ■■■■, ■■■■■■■■ ■■■■■■■ ■■■■■ ■■■■■■■■ ■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■■■■ ■■■■ ■■, ■■■■■■ ■■■■■ ■■ ■■■■ ■■■■, ■■ ■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■, ■■ ■■ ■■ ■■ ■■■■ ■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■■■■■ ■■■■■■■■■■■ ■■ ■■■■■ ■■■■■

वह एक आकर्षक वक्ता हैं जो श्रोताओं का ध्यान आकर्षित करते हैं, उत्साह की एक लहर, यहां तक कि उन्माद की लहर भी उत्पन्न करते हैं, जिस पर वे उन्हें ले जाते हैं, एक ऐसा माहौल बनाते हैं जो स्वयं भाषण जितना ही महत्वपूर्ण होता है, और इस धारणा को और मजबूत करते हैं कि यह स्वयं श्रोता ही हैं, अपनी जयकारों और तालियों की गड़गड़ाहट के साथ, जो उन्हें एक वाक्य से दूसरे वाक्य तक ले जाने में मदद कर रहे हैं, भीड़ को एक ऐसे विशाल समूह में बदल देते हैं जो फिर उनके लिए कुछ भी करने को तैयार हो जाता है।
ठाकरे को जनता की नब्ज़ का अद्भुत ज्ञान था, जिसे उनके कट्टर राजनीतिक विरोधी भी स्वीकार करते हैं, और वे जनता की भाषा बोलने में माहिर थे। आलोचकों ने अक्सर उनके भाषणों को भद्दा और अरुचिकर बताया है, लेकिन राजनीतिक औपचारिकताओं से रहित उनकी जोशीली भाषा ने ही उन्हें वह मुकाम दिलाया है जहाँ वे आज हैं।
उन्होंने कभी अपने भाषण खुद नहीं लिखे, बौद्धिक कलाबाजी के प्रति उनकी अरुचि स्पष्ट रूप से झलकती है और उनका कहना है कि उन्हें पाखंड से नफरत है। पाखंड के प्रति उनकी यह कथित नापसंदगी ऐसे समय में सोच-समझकर विकसित की गई है जब भारतीय राजनीति दोहरे मापदंडों का पर्याय बन चुकी है। ठाकरे की ताकत यह है कि वे राजनीति से दूर रहते हैं और अक्सर आम राजनेताओं से अलग हटकर किसी भी परिस्थिति पर प्रतिक्रिया देते हैं।
हम सन् 1973 में एक युवक की उनसे हुई मुलाकात का उदाहरण लेते हैं। डोम्बिवली के रहने वाले 16 वर्षीय अजीत नाडकर्णी, ठाकरे के भाषणों से प्रभावित होकर, बांद्रा स्थित उनके मातोश्री आवास पर उनसे मिलने जाते हैं। वह शिवसेना प्रमुख से कहते हैं, ‘मैंने अभी-अभी एसएससी की परीक्षा उत्तीर्ण की है और मैं शिवसेना के लिए पूर्णकालिक रूप से काम करना चाहता हूं। मैंने पहले आरएसएस के लिए काम किया है और आरएसएस की पूर्णकालिक प्रचारक की परंपरा का पालन करते हुए, मैं अपना सारा समय शिवसेना को समर्पित करना चाहता हूं।’
नाडकर्णी, जो बाद में कल्याण-डोम्बिवली नगर निगम (केडीएमसी) में स्थायी समिति के अध्यक्ष बने, याद करते हैं:

ठाकरे ने मुझसे शिवसेना के लिए काम करने को कहा, लेकिन पूर्णकालिक नहीं। उन्होंने कहा, “तुमने अभी-अभी एसएससी परीक्षा पास की है। तुम्हें अपनी पढ़ाई जारी रखनी चाहिए और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनना चाहिए। अपने पैरों पर खड़े हो जाओ। तुम्हें पैसे के लिए किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिए और सिर्फ नौकरी पाने के बारे में मत सोचो। अपना खुद का व्यवसाय शुरू करने के बारे में सोचो। मराठी युवाओं को उद्यम जगत में दूसरों से प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए। अगर तुम शिवसेना के लिए पूर्णकालिक काम करोगे, तो तुम्हारी पढ़ाई प्रभावित होगी।”

ठाकरे के घर से नाडकर्णी आश्चर्यचकित होकर बाहर निकले।
हम जिस वर्ष की बात कर रहे हैं वह वर्ष 1973 है। शिवसेना तब तक इतनी बड़ी संस्था नहीं थी। यह मुंबई तक ही सीमित थी और इसे अपने नेटवर्क का विस्तार करने और अधिक युवाओं को अपने साथ जोड़ने की आवश्यकता थी। उस समय समझदारी भरा कदम यह होता कि उस युवा लड़के को पार्टी के लिए चौबीसों घंटे काम पर

लगा दिया जाए। लेकिन बाल ठाकरे ने उस किशोर को यह संदेश दिया कि वे शिवसेना के लिए अपना भविष्य कुर्बान करने को तैयार नहीं हैं। ऐसा करके उन्होंने 16 वर्षीय लड़के से वह वफादारी हासिल कर ली जो उन्हें अन्यथा नहीं मिल पाती।
इन सभी तथाकथित गैर-राजनीतिक कृत्यों का उद्देश्य युवाओं के बीच उनकी राजनीतिक स्थिति को बेहतर बनाना रहा है।
उदाहरण के लिए, आम भारतीय राजनेता के विपरीत, ठाकरे ने कभी भी मीडिया के साथ घुलने-मिलने और सुर्खियां बटोरने की परवाह नहीं की। उन्होंने कभी भी मीडिया से मेलजोल नहीं रखा। और उन्होंने एक व्यंग्यकार की भूमिका बखूबी निभाकर राजनीति के तौर-तरीकों को उलट दिया है: वे आत्म-व्यंग्य का सहारा ले सकते हैं, हालांकि वे और उनके सैनिक आलोचना को बर्दाश्त नहीं करते; वे अपने राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों की तुलना जानवरों से कर सकते हैं; वे जानबूझकर अपने राजनीतिक भाषणों में यौन संकेत जोड़ सकते हैं; उन्होंने भीड़ जुटाने के लिए बॉलीवुड की शैली का प्रभावी ढंग से इस्तेमाल किया है और एक बार तो अपनी एक रैली में 'जुम्मा चुम्मा दे दे' गाने पर नृत्य भी किया था।
ठाकरे ने तो यहाँ तक स्वीकार कर लिया है कि राजनेता इसे अस्वीकार्य मानते हैं: ‘हाँ, मुझे पैसा मिलता है, लेकिन देखिए इसका वितरण कैसे हो रहा है। एक हृदय रोगी आता है, 10,000 रुपये मांगता है, मैं उसकी मदद करता हूँ। कोई सैनिक आता है, बाईपास सर्जरी के लिए पैसे चाहिए होते हैं, मैं उसकी मदद करता हूँ। मैंने शिवसेना प्रमुख के रूप में 1 करोड़ से अधिक वितरित किए हैं।’¹⁵⁷ इस तरह की स्वीकारोक्तियाँ लोगों के मन में धार्मिकता के दिखावे के प्रति अरुचि पैदा करने के उद्देश्य से की जाती हैं, और ये कई युवाओं को यह महसूस कराने में कारगर साबित हुई हैं कि ठाकरे पाखंडी नहीं हैं।
इस प्रकार, ठाकरे ने रूढ़िवादिता को चुनौती दी है: वे राजनीतिक सिद्धांतों से दूर रहेंगे, समस्याओं के त्वरित और आसान समाधान पेश करेंगे और भावनात्मक अपील करेंगे।
ऐसे और भी कई तरीके हैं जिनसे उन्होंने जिज्ञासा जगाई है, ध्यान आकर्षित किया है और एक रहस्य के रूप में खुद को साबित किया है।
उन्होंने कई बार हिंसक विद्रोह की धमकी दी है, लेकिन निजी जीवन में वे बेहद सुव्यवस्थित हैं। उन्हें अपने सम्मान में बड़े-बड़े समारोह आयोजित करना पसंद है, फिर भी उनकी पसंद सादी है; एक गिलास गर्म बीयर और पाइप (जिसे उन्होंने कुछ साल पहले छोड़ दिया था) उनके लिए मामूली शौक हैं। सार्वजनिक रूप से वे आपत्तिजनक माने जाने वाले शब्दों का बेझिझक इस्तेमाल कर सकते हैं, लेकिन वे पढ़े-लिखे हैं और बेहतरीन मिमिक्री करते हैं। वे अपनी पार्टी में तानाशाह की भूमिका निभाते हैं और हिंसा का समर्थन करते हैं, लेकिन घर पर वे एक पारिवारिक व्यक्ति हैं जो अपने प्रियजनों के जन्मदिन याद रखते हैं और बच्चों की पिटाई के सख्त खिलाफ हैं। वे अपने कार्यकर्ताओं को क्रिकेट पिच खोदने का काम देते हैं, लेकिन बापू नाडकर्णी और मुंबई तथा भारत के कई पुराने क्रिकेटरों को अपने दोस्तों में गिनते हैं (बापू और वे दादर से काम पर जाने के लिए एक साथ ट्रेन से जाया करते थे)। और वह मराठी उपन्यास को खारिज करते हुए कहते हैं कि उन्हें यह विधा पसंद नहीं है, और उन्होंने शिवसेना सरकार की आलोचना करने वाले प्रसिद्ध लेखक पु ला देशपांडे पर तीखा हमला किया - यहां तक कि जब लेखकों ने देशपांडे के लिए उनके शब्दों पर असहमति व्यक्त की तो उन्होंने एक मराठी साहित्यिक सम्मेलन

को 'बैल बाजार' (बैलों का जमावड़ा) कह दिया - लेकिन उनके पसंदीदा मनोरंजनों में से एक पु ला की सीडी सुनना है।
उस अखबार मालिक और संपादक के बारे में क्या कहा जाए जो पत्रकारों की सरेआम निंदा करता है और यहाँ तक कि उन्हें पीटने का सुझाव भी देता है? या उस नेता के बारे में क्या कहा जाए जो बॉलीवुड के दिग्गज देव आनंद की एक दिन अपनी फिल्म में पाकिस्तानी लड़की को मुख्य अभिनेत्री के रूप में चुनने के लिए आलोचना करता है और अगली सुबह यह जानकर कि यह गलत पहचान का मामला था, तुरंत सुलह कर लेता है? या उस राजनेता के बारे में क्या कहा जाए जो मंडल आयोग की रिपोर्ट की निंदा करता है, जबकि उसकी पार्टी का अधिकांश समर्थन आधार ओबीसी समुदाय से बना है? या उस राजनेता के बारे में क्या कहा जाए जो बिना किसी संकोच के अपने सहयोगी दल, भाजपा पर नियमित रूप से हमला करता है? या उस हिंदुत्व समर्थक के बारे में क्या कहा जाए जो बाबरी मस्जिद के विध्वंस पर सबसे कठोर रुख अपनाता है और कुछ साल बाद अयोध्या स्थल पर हिंदुओं और मुसलमानों के लिए एक राष्ट्रीय स्मारक बनाने का सुझाव देता है? या उस 'रिमोट कंट्रोल' के बारे में क्या कहा जाए जो यह जानकर कि उसकी अपनी सरकार के एक मंत्री ने एक समारोह में एक मृत अभिनेता को मंच पर बुलाकर शर्मनाक गलती की है, कहता है, "ये हैं हमारे निरक्षर शासक"?
शुरू में तो किसी को विश्वास ही नहीं था कि शिवसैनिकों के जोशीले नारे और बाल ठाकरे की लोकप्रियता मुंबई की तंग गलियों से बाहर तक पहुंच पाएगी। जब ऐसा हुआ और शिवसेना ने मुंबई नगर निगम पर कब्जा कर लिया, तो कहा गया कि ठाकरे का आकर्षण सिर्फ महानगर तक ही सीमित है और राज्य में कहीं और काम नहीं करेगा। जब शिवसेना ने ग्रामीण क्षेत्रों में पैठ बनाना शुरू किया और ठाकरे ने महाराष्ट्र में कांग्रेस सरकार को उखाड़ फेंकने का दावा किया, तो किसी ने उन पर फिर से विश्वास नहीं किया। यह आखिरी काम बहुत कठिन और लगभग असंभव बताया गया, न केवल उनके दुश्मनों ने, बल्कि कुछ दोस्तों और उनके कई पार्टी सदस्यों ने भी। फिर भी, उन्होंने महाराष्ट्र के कोने-कोने में तूफानी अभियान चलाकर मंत्रालय पर भगवा झंडा फहराने में सफलता हासिल की। ठाकरे के सबसे बड़े आलोचक भी दबे स्वर में यह स्वीकार करेंगे कि शिवसेना प्रमुख ने अपने व्यक्तित्व के बल पर शिवसेना को आज इस मुकाम तक पहुंचाया है, और वास्तव में पार्टी की ओर इतने सारे लोगों को आकर्षित करने का कारण उनका आकर्षण ही है। भारत की आर्थिक शक्ति मुंबई, करोड़ों की हिंदी फिल्म इंडस्ट्री (हालांकि इस मामले में राज ठाकरे एक उभरते हुए प्रतिद्वंद्वी हैं) और अनगिनत लोगों के मन पर उनका दबदबा आज भी कायम है।
मिड डे द्वारा कराए गए एक सर्वेक्षण में पता चला कि वे पाकिस्तान में तीन सबसे प्रसिद्ध भारतीयों में से एक थे, और आउटलुक द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में उन्हें उन तीन मुंबईवासियों में शामिल किया गया जिन्हें दिल्लीवासी राजधानी में देखना सबसे ज्यादा पसंद करेंगे। बाल केशव ठाकरे के लिए यह एक लंबा सफर है और उनकी दृढ़ता का प्रमाण है।
संडे मैगज़ीन ने ठाकरे के बारे में जो कहा था, उसे थोड़ा बदलकर कहें तो, जब वह और उनकी शिवसेना पहली बार 1966 में मुंबई के राजनीतिक परिदृश्य में उभरे, उस समय इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री बने एक साल हो चुका था; वी.पी. नाइक महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री थे; एस.के. पाटिल मुंबई में कांग्रेस के प्रमुख थे; और डॉ. ज़ाकिर हुसैन भारत के राष्ट्रपति थे।

[illegible] [illegible] of 1990 of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of of of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] of of of, [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible]

[illegible] of [illegible] 2012 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], of [illegible] 1990 of [illegible] of of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] of [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

आसान हो सकता है; सफलता के लिए उत्तराधिकारियों को वास्तव में कड़ी मेहनत करनी होगी।
शिवसेना के लिए बाल ठाकरे अद्वितीय थे। और इसी कारण वे अपूरणीय भी थे।

नोट्स

1 Marmik Mehfil, 25 May 1997.
2 वही।
3 वही।
4 वही।
5 वही।
6 वही।
7 मैरी फेनसोड कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता: बॉम्बे में शिव सेना पार्टी और तरजीही नीतियां, कॉर्नहिल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1978।
8 Saamna, 23 January 1997.
9. बाल ठाकरे: एक फोटो-जीवनी, राज ठाकरे, यूबीएसपीडी, 2005।
10. ठाकरे का सुधीर गाडगिल के साथ साक्षात्कार, मध्य वर्ष 2009 में, महाराष्ट्र में अक्टूबर 2009 में होने वाले विधानसभा चुनावों से पहले।
11 वही।
12 वही।
13 वही।
14 गथोड़ा, पु ला देशपांडे की अधिकतर अप्रकाशित रचनाओं का एक संग्रह है, जिसे मार्च 2012 में परचुरे प्रकाशन मंदिर द्वारा प्रकाशित किया गया था।
15. ठाकरे का सुधीर गाडगिल के साथ साक्षात्कार, मध्य वर्ष 2009 में, महाराष्ट्र में अक्टूबर 2009 में होने वाले विधानसभा चुनावों से पहले।
16 वही।
17 वही।
18 वही।
19 वही।
20 के.सी. ज़ाचरिया, ग्रेटर बॉम्बे में प्रवासी।
21 वही।
भारत की 22 वीं जनगणना, महाराष्ट्र, 1961 (1964 में प्रकाशित)।
भारत की जनगणना, महाराष्ट्र, 1961 और भारत की जनगणना, मुंबई, 1951 (1953 में प्रकाशित)।
भारत की जनगणना, प्रवासन सारणी, 1961, 24।
25 ‘नेटिविज़्म की उत्पत्ति: बॉम्बे में शिव सेना का उदय’, एशियन सर्वे, 13 अप्रैल 1973।
26 मैरी फेनसोड कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता: बॉम्बे में शिव सेना पार्टी और तरजीही नीतियां, कॉर्नहिल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1978।
27 एडवर्ड्स, द गजेटियर ऑफ बॉम्बे।
28 शांति पटेल, जुड़वां शहर बॉम्बे।
29 मैरी फेनसोड कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता: बॉम्बे में शिव सेना पार्टी और तरजीही नीतियां, कॉर्नहिल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1978।
मुंबई विश्वविद्यालय की 30 वार्षिक रिपोर्टें।
31 महाराष्ट्र सरकार शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र राज्य में शैक्षिक विकास, 1950-51 से 1965-66, मुंबई, सरकारी केंद्रीय प्रेस, 1968।
32 ‘लुप्तप्राय बाघ’, द टाइम्स ऑफ इंडिया, 21 दिसंबर 1997।

33 ‘थैकरे के बाद क्या’, आउटलुक, 25 सितंबर 1996।
34 वही।
35 वी.एस. नायपॉल, भारत, अब दस लाख विद्रोह, मिनर्वा, 1990।
36 Marmik Mehfil, 25 May 1997.
37 वही।
38 वही।
39 वि.सं. नायपॉल, ए मिलियन म्यूटिनीज़।
40 Marmik, 19 July 1966.
41 साक्षात्कार।
42 साक्षात्कार।
43 Marmik Mehfil, 25 May 1997.
44 नव काल, 31 अक्टूबर, 1966।
45 वही।
46 ‘एक निम्नवर्गीय राज्य का चेहरा’, द पायनियर, 21 सितंबर 1997।
47 साक्षात्कार।
48 Marmik Mehfil, 25 May 1997.
49. ठाकरे का सुधीर गाडगिल के साथ साक्षात्कार, मध्य वर्ष 2009 में, महाराष्ट्र में अक्टूबर 2009 में होने वाले विधानसभा चुनावों से पहले।
50 कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता।
51 साक्षात्कार।
52 संयुक्त महाराष्ट्र की मांग कर रहे कुल 105 लोगों को तत्कालीन मुंबई के मुख्यमंत्री मोरारजी देसाई के आदेश पर गोली मार दी गई थी।
53 साक्षात्कार।
54. टाइम्स ऑफ इंडिया, बाल ठाकरे पर विशेष परिशिष्ट, 23 जनवरी 1997।
55 कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता।
56 Jnyanesh Maharav, Thackeray Family, Prabhat Prakashan, 1995.
57 वही।
58 कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता।
59 उनके भाई श्रीकांत और रमेश हैं, और उनकी पांच बहनें सुधा सुले, पामा टिपनिस, सुशीला गुप्ते, सरला गडकरी और संजीवनी करंदीकर हैं। प्रबोधनकर का एक दत्तक पुत्र भी था, राम हरणे।
60 जब मेनन 1962 में रक्षा मंत्री थे, तब भारत को चीन के हाथों एक शर्मनाक हार का सामना करना पड़ा था, और मेनन के कम्युनिस्ट झुकाव को कई लोगों ने भारत की सेनाओं की अपर्याप्त तैयारी का मुख्य कारण बताया था।
61 Prakash Akolkar, Jai Maharashtra, Prabhat Prakashan, 1998.
62 साक्षात्कार।
63 Marmik, 13 March 1968.
64 वही।
65 19 अप्रैल 1968.
66 गिरिजा कीर, बालासाहेब, माधवी प्रकाशन, पुणे, 1996।
67 द न्यू यॉर्क रिव्यू ऑफ बुक्स।
68 दीपांकर गुप्ता, नेटिविज्म इन ए मेट्रोपोलिस, द शिव सेना इन बॉम्बे, मनोहर पब्लिकेशंस, 1982।
69 कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता।
70 वही।

71 साक्षात्कार।
72 Marmik, 11 August 1968.
73 साक्षात्कार।
74 साक्षात्कार।
75 साक्षात्कार।
76 गुप्ता, महानगर में राष्ट्रवाद
77 वही।
78 साक्षात्कार।
79 हिंदुत्व: सार आणि धार, डिंपल प्रकाशन, 1991।
80. केंद्र सरकार द्वारा सीमा विवाद की जांच के लिए महाजन आयोग का गठन किया गया था। इसने सीमावर्ती क्षेत्रों का मैसूर में विलय को बरकरार रखा।
81 नव काल, 23 जनवरी 1969।
82 नव काल, 28 जनवरी 1969।
83 गिरिजा कीर, बालासाहेब.
84 वही।
85 नव काल, 2 फरवरी 1969।
86 मार्मिक, जून 1991।
87 नव काल, 18 फरवरी 1969।
88 वही।
89 नव काल, 20 फरवरी 1969।
90 नव काल, 21 फरवरी 1969।
91 नवकाल, 13 मार्च 1969।
92 चव्हाण, एक जीवनी, सोमैया पब्लिकेशन्स, मुंबई।
93 साक्षात्कार।
94 बालासाहेब, गिरिजा कीर, 1991।
95 साक्षात्कार।
96 नव काल, 2 फरवरी 1970।
9 फरवरी 1970 को भोईवाड़ा मैदान में 97 वीं सेना की रैली।
98 मराठा, 8 जून 1970।
99 नवकाल, 5 जुलाई 1970।
100 साक्षात्कार।
101 कैटजेनस्टीन, जातीयता और समानता।
102 साक्षात्कार।
103 साक्षात्कार।
104 शिव सेना स्पीक्स, कपिलाचार्य द्वारा लिखित, लिमाये प्रिंटिंग वर्क्स, 1967।
27 अक्टूबर 1982 को शिवाजी पार्क में 105 वीं शिवसेना की दशहरा रैली।
106 अंतुले को 12 जनवरी 1982 को इस्तीफा देने के लिए मजबूर किया गया था, जब बॉम्बे उच्च न्यायालय ने उन्हें इंदिरा गांधी प्रतिभा प्रतिष्ठान, उनके द्वारा प्रबंधित एक ट्रस्ट को उपहार के बदले सीमेंट परमिट का उपयोग करने का दोषी पाया था।
107 साक्षात्कार।
108 ज्ञानेश महारव, ठाकरे परिवार।
109 शिवसेना-भाजपा रैली, गिरगाँव चौपाटी, 1 जनवरी 1998।
110 Saamna, 23 January 1998.

इंदौर के मोहम्मद अहमद खान ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के उस फैसले के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर की थी, जिसमें उनकी तलाकशुदा पत्नी शाह बानो के पक्ष में फैसला सुनाया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने 23 अप्रैल 1985 को उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखते हुए कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125, जिसके तहत पतियों के लिए अपनी तलाकशुदा पत्नियों के भरण-पोषण के लिए प्रावधान करना अनिवार्य है, यदि उनके पास आजीविका का कोई अन्य साधन न हो, तो वह मुस्लिम पतियों पर भी लागू होगी। इस मामले में हस्तक्षेप करने वाली संस्था, मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (एमपीएलबी) ने इस फैसले को मुस्लिम पर्सनल लॉ में हस्तक्षेप बताया। एमपीएलबी ने कहा कि सर्वोच्च न्यायालय ने कुरान का भी हवाला दिया था, जबकि एमपीएलबी को ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था।
112 मार्मिक, 13 अक्टूबर 1985।
113 शाह बानो विवाद, संपादक: असगर अली इंजीनियर।
114 मार्मिक, 1 दिसंबर 1985।
115 साक्षात्कार।
116 द फ्री प्रेस जर्नल, 6 सितंबर 1988।
117 वही।
118 अक्टूबर 13, 1988.
119 द डेली, 31 जनवरी 1988।
120 मेनस्ट्रीम, 3 सितंबर 1988।
121 द इंडियन एक्सप्रेस, 8 फरवरी 1988।
122 वही
123 द इंडियन पोस्ट, 20 सितंबर 1988।
124 द हिंदू, 6 मार्च 1988।
125 द टेलीग्राफ, 6 मार्च 1988।
126 द इंडियन पोस्ट, 18 मार्च 1988।
127 द संडे ऑब्जर्वर, 24 अप्रैल 1988।
128 वही।
129 द टाइम्स ऑफ इंडिया, 26 मई 1988।
130 21 अप्रैल 1988.
131 द इंडियन पोस्ट, 6 जुलाई 1988।
132 द स्टेट्समैन, 22 अक्टूबर 1988।
133 द टाइम्स ऑफ इंडिया, 12 अक्टूबर 1988।
134 1 जनवरी 1989.
135 द संडे ऑब्जर्वर, 24 अप्रैल 1988।
136 22 मई 1989.
137 साक्षात्कार
138 द इंडियन पोस्ट, 22 मई 1989।
139 द इंडियन एक्सप्रेस, 7 अक्टूबर 1990।
140 द टाइम्स ऑफ इंडिया, 23 मार्च 1991।
141 द संडे ऑब्जर्वर, 2 फरवरी 1992।
142 द इंडिपेंडेंट, 26 अक्टूबर 1991।
143 महाराष्ट्र में राजनीति, हिमालय प्रकाशन, 1995।
144 वही।
145 रविवार की दोपहर, 15 फरवरी 1995।

146 द इंडियन एक्सप्रेस, 8 अक्टूबर 1998।
147 पुराणिक समिति की रिपोर्ट तत्कालीन मुख्यमंत्री मनोहर जोशी द्वारा 24 अप्रैल 1997 को विधानसभा के समक्ष रखी गई थी।
148 दुधत समिति की रिपोर्ट 15 अप्रैल 1998 को विधानसभा के समक्ष रखी गई थी।
149 Saamna, 21 March 1998.
150 यहाँ यह ध्यान देना प्रासंगिक है कि मराठी के मुद्दे पर इतना शोर मचाने के बावजूद, शिवसेना ने राज्यसभा में ज्यादातर गैर-मराठी भाषी लोगों को भेजा है: चंद्रिका केनिया, मुकेश पटेल, प्रीतीश नंदी और संजय निरुपम उनमें से हैं।
151 द इंडियन एक्सप्रेस, 29 जुलाई 1998।
152 वही।
153 द टाइम्स ऑफ इंडिया, 3 मई 1998।
154 द इंडियन एक्सप्रेस
155 ये कड़ी टिप्पणियाँ न्यायमूर्ति श्रीकृष्णा और न्यायमूर्ति एस.एस. पारकर की खंडपीठ द्वारा 12 मार्च 1999 को पारित की गई थीं।
156 चुनाव परिणामों के बाद कांग्रेस और एनसीपी ने गठबंधन सरकार बनाने के लिए हाथ मिलाया।
157 डोंबिवली में सार्वजनिक रैली, 6 नवंबर 1989।

□□□□□ □□□□

□□□□□□, □□□□□□□, □□ □□□□□□ □□□ □□□□□□□□□□: □□□□□□ □□□ □□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□, □□ □□□□□□, 1982
□□□□□□□□□□, □□□□□□□ □□□□□□□, □□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□□□□, □□.□□. □□□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□, 1967□
□□□□□□□□□□□, □□□□ □□□□□□□, □□□□□□□ □□ □□□□□□: □□□□□□ □□□ □□□ □□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□, □□□□□□□ □□□□□□□□□□□ □□□□□, □□□□□ □□ □□□□, 1979□
□□□□□□, □□.□□. □□□□□□, □□□□□□: □□ □□□□□, □□□□□□ □□□□□□□□□□□, □□□□□, 1971□
□□□□□□□□□, □□.□□. □□□□□□ □□□□□□ □□□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□□□□, □□□□□□ □□□□□□□□□□ □□□□□, □□□□□, 1963□
□□□□□, □□.□□., □□□□: □□ □□ □□□ □□□□□□□, □□□□□□□, 1990
□□□□, □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□□ (□□□□□□□), □□□□□□ - □□□□□□ □□□□ □□ □□□ □□□□,
□□□□□□□□□ □□□□□□□□□□ □□□□□, □□□□□, 1995□
□□□□□, □□□, □□□ □□□□□: □□ □□□□-□□□□□, □□□□□□□□□□, □□ □□□□□□, 2005□
Thakkar, Usha, and Mangesh Kulkarni (eds), Politics in Maharashtra, Himalaya Publishing House, Mumbai, 1995
1968 □□ □□□□□□ □□□ □□□□ □□□□□ (□□□□□□: □□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□)

□□□□□

Akolkar, Prakash, Jai Maharashtra, Prabhat Prakashan, 1998.
□□□□□□□□, □□ □□, □□□□□, □□□□□□ □□□□□□□ □□□□□, 2012□
□□□, □□□□□□, □□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□, □□□□, 1996□
Maharao, Jnyanesh, Thackeray Family, Prabhat Prakashan, 1995.
□□□□□, □□□□, □□□ □□□□: □□□□□□□□□□ □□□ □□□□□□, □□□□ □□□□□□□, □□□ □□□□□□ □□□□□, □□□, □□□□□□□□: □□□ □□□ □□□, □□□□□ □□□□□□□, 1991□

□□□□□□ □□□□

□□□□□

□□□□□, □□□□□, □□ □□□, □□□□□□□□, □□□□□□□□□□ □□□□□□

□□□□□□□□□□

□ □□□□□□ □□ □□□□□□, □ □□□□□□ □□□□□□□□□, □ □□□□□□□□□, □ □□□□□□□, □ □□□□□ □□, □ □□□□□□ □□□□□, □□□ □□, □ □□□□□□□□ □□□□□□□ □□□ □□□□□□, □ □□□□□, □ □□□□□□□□□□□, □ □□□□ □□□□□□□□

□□□□□□□□□□

□□□□□

Marmik, Lokprabha
□□□□□□□□□
□ □□□□□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□, □□□□□□ □□□□, □□□□□□, □□□□□□□□□□, □□□□□□, □ □□□□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□

□□□□□□□□□□□□

□□□□□□, □□.□□.
Ambedkar, Bhimrao
□□□□ □□ □□□□
□□□□□, □□□□□□,
□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□
□□□□□□, □□□□□□

□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□□
□□□□□
□□□□□□ □□□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□□□
Bardhan, A.B.
□□□□□□, □□.□□.,
Behere, G.V.
Bhartiya Janata Party (BJP)
Bhujbal, Chagan
□□□ □□□□ □□□□ □□□
□□□□□□□□□□, □□□□□□□□□□ □□□□□
□□□□□□□□□□□
Chafekar, Achyut (Barrister)
□□□□□□, □□.□□.
□□□□□□, □□□.□□.

Dandavate, Madhu
□□□□□, □□.□.
□□□□□ □□□□
□□□□□, □□□□□ □□ □□□□□□
Desai, Morarji
Desai, Ramakant
□□□□□□, □□□□□□□□
Deshpande, Bani
Deshpande, Madhav
□□□□□□□□, □□□□
Dhale, Raja
Dhanurdhari
Dhasal, Namdeo
□□□, □□□□□□□
□□□□□□□
□□□□□□□□□, □□□□□
□□□□ □□□□□ □□□□□

□□□□□, □□□□□
Gandhi, Indira
Gaonkar, Vijay
□□□□, □□.□□.
Gupta, Dipankar
□□□□□, □□□□□
Hindu Mahasangh
□□□□□□□□□
□□□□□
Janata Dal
Jatra, Ravivarchi
□□□□, □□□□□
Joshi, Murli Manohar
□□□□, □□.□□.
□□□□□□□□□□□, □□□□ □□□□□□
□□□□□□ □□ □□□□□□: □□□□□□ □□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□

Kesri
□□□□□, □□□□
□□□□□□□, □□.□□.
Khandilkar, Nilkanth
□□□□□□□□□□ □□□□□□□
Khopkar, Shridhar
□□□□□□□□ □□□□ '□□□□□□□□□□'
□□□□□, □□□□□

□□□□□□ □□□□□□

□□□□□□, □□□□□□□
Mahajan, Pramod
Maharashtra Girni Kamgar Union
Maharashtra Navnirman Sena
□□□□□□□ □□□□
□□□□□□, □□.□□.
Mantri, Madhav
□□□□□
□□□□□ □□□□□
Marmik
□□□□□□□□
□□□□□, □□□□
□□□□, □□.□□. □□□□□□
□□□□□□ □□□ □□□□□□□

□□□□, □□□□□□□□ (□□□□□ □□□□□□, □□□□□)
□□□□□, □□□□□□□
□□□□ □□□□ □□ □□□□□
□□□□□□□□ □□□

Nadkarni, Bapu
Nagarkar, Kiran
□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□□□ □□□□□
Saat Sakkam Trechalis
Naik, Vasantrao
□□□□□, □□.□□., □□□□: □□ □□□□□ □□□□□□□
□□□□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□
□□□ □□□
Navalkar, Pramod
□□□□□, □□□□□□□□
□□□□□□ □□□□
Nirupam, Sanjay

□□□□□, □□□
□□□□□ □□ □□□
□□□□□, □□.□□.
□□□□, □□□
□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□
Pradhan, Satish

Rane, Narayan
Rangnekar, Ahilya
Rashtriya Mill Mazdoor Sangh
□□□□ 1992-93
□□□□□□
Saamna
□□□□□□, □□□□□□□
Samant, Dr Datta
□□□□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□
Samyukta Maharashtra
Sarabhai, Kartikeya
Satya Shodhak movement
Shinde, Sushilkumar
□□□ □□□□
□□□□□ □□ □□□ □□□□□□
□□□□□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□
□□□□ □□□□□ □□ □□□□

□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□
'□□□□□□□ □□□□□□' □□□□ □□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□
Birth of Saamna
1973 □□□ □□□□□□ □□□□□
□□□□□ □□ □□□□□□□□
1973 □□□ □□□□ □□□ □□□ □□ □□□□□□
‘□□□□□□□□□□□□’ (□□□□□□ □□□□□□□□) □□ □□□□□ □□□□□□
□□□□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□
RSS □□ □□□ □□□□□
□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□□□ □□□□□□ (□□□□□□ □□□□□)
□□□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□ □□□□□□
□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□ □□□□□
□□□
Guidelines set for Bhartiya Kamgar Sena
□□□□□ □□□□□□□□□□
□□□□□ □□□ (1995 – 1999)
In praise of Nathuran Godse
□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□, 1992
Maharashtra Dharma
□□□□□□□ □□ □□□□□□□
□□□□□□ □□ □□□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□
Protest against the play Ghasiram Kotwal
1969 □□□ □□□□□ □□□□□□□□
□□□□ □□□□□□□
Riots in Bhiwandi
Role of Sena shakhas
□□□□□□□ □□□□□
□□□ □□□□ □□ □□□
□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□ □□ □□□□□
□□□□□□ □□□ □□□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□□ □□ □□ □□ □□□
1967 □□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□□ □□□ □□□□ □□□□□ 1967
□□□□□□□□ □□ □□□ □□□□□□
□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□ □□□□□□
□□□□□□□□ □□□ □□□ □□□□□ □□□□
Shivaji Jayanti 1970
Shivaji Park
Shrikrishna Commission report
Tendulkar, Vijay
□□□□□□□ □□□□□□
□□□□□, □□□
□□□□□□ □□□ □□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□

1969 □□□ □□□□□□□□□□
1969 □□□ □□□□□□□□□□
□□□□
□□□□□
□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□□□
Established Bhartiya Kamgar Sena
□□□ □□ □□□□□
Estrangement with son Jaidev
□□□□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□
□□□□ □□□□
□□□□□□□ □□ □□□ □□□□
□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□ □□□□□ □□□
1970 □□□ □□□□□ □□□□□□
□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□
□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□
□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□
□□□□
□□□□□□□□□ □□□□
□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□□□ □□□
□□□□□□ □□ □□□ □□□□□
□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□□
□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□□
□□□□ ‘□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□ □□’
□□□□□□□-□□□□□□□□□□ □□□□ □□□□□ □□ □□□
Started Marmik
‘□□□□□□□’ □□ □□□□□□□□
□□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□
Thackeray, ‘Parbodhankar’ Keshav
□□□□□, □□□
□□□ □□□□□ □□ □□□□□□
□□□□
□□□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□
Formation of Maharashtra Navnirman Sena
□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□□ □□□□□
President, Bhartiya Vidyarthi Sena
□□□□ □□ □□□ □□□□ □□ □□□□□□□
□□□□□, □□□□□□
Thackeray, Uddhav
□□□□□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□ □□□ □□□□□□□□
□□□□□□□□□□ □□□ □□□□
□□ □□□□□□□ □□□□□□
□□□□□□□, □□□ □□□□□□
□□□□□, □□□□□
□□□□□□ □□□□□□ □□□ □□□, □□□□ □□ □□□□□□□
□□□□□□ □□□

□□□□□ □□□□□□□

1. □□□□□□□□□□ (□□□□□ i) □□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□□, 2012
2. □□□□□□□□□□ (□□□□□ ii) □□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□□, 2012
3. □□□□□: xvi-xvii □□□□□ □□□□□□□□: □□□□ □□□□□□

□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□ □□□:
3. □□□□□, □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□, 2012
4. □□□□□, □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□, 2012
5. □□□ □□□□ □□□□□ □□ □□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
6. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
7. □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□, 2012
8. □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□, 2012
9. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
10. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
11. □□□□□□□□: □□□-□□
12. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
13. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
14. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
15. □□□ □□□□ □□□□□, □□□□□□□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□
16. □□□□□□□□: □□□□ □□□□□□
17. □□□□□□□□: □□□□ □□□□□□
18. □□□□□□□□: □□□□ □□□□□□

How did a quiet, unassuming cartoonist at one of India's leading newspapers transform into the fire-breathing chief of a militant political outfit? How did his essentially sons-of-the-soil movement take Mumbai by storm in the 1960s with its demands for the Marathi people's employment rights and attacks on South Indians and the Communists? How did he make the shift from an aggressive Maharashtrianism to strident Hindutva to become one of the major players in Indian politics? What explains his control over India's financial capital, his capture of power in India's industrial powerhouse, Maharashtra, and his ability to win over the minds of millions and to strike fear in so many hearts? How did he and his Shiv Sena establish sway over the multi-crore film industry and, with its longstanding alliance with the BJP, become a subject of intense curiosity all over India and even in Pakistan?

This book tells the complete story of Bal Thackeray and the rise, fall and split of the Shiv Sena. It examines Thackeray the person and his intriguing political personality, his party's militaristic methods of operation, its controversial role at major junctures, the fight between Thackeray's nephew Raj and son Uddhav, the end of an era in Maharashtra politics after his death in November 2012 and the future of the Shiv Sena without his imposing presence. A must-read for an understanding of contemporary Indian politics and the rise of the Hindu nationalist phenomenon.

VAIBHAV PURANDARE grew up in Mumbai in the 1980s and 90s, the tumultuous decades in which Bal Thackeray and his Shiv Sena went from being regional political players to champions of a militant Hindutva that carried their rhetoric and rage across India. He began his journalistic career with the political newsmagazine Blitz in 1993, in the early part of which Thackeray and his organisation played a key role in the Mumbai riots, and has since worked with India's leading newspapers such as The Indian Express, The Asian Age, Daily News and Analysis (DNA), Mid Day and Mumbai Mirror, apart from writing for a host of other publications. His first book, The Sena Story was published in 1999, when he was only twenty-three. His second book, Sachin Tendulkar: A Definitive Biography (Roli Books) is now into its fifth edition. He is currently Senior Associate Editor with the Hindustan Times, Mumbai.

Non-Fiction/ Biography

www.rolibooks.com